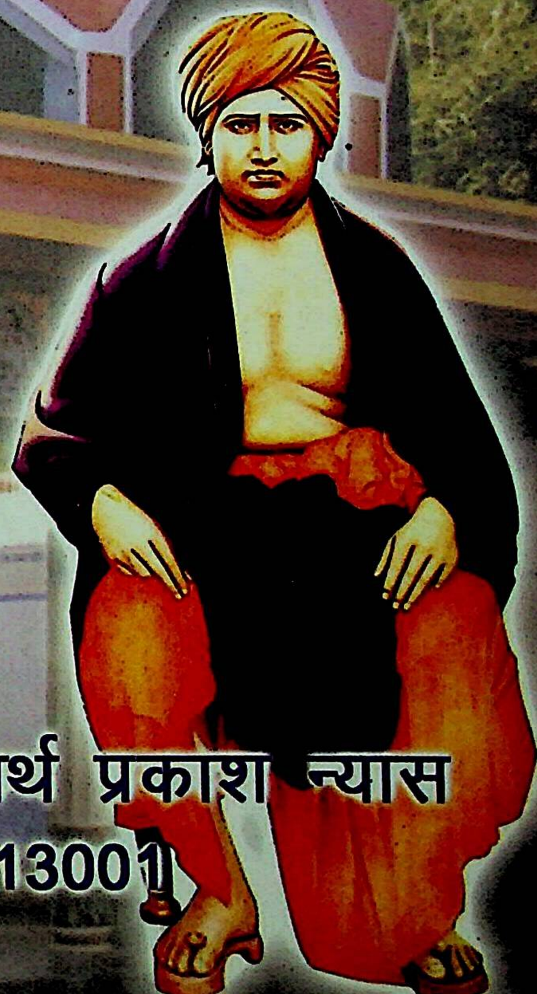
सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत



उत्तरार्द्ध

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
उदयपुर–313001

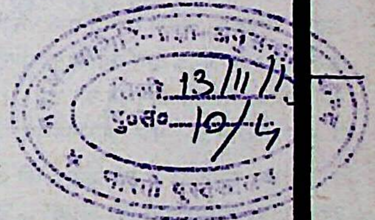
ओ३म्

सत्यार्थप्रकाश कवितामृत

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत

सत्यार्थ प्रकाश का कवितानुवाद





रचयिता

आर्य महाकवि पण्डित जयगोपाल

सम्पादक

पण्डित रामगोपाल शास्त्री

वैद्य भूषण, करौल बाग, दिल्ली – 5

उत्तरार्द्ध

प्रकाशक

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास

नवलखामहल, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर – 313 001 (राज.)

प्रकाशकीय

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती प्रणीत कालजयी ग्रंथ, सत्यार्थ प्रकाश पर आधारित सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत प्रकाशित कर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में जिस आनन्द की अनुभूति हो रही है उसका वर्णन शक्य नहीं है।

वि.सं. 2003 में प्रकाशित आर्य महाकवि पंडित जयगोपाल जी की यह सुन्दर कृति आज अनुपलब्ध प्रायः थी। वस्तुतः सन् 1946 में लाहौर में छपा यह ग्रंथ विभाजन के समय विनष्ठ प्रायः हो गया था। केवल कुछ प्रतियां भारत आ पायी थी। जब पूज्यपाद स्वामी दीक्षानंद जी सरस्वती, समर्पण शोध संस्थान साहिबाबाद ने मुझे यह अमर कृति देकर न्यास के माध्यम से पुनः प्रकाशित कराने का आग्रह किया तो मैंने ''कवितामृत'' का आद्योपान्त अध्ययन किया। रचना की सरलता, सरसता तथा लालित्य ने हृदय को आह्लादित कर दिया। निश्चय हुआ कि ऐसी अद्‌भुत रचना सभी पाठकों तक अवश्य पहुंचनी चाहिए। विचार बना कि इस ग्रंथ को एक साथ न छाप कर क्रमशः समुल्लासों के क्रम में प्रस्तुत किया जाए। सत्यार्थ, प्रकाश कवितामृत के प्रथम दश समुल्लास इसी विचार की परिणति थे। आर्य जगत् में इनका व्यापक स्वागत किया गया।

मुझे मौखिक व लिखित रूप में आर्यजनों द्वारा निरन्तर आग्रह किया जा रहा था कि इस सम्पूर्ण ग्रंथ को शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशित किया जावे एवं एक हो जिल्द में प्रकाशित किया जावे। मेरी स्वयं की भी यही अभिलाषा है पर यह कार्य दानी आर्यजनों के दान द्वारा ही सम्भव हो पावेगा। इस निमित दान भी प्राप्त हो रहा है पर सम्पूर्ण ग्रंथ के प्रकाशन हेतु यथेष्ठ नहीं है फिर भी ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु अतीव आग्रह के कारण सम्पूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम दश समुल्लासों को एक ही जिल्द में प्रकाशित करने का आर्य जनता द्वारा व्यापक समर्थन के पश्चात् ग्यारहवे से चौहदवें तक के समुल्लास एवं स्वमन्तव्यामन्तव्य का एक साथ प्रकाशन कर हार्दिक प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूँ। आशा है सुधी पाठक भी इस का स्वागत करेंगे। ऋषि भक्तों की सेवा में निवेदन करता हूं कि वे मुक्त हस्त से दान भेजें ताकि सम्पूर्ण ग्रंथ के प्रकाशन व्यय का पुनर्भरण हो सके।

इस पुस्तिका के प्रकाशनार्थ श्री श्रवण जी गुप्ता, लखनऊ; श्री धर्मवीर जी खन्ना, जामनगर; श्री प्राचार्य सदाविजय जी आर्य, उदगीर; श्री भगवानदास जी अग्रवाल, तिनसुखिया; श्री सत्यानन्द जी मुंगाल, लुधियाना; श्रीमती रामप्यारी देली आर्या, हिलसा; श्री दीनदयाल जी गुप्त, कलकत्ता; श्री पूर्ण चन्द जी आर्य, आगरा; श्री प्रेमचन्द जी पंडित, चंडीगढ़; श्रीमती राज आनन्द, मेरठ; श्री शन्तिस्वरूप गुप्ता चे.ट्रस्ट, कलकत्ता; श्री रामभज जी मदान, नई दिल्ली; प्रो. रेणु जी, लुधियाना; श्रीयांश इन्डस्ट्रीज, लुधियाना; मै.आर.एस. पेकिजिज, लुधियाना; श्रीमती तृप्ता भाटीया, लुधियाना; श्री महेन्द्र जी मेहता, लुधियाना; मै. मित्तल उद्योग, गागरेट; एस.एस.डी.ए.वी. स्कूल, दीनानगर; श्रीमती राजरानी सोंधी, जालन्धर; श्री कृष्णलाल गोरादेवी ट्रस्ट, जालन्धर; श्रीमती किरण अग्रवाल, जालन्धर; श्री रमेश जी मित्तल, पठानकोट; श्री मांगीलाल जी जैन, रिछवा; श्रीमती निर्मला कुलश्रेष्ठ, अलीगढ़; श्री वेदव्रत जी खन्ना, ऊधमपुर; श्री दत्तागेय बाब्रले आर्य, अजमेर; श्री ओम प्रकाशजी मस्कटा, कलकत्ता; श्री हरिशचन्द्र जी श्रीवास्तव, अहमदाबाद; आर्य समाज, जामनगर; श्री पंडित मदन लालजी गुप्ता, यू.एस.ए.; श्री शंकरलालजी गुप्ता, कलकत्ता; श्री गोपाल शरण विद्यार्थी, बरेली; श्री नन्दकिशोर अवस्थी, हरदोई; श्री डॉ. ओमप्रकाश आर्य, बरेली; री निहाल सिंह आर्य 'परमार्थी', रोहतक; आर्य समाज, सिलीगुड़ी; श्री सोनालाल जी नेमधारी, मारीशष; श्री चन्द्र गुप्त विक्रम देहरादून; श्री राजेन्द्रकुमार जी, बरेली; श्री गिजु भाई पी. व्यास, टंकारा; श्रीमती सरला शर्मा, लखनऊ ने दान दिया है। वे साधुवाद के पात्र है। पर अभी भी लगभग 30,000 रु. इस पुस्तिका के मुद्रण व्यय की पूर्ति में कमी रही है। मैं आशा करता हूं कि ऋषि भक्त इसकी पूर्ति अवश्य करेंगे।

—स्वामी तत्त्वबोध सरस्वती

अध्यक्ष

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास

उदयपुर – 313 001

नवलखा महल, महर्षि दयानन्द मार्ग,

गुलाब बाग, उदयपुर फोन : 522822, 417694

श्रीमद् दयानन्द निर्वाण दिवस सं. 2057

प्रथम संस्करण : 2000

मूल्य : सजिल्द (पुस्तकालय संस्करण) : 140 रु.

पेपर बैक : 120 रु.

सत्यार्थ प्रकाश उत्तरार्ध की अनुभूमिका

एक मात्र वैदिक धर्म, पहले था जग मांहि।
महाभारत पर्यन्त कोऊ, अन्य धर्म था नांहि।।

पाँच सहस्र वर्ष से पहले, सृष्टि के थे कर्म सुनहले।
बाजत रहा वेद का डंका, सब प्रसन्न थे राव रु रंका।
महाभारत की भई लड़ाई, जिसने सारी शान मिटाई
तब से हुई वेद मत हानि, करने लगे सभी मन मानी।
सृष्टि मँह फैला अंधियारा, अस्तंगत भानू उजियारा।
मरे युद्ध मंह वीर रु ज्ञानी, होने लगी धर्म की ग्लानि।
जो जैसा जिसके जी आया, मन माना तिस पंथ चलाया।

वेद विरोधी चार मत, सब पन्थों के मूल।
उन का वर्णन अब करूं, निज बुद्धि अनुकूल।।

सब से पहले भये पुरानी, दूजे जैनी पुनः किरानी।
चौथे मुसलमान कुरआनी, जिससे हुई सृष्टि की हानि।
इनकी शाखा का विस्तारा, घट से घट हैं एक हजारा।
इन धर्मों के माननहारे, सतवचनी सारे के सारे।
उनके शिष्य और अनुयायी, जिन मंह घनी अविद्या छाई।
अन्यपुरुष सत के जिज्ञासु, भोले भाले धर्म पिपासु।
उनके हित यह ग्रन्थ बनाया, सत्य अर्थ परकाश दिखाया।
देखें इस प्रकाश के द्वारा, झूठ सत्य का करें विचारा।
अधिक परिश्रम करन न पावें, बहु मूल्य निज समय बचावें।
जो जो इसमें सत का मण्डन, अरु असत्य का कीना खण्डन।
उसको जो जन पढ़ें पढ़ावें, झूठ त्याग सन्मारग आवें।
निज बुद्धि विद्या अरु ज्ञाना, मूल ग्रन्थ उनके पढ़ नाना।
जो कुछ जिसका मैंने जाना, सत्यासत्य भया मोहि भाना।

सृष्टि को वह सभी बताऊं, सत्य ज्ञान जग में फैलाऊं।

सो०– भया गुप्त जो ज्ञान, सहज न उसकी प्राप्ति।
यह मेरे मन ध्यान, तांते इसे उबार लूँ।।

पक्षपात तज करें अधयना, जातें खुलें ज्ञान के नयना।
पुन निज निज बुद्धि अनुहारा, सहज खुलें मस्तिष्क किवारा।
त्याग असत सत कँह स्वीकारें, अपना मानुष जन्म सुधारें।
समुल्लास ग्यारह में पूरब, पौराणिक मत कहूं अपूरब।
जो फैला भारत मँह सारे, जिसको सगरी जाति सकारे।
गनहु न यदि मेरो उपकारा, जिनु मानहु या को अपकारा।
नहीं प्रयोजन चित्त दुखाना, नहीं किसी का हृदय जलाना।
केवल एक प्रयोजन मेरा, होय उजेरा मिटे अंधेरा।
सत का निर्णय करूँ कराऊँ, प्राणि मात्र का दूख नशाऊं।
न्याय दृष्टि से बर्तें सारे, केवल यही विचार हमारे।
मनुष जनम को करें सकारथ, झूठ त्याग कर गहें यथारथ।
बृथा बढ़ावें वाद लड़ाई, यह नहीं कर्म मनुष का भाई।

अनिक मतों के वाद से, भई सृष्टि सब छार।
अब सब मिलकर एक हों, होय न जन–संहार।।

जब लग वाद विवाद न छूटे, मत भेदों का गढ़ नहीं टूटे।
तब लग मन नहीं मिलते प्यारे, मिल बैठन में हैं सुख सारे।
यदि हम सब जन अरु विद्वाना, सत का निर्णय चहें कराना।
तो नहीं यह कुछ बात असंभव, भाव होय तो सब कुछ संभव।
साँची बात कहूँ मैं भाई, विद्वानों की निजी लड़ाई।
इक दूसरे से रखें विरोधा, हठ से मानें नहीं अनुरोधा।
विद्वानों ने जगत लड़ाया, स्वार्थसिद्धि का जाल रचाया।
जो यह अपना स्वारथ त्यागें, परमारथ के मारग लागें।
क्षण भर में एका हो जावें, प्रेम बढ़े और फूट नशावे।

एकादश समुल्लासारम्भः

आर्यवर्त के मतों का, करहुँ विवेचन आज।
इसी देश को जगत का, कहते हैं सिरताज।।

आर्यावर्त देश अभिरामा, स्वर्णभूमि है याको नामा।
सुन्दर सकल सृष्टि के मांही, ऐसा देश दूसरा नाहीं।
अन्नशस्य जहाँ उपजें नाना, स्वर्ण रत्न आदिक की खाना।
यही देख आरज यहां आए, आदि सृष्टि मंह यहां पर छाए।
उत्तम नर आरज कहलावे, दस्यु इनसे इतर सदावे।
सब देशों के नर अरु नारी, इसकी करें प्रशंसा भारी।
पारस मणि सब सुनते आये, उसके तो कहुँ दरस न पाए।
पारस रुप यही है भारत, सब सृष्टि इस ओर निहारत।
लोंहे सम सब देस विदेसी, इत आये भूखे परदेसी।
इसको परस हुए धनशाली, जितनी सम्पति चही उठाली।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः। मनु॰२/२०

लेकर आदि सृष्टि से, कुरु पाण्डव पर्यन्त।
आर्य जनों का राज था, सगरी दिशा दिगन्त।।

सार्व भौम था आरज शासन, जग माने इनका अनुशासन।
मण्डलीक थे शेष नरेशा, चक्रवर्ति था भारत देशा।
आदि सृष्टि मंह मनु बखाना, निज सिमरति में लिखे प्रमाना।
आर्यवर्त के ब्राह्मण देवा, सृष्टि करे इनकी पग सेवा।
सब देशों के नर यहाँ आवें, इनसे विद्या लाभ उठावें।
द्विज अर दस्यु आदिक सारे, अखिल देश यावत संसारे।
सबके सब भारत मंह आवें, ब्राह्मण उनको कला सिखावें।
निज निज सीखें कर्म आचारा, अरु जानें सब कार्य ब्योहारा।

धन्य युधिष्ठिर नरपति, सत्य धर्म अवतार।
उसके राजसु यज्ञ मँह, आया सब संसार।।

देश देश के नृपति पधारे, थे अधीन भारत के सारे।
मंह भारत की हुई लड़ाई, लड़ भिड़ मर गए भाई भाई।
लड़ने आये जग के राजे, अपने अपने दल बल साजे।
था भगदत्त चीन का राजा, आया यहाँ युद्ध के काजा।
अमरीका का बब्रुवाहन, महावीर जा का तनु पाहन।
विडालाक्ष यूरप को भूपा, वानर सम जाको रँग रूपा।
लड़ने आये यहाँ युनानी, कर बांधे आये ईरानी।
सब थे आर्यवर्त के दासा, भारत सब की पूरत आसा।
रघुगण थे जब यहां भुवाला, सृष्टि की करते प्रतिपाला।
रावण था उसके वशवर्ती, शासन करती भारत धर्ती।
रामकाल में भया विरोधी, जिस पर राम भये अति क्रोधी।
लंका पर चढ़ उसको मारा, वा का दल बल सकल पछारा।
रावण की कर दी बरबादी, दई विभीषण को पुन गादी।
स्वायंभव से कुरु पर्यन्ता, चक्रवर्ति भारत श्रीमन्ता।
एक छत्र सृष्टि का स्वामी, आर्यवर्त था पूरनकामी।
जब पीछे आपस में फूटे, सभी देश हाथों से छूटे।
मरे परस्पर लड़ कर सारे, दुर्योधन से कुल हत्यारे।

अभिमानी जो नृपति हों, मूर्ख करें अन्याय।
उनका राज्य न अधिक दिन, यही प्रकृति को न्याय।।
मद पीकर मद के वचन, मद्यप बोले बोल।
नीचे से उसके चरण, रहें धरा पर डोल।।

अतिशय धन जब नर के आवे, उसके मन में आलस छावे।
तनसे त्यागे वह पुरुषारथ, दिन भर लेटा रहे अकारथ।
विषयासक्ति ईर्षा ज्वाला, मन मद्यप पी धन की हाला।

नाव डुबाये मूरख नाविक, यह प्रवृत्ति है स्वाभाविक।
आलस सब दुर्गुण का हेतु, देश चन्द्र कँह आलस केतु।
जँह पर अलस प्रमाद प्रकाशहि, सत शिक्षा विद्या सब नाशहि।
मद्य माँस अरु बाल विवाहा, व्यसन बढ़ें जिनकी नहीं थाहा।
स्वेच्छाचारी भ्रष्टाचारी, होंय देश के नर अरु नारी।
एहि विधि जब बढ़ जाति सेना, तो उफने जिमि सागर फेना।
जिनके सन्मुख कोऊ न ठहरे, तब राजा हों अंधे बहरे।
अति बल कर देता अन्यायी, समझो वाकी मृत्यु आई।
तब आपस में लड़ने लागें, दबे वैर पृथिवी से जागें।
अथवा कोई साधारण प्राणि, समरथ होकर करता हानी।
अभिमानी को मार गिरावे, सृष्टि का इतिहासा बतावें।

मुसल्मान के राज्य का, कितना था विस्तार।
गुरु गोविन्द रु शिवा ने, किया धूर अरु छांर।।

अथ किमेतैर्वा परेऽन्ये महाधनुर्धराश्चक्रवर्तिनः के चित् सुद्युम्न भूरिद्यम्नेन्द्रद्यम्न कुवल–याश्व यौवनाश्व वद्ध्रयश्वाश्वपति शशविन्दु हरिश्चन्द्राऽम्बरीष ननक्तु सर्याति ययात्यनरण्याक्ष सेनादयः। अथ मरूत्त भरत प्रभृतयो राजानः। मैत्र्ययुपनिषद प्र० १/४

यह प्रमाण हम को बतलावे, सार्वभौम शासन दर्सावे।
आर्य रहे सृष्टि के राजा, इनका तेज दशो दिश भ्राजा।
महाभारत तक आरज शासन, सब सृष्टि मानत अनुशासन।
उनकी संतति अति दुर्भागी, ऐसी सोई फिर नहीं जागीं।
राज गँवा कर बन गये दासा, धन वैभव अरु मान विनासा।
परदेसिन के चूमहिं चरणा, इससे तो कहीं अच्छा मरणा।
कितने चक्रवर्ति थे राजा, जिनका डूबा आज समाजा।

भूरिद्युम्न अरु सुद्युमन, इन्द्रद्युम्न कुवलाश्व।
वद्ध्यूश्व अरु अश्वपति, शशविन्दु युवनाश्व।।

अश्वसेन अनरण्य ययाति, भरत ननक्तु अरु सर्याति।

अंबरीश शशविन्दु राजा, हरिश्चन्द्र दानी महाराजा।
भरत आदि अति बल को सागर, चक्रवर्ति विख्यात उजागर।
मनु स्वायम्भुव आदि अनेका, लिखे मनु इनके अतिरेका।
अनिक नाम महाभारत मांही, जिनके तुल्य जगत में नाही।
जो जन इनको सत्य न मानें, पखपाती जग उनको जाने।
अथवा वे अनपढ़ अज्ञानी, या वे कूर निपट अभिमानी।

प्रश्न—आगनेय आदिक लिखे, जो ग्रन्थन के मांहि।
क्या वे सचमुच अस्त्र थे, आजकल क्यों नांहि।।

नहीं बन्दूक तोप तिस काला, कैसे करते राज भुवाला।
हम जाने सब झूठ कहानी, लिख डाली बिरथा मनमानी।
अग्नि लागे मन्त्र उचारे, जल बरसे बिन मेघ सहारे।
ऐसी विद्या निपट असम्भव, मन्त्रों से हो कैसे सम्भव।

उत्तर—सत्य सर्वथा विद्या सारी, अगनि जल बरसावन हारी।
मन्त्रो से नहीं भाव उचारण, मन्त्र कहें मिल बैठ विचारण।
मन मँह पहले करें विचारा, किस विधि अस्त्रहुं करें प्रहारा।
आगिनेय किम अस्त्र बनावें, आग लगे शत्रु जर जावें।
अग्नि बुझावे जल बरसावे, उन औषध का योग मिलावे।
यही मन्त्र सिद्धि थी सारी, इस विद्या की उन्नति भारी।
याको विद्या कहें पदारथ, अस्त्र शस्त्र आधार यथारथ।
मन्त्र जपे अग्नि लग जाए, तब तो पहले जीभ जलाए।
जो नर मन्त्र उच्चारण करता, वह पुन जल कर आप ही मरता।
मरे न शत्रु वह मर जाये, ज़िह्वा जल कर देह जलाये।
ताँते कहिये मन्त्र विचारा, केवल यही मन्त्र को सारा।
जेहि विधि होता नृप का मंत्री, सकल चलाए शासन तंत्री।

मन मँह प्रथम विचार कर, साधन फेर जुटाँय।
यन्त्र कला रचना करें, तिन्हें कार्य में लांय।।

लोह बाण जैसे कोष्ठ गीला, अन्दर से जो होवे पोला।
ऐसे द्रव्यों से वह भरते, अगन पलीते से जो जरते।
अथवा वायु से फट जावें, जंह तंह उड़ कर आग लगावें।
अथवा सूर्य किरण के परसे, धधक उठें छिन मंह अन्दर से।
आगिनेय यह अस्त्र कहावें, शत्रु दल में आग लगावें।
वारुणास्त्र में अनिक पदारथ, आगिनेय को करहिं अकारथ।
वारुणास्त्र को वायु परसे, धुंआ बने मेघ बन बरसे।
नाग फाँस इक अस्त्र कहावे, जिससे जकड़ा सब तन जावे।
मोहनास्त्र मूर्छित कर भारी, इसमें सब वस्तु मदकारी।
जिसका धूम लगे नर सोवे, सुधि बुधि अपने तन की खोवे।
आगिनेय इक अन्य प्रकारा, जिस में होती थी इक तारा।
अथवा शीशा एक बनाते, जिसे किरण अग्नि उपजाते।
जँह जँह उसकी किरणें डारें, छार करें रिपुओं को मारे।
पाशुपत भी संज्ञा याकी, मृत्यु कारक रश्मि जाकी।

तोप और बन्दूक से, लेते रण में काम।
अन्य देश के शब्द यह, भारतीय नहीं नाम।।

जिसको तोप कहें परवासी कहें शतघ्नी भारतवासी।
अरु बन्दूक नाम है जाको, कहे भुशुण्डी भारत ताको।
जो नहीं जाने संस्कृत वाणी, उनकी अपनी झूठ कहानी।
देवगिरा को समझ न सकते, अंट संट भ्रम में पड़ बकतें
भारत ने विद्या फैलाई, सकल जगत को कला सिखाई।
जेठे चेले मिश्र निवासी, जिनके हां विद्या परगासी।
मिश्र देश से पढ़े युनानी, भये अरस्तु से विज्ञानी।
वहाँ से रुम देश में छाई, यूरुप वालों ने फिर पाई।
यूरुप से अमरीका का लीनी, भारत ने सब विद्या दीनी।

जितना आर्य्यावर्त में, संस्कृत का भण्डार।
आजहुं उतना जगत में, हुआ नहीं विस्तार।।

जो जर्मन की कीरति गावें, संस्कृत का घर उसे बतावें।
मूलर मोक्ष बड़े विद्वाना, उन सा जग में नहीं कोऊ आना।
वे अंजान नहीं कछु जानें, उनकी बात विज्ञ नहीं मानें।
जहाँ न कोऊ तरु विताना, वहाँ एरण्ड पेड़ परधाना।
एहि विधि यूरुप देश असंस्कृत, वहाँ पर जानें नहीं कोई संस्कृत।
थोड़ा ज्ञान रखें कछु जर्मन, जिनका नाम पूर्व था शर्मन।
अक्षर चार लिये कर प्रापत, इतना ही वहां पर पर्य्याप्त।
पर भारत से क्यों कर तोलें, हम अपने अनुभव से बोलें।
जर्मन में इक संस्कृत कालिज, जहाँ पढ़ाते संस्कृत नालिज।
प्रिंसिपल जो वहाँ पढ़ाए, उसके पत्र मुझे भी आए।
उनको पढ़ कर मैंने जाना, जर्मन रखें न संस्कृत ज्ञाना।

संस्कृत पत्र न पढ़ सकें, लिखते बहुत अशुद्ध।
ऐसे जर्मन देश के, संस्कृतज्ञ अवबुद्ध।।

मूलर मोक्ष लिखी कछु पोथी, वेदों पर चर्चा की थोथी।
भारतीय कुछ टीकाकारा, उनका उसने लिया सहारा।

"युञ्जान्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः रोचन्ते रोचना दिवि" ऋ.१।६।१।।

इसका अर्थ लिखा उस घोड़ा, ज्ञान रहा उसका अति थोड़ा।
सायण अर्थ सूर्य्य का लेते, इससे भला वही कर देते।
सत्य अर्थ इसका परमेश्वर, जगदीश्वर व्यापक सर्वेश्वर।
पढ़ें भूमिका मोर बनाई, इसकी व्याख्या वहाँ दिखाई।
अब तुम स्वयं करो अनुमाना, कितना रखते जर्मन ज्ञाना।
जो जो विद्या जग मँह आई, सो सो सब भारत फैलाई।
आदि गुरु है सब का भारत, देश देश विद्या विस्तारत।
जयकालयट फ्रांस का वासी, पैरिस का था नगर निवासी।

'बाईबल इन इण्डिया', पुस्तक रची विचार।
भारत के संबंध में, कहे पुकार पुकार।।

भारत सब गुण का भंडारा, इसके श्रेष्ठ आचार विचारा।
सब विद्याएं सभी भलाई इसने ही जग में फैलाई।
सब मत इसी देश से निकसे, देशदेश में जाकर विकसे।
वह भारत के रँग में राचें, द्वै कर जोड़ प्रभु से याचें।
भारत था ज्यों पहले उन्नत, एहि विधि हमको करें समुन्नत।
बादशाह लिखता है दारा, उसके भी यह रहें विचारा।
संस्कृत ही में विद्या पूरी, अर्बी आदिक सभी अधूरी।
वैदिक भाव उसे थे भाये, भाषान्तर उपनिषद कराए।
वे लिखते निज पुस्तक अंदर, शांत हुआ मेरा मन मन्दर।
अरबी आदि बहु भाषाएं, पढ़ीं न भईं पूर्ण आशाएं।
मो मन का संशय नहीं छूट, मिथ्या भ्रम का जाल न टूटा।
बहुत पढ़ा पर चैन न आया, संस्कृत से केवल सुख पाया।
पढ़ी सुनी हमने यह बानी, नहीं कोउ बानी इसकी सानी।
'मंदिर मान' बनारस माँही, इसके सम कोऊ मंदिर नाहीं।
वहाँ शिशुमार चक्रं को देखें, ज्योतिष कला कुशलता पेखें।
भली भांति रक्षा नहीं यद्यपि, कितना सुन्दर है वह अद्यपि।
रवि शशि भ्रमत नखत अरु तारे, निज निज गति पर न्यारे न्यारे।
नरपति जयपुर करें सुधारा, काल चक्र ने चक्र विगारा।
हा ! जग मुकुट आज यह भारत, दारिद दुखी दीन अति आरत।

मँह भारत संग्राम ने, ऐसा दिया गिराय।
छटपटाय औंधा पड़ा, उठने में नहीं आय।।

जब भाई को भाई मारे, उस का जीवन कौन उबारे।

"विनाश काले विपरीत बुद्धिः" वृद्ध चाणक्य ।। अ॰ १६/१७।।

जिसका नाश काल जब आए, पहले उसकी मति नशाए।
सरल मार्ग को उल्टा जाने, उल्टे को पुन सूधा माने।
हे मँहभारत के मँह भारत ! तूने कीना भारत गारत।
ऋषि मुनि राजा अरु महाराजा, शिल्पी अरु विद्वान समाजा।

लड़ भिड़कर मर गये वा मारे, रह गये निर्गुण मूरख सारे।
धन जन ज्ञान सभी कुछ हारा, नष्ट भया सब वेद प्रचारा।
घर घर होने लगी लड़ाई, अपनी अपनी करें बड़ाई।
बैर जलन ऐंठन अभिमाना, फैल गये सब दुर्गुण नाना।
इक दूसरे को लगे दबाने, कारज करन लगे मनमाने।
दुर्बल देखा उसे दबाया, मारा पीटा लूटा खाया।
ऐसा लगा युद्ध का चाँटा, खंड खंड भारत का बाँटा।
द्वीप द्वीप की साँकर टूटी, सार्वभौमता तंत्री फूटी।
ब्राह्मण ने विद्या को त्यागा, अनपढ़ भारत भया अभागा।
तीनहुं वर्ण भये अज्ञानी, ताँत न बिगड़ी बिगड़ी तानी।

सोरठा– परंपरा से वेद, अर्थ सहित पढ़ते रहे।
छूट गया वह खेद! वेद लोप होने लगे।।

पाठ मात्र अब लागे करने, पेट कूप को लागे भरने।
छत्री को भी नहीं पढ़ावें, निज वचनों को वेद बतावें।
भये गुरु ही जब अज्ञानी, करने लागे निज मनमानी।
कहाँ रहे जग में परमारथ, फैल गया छल माया स्वारथ।
ब्राह्मण के मन चिन्ता लागी, कैसे रोटी मिले अभागी।
तब यह लगे भाव फैलाने, भोली जनता को बहकाने।
पूजनीय हम ब्राह्मण देवा, ऋद्धि सिद्धिप्रद ब्राह्मण–सेवा।
विप्रों के पूजन से स्वर्गा, ब्राह्मण पद सेवे अपवर्गा।
ब्राह्मण से बड़ देव न दूजा, विप्र चरण की कीजे पूजा।
जो नहीं करे विप्र की अर्चा, उसकी वृथा भक्ति हरि चर्चा।
जो नहीं विप्रन चरण पुजावें, वे सब घोर नरक में जावें।
जो ब्राह्मण थे ब्रह्म–ज्ञानी, सकल कला कोविद रस खानी।
चतुर वेद के जानन हारे, जो थे भू मण्डल के तारे।
ब्राह्मण के थे ऐसे लक्षण, अब तो ब्राह्मण भये विलक्षण।
अब यह लंपट मूर्ख अधर्मी, कपटी छली महाँ दुष्कर्मी।

अपने को ब्राह्मण बतलावें, नाम साम्य से जाल बिछावें।
ब्राह्मण ब्राह्मण मुख से रटते, पर लक्षण नहीं इन पर घटते।
छत्री आदिक जब यजमाना, जिन को रहा न संस्कृत ज्ञाना।
महामूर्ख अति विद्या हीना, जो कछु कहा मान तिन लीना।
उल्टी सुल्टी गप्प कहानी, जो कछु कही सोई तिन मानी।
तब यह विप्र नाम के धारी, भये विलासी अरु व्यभिचारी।
ऐसे रचे वचन के जाला, जिन में फँसे नृपति भूपाला।

"ब्रह्म वाक्यं जनार्दनः"

'ब्रह्म वाक्यं जनार्दनः', विप्र वाक्य प्रभु वाक।
वाग्जाल में फँस गये, छत्री वैश्य अवाक।

मन के अंधे धन के पक्के, ठौर ठौर पर खाते धक्के।
ब्राह्मण इनके धन को लूटें, बैठे स्वर्ग हिंडोले झूटें।
इनकी लील्हा कौन बखाने, कहने लगे वचन मनमाने।
कहते जो कछु श्रेष्ठ पदारथ, अधिकारी हैं विप्र यथारथ।
उन्हें खिलाओं उन्हें पिलाओं, उनको सेवहु मुक्ति पाओ।
भयी भयानक देश अवस्था; विगड़ गई सब वर्ण व्यवस्था।

गुण अरु कर्म स्वभाव से, पहले विप्र कहाँय।
अब वे ब्राह्मण जन्म से, ब्राह्मण पदवी पाँय।।

लगे दान मृतकों का लेने, स्वर्ग सदन बदले में देने।
अपने को 'भू देव' कहावें, खायें पिये मौज उड़ावें।
विप्र चरण सेवा जिन कीनी, स्वर्ग संपदा उसने लीनी।
किये बिना ब्राह्मण की सेवा, कबहुं स्वर्ग का मिले न मेवा।
अब पूछे कोई उनको जाकर, रे बाभन पृथिवी के ठाकुर।
कहाँ मिलेगा तुम्हें ठिकाना, तजहु पाप का बोझ उठाना।
तब यह बकहिं अनाप शनापा, भस्म करें हम देकर शापा।

सोरठा– ब्रह्म द्रोही विनश्यति, ब्राह्मण द्रोही नष्ट हो।
नीच नरकं गमिष्यति, यह शास्त्रों के वचन हैं।।

नष्ट होय ब्राह्मण का द्रोही, इसमें बात न झूठी कोई।
पर तुम ब्राह्मण कैसे भाई, कहं से ब्राह्मण पदवी पाई।
ब्राह्मण सो जो जग उपकारक, चतुर्वेद वित सृष्टि तारक।
जिसने मन में ब्रह्म पछाना, धर्मी कर्मी सत विद्वाना।
पर जो ब्राह्मण नांही धूरत, वे नहीं विप्र विप्र की मूरत।
उनकी सेवा उचित न करनी, अहो डुबाई भारत तरनी

सो॰प्र॰– क्या कहते हैं आप, हम ब्राह्मण भू देव हैं।
दे देंगे अभिशाप, ब्राह्मण नहीं तो कौन हम।।

उत्तर– नाम तुम्हारा पोप, यथा इसाई पादरी।
गया सर्प साटोप, कौन केंचुली से डरे।।

प्रश्न– कहो अर्थ क्या पोप का, क्या उनका आचार।
कौन लोग क्या करत वे, कैसे रखें विचार।।

उत्तर– पोप पिता का नाम है, रुमी भाषा मांहि।
पर अब लक्षण उलट है, वे गुण उनमें नांहि।।

अब धूरत नर पोप कहावे, पर धन हरें पियें अरु खावे।
छलिया कपटी निष्ठुर धूरत, पाप पुञ्ज माया की मूरत।

प्रश्न– हम ब्राह्मण हम साधु हैं, साधु विप्र के पूत।
अमुक गुरु के शिष्य हैं, सन्यासी अवधूत।।

उत्तर – यह सच है पर भोले भाई, बात तुम्हें कछु समझ न आई।
विप्रन के घर विप्र न जनमें, वर्ण नहीं रहता कुछ तन में।
शिष्य साधु का साधु न होवे, सो साधु जो दुर्गुण खोवे।
जिनके सद्गुण कर्म स्वभावा, वे ब्राह्मण हैं महानुभावा।
सुनों कहूँ मैं पोप कहानी, क्या करते थे वे मनमानी।
रूमी पोप धरम औतारा, जिनका कर्म धर्म परचारा।
कहते थे निज शिष्यन ताँई, हम हैं ईश्वर की परछाई।

अपने पाप हमें बतलाओं, तो पापों से मुक्ति पाओ।
क्षमा करें हम पाप तुम्हारे, वृद्ध पोप हम बाप तुम्हारे।
बिना हमारी आज्ञा पाए, स्वर्ग मांझ कोऊ जान न पाए।
यदि तुम चहो स्वर्ग में जाना, बाग बगीचे वहां पर पाना।
तो धन हम पर जमा कराओ, अरु हुण्डी हमसे लिखवाओ।
तब भोले भाले विश्वासी, उनको देते बहु धन रासी।
धन लेकर वह दम्भी धूरत, सन्मुख रख ईसा की मूरत।
इस प्रकार हुंडी लिख देता, भोले की सम्पति हर लेता।
अहो खुदावन्द मेरे ईसा, अंबरीश मेरे अवनीसा।
स्वर्ग माँझ यह मानव आए, लाख रुपैया जमा कराए।

जब यह आवे स्वर्ग में,जँह तव पितु का राज।
दे देना सम्पति इसे, सहित मूल और ब्याज।।

चौथाई का बाग बगीचा, कोठी कुर्सी और गलीचा।
चौथाई की सैर सवारी, नौकर चाकर गज अम्बारी।
चौथाई का खाना पीना, कपड़े लत्ते मदिरा मीना।
चतुर्थांश बाकी जो पावे, मित्र वर्ग को भोज खिलावे।
हस्ताक्षर हुण्डी पर करते, विश्वासु के कर पर धरते।
मरने पर तेरे परिवारी, इसे कबर में रखें सम्हारी।
अपने सिर के तले रखाना, याद रखो कहीं भूल न जाना।
आँय फरिश्ते तुझे उठाने, हुंडी लख कर तेरे सिरहाने।
हुंडी सहित तुझे ले जावें, स्वर्ग मांहि सब वस्तु दिलावें।।

पोप बने थे स्वर्ग के, मानहु ठेकेदार।
ऐसे हि दंभी आजकल, बने धर्म औतार।।

जब लग रही अविद्या छाई, तब लग गाढ़ी करी कमाई।
भया वहां जब ज्ञान प्रकाशा, मिटी पोप की सगरी आशा।
कहीं कहीं है अब भी थोड़ी, इन पोपों ने रक्त निचोड़ी।

एहि विधि आर्यवर्त में भाई, पोपों ने लीला फैलाई।
लाखों पण्डे पोप पुजारी, करें स्वर्ग की ठेकेदारी।
बन्द किया विद्या का द्वारा, भैंस बना अब अक्षर कारा।
नृपहुं को नहीं पढ़ने देते, दान दक्षिणा अपनी लेते।
प्रजा करी अनपढ़ अज्ञानी, कीनी बहुत देश की हानि।
करने नहीं देते सत्संगति, दिन दिन बढ़ती जाय कुसंगति।
रात दिवस रहते बहकाते, फिर भी पोप शांति नहीं पाते।
कोई काम इनको नहीं आता, जाल डाल बैठें दिन राता।

छल कर्त्ता दम्भी पुरुष, कहलाते हैं पोप।
इनमें जो धर्मात्मा, करें न बिरथा कोप।।

इन में जो धर्मी विद्वाना, वे ब्राह्मण पावें सन्माना।
केवल दम्भी पोप कहावें, उत्तम ब्राह्मण साधु सदावें।
पोप न साधु ब्राह्मण सारे, वही पोप जो ठगने हारे।
जो नहीं सच्चे ब्राह्मण होते, तो सब पड़े भाग्य को रोते।
सस्वर वेद पाठ किमि होता, कौन शास्त्र की लड़ी पिरोता।
कब से आर्य धर्म मर जाता, आर्य पुरुष कोई नजर न आता।
मिटे न ब्राह्मण साधु सारे, जीते अब भी भाग्य हमारे।
जैनी मुसलिम और ईसाई, निगल सके नहीं हमको भाई।
उनके तप से जीवित जाति, यह भारत है उनकी थाती।
यद्यपि पोपों ने बहकाया, पर वेदों को अवस बचाया।
दुर्गुण में जो छुपी भलाई, उसको ग्रहण कीजिए भाई।
विष से भी अमृत ले लीजे, बिना विचारे फैंक न दीजे।
जब यजमान भये अज्ञानी, विप्र लगे करने मन मानी।
पूजा पाठ मात्र के कारण, पंडित की पदवी की धारण।
मूरख पंडित बन अभिमानी, अद्भुत एक बात मन ठानी।
सम्मति कर राजा पंह आये, नृप को ऐसे वचन सुनाए।
ब्राह्मणो न हन्तव्यः, साधुर्न हन्तव्यः।

विप्र साधु को कबहुं न मारे, राजा सों यह वचन उचारे।

सांचे ब्राह्मण साधु हित, जो थे वाक्य प्रमाण।
वे इन मूरख जनों पर, घटने लगे समान।।

झूठे ग्रन्थ अनेक बनाये, ऋषियों के सँग नाम लगाये।
कथा करें उनके नामों पर, ध्यान न देते निज कामों पर।
ऋषि नामों से साधहिं स्वारथ, त्याग दिया मारग परमारथ।
पुस्तक आर्ष जान नरनाहा, दंड न दें इनको चित चाहा।
इन पर रही न दण्ड व्यवस्था, लगी बिगड़ने देश अवस्था।
पुन करने लागे मन मानी, अभिमानी निज पंडित मानी।
अति कठोर पुन नियम चलाए, प्राणि मात्र निज दास बनाए।

पोपों की आज्ञा बिना, उठे पिये नहीं खाय।
किसकी समरथ पोप की, कोउ आज्ञा टल जाय।।

नृप गण को विश्वास दिलाया, यह निश्चय उनको करवाया।

जो चाहे ब्राह्मण करें, कर सकते निर्बाध।
साधु विप्र नहीं दंडिये, दण्डन में अपराध।।

जो ब्राह्मण को दण्डे पापी, उसकी गति न होय कदापि।
विप्र शाप से मन में डरिये, इच्छा भी मन में नहीं करिये।
ऐसे ऐसे भाव फैलाये, फिर पापों से कौन बचाये।
बढ़ने लागे दुष्ट आचारा, कोउ न उनको वर्जन हारा।

महाभारत के युद्ध से, पहले वर्ष सहस्र।
छिपे छिपे बढ़ता रहा, अंकुर पाप अजस्र।।

ऋषि भी थे तब भारत माही, सब का लोप हुआ था नाहीं।
फिरभी आलस और प्रमादा, वैर परस्पर कलह विषादा।
फैल रहे थे धीरे धीरे, गंग यमुन के तीरे तीरे।
महायुद्ध जाको परिणामा, जिससे हुआ नरक यह धामा।

लोप हुए जब सत उपदेशा, बना फूट गृह भारत देशा।

उपदेश्योपदेष्टृवात् तत् सिद्धिः इतरयादन्ध परम्परा।

सारण्य अ० ३।६६—७१

सत उपदेश होंय जेहि काले, सगरी प्रजा नियम को पाले।
धर्म अर्थ मुक्ति अरु कामा, चारहुं सिद्ध होंय अभिरामा।
रहें न जब उत्तम उपदेशक, श्रोताओं के पथ निर्देशक।
तब फैले जग में अँधियारा, घटाटोप अति अगम अपारा।
पुन जब कोऊ साधु जन आता, तम नाशे परगास दिखाता।
विप्र लगे निज पाँव पुजाने, और महातम लगे बताने।
इसमें ही कल्याण तुम्हारा, पग पूजन बैकुण्ठ दुबारा।
जब सब भोले वश में आये, जाल बद्ध हिलने नहीं पाये।
तब यह झूठे गुरु गडरिये, जिनकी पूजा करिये तरिये।
अनपढ़ मूरख भये प्रमादी, लगे खिलाने जूठ प्रसादी।
भोग विलास विषय में डूबे, ऐसे डूबे फिर नहीं ऊबे।
विद्या बल अरु बुद्धि वीरज, नष्ट हुआ सब साहस धीरज।
देश भया दुर्गुण की खानी, स्वप्न हुई सब धर्म कहानी।
माँस मद्य और मीन विहारा, गुप्त रूप से करें आहारा।
वाम मार्ग उन ही से निकसा, शनैशनै भारत में विकासा।
इन लोगों ने तन्त्र बनाये, शिव गौरी के नाम धराये।

'शिव उवाच' लिखते कहीं, भैरव कहीं उवाच।
इन नामों से तंत्र लिख, लगे नचाने नाच।।

मद्यं मासं च मीनं च मुद्रा मैथुन मेव च। एते पञ्च मकाराः स्युर्मोक्षदा ही युगे युगे ।।१।।

(कालीतन्त्रादि में)

प्रवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः। निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा पृथक् पृथक् ।।२।।

(कुलार्णवतन्त्र)

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत्पतति भूतले। पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ।।३।।

(महानिर्माण तन्त्र)

मातृ योनिं परित्यज्य विहरेत् सर्व योनिषु ।।४।।
वेदशास्त्र पुराणानि सामान्य गणिका इव। एकैव शाम्भवी मुद्रा गुप्ता कुल वधूरिव ।।५।।

गवर्गण्ड पोपों की लीला, क्या उपदेश किया ज़हरीला।
वेद विरुद्ध पाप के कर्मा, जिनको करना पतन अधर्मा।
उन कर्मों को श्रेष्ठ बताते, निलज नीच लज्जा नहीं खाते।
मद्य मांस मुद्रा अरुमच्छी, मैथुन पाँच वस्तु यह अच्छी।
यह पाँचों मुक्ति का कारण, पंच मकार करहु सव धारण।
सब नर शिव गौरी सब नारी, भोग करे नर होय सुखारी

अहं भैरवस्त्वं भैरवी ह्यावयोरस्तु संगमः।

कोऊ नर कोउ नार हो, करें मंत्र यह जाप।
पुनः समागम जो करे, नष्ट हों‌य त्रय ताप।।

जिनका स्पर्श बुरा सब मानें, उनको अति पवित्र यह जानें।

रजस्वला पुष्करं तीर्थं चाण्डाली तु स्वयं काशी, चर्मकारी प्रयागः स्याद्रजकी मथुरामता अयोध्या पुक्कसी प्रोक्ता।

(रुद्रयामलतन्त्र)

कुँडलिया— रजोवती का भोगना, पुष्कर तीर्थ अन्हान।
चाण्डाली के संग को, काशी यात्रा जान।।
काशी यात्रा जान मधुपुरी धोबिन जानो,
वेश्या संगम किये अयोध्या तीरथ मानो।
ऐसे पामर पतित फैलावें बहु विधि रोगा,
महा कुष्ठ का द्वार रजोबति के सँग भोगा।।

मद को तीर्थ मांस को शुद्धि, नष्ट हुई दुष्टों की बुद्धि।
पुष्प कहें तो जानहु मच्छी, बात छिपाने की विधि अच्छी।
जल तुम्बी को तृतीया कहिये, नाम चतुर्थी मुद्रा गहिये।
कहें पंचमी मैथुन ताई, नाम धरे चोरों की नांई।
समझ न पाए कोई दुराशा, तांते रची गुप्त परिभाषा।
आर्द्रवीर कोऊ कौल कहावे, कोऊ शाम्भव गण नाम रखावे।
जे नहीं वाममार्ग अवलम्बी, उन पर नाक सिकोड़े लँबी।

कंटक बिच्छू शूकर पशु आदि, धरते उनके नाम प्रमादी।
चक्र भैरवी एक रचाते, जो नर उसके अन्दर जाते।
द्विज कहते उनको तेहि काले, जूँठ मीठ पी ले अरु खा ले।

जब लग भैरविचक्र में, ब्राह्मण वा चण्डाल।
बैठे हैं द्विज हैं सभी, भेद नहीं तिस काल।।

जुहीं चक्र से बाहर जावें, निज निज वर्ण पुनर वे पावें।
जब यह भैरवि–चक्र रचाते, पहले मद का घट मँगवाते।
लकड़ी के पट्टे के ऊपर, जो पट्टा होता है भूपर।
बिन्दु गोल त्रिकोण चौकोना, मनहुं रचें घट हेत तिरोना।
पट्ट बिन्दू पर घट को राखें, पुन पूजन के मन्तर भाखें।

'ब्रह्मशापं विमोचय', ब्रह्मशाप को त्याग।
हे मद तोहि सेवन करें, धन्य हमारे भाग।।

जहाँ एकत्रित हों नर नारी, गुप्त ठिकाना होवे भारी।
वे सब के सब होते वामी, भोग विलासी लंपट कामी।
बिन वामीं कोऊ आन न पावे, भेद नहीं अपना खुल जावे।
तब इक नारी करते नंगी, बेटी बहन होय अरधंगी।
उस नग्ना की करते पूजा, ऐसा पंथ न निर्लज दूजा।
नग्न पुरुष को पूजहिं नारी, ऐसे यह पामर व्यभिचारी।
अपनी पर की ब्याही क्कारी, माँ बेटी भगिनी वा नारी।
उस चक्कर में सब आ जावें, मदिरा चक्कर वहां चलावें।
पुन भरते इक मद का प्याला, बड़े माँस के भर कर थाला।
आचारज के कर में देते, जिसको गुरु ग्रहण कर लेते।
वह गर्जे भर भर हुंकारा, 'मैं शिव' 'मैं हूं भैरव कारा'।
गरज गरज मद को पी जावें, सब को अपनी जूंठ पिलावें।
कोउ वेश्या वा कोऊ की नारी, जिसको नंगा करें पुजारी।
अथवा नर को नंगा करते, वे पुन खड्ग हाथ में धरते।

उस नारी को कहते देवी, भैरवि चक्कर के सब सेवी।
महादेव उस नरहुँ पुकारे, सब जन करते जय जयकारे।
शिव देवी मद प्याला पीते, पुन कारज करते चित चीते।
जूठी मदिरा सबहु पिलावें, गटक गटक कर सब पी जावें।
उनके गुप्तेन्द्रिय की अर्चा, पुन मैथुन की होती चर्चा।
इस प्रकार क्रम क्रम से पीते, प्याले भरते करते रीते।
पी पी मद होते मतवाले, उड़ते हैं प्याले पे प्याले।
मद में अन्धे क्या क्या करते, जिस को चाहें उसे पकरते।
कन्या बहु भगिनी व माता, वहाँ न देखें रिश्ता नाता।
नर नारी सब करते भोगा, कोऊ न देखे जोग अजोगा।
कभी नशा हो जाये वेशी, जुत्तम जुत्ता केशा केशी।
लड़ने लगते बकते गाली, वाममार्ग की दशा निराली।
वहीं किसी को उल्टी आवे, सिद्ध अघोरी चट कर जावे।
वान्त वस्तु जो जन खा जाता, बड़ा सिद्ध कर वही कहाता।

हालां पिबिति दीक्षितस्य मन्दिरे सुप्तो निशायां गणिका गृहेषु। विराजते कौलव चक्रवर्ति।

चक्रवर्ति वह जानहु वामी, जो निशंक निर्लज अति कामी।
बड़ा नीच नर बड़ा कहावे, निर्लजता वामी को भावे।
जो नर अस कुकर्म नहीं करता, दुष्कर्मों से जो जन डरता।
उसको कहते बेमुख कंटक, यह वामी निर्लज निष्कंटक।

पाशबद्धो भवेज्जीवः पाशमुक्त सदाशिवः। ज्ञानसंकलनी तंत्र ४३

लोक शास्त्र कुल लाज में, बद्ध होत नर जीव।
वह शिव जिसने खोद दी, लाज शरम की नींव।।

तन्त्र उडीस मांहि परजोगा, लिखा एक वह पढ़ने योगा।
इक घर अंदर चार चौफेरे, आलय होय बनें बहुतेरे।
मद प्याले उन में धर देवे, आलय आलव प्याला लेवे।
यहां से पीकर वहां पर जावे, पीवे पीवे फेर चढ़ावे।
सब आलय कर डाले खाली, ऐसी मदिरा पिये निराली।

खड़ा रहे अरु जाये पीता, जब लग लगे न आग पलीता।
मूर्छित हो गिर जाये भू पर, सुधि पकड़े पुन उठ्ठे ऊपर।
उसी भांति फिर मद को पीवे, तब तक पीवे जब तक जीवे।
पुनः गिरे पुन सुधि में आवे, पुन आलय में मद्य रखावे।
गिर गिर उठ उठ पीता जाये, मुक्त होय पुन जन्म न पाये।

ऐसे लम्पट सत्य ही, मनुष जन्म नहीं पाँय।
कृमि कुत्तों की योनि में, पड़े सड़े गल जाँय।।

सो॰– इक माता को त्याग, भोगे नारी मात्र को।
बहु बेटी सों लाग, वामी नर निर्दोष है।।

वाम पंथ में हैं दश विद्या, विद्या नहीं यह महाँ अविद्या।
इन में एक शाख मातंगी, यह जननी के संग प्रसंगी।
क्या कहता है उनका आगम, माता से भी करे समागम।।

मातरमपि न त्यजेत्।

मंत्र जपे मैथुन के काला, निज को मानहिं सिद्ध निराला।
जग में बहुत बसंती घोंगे, पर ऐसे थोडे ही होंगे।
जो नर चाहें झूठ चलाना, वे बड़ते लिखते मनमाना।
अपनी करें बखान भलाई, अन्य मतों की करें बुराई।
वेद शास्त्र अरु सकल पुराना, इन ग्रन्थों को वेश्या माना।
शाम्भवि मुद्रा नार कुलीना, इस प्रकार मानें मति हीना।
खड़ा किया मत वेद विरोधी, ऐसे नीच महा दुर्बोधी।
निज मत का बहु किया प्रचारा, दिग दिगन्त इसको विस्तारा।

सों॰– ले वेदों का नाम, अंट संट बकने लगे।
अहो कुमारग वाम, भारत को गारत किया।।

सौत्रामण्यां सुरां पिबेत्। प्रोक्षितं भक्षयेन्मांसं। वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति। न मांस–भक्षणे दोषो – न मद्ये न च मैथुने। प्रवृत्तिरेषा भूतानां निवृत्तिस्तु महा फला। मनु॰ ५/५६

सौत्रामणिक यज्ञ में, करे मद्य का पान।
एहि विधि झूठे अर्थ कर, करे मद्य गुण गान।।

साँचा अर्थ न इसका जाना, करने लागे मदिरा पाना।
सुरा नाम सोम की बेली, उसकी ठौर मद्य ने ले ली।
लाल बुझंक्कड़ बूझ न जानें, लगे यज्ञ में मद्य पिलाने।
खाँयें माँस यज्ञ के माँही, उसके खाय दोष कुछ नाहीं।

कुंडलिया— यदि हिंसा नहीं वैदिकी,प्राणि वध नहीं पाप।
क्या अग्नि में होम दें, तब कुटुंब अरु बाप।।
तव कुटुंब अरु बाप, मार अग्नि में डालें,
उन का बांट प्रसाद, स्वर्ग का पुण्य कमालें।
रे पामर मत रोय, फेर लख परिजन हिंसा,
क्या चिंता जब वैदिक, हिंसा गनहु न हिंसा।।

आमिष भोजन अरु मद पाना, पर नारी सों चित्त रमाना।
इन कर्मों को पाप न जानें, कौन तुम्हारी बक बक माने।
बिन अपराध किसी का पीड़न, निर्दोषों के प्राण निपीड़न।
अति अपराध पाप यह भारी, पर ग्रीवा पर रखो कटारी।
मदिरा पान नितान्त निषिद्धा, सभी धर्म ग्रन्थन प्रतिषिद्धा।
केवल वाम मार्ग ने पोषा, जो नहीं माने इसमें दोषा।
बिन विवाह नारी सों संगम, नर को वर्जित करें विहंगम।

ऋषि मुनियों के नाम से, ग्रंथ अनेक बनाय।
अश्वमेध गोमेध से, दीने यज्ञ चलाय ।।

यज्ञ माँहि गो घोड़े मारें, भेड़ा बकरा नर संहारें।
अरु हिंसा का फल यह माना, स्वर्ग पाय पशु अरु यजमाना।
मूरख जन समझे नहीं अर्था, एहि कारण अति किया अनर्था।
नर गो अश्वमेध के नामा, ब्राह्मण ग्रन्थ लिखे शुचि धामा।

प्रश्न– अश्व रु नर गौ मेध के, कीजे अर्थ बखान।
कर व्याख्या समझाइये, जिससे हो कल्यान ।।

उत्तर– "राष्ट्रं वा अश्व मेधः" शतपथ १३।१।६।३।। "अन्नंहि गौ" शतपथ ४।३।१।२५।।
"अग्निर्वा अश्वः" "आज्यं मेधा" शतपथ ब्राह्मणे।।

घोड़े गाय आदि पशु मारण, केवल वामी मत अवधारण।
अन्य शास्त्र कोऊ लिखता नांही, पाप गनहि सब हिंसा मांही।
जो कहीं लिखा लेख है पाया, दुष्टों ने प्रक्षिप्त मिलाया।
राजा करत प्रजा का पालन, शासन चक्र न्याय सों चालन।
विद्यादिक दानी यजमाना, जिसके ह्रदय बसे भगवाना।
हवन करे घृत अग्नि डारे, इससे जग के रोग निवारे।
अश्वमेध है याको नामा, पावन सुखद चारू अभिरामा।
इन्द्रिय अन्न किरण अरु धरणी, इनकी शुद्धि अनवरत करणी।
यह शुद्धि गोमेध कहाये, जिसके किये मनुज सुख पाये।

दाहकरण मृत मनुष का, यज्ञ होत नर मेध।
संगत अर्थ न जानते, मूरख नर दुर्मेध।।

प्रश्न– याजक पण्डित वर कहें, स्वर्ग जाय बलि जन्तु।
होम करें खायें उसे, करें सजीव परन्तु ।।

उत्तर– मार काट कर होम दें, एक बार जो जीव।
संभव नहीं उस जीव को, करना फेर सजीव ।।

यदि तुम इसको सत्य विचारें, तो पहले याजक को मारें।
माता पिता भाई सुत नाता, भगिनी कन्या और जामाता।
उनको मार होम कर डारें, पुन संजीव कर उन्हें निकारें।
क्यों नहीं उनको फेर जिलाते, क्यों नहीं सभी स्वर्ग को जाते।

प्रश्न– यज्ञ करें याजक सभी, वेद मन्त्रा कर गान।
पशु की बलि कैसे करें, यदि नहीं वेद विधान।।

उत्तर— मंत्र भले ही कोई पढ़े, मंत्र न वर्जन हार।
पर अनर्थ नहीं कीजिये, कीजिये अर्थ विचार।।

अग्नि में जो आहुति डालें, द्रव्य सुगन्धित युक्त जला लें।
वायु वृष्टि जल शुद्धि कारक, आहुतियां जग की उपकारक।
पर वे मूढ़ न जानें अर्था, कीने स्वारथ लोग अनर्था।
नेत्र हीन स्वारथ हैं अंधा, अति दुखदायक स्वारथ फंधा।

पाप पंक में पोपने, जग को लिया फसाय।
मृतक श्राद्ध खाने लगे, पेटू पेट खलाय।।

गोरखपुर का था इक राजा, परम सुखी जसु प्रजा समाजा।
एक बार उस यज्ञ कराया, जिसमें पोप समाज बुलाया।
राजा की थी प्यारी रानी, परम सुन्दरी नयन लुभानी।
घोड़े के संग उस रानी का, मृद्वंगी कोमल वानी का।
पोपों ने संगम करवाया, संगम को वैदिक बतलाया।
उससे मरी बेचारी रानी, पोपों ने कीनी मन मानी।
उस राजा ने दुनियां त्यागी, राज्य त्याग वह हुआ विरागी।
गद्दी पर निज सुत बैठाया, स्वयं देश से बाहर आया।
पुन वह साधु हुआ नरेशा, भ्रमन करत नित देश विदेशा।

पोपों के जो गुप्त थे, दुश्चरित्र के पोल।
ठौर ठौर कहने लगा, दिये पोल सब खोल।।

चारवाक आभाणक धर्मी, बौद्ध शाख यह दोऊ कुकर्मी।
उनका सुनें विचार नमूना, केहि विधि भाव बुद्धि से सूना।

"पशुश्चेन्निहितः स्वर्ग ज्योतिष्टोमे गमिष्यति, स्व पिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते।
मृतानामिह जन्तूनां श्राद्धं चेत्तृप्ति कारणं, गच्छन्तामिह जन्तूनां व्यर्थं पाथेय कल्पनम्।"

बलि का पशु यदि यज्ञ में, स्वर्गधाम को जाय।
क्यों नहीं याजक पिता को, मार स्वर्ग पहुँचाय।।

मृतक मनुष की तृप्ति हित, तर्पण श्राद्ध जिमाय।
तो विदेश जाते समय, व्यर्थ खर्च ले जांय।।

भोजन विप्र श्राद्ध में खावें, मुर्दे उससे तृप्ति पावें ।
तब तो यात्रा में नहीं क्लेशा, जाओ घूमो देश विदेशा।
सुन्दर सीधी विधि निराली, घर में रख दें भोजन थाली।
पानी का इक रख दें लोटा, परदेसी को रहे न टोटा।
जँह जाये वँह भोजन पाये, वृथा जेब में भार उठाये।
टुक बैठों दस गज की दूरी, वहां न पहुंचे हलुआ पूरी।
परदेसी जीवित नहीं पाये, कैसे संभव मुर्दा खाये।
उनकी युक्ति संगत बातें, सह न सके बामन आघातें।
उनके मत का हुआ प्रचारा, बौद्ध धर्म का भया प्रसारा।
भये बौद्ध बहु पृथिवी पाला, तब पोपों ने मार्ग निकाला।
वे पुन बनने लागे जैनी, वेद वृक्ष काटन को छैनी।
धर्म रु शास्त्र भाड़ में जाये, पोपदेव तो हलवा खाये।
कुछ ने जैन पन्थ अपनाया, वहाँ पायंतरा खूब जमाया।
पर कनवजिया काशीवासी, उत्तर दक्षिण गिरि निवासी।
वे नहीं जैन पंथ में आये, जैन भाव इनको नहीं भाये।

जैन न जाने वेद को, प्रभु का रखें न ज्ञान।
निन्दा करते वेद की, थे अनपढ़ अंजान।।

वचन पोप के जो मनमानें, वेदवाक वे जैनी जानें।
वेदों की निन्दा में लागे, बिना वेद के पढ़े अभागे।
पाठन पठन यज्ञ उपवीता, ब्रह्मचर्य्य पालन उपनीता।
शक्ति भक्ति अरु ईश्वर प्रेमा, नाश किये सब सुन्दर नेमा।
वेद शास्त्र पुस्तक जँह पाये, डाल अगन में सभी जलाये।
शासन सत्ता निजी चलाई, आर्य्य जनों के हित दुखदायी।
जैन गृहस्थी साधु जेते, पावें मान प्रतिष्ठा तेते।
वैदिक मत के मानन हारे, नित सहते अपमान बेचारे।

पक्षपात रखते थे राजा, लगे डुबाने वेद समाजा।
वेदमती को दण्ड कठोरा, जैनी दण्ड पाँय अति थोरा।
सुख वैभव पाकर अभिमानी, फूलत फिरें करें मनमानी।

ऋषभ देव आचार्य्य से, महावीर पर्य्यन्त।
तीर्थंकर को पूजते, मूरत बना महन्त।।

जैनी थे मूरति परिचालक, पाहन पूजा के संचालक।
भारत भया मूर्ति अनुरागी, ईश्वर पूजा घटने लागी।
वर्ष तीन शत भारत अन्दर, जैनी शासक रहे पुरंदर।
लुप्त भये वेदों के अर्था, करने लागे उलट अनर्था।
वरस व्यतीते सहस अढ़ाई, बौद्ध जैन लीला जब छाई।
द्वादश शत पुन वर्ष व्यतीता, शंकर गुरु इक परम पुनीता।
ब्रह्मचर्य्य से विद्या पाकर, उदय हुआ जनु ज्ञान दिवाकर।
ब्राह्मण द्रविड़ देश का वासी, बौद्ध जैनमत ध्वान्त विनासी।
उसके मन में चिन्ता लागी, सब सृष्टि कलिमल अनुरागी।
नास्तिकता भारत में छाई, जैन धर्म ने नाव डुबाई।
ईश्वर का कोऊ नाम न लेवा, सब करते सम्पति की सेवा।
वेद शास्त्र की निन्दा करते, अर्हन्तों के नाम सिमरते।
हे ईश्वर कब होय सवेरा, दूर होय कब रैन अन्धेरा ।
पारब्रह्म का शंकर प्यारा, वेद शास्त्र का जानन हारा।
देखा जैन धर्म के ग्रन्थन, आदि अन्त कीना अवमंथन।
बहुत प्रबल युक्ति थी वाकी, समता करें न जैनी ताकी।

शास्त्रार्थ की ठान मन, पहुँचे वह उज्जैन।
संस्कृतज्ञ नृप था जहाँ अरु पंडित थे जैन।।

नृपति सुधन्वा का था शासन, सब मानें जाका अनुशासन।
शंकर वहां लगाया डेरा, नरपति को जाकर पुन प्रेरा।
हे राजन तुम पण्डित ज्ञानी, जानत हो तुम संस्कृत बानी।

जैन ग्रंथ भी किये अधयना, प्रतिभाशाली सत्य सुवयना।
जैन धर्म तुम मानन हारे, जैनी पंडित तब दर्बारे।
शास्त्रार्थ की मों मन इच्छा, यही मांगने आया भिच्छा।

शास्त्रार्थ करना चहूँ, जैनी लें बुलवाँय ।
निर्णय कीजे सत्य का, धर्म लाभ नर पाँय।।

मैं हारुं जैनी बन जाऊं, जैन धर्म के यश को गाऊं।
वे हारें मम मत में आएं, प्रभु पूजन में चित्त लगाएं।
तुम भी वेद धर्म स्वीकारों, नास्तिकता का तिमिर निवारो।
यद्यपि रहे सुधन्वा जैनी, पर उनकी बुद्धि थी पैनी।
संस्कृतज्ञ होने के कारण, चहें सत्य करना अवधारण।
पशुपन नहीं था मन में छाया, शंकर ने सन्मार्ग दिखाया।
राजा ने यह बात सकारी, शास्त्रार्थ की बात विचारी।
दूर दूर से जैनी आये, बड़े बड़े पण्डित मँगवायें।
महती विद्वत सभा सजाई, शंकर की वह शर्त बताई।

शास्त्रार्थ होने लगा, जैन धर्म के साथ।
शंकर थे इक हाथ पुन, उत जैनी नर नाथ।

करे वेद का शंकर मण्डन, जैन पंथ का करते खण्डन।
शास्त्रार्थ बहु दिन पर्यन्ते, भये पराजित जैनी अंते।
जैनी सकल अनीश्वरवादी, मानें जग अरु जीव अनादि।
जीव जगत हैं अमर अजनमा, यह निश्यच था उनके मन मां।
शंकर कहें प्रभु जग कर्ता, सिद्ध अनादि सृष्टि का धर्ता।
जीव जगत दोनों ही नाहीं, मायामय प्रभु की परछाई।
यह प्रपंच सुपना इक जानो, केवल पारब्रह्म सत जानो।
उसी ब्रह्म की लीला सारी, वही खेल अरु वही खिलारी।
नाना रूप उसी के भासहिं, रंग रंग में प्रभु परगासहिं।

शास्त्रार्थ चलता रहा, वहाँ पर दिवस अनेक।

विजय लक्ष्मी ने किया, शंकर का अभिषेक।।

सब जैनी पण्डित अरु राजा, विद्वत ज्ञानी श्रोतृ समाजा।
परिहर जैन पंथ तत्काला, वेद मार्ग को पुनः सम्हाला।
शंकर के चरणों में आये, हार मान पग शीश झुकाए।
देश देश के जिते नरेशा, दिये पठाय वहां सन्देशा।
निज कर लिखी सुधन्वा पत्री, उड़े दूत ले मनहुं पतत्री।
स्थान.स्थान पर जैनी हारे, शंकर ने सब ठौर पछारे।
पतन समय जब जिसका आता, उसे न फेर उठाय विधाता।
कुछ नरेश मिल किया प्रबन्धा, जैन पंथ का तोड़ा फंधा।
देश देश में शंकर जावें, सब सुविधा यात्रा की पावें।
रक्षा के हित नौकर चाकर, रखवाली करते सँग जाकर।
शंकर ने पुन देश जगाया, ऐसा वैदिक नाद बजाया।
वेद पाठ पुन होने लागा, मूर्छित देश फेर उठ जागा।

यज्ञ याग होने लगे, धारहिं जन उपवीत।
फिर से सब गाने लगे, वेद छंद संगीत।।

कुं॰— घूमे शंकर वर्ष दश, करत रहे उपदेश।
चरणन लागी दिग्विजय, विजय किये सब देश।।
विजय किये सब देश, तोड़ दी अगणित मूरत।
निकला वैदिक सूर्य्य, छुपे सब उल्लु धूरत।।
गाड़ दई प्रतिमा अनेक पत्थर की भू में।
विजय ध्वजा फहराय, वर्ष दश शंकर घूमें।।

तब की मूरति दबी दवाई, अजहुं निकलती भूमि समाई।
जब लग नहीं थे शंकर आए, शिव मत भी था पांओं जमाये।
उनका मत भी खंडन कीना, वाम मार्ग को झटका दीना।
धन वैभव पूरण था भारत, नहीं कोउ दीन दुखी था आरत।
देश प्रेम भी था जनजन में, उन्नति धुन थी सब के मन में।

जैनों के मन्दिर थे जेते, रखे सुरक्षित सगरे तेते।
नहीं सुधन्वा ने तुड़वायें, प्रस्थापित वहां वेद कराये।
वैदिक धर्म लगा जब चलने, जैन पंथ को लगा निगलने।
तब दो जैनी पण्डित धूरत, मन मलीन तन सत की सूरत।
कपट मुनि अन्दर से जैनी, छल की छुरि सान कर पैनी।
अति प्रसन्न थे उन पर शंकर, वे जैनी थे दुष्ट भयंकर।
शंकर को कोई वस्तु खिलाई, उस वस्तु में जहर मिलाई।

क्षुधा गई उस दिवस से, खटिया लई सम्हाल।
तन फूटा छः मास में, भे शंकर वश काल।।

फैल गई भारत में हा हा, शंकर मरे मरा उत्साहा।
वेद प्रचार न होने पाया, फिर सोया जो देश जगाया।
शंकरने जो ग्रन्थ रचाये, भाष्य शारीरिक आदि बनाये।
उनके चेले काहिं प्रचारा, जो आचार्य्य के रहे विचारा।
ब्रह्म सत्य जग मिथ्या माया, मिथ्या सब धन संपति काया।
जीव ब्रह्म में भेद न कोई, सोई जीव परमातम सोई
चेले चार दिशा में छाये, बड़े बड़े मठ चार बनाये।
दक्षिण दिशा मांहि शृंगेरी, भू गोवर्धन पूरब केरी।
उत्तर में जोशी मठ भारा, जिसने शंकर मत विस्तारा।

कहें शारदा मठ जिसे, बना द्वारिका माँहि।
चार कूँट में चार मठ, जिनकी समता नाँहि।।

बन महन्त शंकर के चेले, खुल खेले ढोंगी अलबेले।
धन संपति के भये पुजारी, आनँद लूटें गद्दी धारी।

अथ शंकर मत समीक्षा

जीव ब्रह्म की एकता, अरु मिथ्या संसार।
था शंकर का मत यदि, तौ निर्मूल विचार।।

जैन धर्म खंडन के कारण, यदि मंतव्य किया यह धारण।

तब तो कछुक किया उपकारा, पाप पेड़ हित कुन्द कुल्हाड़ा।
प्रश्न –जगत स्वप्न माया का फंदा, इसमें फंसता मानव अंधा।
सर्पभान जिमि रसरी माहीं, पर अस्तित्व सर्प का नाहीं।
जिमि सीपी चाँदी सम भासे, मानव के मन को भ्रम ग्रासे।
मृग तृष्णा के जल की आभा, निकट जाँय तो रेत निराभा।
इन्द्र जाल सम जग की छाया, यह गन्धर्व नगर की माया।
जग मिथ्या सत ईश्वर जानें, ब्रह्म सत्य जग मिथ्या माने।

सिद्धान्ती – किसको मिथ्या तुम कहो, इसका करे बखान।
वेदान्ती – जो वस्तु नहीं वस्तुतः, पर होती हो भान।।
सिद्धान्ती – नहीं त्रिकाल पर होय प्रतीति, यदू तो नयी झूठ की रीति।
वेदान्ती – भासत अध्यारोप दुआरा, सिद्धान्ती– क्या है अध्यारोपतुम्हारा।
वेदान्ती – वस्तुन्यवस्त्वारोपणं अध्यासः। अध्यारोपापवादाभ्याम् निष्प्रपञ्चः प्रपंच्यते।

अन्य वस्तु में अन्य का, आरोपण अध्यास।
निराकरण अध्यास का, है अपवाद सुतास।।
इन दोनों से ब्रह्म में, जो है रहित प्रपञ्च।
जग प्रपञ्च विस्तरित हो, इसमें झूठ न रञ्च।।

सिद्धान्ती – तुम रसरी को मानो वस्तु, और सर्प को गनहु अवस्तु।
इस भ्रम माँहि पड़े तुम भाई, एहि कारण कछु समझ न आई।।
कहो सर्प कोई वस्तु नाहीं, जो कहो नहीं रसरी के मांही।
देशान्तर में कहीं निहारा, मन अन्दर उसका संस्कारा।
तो पुन रहा न सर्प अवस्तु, सर्प भई इक साँची वस्तु।
स्थाणु नर की यही अवस्था, सीप रजत की यही व्यवस्था।
जागृत में हो जाको ज्ञाना, सुपने में हो उसका भाना।
संसकार रहते मन मांही, संसकार बिन सुपना नाहीं।

ताँते सुपना भी नहीं, वस्तु अवस्तु आरोप।
क्यों कर जग सपना कहें, कहाँ जगत का लोप।।

वेदांती— सुना न देखा हो जिसे, सपने में हो भान।
कैसे हम उस वस्तु को, लेवें साँची जान।।

निज सिर कटा आप ही रोता, अश्रुधार का हार पिरोता।
ऊपर चढ़ती जल की धारा, किसने ऐसा दृश्य निहारा।
कैसे कहें स्वप्न पुन साँचा, जो नितान्त मिथ्या अरु काँचा।

उत्तर — यह भी मिथ्या तर्क सहारा, सिद्ध न करता पक्ष तुम्हारा।
बिन देखे संस्कार न होता, लखा किसी को तुमने रोता।
संसकार बिन सिमरति नांही, साक्षात अनुभव स्मृति माँही।
इक ने इक का मस्तक काटा, पकड़ पुलिस ने उसको डाटा।
उसके बन्धु देखे रोते, मनहुं अश्रु के हार पिरोते।
तुमने देखा कहीं फुहारा, जल की चढ़ती ऊपर धारा।
संसकार आतम पर अंकित, स्वप्न मांहि देखे हो शंकित।
जागृत में जो वस्तु देखे, उससे अलग होय जब पेखे।
तब लखता निज चित्त मँझारे, जागृत के वे वस्तु सारे।
सब कुछ देखे अपने अंदर, उसका निज मन मूरति मंदर।
मस्तक छिन्न हुआ निज माने, अपने को रोता पहचाने।
ऊपर चढ़ती देखे धारा, देखा होगा कहीं फुहारा।
वस्तु अवस्तु आरोप समाना, इसको भी नहीं हमने माना।

चित्रकार जैसे लिखे, जल थल आदि पहार।
ठौर ठौर अंकित करे, मन में सोच विचार।।

एहि विधि यह मन चतुर चितेरा, संसकार में करे बसेरा।
निज अनुभव को चित्रित करता, रंग बिरंगे नकशे भरता।
आतम मँह प्रकृति को सर्जन, रोना हँसना ग्रहण विसर्जन।
कभी कभी मन बहुत पुराने, स्मरण करे चिरकाल सिराने।
उल्टे सुल्टे रचे स्वरूपा, बहुत पुरातन रूप विरूपा।
जैसा सिमरण जागृत माँही, ऐसा नियम सुपन में नाँही।

जो जन अंधा जन्म से, सुपने लखे न रूप।

काले पीले धवल का, जाने नहीं स्वरूप।।

मिथ्या यह अध्यास तुम्हारा, अरु मिथ्या आरोप विचारा।
यह विवर्त वाद भी झूठा, झूठा अनगढ़ तर्क अनूठा।
सर्प भान रसरी मँह जैसे, जगत मान ईश्वर में तैसे।
यह दृष्टान्त ठीक नहीं भाई, तनिक नहीं इसमें सच्चाई।

वेदांती— नहीं प्रतीति अध्यस्त की, अधिष्ठान यदि नाँहि।
बिन रज्जु के सर्प का, भान कहो किस माँहि।।

रज्जु में नहीं सर्प त्रिकाला, पर जहां हो धुंधला उजियाला।
वहां पर जब कोई रज्जु निहारे, भय से क्रन्दे और पुकारे।
जब दीपक का करें प्रकाशा, भ्रम अरु भय का होत विनाशा।
ब्रह्म मांहि इमि जग को भाना, मिथ्या भ्रम उपजा अज्ञाना।
जब आतम परतक्ख निहारें, तभी जगत का भान निवारें।
पारब्रह्म की होय प्रतीति, अध्यारोपण हो इस रीति।

कुं॰ सिद्धांती— पारब्रह्म में जगत का, किसको होता भान।
क्या कहते हो "जीव को" यदि ऐसा लें मान।।
यदि ऐसा लें मान, जीव को कौन बनावे।
"निर्माता अज्ञान" कहाँ अज्ञान समावे ?
"है बसता अज्ञान ब्रह्म में, वाको स्थाना"।
ब्रह्म माँहि ही भया, ब्रह्म को मिथ्या ज्ञाना।।

दो॰— ब्रह्म माँहि ही ब्रह्म का, क्या उपजा अज्ञान।
अथवा उपजा अन्य का, कौन भया अंजान ?

वेदान्ती— चिताभास को हो अज्ञाना, *सिद्धान्ती*— चिदाभास क्या वस्तु मान
कुछ तो उसका रूप बखानें, *वेदान्ती*— ब्रह्म लिप्त जब हो अज्ञाने।
सिद्धान्ती— निज स्वरूप भूले किस कारण, *वेदान्ती*— छाये अविद्या का प्रावारण।

सिद्धान्ती – पारब्रह्म प्रभु सर्व वियापी, सर्वेश्वर सार्वज्ञ प्रतापी।
कहो अविद्या गुणहै वाका, अथवा अल्प ज्ञान है ताका।

वेदांती– यह गुण है अल्पज्ञ का, नाम अविद्या जास।
ब्रह्म मांही नहीं उपजती, व्यापत चित्त आभास।।

सिद्धान्ती–तुमरे मत में चेतन एका, जो अनन्त सर्वज्ञ विवेका।
अन्य कोऊ चेतन नहीं मानो, केवल एक ब्रह्म को जानो।
पुन अल्पज्ञ कहां से आया, जिसे अविद्या ने भरमाया।
इक चेतन ईश्वर सर्वज्ञा, दूसरे चेतन है अल्पज्ञा।
पृथक पृथक यदि दोनों मानें, निस्सन्देह सत्य पुन जानें।

एक स्थान पर ब्रह्म को, यदि भूले निज रूप।
तो पुन सगरा ब्रह्म ही, भूले आत्म स्वरूप।।

एक ठौर यदि हो अज्ञाना, अज्ञानी हो सब भगवाना।
तनु के एक अंग में फोड़ा, सब तनु पीड़ित करे निगोड़ा।
एहि विधि एक देश अज्ञानी, सकल ब्रह्म की कर दे हानि।

वेदांती– यह उपाधि का धर्म है, इक रस ब्रह्म महान।
ब्रह्म माँहि नहीं व्यापता, ताप क्लेश अज्ञान।।

सिद्धान्ती – क्या उपाधि को मानो चेतन, अथवा जानो इसे अचेतन।
है असत्य वा सत्य स्वरूपा, क्या उपाधि का कहिये रूपा।

नवीन वेदांती – इसे अनिर्वचनीय बखानें, नहीं यह चेतन नहीं जड़ मानें।
सत्य असत्य कोऊ नहीं जाने, किसकी शक्ति उपाधि बखाने।

सिद्धान्ती – जड़ चेतन कुछ कह नहीं सकते, अंट संट विरथा पुन बकते।
यह तो ऐसा वचन सुनाया, पीतल में दो स्वर्ण मिलाया।

पुन सराफ से परख करावें, अरु जाकर उसको बतलावें।
सोना पीतल हम नहीं जानें, दोनों धातु मिश्रित मानें।

न॰ वेदांती— घट मठ अरु मेघादि में, एक आकाश समाय।
पर उपाधि के भेद से, अलग अलग लख पाय।।

वास्तव में इक महत आकासा, जँह तँह पृथक रूप में भासा।
व्यष्टि समष्टि अविद्या माया, अनिक उपाधि अंदर छाया।
पृथक पृथक अज्ञानी जाने, पारब्रह्म को नहीं पहचाने।
ब्रह्म वस्तुतः जानो एका, माया भासित रूप अनेका।
"अग्नि र्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रति रूपो बभूव, एक स्तथा
सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रति रूपो बहिश्च" कठ॰उ॰ वल्ली ५।मं॰६।।
लम्बे चौड़े गोल आकारा, यथा पदारथ अनिक प्रकारा।
उनके भीतर अग्नि समाये, तद्वत निज आकार बनाये।
पर अग्नि वह नहीं पदारथ, पृथक रूप निज रखे यथारथ।
एहि विधि ब्रह्म जगत में छाया, अंतष्करणहुं बीच समाया।
होवे अंतःकरणाकारा, वास्तव में है उससे न्यारा।

सिद्धान्ती— निपट निरर्थक वचन तुम्हारा, तर्क युक्ति से शून्य असारा,
घट मठ मेघ पृथक जिमि जानो, त्यों आकाश को अलग पछानों।
एहि विधि जीव और संसारा, इनसे मानों प्रभु को न्यारा।

न॰ वेदांती —वस्तु वस्तु में अग्नि व्यापक, तदाकार दीखे संतापक।
त्यों व्यापक प्रभु जड़ चेतन में, साकृति लखे मूर्ख के मन में।
नहीं जीव नहीं जड़ परमातम, निराकार निर्केवल आतम।
लाखों भरे कुण्ड जिमि जल के, सूर्य्य बिंब सब अंदर झलके।
यद्यपि कूँड़ें भरे अनेका, पर रवि है सब मांही एका।
कूँडे टूटें जल बह जावे, पर दिनकर नहीं कबहुं नशावे।
जल के संग न सूरज बहता, वह इक रस पूरववत रहता।
त्यों अंतःकरणों के अंदर, ब्रह्माभास पड़े तनु मन्दर।

चिदाभास उसको कहें, घट घट में आभास।
टूटें अन्तःकरण सब, ब्रह्म न होता नास।।

जब लग अंतःकरण बिराजे, जीव जीव की महिमा छाजे।
अंतःकरण ज्ञान के द्वारा, नष्ट होय छूटे भ्रम सारा।
जब यह जीव न रहता बाकी, पारब्रह्म संज्ञा तब ताकी।
चिदाभास निज रूप न जाने, फाँस लिया इसको माया ने।
निज स्वरूप विस्मृति के कारण, प्रभु से भिन्न करे अवधारण।
मैं भोक्ता कर्मों का करता, सुखी दुखी मैं जीता मरता।
अपने में यह भाव आरोपे, रोवे हँसे क्लेश में कोपे।
चिदाभास जब लग जाने, निज सत्ता को नहीं पहचाने।
तब लग भव बन्धन नहीं टूटे, माया जाल पाश नहीं छूटे।

सिद्धान्ती— असमंजस दृष्टान्त तुम्हारा, रवि कूँड़े दोनों साकारा।
तांते सूरज की परछाईं, पड़ती है पानी के माँही।
कुण्डों से है पृथक दिवाकर, रवि से कूँडे रखे हटा कर।
निराकार यदि होय दिवाकर, कभी बिंब नहीं पड़ता आकर।
पारब्रह्म व्यापक सब मांहीं, उससे अलग वस्तु कोई नांही।
निराकर कोई रूप न रेखा, उसका बिंब कहां किस देखा।
व्यापक व्याप्य रूप से मिश्रित, फिर भी दोनों अलग अमिश्रित।
केवल एक ब्रह्म यदि कहिये, व्यापक व्याप्य सबंध न गहिये।
बहदारण्यक पुस्तक देखें, अन्तर्यामी ब्राह्मण पेखें।
स्पष्ट भाव यह उसमें खोला, कैसा सुन्दर भाव अमोला।
हो नहीं सकता ब्रह्म आभासा, रूप नहीं तो कैसी भासा।

अन्तःकरण उपाधि से, कहो ब्रह्म को जीव।
बालकपन की बात यह, मूरखता की सीव।।

खण्डनीय चल अन्तःकरणा, अचल अखण्ड ब्रह्म निर्वर्णा।
ब्रह्म जीव यदि पृथक न मानो अज्ञानी पुन प्रभु को जानो।
जँह जँह जाये अन्तःकरणा, वहाँ वहाँ प्रभु पर छाय आवरणा।
वहाँ का ईश्वर हो अज्ञानी, जिसने सत्ता निजी भुलानी।
पुन त्यागेगा जो जो देशा, ज्ञानी हो वह ब्रह्म प्रदेशा।

जेहि विधि छत्र करे सिर धारण, कर देता परगास प्रवारण।
वहाँ वहाँ छाया जहाँ जहाँ छाता, वहाँ प्रकाश जहाँ से हट जाता।
एहि विधि जहाँ जहाँ अन्तःकरणा, वहाँ वहाँ पारब्रह्म सावरणा।
पारब्रह्म कहीं होगा ज्ञानी, कहीं हो बद्ध मुक्त अज्ञानी।

एक देश आवरण हो, यदि अखण्ड प्रभु केर।
सकल ब्रह्म पर पड़ेगा, दुष्प्रभाव तब फेर ।।

सकल ब्रह्म होगा अज्ञानी, तन्तु बिगड़े बिगड़े तानी।
एक बड़ी आती कठिनाई, प्रभु का ज्ञान न रहता स्थायी।
प्रभु ने अंतकरण जिस द्वारा, मथुरा में जो दृश्य निहारा।
भूल जाय जा काशी माँहीं, चिदाभास वह पहला नाँही।

"अन्यदृष्टमन्यो न स्मरतीति न्यायात्"।

सिमरे अन्य अन्य का देखा, नहीं किसी ने जग में पेखा।
चिदाभास जो मथुरा वासी, सो निवास नहीं करता कासी।

पारब्रह्म ही जीव यदि, तो क्यों नहीं सर्वज्ञ!
कहाँ गई सर्वज्ञता, बना जीव अल्पज्ञ।।

सोरठा— भूल जाय सब ज्ञान, ब्रह्म बिंब यदि अलग हैं।
नष्ट होय पहचान, पूरब देखे सुने की।।

जो तुम कहो ब्रह्म है एका, ताँते सिमरण रखे अनेका।
तो प्रभु दुखिया एक ठिकाने, एक ठिकाने रत अज्ञाने।
सकल ब्रह्म पाये दुख नाना, सकल ब्रह्म डूबे अज्ञाना।
जितने यह दृष्टान्त तुम्हारे, प्रभु को दूषित करने हारे।
शुद्ध बुद्ध नित मुक्त स्वभावा, पारब्रह्म जसु पार न पावा।
बद्ध अपावन उंसे बनाते, उसे अविद्या माँहि डुबाते।
पारब्रह्म जो सत्य अखण्डित, उसको तुम करते हो खण्डित।

वे०कुं०— निराकार का भी लखें, नित पड़ता आभास।

दर्पण सरिता सलिल में, झलके यथा आकास।।
झलके यथा आकास, रूप अरु रंग न जाका।
नीली छाया पड़े, मनहु कोई सोई राका।।
त्यों प्रभु अंतःकरण माँहि बिंबित साकारा।
लख पायें साकार गगन ज्यों हीन आकारा।।

सिं॰कुं॰— नहीं रूप आकास में, देख न पावें नैन।
माननीय नहीं हो सकें, निपट असंभव बैन।।
निपट असंभव बैन, रूप बिन देखे कोई।
प्रकृति के विपरीत, नहीं अनहोनी होई।।
नीली नीली गंहर, सरीखी जिसकी भासा।
वह वस्तु साकार, नहीं बिन रूप आकासा।।

वे॰प्रश्न— नीला सा क्या छा रहा, जैसे तना वितान।
जिसकी छाया पड़ रही, निर्मल जल में आन।।

सिद्धान्ती — यह जो छाया नील पदारथ, त्रसरेणु मिल रहे यथारथ।
जल अरु अग्नि के त्रसरेणु, जिनमें मिली भूमि की रेणु।
ऊंचे उड़ कर नभ में छाये, सघन होय जनु गगन लगाये।
सूरज ने इनको आकर्षा, जहाँ से होती रहती वर्षा।
यदि जल उड़ ऊपर नहीं जाये, कहो, कहाँ से वर्षा आए।
दूर दूर फैला सा तम्बु, नज़र पड़े सो जानो अम्बु।
सलिल चक्र यह जानो सारा, नीला नीला कारा कारा।
घनाकार जिमि लखें कुहीरा, स्याम रंग जनु प्लावित नीरा।
दूर दूर से घन सा भासे, कासनि सी भासा आभासे।
निकट लखें कछु नजर न आये, पर आकास पर जल दर्साये।

वे॰ सोरठा— क्या मिथ्या दृष्टान्त, रज्जु सर्प स्वप्नादिके।
ब्रह्म सत्य जग भ्रान्त, जो हमने पहले कहा।।

सो॰सि॰— नहीं मिथ्या दृष्टान्त, मिथ्या है तुमरी मति।
क्यों जग कहते भ्रान्त, निज नयनों से निरख कर।।

सि॰— किस को होता है अज्ञाना, *वेदांती*— अज्ञानी होता भगवाना।
सि॰— प्रभु सर्वज्ञ व है अल्पज्ञा, *वेदांती*— नहीं अल्पज्ञ नहीं सर्वज्ञा।

वेदांती— अल्प ज्ञान सर्वज्ञता, सब उपाधि के रंग।
सिद्धांती— अच्छा तो बतलाइये, को उपाधि के संग।।

वेदाँती—सहित उपाधिके है ईश्वर, सि॰ क्या सर्वज्ञ नहीं जगदीश्वर?
जो तुम कहो उपाधि झूठी, किसने कल्पित रची अनूठी।
कौन कल्पना करने वारा, झूठ उपाधि सिरजन हारा।

वेदांती— जीव ब्रह्म है वा नहीं, कैसा इसका रूप।
सिद्धांती— असत कल्पना क्यों करे, यदि हो ब्रह्म सरूप।।

असत कल्पना कहिये जाँकी, क्यों कर साँची वाकी झाँकी।
ताँते जीव न होवे ईश्वर, एक जीव दूसर जगदीश्वर।

वेदांती — सत असत्य हम मिथ्या जाने, दोनो की हम नहीं पहचानें।
मिथ्या बातें मिथ्या बानी, यह सब मिथ्या जगत कहानी।
सि॰ — जब तुम मिथ्या कहने वारे, मिथ्या सकल विचार तुम्हारे।
तो तुम क्यों नहीं सगरे झूठे, झूठ तुम्हारे कथन अनूठे।
वेदांती — झूठे सही न इसमें हानि, झूठ सत्य सब कल्पित बानी।
सब कल्पित हैं दृश्य हमारे, अधिष्ठान हम साक्षी न्यारे।
सि॰ — सत्य झूठ के तुम्हीं अधारा, पुन दोनों से रहता न्यारा।
तुम तस्कर तुम ही धनवाना, ताँते तुम नहीं रहे प्रमाना।
सो प्रमाण जो सूनृत बोले, सत पर चले न डगमग डोले।
झूठ न कहे करे नहीं माने, उसकी बात सृष्टि परवाने।
तुम निज बात स्वयं झुठलाते, मिथ्यावादी स्वयं कहाते।

वेदांती— इस माया के विषय में, क्या तुम रखो विवाद।
जो आश्रित है ब्रह्म के, जिसका नहिं कोई आद।।

प्रभु आश्रित जो रहती माया, ब्रह्मकरण ब्रह्म की काया।
क्या तुम इस माया को मानो, अथवा वह भी झूठी जानो।
सि॰— हम नहीं मानें ऐसी माया, नजर पड़े परखे नहीं काया।
है तो नहीं पर सब को भासे, अंध नयन जग को परगासे।
वे माने अस माया झूटी, आँख हृदय की जिनकी फूटी।
वंध्या के सुत की प्रतिछाया, देखे यहाँ असम्भव माया।

सन्मूलाः सोम्येमाः प्रजाः।

छान्दोग्य उपनिषद में, सन्मूला से बैन।
उनसे उलटा क्यों कहो, पढ़े खोल कर नैन।।

वेदांती— शंकर गुरु वसिष्ठ सम, पंडित निश्चल दास।
क्या तुम उन पर भी नहीं, रखते हो विश्वास।।

उनकी विद्या अपर अपारा, उन को पूजे सब संसारा।
तुम से बढ़ कर सब विद्वाना, जिनका यश सब सृष्टि बखाना।
उनका भी तुम करते खंडन, फिर तुम किसका करते मंडन।

सि॰— तुम भी विद्या पढ़े हो, तुम भी हो विद्वान।
अथवा अनपढ़ मूढ़ हो, या रखते कुछ ज्ञान।

वेदांती—हमने भी पुस्तक पढ़े, राखें कुछ कुछ ज्ञान।
शास्त्र वचन को समझते, रखें वेद का भान।।

सि॰— तो वसिष्ठ गुरु आदि का, वर्णन कीजे पक्ष।
हम उनका खण्डन करें, विद्वत लोग समक्ष।।

जिसका पक्ष सिद्व हो जावे, बड़ा वही पुन माना जावे।
जो अखण्डय हो उनकी युक्ति, तो उन ही की लेकर उक्ति।
क्यों नहीं खण्डन किया हमारा, निष्फल उनका लिया सहारा।
ब्रह्म सत्य जग मिथ्या सपना, शंकर का मत था नहीं अपना।

जैन धर्म के खण्डन कारण, यह मत उसने कीना धारण।

देश काल लख बहुधा ज्ञानी, स्वारथ हित करते मन मानी।
मन से सत्य यदि यह माना, तौ पुन सत्य न उसने जाना।

विद्वत्ता कितनी रखें, देखों निश्चल दास।
जीव ब्रह्म एकत्व पर, देते हेत्वाभास।।

पढ़िये उनका वृत्ति प्रभाकर, जिसको गनहिं ज्ञान रत्नाकर।
जीव ब्रह्म में नहीं कछु भेदा, चेतनता के हेतु अभेदा।
दोनों चेतन हैं इस कारण, किया एकता का निर्धारण।
अल्प बुद्धि बालक से बैना, जिनके बन्द ज्ञान के नैना।
नहीं साधर्म्य मात्र के कारण, कर सकते एकत्व निधारण।
होता है वैधर्म्य विभेदक, ब्रह्म रु जीव ऐक्य का छेदक।
यथा कहें जल भूमि अभेदा, जड़ होने से रहे न भेदा।
जड़ पृथिवी अरु जड़ है पानी, ताँते दोनों वस्तु समानी।
जिमि यह वाक्य त्रिकाल न संगत, एहि विधि निश्चलदास अंसगत।
जो है धर्म जीव के मांही, सों सब धर्म ब्रह्म में नाहीं।
जींव अल्प अरु है अल्पज्ञा, ब्रह्म सर्वगत अरु सर्वज्ञा।
जीव भ्रान्तिमय भूलें करता, है निर्भ्रान्त ब्रह्म जग धरता।
ताँते ब्रह्म जीव दोऊ भिन्ना, इनको कहना भूल अभिन्ना।
एहि विधि पृथिवी जल नहीं एका, इनमें हैं वैधर्म्य अनेका।
भूमि माँहि गन्धि कठिनाई, जल में रसता अरु तरलाई।
एहि विधि पृथक ब्रह्म अरु जीवा, जीव ससीव रु ब्रह्म असीवा।
एक न थे नहीं हैं नहीं होंगे, एक कहें बुद्धि के चोंगे।
इतने से कीजे विश्वासा, कितने पण्डित निश्चल दासा।
जिसने योग वसिष्ठ बनाया, कहत जगत को मिथ्या माया।
वह वेदान्ती रहा नवीना, वेद शास्त्र विद्या से हीना।
नहीं वसिष्ठ वाके निर्माता, नहीं वल्मीक राम जग त्राता।
वे सब रहे वेद अनुयाई, वेद विरुद्ध कहें किम भाई।

प्रश्न– सूत्र शारीरिक मान्य है, अथवा नहीं प्रमान।
लिखे महा मुनि व्यास ने, जिनका ज्ञान महान।।

सम्पाद्याऽविर्भावः स्वेन शब्दात् ।।१।। ब्राह्मणे जैमिनिरुपन्यासादिभ्यः ।।२।। चित्तित न्मात्रेण तदात्मकत्वादित्यौडुलोमिः ।।३।। एवमप्युपन्यासात् पूर्वभावादविरोध वादरायणः ।।४।। अत एव चानन्याधिपतिः ।।५।। वेदान्तदर्शन अ॰ ४ पा॰ ४ सू॰ १।५–७। ६

प्रकट होय यह जीव पुन, पाकर आतम रूप।
जो आतम पहले रहा, चेतन ब्रह्म स्वरूप।।
"स्व" पद का यह अर्थ है, अपना ब्रह्म स्वरूप।
ताँते ब्रह्म रु जीव यह, हैं दोनों इक रूप।।

जैमिनि मुनि इस भान्ति बखानें, जीव ब्रह्म वह एकहु मानें।
"अयमात्मा अपहत पाप्मा"।

सोरठा– ऐश्वर्य्य प्राप्ति पर्य्यन्त, जीव ब्रह्म सम ही रहे।
पावें सुःख अनन्त, कहते हैं मुनि जैमिनी।।
चेतनता तो रूप में, रहे मुक्ति मँह जीव।
औडुलोमि अस कहत हैं, एक जीव अरु पीव।।

बृहदारण्यक कहे अनूपा, वर्णन करे तदात्म स्वरूपा।
औडुलोमि तिन युक्ति आधारे, जीव ब्रह्म माने नहीं न्यारे।
यही युक्ति लेकर मुनि व्यासा, रखें एकता पर विश्वासा।
सैश्वर्य्य हो करके योगी, स्वयं ब्रह्म रूप सुख भोगी।
दूसर अधिपति से हो हीना, अधिपति सब का होय प्रवीना।
ब्रह्म रूप हो भोगे मुक्ति, व्यास मुनि की यह है उक्ति।

उत्तर– जेहि विधि तुमने हैं किये, इन सूत्रों के अर्थ।
निपट निरर्थक दोष युत, भ्रान्ति मूल अनर्थ।।

सुनहु तुम्हें हम अर्थ सुनाएं, इनके भाव यथार्थ बताएं।
जब लग जीव न निर्मल होता, मन इन्द्रिय के मल नहीं धोता।

शुद्ध स्वकीय रूप नहीं पावे, जब लग मल अघ नहीं नशावे।
तब लग पाय न अन्तर्यामी, मन में बैठा मन का स्वामी।
तब लग यह आनन्द न पाता, भटकत रहे सदा दिन राता।

पाप रहित ऐश्वर्य युत, जब योगी हो जाय।
पारब्रह्म के संग बस, वह मुक्ति सुख पाय।

एंहि विधि जैमिनि मुनि बखानें, जीव ब्रह्म को एक न मानें।
दोष अविद्या आदिक जेते, छुट जाँय सगरे मल तेते।
चेतन शुद्ध रूप हो जाये, पुन तादात्म्य ब्रह्म से पाये।
तब प्रभु से होवे सम्बन्धा, छूट जाँय सब भव के बंधा।

जीते जी ऐश्वर्ययुत, गहे शुद्ध विज्ञान।
जीवित जीवन मुक्त हो, पाये पद निर्वान।।

जब योगी हो सत संकल्पा, छूट जाँय सब झूठ विकल्पा।
तब वह स्वयं प्रभु को पाये, मुक्ति का आनन्द उठाये।
वँह वह विचरे हो स्वाधीना, नहीं किसी के वहाँ अधीना।
ऊँच नीच मुक्ति में नाहीं, सब स्वाधीन मुक्ति के माँही।

नेतरोऽनुपपत्तेः ।१।१।१६।१।। भेद व्यपदेशाच्चं ।१ं।१।१७।२।। विशेषण भेदव्यपदेशा भ्याम् च नेतरौ। १।२।२२।३।। अस्मिन्नस्य च तद्योगं शास्ति। १।१।१६।४।·। अन्तस्तद्धर्मों पदेशात्। १।१।२०।५।। भेद व्यपदेशाच्चान्यः ।१।१।२१।६।। गुहां प्रविष्टात्मानौ हि तद्दर्शनात् १।२।११।७।। अनुपपत्तेस्तु न शारीरः। १।२।३।८।। अन्तर्य्याम्यधि दैवादिषु तद्धर्मव्यपदेशात् १।२।१८।९ ।। शारीरश्चोभयेऽपि हि भेदेनैनमधीयते।। १।२।२०।१०।। व्यासमुनिकृत वेदान्त सूत्रांणि।

नहीं ब्रह्म से इतर कोऊ, सृष्टि कर्ता जीव।
अल्प अज्ञ असमर्थ पुन, दुख सुख युक्त ससीव।।

रसं ह्येवायं लब्ध्वाऽनन्दी भवति। उपनिषद

जब यह आतम रस को पावे, सुख स्वरूप ईश्वर में न्हावे।
तब होवे आनन्द स्वरूपा, गहे विलक्षण शांति अनूपा।
प्राप्ति विषय ब्रह्म को माना, प्राप्तिवान आतम को जाना।

ताँते जीव ब्रह्म में भेदा, इन को शास्त्र न कहें अभेदा।

दिव्योह्यमुर्तः पुरुषः स ब्राह्याभ्यन्तरोऽजः। अप्राणोह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः।।

मुण्डकोपनिषद २ खं॰१मं॰२

दिव्य शुद्ध अरु मूर्ति विहीना, सब जग पूरित सब में लीना।
अजर अजन्मा प्रभु अकाया, यह जग जाके गर्भ समाया।
जाको नहीं श्वास प्रश्वासा, जाको शुद्ध स्वरूप प्रकासा।
नहीं शरीर नहीं मन को योगा, नाश रहित तिस हर्ष न सोगा।
प्रकृति जीवसे परे सनातन, सुख स्वरूप वह पुरुष पुरातन।

प्रश्न— सर्व वियापी ब्रह्म में, होत जीव का योग।
जीव मात्र से ब्रह्म का, अथवा हो संयोग।।

सिद्धान्ती— योग करें प्रतिपादन जिनका, अवस भेद होता है तिनका।
सो जुडते जो अलग पदारथ, एक वस्तु में योग अकारथ।
कहते प्रभु को अन्तर्यामी, जीवहु अन्दर व्यापक स्वामी।
व्यापक व्याप्य सम्बन्ध बतावे, जीव ब्रह्म में भेद जितावे।

पारब्रह्म जिमि जीव से, राखे भिन्न स्वरूप।
पंच भूत से तेहि विधि, इसका रूप अनूप।

अलग जीव से जैसे ईश्वर, त्यों प्रकृति से है जगदीश्वर।
पंचभूत दिक वायु दिवाकर, इन्द्रिय अरु मन ज्ञान गुणाकर।
दिव्य देव ज्ञानी विज्ञाना, इनसे पृथक एक भगवाना।

गुहां प्रविष्टौ सुकृतस्य लोके।

उपनिषदों के एहि विधि बैना, पढ़ें ध्यान धर खोले नैना।
जीव ब्रह्म को पृथक बतावें, ठौर ठौर पर भेद दिखावें।
करता जीव तनु को धारण, नहीं जीव ईश्वर एहि कारण
भिन्न भिन्न दोनों के धर्मा, गुण स्वभाव अरु मिलें न कर्मा।

देव भूत अरु आतम का, अधिष्ठान कर्तार।
सब के अन्दर रम रहा, प्रभु प्यारा भर्तार।।
यह तनु धारी जीव नहीं, कभी ब्रह्म का रूप।
ब्रह्म जीव के भेद को, जानहु सिद्ध स्वरूप।।

यह शारीरिक सूत्र प्रमाना, ब्रह्म जीव का भेद बखाना।
जाने नहीं वेदान्त नवीना, अर्थ अनर्थ उन्होंने कीना।

एहि विधि इनका नहीं घटे, उपक्रम उपसंहार।
तर्क युक्ति से शून्य सब, तुच्छ त्याज्य निस्सार।।

उपक्रम नाम सृष्टि आरम्भन, ब्रह्म करे जग का प्रारम्भन।
ब्रह्म माँहि ही सृष्टि समावे, उपसंहार नाश कहलावे।
एकहि वस्तु ब्रह्म तुम जानो, उससे भिन्न नहीं कछु मानो।
पुन यह कहें ब्रह्म ही नाशे, सृष्टि आदि में ब्रह्म प्रकाशे।
जन्मे मरे ब्रह्म ही एका, नहीं कछु अन्य ब्रह्म अतिरेका।
वेद शास्त्र ऐसा नहीं मानें, अजर अमर वे प्रभुहिं बखानें।

हे नवीन वेदान्तियों, यह तुम्हार दुर्बोध।
त्यागहु मिथ्या कल्पना, करे न ईश्वर क्रोध।।

निर्विकार वह अन्तर्य्यामी, शुद्ध सनातन नहीं परिणामी।
वह निर्भ्रान्त ज्ञान को रूपा, अजर अमर आनन्द स्वरूपा।
जब जग का हो उपसंहारा, कारण रूप रहे संसारा।
आतम भी रहता अविनाशी, तीनहुं नित्य न कोऊ विनाशी।
इस प्रकार की बातें नाना, इनका सार नहीं पहचाना।
अनिक विचार अयुक्त असंगत, जिन सब को यह मानहिं संगत।

कुंडलिया –शंकर मत अरु जैन के, फैले पुनः विचार।
दोनों निज निज धर्म का, करते रहे प्रचार।।

करते रहे प्रचार वर्ष, त्रय शत पर्य्यन्ता।
प्रगट भये तब भूपति, विक्रम नृप बलवन्ता।।
स्मरण रहेगी विक्रम, जननी वह उज्जैनी।
भारत में तब फैल, रहे थे शांकर जैनी।।

अस्त व्यस्त था सगरा भारत, इक नरपति दूसर को मारत।
आपस में लड़ते थे राजा, क्षुब्ध हुआ था राज समाजा।
विक्रम के विक्रम के कारण, नृपति कलह का भया निवारण।
शान्त हुआ नैतिक भवसागर, देश प्रेम पुन भय उजागर।
भर्तृहरि पुन भये नरेशा, गहा उन्होंने साधु वेषा।
राज त्याग वे भये विरागी, विद्या प्रेमी प्रभु अनुरागी।
वर्ष पंच शत विक्रम पाछे, भोज भये इक नरपति आछे।

शब्द शास्त्र उसने पढ़ा, अरु काव्यालंकार।
कालिदास इक रत्न कवि, था उसके दर्बार।।

नृपति भोज विद्या का प्यारा, उसने अतिशय काव्य प्रचारा।
कालिदास इक रहा अजाली, भेड़ों की करता रखवाली।
रच रघुवंश अमरता पाई, जग में उसकी कीरति छाई।
राजा भोज रहे अति दानी, जो उनके ढिग जावे ज्ञानी।
जाकर सुन्दर श्लोक सुनाए, दान दक्षिणा जी भर पाये।
भोज बाद फिर आँधी आई, फेर अविद्या बदरी छाई।
श्रीमंतों ने पढ़ ना छोड़ा विषय भोग से नाता जोड़ा।
शंकर पूरब वाम अनंतर, शैव रहे दोनों के अंतर।
पर इनका बल बढ़ नहीं पाया, विक्रम ने इनको चमकाया।
शैव पंथ की शाखा नाना, पाशुपतादिक जिन्हें बखाना।
दशहु महाविद्यादिक शाखा, जिमि जैनी ग्रन्थों में भाखा।

शंकर को कहने लगे, शंकर का अवतार।
शमन किया मत जैन का, युक्ति त्रिशूल प्रहार।।

यह विचार धारा जब आयी, तब शंकर के सब अनुयायी।
शंकर को शिव रूप बनाने, शैव पंथ लागे अपनाने।
वामी नर भी संग मिलाये, वे सब गौरी भक्त कहाये।
शिव के भक्त शैव सन्यासी, अरु गौरी के वाम उपासी।

दोनों ही धारण करें, भस्म ओर रुद्राक्ष।
वेदों पर वामी अधिक, करते नीच कटाक्ष।।
कण्ठ माँहि रुद्राक्ष नहीं, अरु नहीं भस्म कपार।
सो नर अत्यज जानिये, बार बार धिक्कार।।

कंठ माँहि हों बत्तिस दाना, सिर पर चालिस छः छः काना।
बारह बारह कर में धारे, सोलह सोलह भुज पँह डारे।
इक सौ आठ हृदय पर पहने, रुद्राक्षों के सुन्दर गहने।
साक्षात वह शिव को रूपा, नील कण्ठ भूपन के भूपा।
साकत भी ऐसा ही मानें, वे भी इसको सत्य प्रमानें।

मिलकर वामी शैव पुन, कीनी सम्मति एक।
लिंग अरु भग स्थापन किया, इक दूसर की टेक।।

जिनकी संज्ञा लिंग जलहरी, दोनोंकी अब छनती गहरी।
करने लागे इनकी पूजा, इनके सम कोउ निलज न दूजा।
दोष न देखे स्वारथ अंधा, प्यारा लगे पाप का धंधा।
लिंग भगा की रख कर मूरत, कहने लगे दुष्ट वे धूरत।
जो जन इसको शीश निवाये, चार पदारथ सहजहिं पाए।
जैनी भोज काल के पीछे, लगे बनाने मन्दिर आछे।
मूरति पूजा में अनुरागे, दर्सन को नर जाने लागे।
आग लगी पोपों के मन में, क्यों जाते जन जैन भवन में।
नये पंथ पच्छम में जागे, यवनहु आने जाने लागे।
पड़ी पोप को तब निज घर की, जैन वृद्धि लख छाती धरकी।
तब स्वारथ का स्वाँग रचाया, अरु देखें क्या श्लोक बनाया।
"न वदेद्यावनीं भाषाम्, प्राणैः कण्ठ गतैरपि। हस्तिना ताड्यमानोऽपि,न गच्छेज्जैन मंदिरम्।।"

सो०– होय कण्ठ गत प्राण, कबहु न बोलें यावनी।
गज से पाने त्राण, मंदिर जैन न जाइये।।

जो पूछे इन से परमाना, कहे मारकण्डेय पुराना।

जैसे दुर्गा पाठ मँह, देवी शक्ति महान।
एहि विध निज निज इष्ट का, करते कभी बखान।।

कुंडलिया–भोज काल में किसी ने, लिक्खे दोऊ पुरान।
व्यास मुनि के नाम से, जाने सकल जहान।।
जाने सकल जहान, मारकण्डेय पुराना।
शिव पुरान पुन व्यास, नाम से उसे बखाना।
कर पद उनके भोज, नृपति ने तुर्त कटाए।
फिर न किसी ने भोज काल में ग्रंथ बनाए।

दोहा– ऋषि मुनियों के नाम से, पुस्तक लिखे न कोय।
जो नर ऐसा करे पुन, दण्ड पायेगा सोय।।

यह आज्ञा घोषित करवाई, पण्डित वर्ग तलक पहुंचाई।
भोज लिखित संजीवनि देखें, उसमें यह आज्ञा अवरेखें।
राज ग्वालियर भिंड गरामा, वहां तिवारी ब्राह्मण धामा।
यह इतिहास ग्रन्थ वँह राखा, जाकी सुन्दर संस्कृत भाखा।
रावसाहब लखुना के वासी, रामदयाल उनके सहवासी।
दोनों ने निरखा निज नयनन, पढ़े भोज के सगरे बयनन।
उसमें स्पष्ट लिखा जो सुनिये, सत्यासत्य ह्रदय मँह गुनिये।

श्लोक लिखे थे व्यास ने, चार सहस शत चार।
उनके शिष्यों ने लिखे, छः सौ पांच हजार ।।

श्लोक सहस दस का महा भारत, निज पुस्तक में भोज उचारत।
बीस सहस विक्रम नृप काले, एते श्लोक और पुन डाले।
मोर पिता के शासन मांही, न्यून सहस पच्चिस से नाहीं।

मेरी आयु बीती आधी, पर यह बढ़ती जाति व्याधि।
तीस सहस से अब नहीं न्यूना, आगे होवे इस से दूना।
जो ऐसे ही बढ़ता जाये, ऊँट बोझ पुन कौन उठाये।
लेखक नाम लिखें मनमाना, लिखते जाएं ग्रन्थ पुराना।
ऋषि मुनि नाम कलंकित करते, अंट संट ग्रन्थों में भरते।
इससे फैले भ्रम को जाला, आर्यवर्त संशय में डाला।
इससे होय धर्म को नाशा, मिट जायेगा वेद प्रकाशा।
थे वेदज्ञ भोज महाराजा, अरु कटिबद्ध वेद के काजा।
उनकी पुस्तक भोज प्रबंधा, उसमें लिखे नीति अनुबन्धा।

घटयैक्या क्रोश दशैक गश्वः सुकृत्रिगो गच्छति चारु गत्यावायुं ददाति व्यंजन सुपुष्कलं विना गनुष्येण चलत्यजस्त्रम्।

कुंडलिया— भोज काल में बना था, अश्व रूप इक यान।
जो चलता था कला से, द्रुतगति पवन समान।।
द्रुतगति पवन समान, गगन में उड़ता जावे,
सार्ध सताइस कोस घण्टे में पहुंचावे।
इक पंखा था बिना हाथ जो चले निराला,
शिल्प वृद्ध था काल भोज नरपति को काला।।

आज यदि हम उनको पाते, यूरपीन फिर नहीं इतराते।
पोप लोग लोगों को रोकें, जैन भवन जाने से टोकें।
पर दुनिया रुकने नहीं पाई, मूरति पूजा उन्हें लुभाई।
पुन विचार पोपों ने कीना, सब कुछ जैन पंथ ने छीना।
जो सारे ही शिष्य हमारे, चले जांयगे जैन दुआरे।
मिट जायेगी कीरति संपत, चेले हमसे होंगे चंपत।
अस विचार तिन जैन समाना रचे देवता अपने नाना।
चौबिस तीर्थंकर जैनिन के, भे अवतारहि चौबिस इनके।

मन्दिर मूरति अरु कथा, रच लीने अवतार।

शिव दुर्गा अरु विष्णु के, मन्दिर ठाकुर द्वार।।
जैन पंथ ने जिमि रचे, उत्तर आदि पुरान।
त्यों पोपों ने भी रचे, अपने ग्रन्थ महान।।

अष्टादश रच लिये पुराना, जिनमें लिखे कथानक नाना।
वर्ष सार्धशत भोज अनन्तर, दोऊ मत चलते रहे निरन्तर।
वैष्णव पंथ नया इक जन्मा, शैव द्वेष था जिनके मन मा।
वैष्णव मत शठ कोप चलाया, जन्म जाति कंजर में जाया।
पुनः हुआ मुनि वाहन भंगी, वैष्णव मत संस्थापन संगी।
भया तीसरा यवनाचारज, तिस प्रचार का कीना कारज।
वह था यवन वंश में जनमा, प्रेम रखे इस मत से मन माँ।

रामानुज चौथा भया, ब्राह्मण कुल अवतंस।
बहुत शिष्य उसके हुए, ब्राह्मण छत्री बंस।।
शिव पुराण शैवन रचा, देवी भगवत शक्त।
वैष्णव विष्णु पुराण को, पायस रचा विषाक्त।।

लिखे न अपने अपने नामा, मन में स्वारथ साधन कामा।
लिखते नाम यदि वे अपने, सफल न होते उनके सपने।
व्यास नाम से ग्रन्थ रचाए, नाम जाल में लोग फँसाये।
नये ग्रन्थ का नाम पुराना, छद्म न जाये कही पछाना।
जैसे कोई नर कंगाला, सुत का नाम रखे भूपाला।
अब जनमा अरु नाम सनातन, कौन प्रमाणे उसे पुरातन।
जैसे यह आपस में लड़ते, ग्रन्थों में भी रहें झगडते।

कुंडलिया— देखो देवी भागवत, श्री पुर रानी श्री।
जगत बनाया उसी ने, जड़ चेतन सब जी।
जड़ चेतन सव जीव, ब्रह्मा विष्णु महेशा।
मेघ पवन अरु सूर्य्य, गणेश कुबेर सुरेशा।।

श्री से बड़ा न कोय, सभी श्री पद के सेवी।
तुच्छ दास सब देव, भागवत देखो देवी।।

एक दिवस श्री भई सकामा, घिसने लागी निज कर भामा।
पड़ा हथेली ऊपर छाला, ब्रह्मा उपज पड़ा तेहि काला।
तब ब्रह्मा से देवी बोली, रूप देख हिरदे से डोली।
मेरे संग विवाह कराओ, मुँह मांगा मो ते वर पाओ।
ब्रह्मा बोले तू मम माता, जननी सुत का कैसा नाता।
क्रुद्ध होय श्री भ्रुकुटी फेरी, उसको किया भस्म की ढेरी।
रानी ने फिर हाथ घिसाया, उससे विष्णु को उपजाया।
उससे कही वही फिर बानी, पर विष्णु ने बात न मानी।
विष्णु को भी फूँक जलाया, फिर घिसाय शिव को जनमाया।
शिव ने उसका वचन सकारा, त्राहि त्राहि पर तुर्त पुकारा।
मैं हूँ सुत तू मेरी माता, पुत्र मात का इष्ट न नाता।
रूप दूसरा जननी धारो, अनाचार से बेगि उबारो।
श्री ने कीना रूप निवर्तन, पुन नाटक का यह परिवर्तन।
शिव ने आँख इधर जब फेरी, दोऊ राख की देखी ढेरी।
कहने लगे बताओ रानी, इन ढेरोंकी कहा कहानी।
बोली दोनों तेरे भैय्या, मैं इन दोनों की हूं मैय्या।
नहीं इन्होंने वचन सकारा, दोऊ जलाकर कीनें छारा।
शिव बोले तब इन्हें जिलाओं, इन दोनों के ब्याह कराओ।
इनके हित दो कन्या जनमें, यह इच्छा है मोरे मनमें।
मोर एकाकी जिया न लागे, किसी ठौर नहीं मन अनुरागे।
शिव को मुँह मांगा वर दीना, सावधान दोनों को कीना।

मां से नाता नहीं किया, लिया बहन से जोड़।
यह लील्हा है पोप की, बहन गही माँ छोड़।।

ब्रह्मा रुद्र देव अरु विष्णु हैं कहार देवी के जिष्णु।

इस प्रकार के लिखे गपौड़े, भंगा पी पी लम्बे चौड़े।
कहाँ बसा श्री पुर को धामा, वाके मात पिता किं नामा।
जो तुम श्री को कहो अनादी, जो संजोग जनित वह सादी।
सुत माता का उचित न नाता, तो कर लें क्या भगिनी भ्राता।
इसमें देखी कौन भलाई, ऐसा लिखते लाज न आई।

शिव को शिव पुराण में, सब से कहा महान।
क्षुद्र देव सब देवियाँ, शिव सब से बलवान।।
जो पहने रुद्राक्ष को, तन पर भस्म रमाय।
वह पहुँचे शिवलोक में, आपहि शिव हो जाय।।

तब तो जाँय सुरग के द्वारे, गधे धूर में लोटन हारे।
पहने भील गुञ्ज की माला, तोड़े मनहुँ स्वर्ग का ताला।
घोड़े खच्चर गर्दभ कूकर, धूलि माँहि लोटे सब सूकर।
क्यों नहीं मुक्त होंय वे सारे, वे भी राख रमाने हमारे।

प्रश्न– कालाग्नि रुद्रुपनिषद, लिखते भस्म विधान।
वेद मंत्र है 'त्र्यायुषां', क्या नहीं तुम्हें प्रमान।।

रुद्र नयन का अश्रु पाता, उसी वृक्षको है उपजाता।
जो जग में रुद्राक्ष रमावे, उसे धार कर मुक्ति पावे।
यम डरपे अरु डरे भुवाला, जो रुद्राक्ष की पहरे माला।
बार बार अस लिखें पुराना, हमने वेदरु शास्त्र प्रमाना।

उत्तर– ऐसे ऐसे उपनिषद, माने कौन प्रमान।
लेखक कोई रखोड़िया, अनपढ़ अति अंजान।।
'यस्य प्रथमा रेखा सा भूर्लोका'

वचन निरर्थक जिसमें ऐसे, सत्य प्रमाणों उसको कैसे।
जिस रेखा को स्वयं लगायें, निज कर से पुन जिसे मिटाएँ।
वह रेखा भूलोक कहावे, सब झूठे मन के बहलावे।

मंत्र 'त्र्यायुषं' के जो अर्था, इसके उल्टे किये अनर्था।
'चक्षुर्वै जमदग्नि' कहिये, अर्थ नेत्र ज्योति के गहिये।
शतपथ पढ़ कर करें विचारा, इनके झूठ सभी उद्गारा।

त्रय शत वर्षों तक प्रभों, रहे नयन की जोत।
धर्म कर्म ऐसे करूं, घटे न ज्योति स्रोत ।।

आंसु गिरे पेड़ बन जाए, ऐसी गाथा मूरख गाए।
अरे मूढ़ बुद्धि के रीते, सृष्टि क्रमको को विपरीते।
जिस तरुका जो बीज बनाया, वैसी बने पेड़ की काया।
इससे उलटी बात न संभव, अश्रु बिन्दु से पेड़ असंभव।

तुलसी चंदन लेप सब, वृथा माल रुद्राक्ष।
भस्म रमा़ना गधे सम, वृथा घास कमलाक्ष।।

शैव स्वामी वेद विरोधी, भ्रष्टाचारी अति दुर्वोधी।
अलस मूर्ख कर्तव्य तियागी, मद्य मांस मुद्रा अनुरागी।
श्रेष्ठ पुरुष जो इनमें साजन, कहें न इस विध आदर भाजन।
जो जम डरे भस्म से भाई, क्यो नहीं डरते पुलिस सिपाई।
सिंह सर्प कुत्ते नहीं डरते, यम के दूत समीप विचरते।
नाम मात्र वेदों के पाठी, मलें राख तुलसी चन्नाठी।

प्रश्न– शैवरु वामी तो बुरे, मद्य मांस नित खाँय।
पर वैष्णव तो हैं भले, अपने राम रिझाँय।।

उत्तर– वैष्णव महां पतित दुर्बोधी, अज्ञानी अति वेद विरोधी।
जो नहीं वेदों का मत मानें, कैसे उनको हम परमाने।

"नमस्ते रुद्र मन्यवे" "वैष्णव मसि" "वामनायच" "गणानां त्वा गणपतिं हवामहे" "भगवती भूपा" "सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च"

वैदिक मंत्र लिखे अस नाना, शैव पंथ जिन मँह परमाना।
वेद करें शिव मत का मंडन, फिर तुम कैसे करते खण्डन।

उत्तर — सत्य अर्थ तुमने नहीं जाना, यह है नाम प्रभु के नाना।
अग्नि जीव वायु परमेश्वर, इनको कहें रुद्र सर्वेश्वर।
दुष्ट जनों को रुद्र रुलावे, इस कारण प्रभु रुद्र कहावे।
नमस्कार उस जगदीश्वर को, रुद्र रूपधारी ईश्वर को।
'अन्न' अर्थ 'नम' पद का कीजे, प्राण जठर को भोजन दीजे

"नमः इति अन्न नाम" निघन्टु ।।२।७।।

सब जग का शिव मंगलदाता, नमस्कार तेहि संध्या प्राता।

"शिवस्य परमेश्वरस्यायं भक्तः शैवः" "विष्णोः परमात्मनोऽयं भक्तः वैष्णवः" "गणपतेः सकल जगत स्वामिनोऽयं सेवको गाणपतः" "भगवत्या वाण्या अयं सेवको भागवतः" "सूर्यस्यचराचरात्मनोऽयं सेवकः सौरः"

शैव कहावें शिव के साधक, पारब्रह्म के भक्त प्रसाधक।
विष्णु भक्त को वैष्णव मानो, विष्णु नाम प्रभु का जानो।
सर्वगणों का जो है स्वामी, सो गणपति प्रभु अन्तर्यामी।
गणपति भक्त गाणपत कहिये, सकल सिद्धि गणपतिसे लहिये।
सूर्य चराचर व्यापक स्वामी, जीव जन्तु पालक हित कामी।
सूर्य्य उपासक सौर कहावे, अन्धकार अज्ञान नशावे।
कहें भगवती सूनृत वानी, रस मय प्रेम मधुरता सानी।
इन लोगों ने अर्थ न जाने, लागे झगड़ा व्यर्थ मचाने।
अलग अलग सब समझे देवा, एकहि जान न करते सेवा।
सुनहु एक हौं कथा सुनाऊँ, इनकी बुद्धि को दर्साऊँ।

इक वैरागी के रहे, दो चेले नादान ।
रखते श्रद्धा गुरु में, पर मूरख अंजान।।

दोनों गुरु के चरण दबावें, मुट्ठी चापी कर सुख पावें।
दोनों इक इक पग अपनाते, अपना अपना सेव्य दबाते।
इक दिन काम गया इक चेला, दूसरे चेला रहा अकेला।
गुरु ने जो करवट बदलाया, पग के ऊपर पग चढ़ आया।

तो डंडा चेले ने मारा, मोरे पग पर चढ़ना सारा।
चोट लगी गुरु उठ चिल्लाये, अरे दुष्ट क्या कीना हाये।
चेला तुर्त दूसरा आया, सेव्य चरण निज सूजा पाया।
गुरु से जान मामला सारा, उसने भी इक लगुड़ सम्हारा।
तूने मेरे पग को मारा, मैं तेरा पग करूं नकारा।
दूसर पग पर लगुड़ प्रहारा, गुरू तड़पे कर हाहाकारा।
लगे दण्ड दोनों बर्साने, गुरु की दिया लगाय ठिकाने।
धड़म धड़म डंडों की बारिश, गुरू की लगे मिटाने खारिश।
इक के बदले चार लगावें, अपनी अपनी भक्ति दिखावें।
तब गुरुदेव पुकार मचाई, देने लागे राम दुहाई।
तुर्त लोग दौड़े वहां आये, दोनों से डंडे रखबाए।
अरु बोले तुम कैसे चेले, पिले गुरु पर डंडे पेले।
दोनों चरण गुरु के भाई, क्यों लड़ते हो हो गुरभाई।
इन मूरख चेलों की नाँई, वैष्णव शैव रु लड़े गुसाँई।
कोई विष्णु शिव को अपमाने, कोई देवी को नाम बखाने।
सभी नाम ईश्वर के भाई, क्यों आपस में करो लड़ाई।
मन्द मति इतना नहीं जानें, न्यारा न्यारा ईश्वर मानें।
अद्वितीय प्रभु जगन्नियन्ता, पालक सर्वशक्ति बलवन्ता।
विष्णु रुद्र महेश गणेशा, सूरज आतम और सुरेशा।

सोरठा– सभी उसी के नाम, गुण अरु कर्म स्वभाव से।
वही प्रभु सुख धाम, बहु रंगी हर रंग में।।

अथ चक्रांकित मत समीक्षा

"तापः पुण्ड्रं तथा नाम माला मंत्र स्तथैव च। अमीहि पंच संस्कारा : परमैकान्त हेतवः।।" "अतप्त तनूर्नतदामोऽश्नुतेः इतिभातेः (रामानुज पटल पद्धतौ)"

शंख चक्र छापा करें, दग्ध करें भुज मूल।
उसे बुझावें दुग्ध में, मिटें जगत के शूल।।

कोई कोई दही दूध पी जावें, मनुष माँस आस्वादन पावें।
इसमें मानें प्रभु की प्रापति, अहो बुद्धि की भई समापति।
शंख चक्र से बिना तपाए, कोई जीव वैकुण्ठ न पाये।
कच्चा माँस अशुद्ध अपावन, नारायण के नहीं मन भावन।
जिमि चपरासी लख सरकारी, उससे डरते सब नर नारी।
शंखादिक के देख निशाना, यम के दूत डरें बलवाना।
मस्तक पर अनुलेपे टीका, जिमि त्रिशूल वा चिन्ह सिरी का।
दास शब्द नामों के पाछे, परम भक्त जो वैष्णव आछे।
कमल गट्ट की धारे माला, उससे यम अरु डरे भुवाला।

'ओं नमों नारायणाय' , करे मंत्र का जाप।
सीधा जाप वैकुण्ठ को, मिटें सकल संताप।।

"श्रीमन्नारायण चरणं शरणं प्रपद्ये" श्रीमते नारायणाय नमः""श्रीमते रामानुजाय नमः"

एहि विधि मंत्र पाय धनवाना, धनवानों का राखें माना।
मंत्र साधारण पाते छोटे, हाय जगत में धन के टोटे।
अलग अलग हैं निरख तुम्हारा, मंत्रों का करते व्यापारा।
वैसा सौदा जैसा गाहक, वैसा घोड़ा जैसा वाहक।
इन मंत्रों के सुनें प्रयोजन, मंत्रों के बल खाते भोजन।
लक्ष्मी युत स्वामी नारायण, मैं उनके पग का पारायण।
शोभा युत नारायण प्यारा, नमस्कार तेहि बारंबारा।
वामी के जिमि पंच मकारा, पंच वैष्णव के संस्कारा।
शंख चक्र का करते छापा, करते रहते वृथा आलापा।
इस पर देते वेद प्रमाना, अर्थ करें उसका मन माना।

"पवित्रंते विततं ब्रह्मणस्यते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः। अतप्त तनुर्नतदामो अश्नुते श्रृतास इद्वहन्तस्तत्समाशत।।१।। "तपोपवित्रं विततं दिवस्पदे" ।।२। ऋ.मं. ६ सू. ८३ मं. १/२

सुनहु अर्थ साँचा बतलाऊँ, सन्मारग पर इन्हें लगाऊँ।

भगवन वेद रु विप्र के, तुम हो पालन पार।

तुमने अपनी व्याप्ति से, घेर रखा संसार।।

जिसने ब्रह्मचर्य नहीं धारा, जिसने अनृत वचन उचारा।
शम दम किया न योगाभ्यासा, इन्द्रिय सुख की जिसको आसा।
तपों हीन जाका मन काँचा, वह किम रूप लखे तुव साँचा।
जिनके मन हैं तपः पुनीता, अन्तःकरण विकार अतीता।
वे तब शुद्ध रूप को पाएं, वे जन जीवन मुक्त कहाएं।

जो तेजोमय प्रभु के, जग में करें निवास।
सदाचार का तप तपें, उन्हें न यम का त्रास।।

अब देखें इन मंत्रों द्वारा इनके सिद्ध न होंय विचारा।
वेद कहें तप से मन शोधन, चर्म जलाते यह दुर्बोधन।
मूढ़ कहें वा इनको ज्ञानी, पिंड जलाएं करें निशानी।
'तनु अतप्त' वाक्य है भाई, क्यों नहीं सारी देह जलाई।
नहीं 'अतप्त बाहु इक देशा', ताँते तथ्य न इसमें लेशा।
तप नहीं तन को आग लगाना, तप है साँचा धर्म निभाना।
तप करते ऋषि मुनि तपस्वी, सत्कर्मी सच्चरित यशस्वी।

"ऋतं तपः सत्यं (तपः श्रुतं तपः शान्तं) तपो दमस्तपः स्वाध्यायस्तपः" तैतिरीय प्र॰ ०१० अ॰८

सत्याचरण रु सत्य विचारा, रखे पाप से मन को न्यारा।
इन्द्रिय दमन पुण्य सत्कर्मा, यह तप हैं, नहीं दाहन चर्मा ।
वेदाध्ययन शास्त्र अनुहारा, सत्यव्रती सत रखने वारा।
एहि विधि तप को तपे तपस्वी, मन से पाप न करे यशस्वी।
चक्रान्कित वैष्णव अति मूढ़ा, तत्व न जानें वेद निगूढ़ा।
वैष्णव पंथ चलाने हारा, था कंजर शठ कोप बेचारा।

भक्त माल जिसने लिखी, वह था नाभा डोम।
अंट संट गाथा लिखी, अंधकार का स्तोम।।
चक्रांकित का आदि नर, वह लिखता शठकूप।

कंजर था वह जाति का, घर घर बेचे सूप।।

"विक्रीय शूर्प विचचारयोगी"

पठनहेत वह होगा आया, पर विप्रों ने नहींपढ़ाया।
उपजा होगा वाको क्रोधा, करने लागा वेद विरोधा।
संप्रदाय निज नया बनाया, शंख चक्र का चिन्ह चलाया।
उसका चेला था मुनि वाहन, वह चंडाल बुद्धि का पाहन।
उसका चेला यवनाचारज, कोऊ कोऊ कहते यमुनाचारज।
रामानुज था उसके पाछे, ब्राह्मण कुल के सुत वे आछे।
उसने भुज पर दाग लगाया, शंख चक्र का चिन्ह छपाया।
उसने भाषा ग्रन्थ बनायें, पुन संस्कृत के गंन्थ रचाये।

सो०— सूत्र शारीरिक था लिखा, उपनिषदन अनुवाद।
शांकरटीका के विरुध, उसका चला विचार।।

शंकर केवल ईश्वर माने, जग प्रपंच सब मिथ्या जाने।
वैष्णव मानें तीन पदारथ, माया जीव रु ब्रह्म यथारथ।

दोहा— शंकर की अद्वैतता, यहाँ न पावे मान।
रामानुज का पंथ भी, मिथ्या बिना प्रमान।।
पारब्रह्म माया सहित, जीव विशिष्टाद्वैत।
यह दोनों ही एक हैं, भाव न इनमें द्वेत।।

तीन गनहिं पुन एकहु कहते, रामानुज हैं भ्रम मेंरहते।
रहे ब्रह्म के जीव अधीना, यह अनर्थ रामानुज कीना।
मूरति पूजा कंठी माला, तिलक लेप श्रृंगारित भाला।
बुरी निरर्थक प्रथा चलाई, जिसमें नहीं कछु रखी भलाई।
वेद विरोधी वैष्णव जैसे, शंकर का मत नाहीं तैसे।

प्रश्न— कैस पूजा मूर्ति की, चली प्रथम किस काल।
कौन प्रवर्तक आदि में, ऋषि मुनि वा भूपाल।।

उत्तर— प्रतिमा पूजन का प्रथम, किया जैन परचार।
मूरखता उनकी रही, यह पूजा निस्सार।।

प्रश्न— ध्यानावस्थित बैठी मूरत, परम शान्त हो जाकी सूरत।
मन को परम शान्ति देती, चित के सकल ताप हर लेती।

उत्तर— जड़ मूरति अरु आतम चेतन, फिर तो आतम होय अचेतन।
जड़ता जीव माँहि आ जावे, अरु जड़ता की छाप लगावे।
है पाखंड मूर्ति पूजा, इसके तुल्य दोष नहीं दूजा।
जैन पंथ ने इसे चलाया, अंध कूप में जगत गिराया।

प्रश्न— साकत ने जो मूर्ति बनाई, वे नहीं जैन मूर्ति की नाँई।
नहीं अनुकरण उन्होंने कीना, भिन्न रूप मूरति को दीना।
वैष्णव मूरति जितनी देखीं, वे भी भिन्न जैन से पेखीं।

उत्तर— जो जैनिन सममूर्ति बनाते, जैन पंथ में तो मिल जाते।
जैन पंथ की मूरति नंगी, ध्यान मग्न निस्संग असंगी।
वैष्णव मूरति चित्ताहारी, श्रृंगारित अरु वस्तर धारी।
राग रंग में मुग्ध विलासी, तिय समेत लंपटता रासी।
बैठी खड़ी नाचती गाती, दर्सक अन्तः करण रिझाती।
जैनी नहीं कोउ वाद्य बजातें, वैष्णव शंख झाँझ पिटवाते।
शिष्य लौट एहि कारण आए, जो थे पहले जैन फँसाये।

व्यासादिक के नाम से, लीने ग्रंथ बनाय।
झूठी गप्पें हांक कर, चेले लिये फँसाय।।

उनकी संज्ञा रखी पुराना, जिनमें लिखी कहानी नाना।
घर घर कथा वांचने लागे, मरते मरते फिर उठ जागे।
रचने लागे अद्‌भुत माया, मूरति को कहीं जाय दबाया।
प्रातः उठकर बैठ अकेले, अपने सभी बुलाये चेले।
लगे सुनाने उनको सपना, देखा राम सपन में अपना।
अमुक गिरी की है इक कंदर, दबे पड़े है उसके अंदर।

वे कहते हमको ले जाओ, मंदिर में हमको पधराओ।
तू ही मेरा होय पुजारी, तर जायें वहाँ के नर नारी।
मन चीता फल उनको देंगे, यदि हमारी वे सुधि लेंगे।
उन चेलों को संग ले जाकर, दरस आस की पाश बनाकर।
गिरि कंदर को खोद दिखावें, देख लोग पाँओं पड़ जावें।
धनिकों से उठवाकर मूरत, इक मंदिर बनवाता धूरत।
आयु भर वह मौज उड़ावे, ठाकुर कीप्रतिमा पधरावे।
देख सफल उसकी चतुराई, घर घर होने लगी ठगाई।

प्रश्न– निराकार परमात्मा, नहीं उसका आकार।
संभव उसकी अर्चना, जो होवे साकार।।

ताँते उत्तम मूरति पूजा, इससे श्रेष्ठ न साधन पूजा।
मूरति सन्मुख सीस झुकावें, मुख से प्रभु का नाम धियावें।

उत्तर – निराकार व्यापक प्रभु प्यारा, उसका संभव नहीं आकारा।
कैसे उसकी मूर्ति बनाये, को अनहोनी कर दिखलाए।
यदि मूरति का करके दरसन, पारब्रह्म का होता सिमरन।
तौ यह उसकी रचना सारी, पृथिवी पर्वत सागर खारी।
सूरज चन्द्र नखत अरु तारे, स्मरण कराते उसको सारे।
ईश्वर रचित मूर्तियाँ नाना, स्मरण कराती हैं भगवाना।
पुंन क्यों पाहन मूर्ति बनाते, क्यों सृष्टि में झूठ फैलाते।
मूर्ति देख यदि प्रभु को ध्याओ, तो मूरति जिस ठौर न पाओ।
वहां पर भूल जायगा ईश्वर, कौन कहाँ कैसा जगदीश्वर।
वहाँ करोगे चोरी जारी, फैल जायगी भ्रष्टाचारी।
ऐसा मन में उठे विचारा, यहाँ न ठाकुर देखन हारा।

इत्यादिक बहु दोष हैं, मूरति पूजा मांहि।
तांते प्रतिमा पूजना, नर कँह समुचित नांहि।।

यदि पाहन पूजा को त्यागें, पारब्रह्म में चित अनुरागे।

जो जगदीश्वर अन्तर्यामी, घट घट वासी सबका स्वामी।
उस व्यापक प्रभु को जो माने, सकल कर्म का द्रष्टा जाने।
वह नर कैसे करे कुकर्मा, प्रभु तो बैठा मन के घर मां।
मन से भी नहीं करे बुराई, वह चितवे सब करे भलाई।
नाम स्मरण का कछु फल नाँही, जो जगदीश्वर नहीं मन माँही।
मिसरी मिसरी रटते जांएं, पर मिसरी को कभी न खाएं।
मुख मीठा नहीं होना संभव, बिन मिसरी को कभी न खांए।
मुख मीठा नहीं होना संभव, बिन मिसरी के खाए असंभव।

प्रश्न– सिमर सिमर प्रभु नाम, सभी पुराण पुकारते।
दहिने राजाराम, नाम महातम क्या बृथा ?

उत्तर– वृथा न जपना नाम, पर रीति तुमरी वृथा।
सफल होंय सब काम, वेदों के अनुकूल यदि।।

नाम प्रभु का जैसे 'न्यायी', तुम भी बनो नहीं अन्यायी।
ईश्वर पक्ष पात नहीं करता, न्याय दण्ड से जग को धरता।
न्याय करो तुम तेहि सम सारे, तुम भी बनो न्याय रखवारे।
इस विधि एक नाम ही तारे, भव सागर से पार उतारे।

प्रश्न– निराकार तो है प्रभु, पर लेता अवतार।
तांते उसकी मूरति, होती है साकार।।

शिव का रूप करे वह धारण, जब सृष्टि को चाहे मारण।
विष्णु रूप से पालन करता, गणपति हो विघ्नों को हरता।
राम कृष्ण हो असुर सँहारे, देवी बनकर दैत्य पछारे।
तांते मूरति होती वाकी, महिमा लिखी शास्त्र ने जाकी।

उत्तर– अहो तुम्हारे मिथ्या बैना, अलख देव को लखें न नैना
एकपाद अज और अकाया, शुद्ध विशेषण प्रभु का आया।

अजर अमर तनु को नहीं धारे, ठौर ठौर यह वेद पुकारे।
प्रभु अवतार न मांने युक्ति, ताँते तुमरी मिथ्या उक्ति।

वह आकाश सम व्यापक छाया, निर्गुण दुख सुख रहित अकाया।
कैसे वीर्य्य बिन्दु में आवे, क्यों कर अंदर गर्भ समावे।
उसका होवे आना जाना, जिसका होवे एक ठिकाना।
अणु मात्र जिससे नहीं खाली, सगरी सृष्टि देखी भाली।
उसका कैसा आना जाना, ले अवतार जन्म का पाना।
यह मानों बंध्या सुत जनमें, उसका ब्याह फेर हो छन में।
उस बंध्या के हो फिर पोता, संभव कभी न ऐसा होता।
एहि विधि जिसका नहीं अकारा, जिमि जनमें धारे अवतारा।

प्रश्न— व्यापक होने से प्रभु, है मूरति के मांहि।
मूरति पूजा में पुनः, रहा दोष कछु नांहि।।

जाकी रही भावना जिसमें, उसका प्रभु बसे है तिसमें।
चाहे पूजें कोई पदारथ, वाही वाका प्रभु यथारथ।
"न काष्ठे विद्यते देवो न पाषाणे न मृण्मये। भावेहि विद्यते देवस्तस्माद्भावो हिकारणम्"।

सोरठा— भाव माँहि विदमान, परम देव परमात्मा।
माटी में पाषान, जहाँ भावना वहाँ प्रभु।।

उत्तर— व्यापक है प्रभु जगत में, अणु अणु रहे विराज।
पुन तुम तुच्छ पदार्थ में, करहु भाव किस काज।।

रखो भावना एक ठिकाने, अन्य ठौर क्या उसे न मानें।
यह कैसा व्यापार तुम्हारा, रोता होगा प्रभु बेचारा।
चक्रवर्ती जैसे कोई राजा, जिसके वश में सब महराजा।
छीन लेंय उससे सिंहासन, पर्ण कुटीका दे दें शासन।
ईश्वर कहाँ विश्व की मूरत, कहाँ तुच्छ पत्थर की सूरत।
क्या तुमने प्रभु को सन्माना, अथवा किया घोर अपमाना।
जिसको मन से व्यापक माना, उस पर विरथा फूल चढ़ाना।
क्यों चंदन का तिलक लगाते, दन में क्या उसे न पाते।
वृथा अगर अरु धूप जलानी, सकल सुगन्धि उसकी सानी।

झाँझ पखावज पीटो कूटो, क्यों नैवेद्य पात्र पर टूटो।
हाथों में है हाथं न जोड़ों, पुष्पों मे है पुष्प न तोड़ो।
जल में है क्यों स्नान कराते, सिर में है क्यों सीस झुकाते।
पूजा करो कहो तुम जिसकी, व्यापक व्याप्य दोउन में किसकी।
यदि करते व्यापक की पूजा, पूजन योग द्रव्य नहीं दूजा।
क्यों पत्थर पर फूल चढ़ाओं, क्यों लकड़ी को तिलक लगाओ।
यदि व्याप्य की पूजा करते, नाम प्रभु पूजा क्यों धरते।
क्यों कहते हो मिथ्या वानी, प्रभु पूजा की झूठ कहानी।

सच बोलो ऐसे कहो, हम पूजक पाषान।
झूठ बोल कर प्रभु का, क्यों करते अपमान।।

भाव भावना झूठी काँची, निपट व्यर्थ रंचक नहीं साँची।
यदि अधीन प्रभु भाव तुम्हारे, बद्ध रहे भावों के मारे।
स्वर्ण भाव माटी मँह कीजे, पत्थर को हीरा गुन लीजे।
जलधि फेन को जानो मोती, कबहुँ फेन मोती नहीं होती।
जल में दूध धूलमँह खंडा, यह तुमरा इक भाव पखंडा।
दुःख भावना कोउ न करता, पर संसार दुखी हो मरता।
सदा सुख का रखते भावा, पर सुख का नित लखें अभावा।
अंधा नयन भावना कर ले, क्या वह भाव तिमिर को हर ले।
मृत्यु भावना कोऊ न करता, है कोऊ प्राणी जो नहीं मरता।
ताँते तथ्य न इसमें रंचक, मिथ्या भाव परातम वंचक।

कुंडलिया– जिसका जैसा रूप हो, वैसा लेना मान।
यही भाव इक सत्य है, उलट भाव अज्ञान।।
उलट भाव अज्ञान, भाव को भाव न माने।
अरु अभाव को भाव, मूढ़ मानुष पहचाने।।
जल को जाने दूध, भाव यह झूठ अनूपा।
सत्य भाव सो जाने, जिसका जो हो रूपा।।

प्रश्न– आवाहन प्रभु का करें, वैदिक मंत्र उचार।
तब प्रभु आवें मूर्ति में, पतित उधारन हार।।
पतित उधारन हार, देव मूरति में आवें।
करें विसर्जन फेर, लौट कर वापस जावें।।
नहीं पूजने जोग, बिना पधराये पाहन।
तब पूजें जब मंत्रों से, करिये आवाहन।।

उत्तर– मंत्रों से करके आवाहन, यदि परमेश्वर बनता पाहन।
तो क्यों चेतन होय न मूरत, खाती पीती क्यों नहीं सूरत।
मंत्रों से यदि ईश्वर आते, मृत सुत को क्यों नही बुलाते।
रिपु के तनु से जीव निकारा, उसे विसर्जन ही कर डारा।
सुनो सुनो हे भोले भाई, करे पोप दिन रैन ठगाई।
कहाँ जाता प्रभु कहाँ से आता, पारब्रह्म सर्वत्र समाता।
यह ठग पोप धर्म के बाधक, बड़े चतुर स्वारथ के साधक।
नहीं विसर्जन नहीं आवाहन, नहीं वेदों में पूजा पाहन।

प्रश्न– "प्राणाः इहागच्छन्तु सुखंचिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ! आत्मेहागच्छतु ।सुखं चिरं तिष्ठतु स्वाहा। इन्द्रियाणीहागच्छन्तु सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा"।

प्राण प्रतिष्ठा मंत्र यह, वेदों के परमान।
क्यों कहते पुन मूर्ति की, पूजा है अज्ञान।।

उत्तर– यह तो नहीं वेद के मंतर, वामी पोप रचित यह तंतर।
यह सब उनके कल्पित बैना, देख खोल बुद्धि के नैना।

प्रश्न– क्या मिथ्या सब तंत्र हैं, नहीं इनमें कछु सार।
जिनका सगरे देश में, इतना अधिक प्रचार।।

उत्तर– सब मिथ्या सब मिथ्या भाई, नहीं तंत्र में तनिक सचाई।
प्राण प्रतिष्ठा अरु आवाहन, नहीं वेद में पूजन पाहन।

नहीं मूर्ति को स्नान विधाना, नहीं चंदन नैवेद्य चढ़ाना।

वेद माँहि अस वाक्य न देखा, वाक्य कहाँ कोई लखी न रेखा।

प्रश्न– भले वेद में विधि नहीं, पर नाँहि प्रतिषेध।
खंडन है तो सिद्ध पुन, प्राप्तौ सति निषेध।।

उत्तर– मूरति का तो नहीं विधाना, पर ऐसे बहु मिलें प्रमाना।
प्रभु के स्थान अन्य की पूजा, पूजन जोग नहीं कोई दूजा।

क्या नहीं होती विधि अपूरब, जहाँ प्रतिषेध न होता पूरब।
पारब्रह्म के स्थान प्रमादी, जो पूजे प्रकृति अनादि।
वे नर दुख सागर में डूबें, ऐसे डूबें फिर नहीं ऊभें।
उन से अधिक नरक वे पाएं, जो नर भौतिक द्रव्य पुजाएं।
लकड़ी पत्थर नर की पूजा, इससे अधिक पाप नहीं दूजा।
निराकार का नहीं परिमाना, उसके नहीं को मूर्ति समाना।
जाको वर्णन करे न बानी, यथा लीजिये यह है पानी।
एहि विधि बाणी विषय अगोचर, वरु बाणी है जिसके गोचर।
वही ब्रह्म वह जोग उपासन, उसका है बाणी पर शासन।

मनो इयत्ता से परे, जो है ब्रह्म अपार।
जान न पाये मन उसै, मन उसके आधार।।

वह उपास्य देवन को देवा, अन्य किसी की करहु न सेवा।
नयना जाको देख न पाएँ, जिससे आँखें रूप लखाएं।
वह ब्रह्म है ज्योति सरूपा, जो दर्शावे रूप अनूपा।
सूर चन्द्र विद्युत अरु तारे, सब नक्षत्र चमकने हारे।
यह सब जड़ नहीं पूजा लायक, पूजनीय इनका प्रभु नायक।
सुन नहीं पायें जाको काना, कानन शक्ति दई जिस दाना।
वह उपास्य कोई शब्द न दूजा, उसी ब्रह्म की कीजे पूजा।
प्राण न जाको कबहुँ चलावें, प्राणहु जिससे गति को पावें।
वहीं पूज्य कोउ और न पवना, जिससे मिले पवन को गवना।
इत्यादिक हैं अनिक निषेधा, प्रतिमा पूजन कहँ प्रतिषेधा।

प्राप्त और अप्राप्त हैं, द्वै विधि के प्रतिषेध।
भली भांति दोनों सुने, पहले प्राप्त निषेध।।

कोई बैठा हो उसे उठाना, उसे शास्त्र ने 'प्रापत' मांना।
हे सुत कबहुँ न चोरी करना, जो चांहो दुख सागर तरना।
यह निषेध अप्राप्त कहावे, चोरी को वह बुरा बतावे।
मनुष ज्ञान में जो अप्रापत, प्रभु के ज्ञान मांहि सो प्रापत।

प्रभु के प्रापत ज्ञान से, मूरति भइ निषिद्ध।
ताँते उसको अर्चना, है अतिशय प्रतिषिद्ध।।

सो॰प्रश्न– नहीं होता कछु पाप, मूरति पूजा के किये।
शान्त करे संताप, पुण्य नहीं तो न सई।।

उत्तर– दो प्रकार के कर्म हैं, विहित रु अपर निषिद्ध।
इक प्रतिपादित वेद में, अपर त्याज्य प्रतिषिद्ध।।

धर्म, वेद प्रतिपादित करना, सत्य मार्ग में यथा विचरना।
वेद विरुद्ध विधान अधर्मा, मिथ्या भाषण आदि कुकर्मा।
वेद विवर्जित पाहन पूजा, बड़ा पाप नहीं इससे दूजा।

सो॰प्रश्न– नहीं मूरति का काज, सृष्टि के आरम्भ में।
अल्प ज्ञान है आज, आवश्यक मूरति भई।।

क्यों लिखते तब वेद अनादि, तब के लोग न रहे प्रमादी।
पहले देव रहे प्रत्यक्षा, जीव मात्र की करते रक्षा।
लुप्त भये जब देवी देवा, तब से चली मूर्ति की सेवा।
तंत्र शास्त्र इसके संथापक, निराकार किम ध्यावें व्यापक।
मूरति द्वारा प्रभु को ध्यावें, प्रभुचरणों में चित्त लगावें।
अज्ञानी अनहित यह साधन, प्रभु प्रापति में नहीं कछु बाधन।।

सीढ़ी सीढ़ी जो चढ़े, पहुँच सिखर पर जाय।
बिन सीढ़ी ऊपर चढ़े, वह नर गिरे नशाय।।

पहली सीढ़ी पूजा मूरत, ध्यान लगे कछु रखकर सूरत।
पूजत पूजत बढ़ जाये ज्ञाना, पुन अमूर्त में लागे ध्याना।

यथा अहेरी सीखता, प्रथम चलाना बान।
रख लेता है दूर पर, मोटा कोई निशान।।

नित्य चलाये धनु अरु बाना, धीरे धीरे शोध निशाना।
सूक्ष्म चिन्ह पुन करता जावे, इस प्रकार धनु शिक्षा पावे।
जैसे कन्या गुडिया खेले, घर में रहे लगाती मेले।
पर यह सब उस दिन पर्यन्ता, जब लग मिलें न साँचा कंता।
कंत मिले सब गुड़िया भागे, साँचे पतिचरणन अनुरागे।
एहि विधि मूरति खेल खेलावन, जब लग मिलें नहीं प्रभु पावन।
जब दर्शन ईश्वर का पाए, फेर न मूरति पूजा भाए।
पुनः निरर्थक पाहन मूरत, उसकी नहीं पुन रहे जरूरत।

उत्तर— वेद विहित सब धर्म जब, वेद विरुध सब पाप।
तब तो मूरति पूजना, महाँ पाप संताप।

वेद विरोधी पुस्तक नाना, उनको जो जन गुनहिं प्रमाना।
वे नर जानहु पूरे नास्तिक, वेद मान्य जिनको वे आस्तिक।

"नास्तिको वेद निन्दकः"

वेदों की निन्दा करें, करे वेद अपमान।
वह नास्तिक अति मूढ़ है, तनिक न वाको ज्ञान।।

वेद बाह्य सब ग्रन्थ बनाये, दुष्ट जन ने जिते रचाये।
ग्रन्थ नहीं यह विष के प्याले, दुख में सभी डुबाने वाले।
निष्फल झूठे अति अंधियारे, उभय लोक के नाशन हारे।
अस्थायी नहीं आदर जोगू, निष्फल मानवता हित रोगू।

ब्रह्मा से जैमिनि तलक, यहीं करें आदेश।
सत्य प्रमाणिक मानिये, सब वैदिक निर्देश।।

वेद सत्य प्रतिपादन कर्ता, वेद विशुद्ध ज्ञान के धर्ता।
पुस्तक मंत्र पुराण नवीना, सद्युक्ति हेतु से हीना।
मूरति पूजन करहिं विधाना, ताँते झूठे तंत्र पुराना।
जड़ पूजा नहीं ज्ञान बढ़ाती, इससे बुद्धि नष्ट हो जाती।
ज्ञान बढ़ावे ज्ञानी संगत, बुद्धि नशावे मूर्ति कुसंगत।
जिसका नहीं कोई रूप अकारा, उसके चिंतन हेत साकारा।
यह तो बुद्धि बात न मानें, कैसे बेंधें लक्ष्य निशाने।
जड़ पूजा नहीं सीढ़ी भाई, यह तो महा भयानक खाई।

इस से ईश्वर नहीं मिले, मिलना तो बहु दूर।
जो इस खाई में गिरे, हो जाय चकनाचूर।।

इस खाई से निकल न पावे, सड़ सड़ कर उसमें मर जावे।
छोटे छोटे जन जो धर्मी, बड़े बड़े पुन ज्ञानी मर्मी।
उनकी संगत सीढ़ी जानो, उन्हें ज्ञान का दाता मानो।
सद्विद्या वे तुम्हें बतावें, सद्भाषण आदिक सिखलावें।
ऊपर जाने के हित सीढ़ी, पर यहाँ गल गई अगनित पीढ़ी।।
ऊपर तो कोई चढ़ नहीं पाया, टल्ल बजाते जन्म गवाया।
अगनित मरे मरेंगे बाकी, जड़ पूजन में बुद्धि जाकी।
धर्म अर्थ मुक्ति अरु कामा, विफल होंय सब मरें अकामा।
मूरति पूजा लक्ष्य न थूला, ब्रह्म ज्ञान में क्यों नर भूला।
ज्ञानी संगत अरु सद्ज्ञाना, करो चहो यदि प्रभु को पाना।
नहीं मूरति गुड़ियों का खेला, क्यों करते प्रभु की अवहेला।
गुड़िया खेल अक्षराभ्यासा, जा ते होय तिमिर को नासा।
भली होय जब विद्या शिक्षा, तब प्रभु देवें दर्स की भिक्षा।

प्रश्न– मन थिर हो उस वस्तु में, जो होवे साकार।
तांते प्रभु के दरस का, मूरति इक आधार।।

उत्तर– जो होवे साकार पदारथ, चित्त न उसमें टिके यथारथ।
अंग अंग मूरति के बिरमें, चरण भुजा मुख छाती सिर में।

कौन अंग में ध्यान लगावें, कँह पर अपना मन अटकावें।
निराकार में ध्यान लगाए, जँह चाहे मन दौड़ा जाए।
ठौरठौर व्यापक भगवाना, चाहे जहाँ लगाए ध्याना।
निरावयव होने के कारण, चंचलता का होत निवारण।
चिन्तहि प्रभु गुण कर्म सुभाऊ, प्रभु में मग्न रहे मन राऊ।

थिर होता साकार में, यदि यह चंचल चित्त।
तब तो सारे जगत का, थिर रहता चित्त नित्त।।

जग के सभी द्रव्य साकारा, सुन पितु पत्नी मीत पियारा।
सब साकार जगत में फाँसे, खेले सभी प्रेम के पांसे।
चित्त की थिरता कहीं न पाई, अस्थिर डोलत सब जग भाई।
तब थिर होगा चित्त तुम्हारा, जब चिन्तहु प्रभु बिना आकारा।
ताँते करहु न मूरति पूजा, इस से बड़ अपराध न दूजा।
पुन देखहु इक और बुराई, होय इकट्ठे पुरुष लुगाई।
मठ मन्दिर में लगते मेले, नर नारिन के ठेलम ठेले।
झगड़े झंझट अरु व्यभिचारा, रोगादिक का होय प्रसारा।
धर्म अर्थ मुक्ति का साधन, माने मूरति को निर्बाधन।
तज देवें सगरा पुरुषारथ, मानुष जन्म गँवाय अकारथ।
पुन मूरति भी होती नाना, कोई जनाना कोई मर्दाना।
सब के भिन्न भिन्न सिंगारा, भिन्न भिन्न सब करे विचारा।
कोई शान्त कोई नाचे गावे, धनुषबाण कोई खेंच चढ़ावे।
कोऊ के कर में मद की प्याली, कोऊ बलियों की खाने वाली।
इससे फूटे फुट सरोता, इस कारण से ऐक्य न होता।
लड़ लड़ नष्ट हुआ सब भारत, राज्य गंवाया बैठे आरत।
छोड़ छाड़ भुज बल की आसा, मूरति पर रखते भरवॉसा।
कहें मूर्ति शत्रु को मारे, एक एक को पकर पछारे।
युद्ध माँहि जब शत्रु जीते, तब रोते बुद्धि के रीते।
राज्य गया सब सम्पति भागी, ऐसा भारत भया अभागी।

तुम ऐसी मूरति पर लट्टू, थे मरेश पर बन गये टट्टू।
गर्दभ बोझ उठाने हारे, परदेसिन के पांव पुजारे।
बड़े बड़े मन्दिर बनवाए, धन असंख्य उन पर लुटवाए।
कहे यदि कोई तुमसे आकर, तुम हो इक पत्थर को ठाकर।
हम तुम को पत्थर सा जानें, टूट पड़ोगे उस को खाने।
क्या ईश्वर को क्रोध न आता, जब कोई पत्थर उसे बनाता।
अन्तः करण प्रभु का आसन, उस पर ईश्वर करता शासन।
पत्थर उसके ठौर बैठाएं, क्यों नहीं शाप प्रभु का पाएं।
विरथा धन अरु समय गंवाये, मूर्ख अकारथ दुःख उठाएं।
नष्ट करें स्वारथ परमारथ, मनुष जन्म को खोएं अकारथ।
कहीं चोरी ठग करे ठगोरी, ऐसी इनकी बुद्धि भोरी।
जो धन इनसे पाएं पुजारी, वे व्यभिचार करें व्यभिचारी।
मद पीवें अरु मांस उड़ावें, करें लड़ाई द्वंद्व मचाएं।
दुःख उठावे इससे दाता, कर प्रदान मन में पछताता।
मात पिता की करें न सेवा, मूरतियों से माँगे मेवा।
मूरतियों को चोर चुरावें, तोड़ फोड़ अथवा कट जावें।
तब यह करते हाहाकारा, प्रभु को तोड़ गया हत्यारा।
प्रभु को ले गये चोर चुरा कर, हाय रात को दुष्ट उठा कर।
पर नारी सों रमें पुजारी, पर पुरुखन से उनकी नारी।
लड़ें पुजारी और पुजारिन, वे व्यभिचारी वह व्यभिचारिन।
घर के सुख को लगति अगिया, होती दग्ध प्रेम की बगिया।
स्वामी की आज्ञा नहीं पाले, सेवक उसकी आज्ञा टाले।
जड़ का पूजक जड़ हो जाता, जड़ मूरति से उसका नाता।
अगनित कुसुम सुगन्धित फूलें, सुन्दर शाखाओं पर झूलें।
सूर्य किरण से दीप्त प्रभासित, सीत पवन को करें सुवासित।
निज सुगन्धि से रोग नशावें, स्वास्थ्य और आरोग्य फैलावें।
मूरति पर वे फूल चढ़ावें, मिट्टी कीचड़ माँहि मिलावें।
सड़े फूल अरु नशहि सुगन्धि, उनसे पुन उठती दुर्गन्धि।

अतिदुर्गन्धि मम मुतलाएं, नर को मानों मल सड़ जाएं।
अक्षत चावल फूल अरु पातीं, एक कुण्ड में सड़ती जाती।
मच्छर सुसरी कीड़ी माखी, मानहु मल की ढेरी राखी।
ऐसे ऐसे दोष महाना, मूरति पूजा माँहि प्रधाना।
ताँते पाहन पूजा त्यागें, पारब्रह्म प्रभु में अनुरागें।

तांते मूरति त्यागिये, सज्जन जन तत्काल।
दुख ही दुख इसमें भरा, नहीं सुख त्रैकाल।।

प्रश्न– पंचदेव देव पूजा करें, गौरी विष्णु महेश।
परंपरा से पूज्य है, सूरज और गणेश।

उत्तर– सब विधि वर्जित मूरति पूजा, प्रभु के तुल्य नहीं कोऊ दूजा।
पूजनीय यह मूरति माना, पंच देव जिनको परमाना।

पंचदेव के उत्तम अर्था, तज कर मूरख करें अनर्था।
शिव गौरी आदिक की मूरत रच कर पूजा करते धूरत।
वेद विहित जो देवता, साक्षात साकार।
उनकी पूजा योग्य है, समुचित करें विचार।।

कतम एको देव इति स ब्रह्म त्यदित्याचक्षते।। शतपथ कांड १४/६७/१७
मातृदेवो भव पितृदेवो भव आचार्य देवो भव अतिथि देवो भव।। तैत्तिरीय॰ व॰ १ अनु॰ ११
पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा। पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः।।मनु०३५३
पूज्यते देववत्पतिः।। मनु॰

सबस से प्रथम देवता माता, जनम देत भवभय दुख त्राता।
निस दिन वाकी सेवा करिये, वाके दुःख ताप को हरिये।
कबहुँ न ताड़न वाको कीजे, अरु असीस माता की लीजे।
पिता देवता मातृ समाना, उसकी सेवा कर सुख पाना।
तृतीय देव मानहु गुरुदेवा, जो अज्ञान तिमिर हर लेवा।

कुंडलिया– पूज्य देवता पाहुना, जो धर्मी विद्वान्।

उन्नति इच्छुक निष्कपट, विचरत आय जहान।।
विचरत आय जहान, देत सब को उपदेशा।
जिसने देखे विचर, विचर कर देस विदेशा।
अन्न वस्त्र आदिक से कीजे उसकी सेवा।
अपना ज्ञान बढ़ाय; पूज कर अतिथि देवा।।
दोहा—पत्नी देवी पति की, पति पत्नी को देव।
दोनों जग में सुख लहें, इक दूसर को सेव।।

पंचदेव इन को ही नामा, इनको पूजे होय सकामा।
मूर्तिमान यह पांचो देवा, भव भय नाशहि इनकी सेवा।
जन्म देत यह पोषें पालें, अन्धकार से यही निकाले।
पांच सीढ़िया यही कहावें, इनके द्वारा प्रभु को पावें।
इन को तज कर पूजें मूरत, वे नर पामर झूठे धूरत।

प्रश्न— मातृ पितृ सेवा करें, अरु पूजें पाषान।
इसमें तो कोई दोष नहीं, दोनों में कल्यान।।

उत्तर — कबहुं न पूजा कीजे मूरत, यह तो इक धोखे की सूरत।
महाँ शोक यह लोग अधर्मी क्यों हठ करते घोर कुकर्मी।
मूरतियों को भोग लगावें, भोग नाम से आप ही खावें।
मात पिता तो भूखे मरते, उनके सन्मुख कुछ नहीं धरते।
यह पेटू स्वारथ के पूता, पितृ द्रोही भये कुपूता।
पत्थर पर नैवेद्य चढ़ावें, घुग्गु अरु घड़ियाल बजावें।
टूँ टूँ पूँ पूँ बम बम भोले, डिम डिम डमडम डुम डुम डोले।
बक बक झक झक भोग लगाते, मूरति को अंगुष्ठ दिखाते।
थाल भोग का आप उठावें, जैसे ठगुआ लोग ठगावें।
एहि विधि लीला करें पुजारी, पापी दुर्जन भ्रष्टाचारी।
मूरतियों का कर सिंगारा, कड़े छड़े मुंदरी अरु हारा।
क्रीट मुकुट माला पहरावें, चमक दमक मूरति दरसावें।

लिए बैठें रंडी के भड़वें, मुख के मीठे मन के कड़वे ।
दर्सन कर लो आओ आओ, पैसा धेला लाओ लाओ ।

कुंडलिया– धर्मी होता आज कोउ, भारत मांहि नरेश,
पत्थर पूजा वर्जता, उन्नत करता देश ।।
उन्नत करता देस पत्थर इन से तुड़वाता ।
देता इनको रोटी मजदूरी करवाता ।।
यह पत्थर के प्यारे वन जाते सत्कर्मी ।
यदि राजा कोउ आज देस में होता धर्मी ।।

प्रश्न– सुन्दर मूरति नार की, लख कर उपजे काम ।
ध्यानावस्थित मूर्ति, देख होय निष्काम ।।
देख होय निष्काम चित्त होवे वैरागी ।
काम क्रोध अरु लोभ मोह का मन से त्यागी ।।
ताँते पूजे मूर्ति शान्त रस की आवाहन ।
मत पूजे सिंगारित नारी मूरति पाहन ।।

उत्तर– शान्त मूर्ति को देख कभी मन शान्ति न पाये ।
जड़ मूरति का ध्यान चित्त में जड़ता लाये ।।
अंधकार अज्ञान चित्त के चहुं दिग छाये ।
अरुविचार की शक्ति अंतः करण गँवाये ।।
नाशहि सकल विवेक, ठौर न मिले वैराग को ।
शान्ति चहो तो त्याग दो, मूरति के अनुराग को ।।

नहीं प्रेम का मूरति कारण, मन मँह कीजे अस अवधारण ।
गुण ज्ञान से होती प्रीति, देखी यही जगत में रीति ।
जड़ पूजा ने देश डुबाया, दारिद दुःख देश में छाया ।
लाखों चौबे लाखों पंडे, माँग माँग कर खाँय मुसण्डे ।
जय जय जमुना हर हर गंगे, माँगे खाँय बने भिखमंगे ।

छल अरु झूठ कपट फैलाया, हाय हाय प्रभु को विसराया।
क़र्महीन त्यागा पुरुषारथ, जन्म गँवाया युँ ही अकारथ।

प्रश्न– मुगल शाह औरंग ने, जब काशी ली घेर।
लठ भैरों ने देखिये, कुंजी दीनी फेर।।

बादशाह ने मारा गोला, लठ भैरों का मंदिर डोला।
अगनित निकसे वहाँ ततैय्या, भाग उठे सब मुगल सिपैय्या।

उत्तर– भँवरों का छत्ता कोई, होगा वहँ पर क्रूर।
जब कोई उनको छेड़ दे, काटें डंक जरूर।।

चमत्कार नहीं इसमें भाई, यह इक झूठी गप्प उड़ाई।
दुग्ध धार संबंधी बाते, सब धूरत पंडों की घातें।

प्रश्न – जुँ ही म्लेच्छ मंदिर पट खोले, चट कूएँ में कूदे भोले।
नहीं मलेच्छ को दीना दर्सन, नहीं दुष्टों कँह कीना परसन।
वेणी माधव विप्र सयाने, महादेव वहाँ जाय लुकाने।
क्या यह चमत्कर नहीं मानो, इसको भी क्या मिथ्या जानो।

उत्तर– इक तो भैरव लाट थे, दूजे भैरव काल।
कोटपाल शिव के दोउ, नगर न सके सँभाल।।

भूत प्रेत भोले की सेना, बैठ गई जिमि जल की फेना।
क्यों नहीं वहँ पर मुगल पछारे, कहाँ छिपे सब डर के मारे।
त्रिपुरासुर की सेन सँहारी, नाम भया तब से त्रिपुरारी।
क्यों मुगलों से डर गये भाई, क्यों कूएँ में छाल लगाई।
महाँ काल भैरव कुतवारा, डरपे यम का दूत बेचारा।
प्रलय मांहि काशी नहीं नासे, काशी में शिव स्वयं निवासे।
म्लेच्छ दूत जब वहँ पर आये, अनिक शिवालय तोड़ गिराये।
क्या लड़ती पत्थर की मूरत, बृथा बकहिं पाखंडी धूरत।
मुगलन सन्मुख कोई न अटका, जा शिव लिंग कूप में पटका।

वेणी माधव मूर्ति छिपाई, किसी विप्र के गृह में भाई।
यह सब मूढ़ पोप की माया, उसे गिराया इसे छिपाया।

प्रश्न— श्राद्ध करें जब गया में, पितर होंय निष्पाप।
ग्रहण करें स्वर्गत पितर, पिण्डदान को आप।।

उत्तर— सब मिथ्या सब झूठ गपोड़े, वृथा कहानी किस्से जोड़े।
पितर न देखें हाथ उठाते, पंडे देखे हाथ फैलाते।

छिपा कदाचित कोई पखंडी, पंडे हैं सब छल की मंडी।
पृथिवी में कोई गुफा बनाई, उसके ऊपर कुशा बिछाई।
कुशा भीति से भुजा निकालें, पिंड सामग्री सभी संभालें।
ठगा गया कोई भोला भाला, ठगने का यह ढंग निराला।
पिंड पितर को स्वर्ग पहुँचावें, पर पंडों को नरक दिखावें।
ठगे जांय सब भोले भाले, यह पण्डे कर्मों के काले।
वेश्या गमन करें यह पण्डें, इन दुष्टों के यह हतकण्डे।

प्रश्न — कलकत्ते की देवी काली, कामाक्षा की छटा निराली।
लाखों उनकी पूजा करते, लाखों बकरे बलि के मरते।
करामात है कितनी वाँकी, मिन्नत माने सृष्टि जाँकी।

उत्तर— चमत्कार कुछ भी नहीं, जग में भेड़ा चाल।
मूरति— पूजा गर्त में, गिरे न सके सँभाल।।
छप्पय प्र॰—जगन्नाथ प्रत्यक्ष देव सिद्धि के दाता।
जब वह चोला बदलें तब लकड़ा इक आता।।
हो चन्दन का जिसे न कोई मानुष लावे।
तिरता अपने आ जलधि तट पर लग जावे।।
ऊपर नीचे हाँडियाँ, सात रखें नित आग पर।
ऊपर की पहले पके, जगन्नाथ अनुराग पर।।

पापी को नहीं दर्सन देते, धर्मी लोक प्रसादी लेते।

इन्द्र दमन जब रहें नरेशा, वहाँ आये तब देव सुरेशा।
यह जो देख रहे हो मन्दर, हीरा चमके जिसके अंदर।
देवों ने इसको निर्माना, इसे पूजिये हो कल्याना।
जब ठाकुर जी तजहिं सरीरा, जब वें बदलें निज तनु चीरा।
उस दिन वहँ का मरे नरेशा, परंपरा यह रही हमेशा।
एक बढ़ई अर एक पुजारी, तीनों मरते बारी बारी।

जगन्नाथ परसाद को, सब नर नारी खाँय।
स्वयं चले रथ देखिये, उसे न कोई चलाँय।।

उत्तर — जगन्नाथ का एक पुजारी, जिसने आयु वहाँ गुजारी।
मिला मुझे जब मथुरा आया, उसने मुझको यही बताया।
बेसिर पैर झूँठ सब बातें, पंडों की ठगने की घातें।
नौका में चन्दन भरलाते, निकट आय उसको उलटाते।
लहरें आतीं धीरे धीरे, लकड़ा लगता सागर तीरे।
उस लकड़े की मूर्ति बनावें, मंदिर के अंदर पधरावें।
पाचक भात बनाने हारा, करता सगरे बन्द किवारा।
नहीं कोई अंदर जाने पावे, तब वह पाचक भात बनावे।
देख न सकता उसको कोई, कहँ पर कैसे बने रसोई।
चहुँ ओर छः चूल्हे बारें, गोल गर्त इक बीच निकारें।
चूल्हें चूल्हें हाँडी धरते, देगचियों में चावल भरते।

घी मट्टी अरु राख से, लेत तलों को पोत।
ताप न लगता अगन का, बंद करें सब स्रोत।।

लिपे पुते होने के कारण, मट्टी करती ताप निवारण।
इसका होवहि यह परिनामा, निचले चाँवल रहते आमा।
ऊपर के पहले पक जावें, चमत्कार पंडे दिखलावें।
हाथ फैला तब कहते पंडे, यह प्रत्यक्ष देवता हंडे।
इन हंडों पर भेंट चढ़ाएं, जो माँगें सोई फल पाएं।

अंधे मूढ़ गाँठ के पक्के, इनका धन हर लेत उचक्के।
चाँदी सोना भेंट चढ़ाते, जूठ मीठ सब वहँ की खाते।
शूद्र नीच नैवेद्य लिवावें, सबसे पहले आपहि खावें।
अपनी जूँठ सभी को देते, अति श्रद्धा से मूरख लेते।
इक पंगत खाकर उठ जाती, उन पत्तल पर दूसर खाती।
साधु सन्त अरु बड़े महन्ता, महाँ पतित भंगी पर्यन्ता।
इक पत्तल पर खाते जूठा, ऐसा इनका पंथ अनूठा।
बहुत लोग जूँठन नहीं खाते, स्वयं रसोई वहाँ बनाते।
उनको होय न कुष्ठ बीमारी, वृथा बकहिं यह भ्रष्टाचारी।
अनिक लोग परसादी खावें, उनमें भी हम कुष्ठी पावें।
जगन्नाथ वामिन का मंदर, अति अश्लील मूर्ति जिस अंदर।
भैरवि चक्कर वहाँ रचाया, ऐसा गंदा चित्र दिखाया।

श्री कृष्ण वसुदेव के, बीच सुभद्रा नार।
दर्साई इक मूर्ति में, कितना दुष्टाचार।।

भगिनी को पत्नी दर्साया, अहो घोर अंधेर मचाया।
रथ चक्रों संग कला लगाते, संचालन हित उसे घुमाते।
भीड़ बीच उसको ठहरावें, उल्टी कीली तुर्त घुमावें।
पुन यह पंडे पोप पुजारी, करते हैं कोलाहल भारी।
दान करो कुछ दान करो रे, जगन्नाथ का कष्ट हरो रे।
ठहर गया रथ शीघ्र चलावें, दान करो मत देर लगावें।
जब लग दर्सक भेट चढ़ाते, पैसों की वर्षा बरसाते।
तभी तलक पंडे चिल्लावें, दान दान की रटन लगावें।
आ चुकती जब भेंटा सारी, तब क्या करते पोप पुजारी।
रथ के आगे इक ब्रज वासी, ओढ़ दुशाला सत्यानासी।
हाथ जोड़ यूँ बिनती करता, दान दक्षिणा आगे धरता।
हे यदुनंदन हे किरपालो, अब तो अपनी विरद संभालों।
अपने रथ को आप चलाएं, बूड़त धर्म जहाज बचाएं।

तब वे सीधा कील घुमावें, रथ को तुर्त सवेग चलावें।
चहुं दिग उठते जय जय कारे, जय जय मोहन हरे मुरारे।
अगनित मानुष खेचें रस्सा, फिर मेले में ठस्सम ठस्सा।

जगन्नाथ जी का भवन, इतना बड़ा विशाल।
अन्धकार जिस में रहे, दोपहरी के काल।।

दिन को भी वहँ दीप जलावें, जन असंख्य दर्शन को जावें।
जँह ठाकुर की मूरति ठाड़ी, पंडे उसके छुपें पिछाड़ी।
दोऊ ओर पर्दे लटकाए, जब जनता दर्सन को आए।
इक पण्डा पर्दा खसकाए, वस्त्र ओट मूरति हो जाए।
पुनः पुजारी करे पुकारा, कोई आया अन्दर हत्यारा।
दान करो तो हो कल्याना, जो चाहो तुम दरसन पाना।
दर्सन ते हत्या सब छूटे, स्वर्ग मिले भव बन्धन टूटे।
तब दर्सक गण भेंट चढ़ाते, पंडे जी पर्दा खसकाते।
भोले भगत पांय पुन दर्सन, धक्के खाकर होते परसन।

इन्द्र दमन वह नृप रहा, जिसकी अब सन्तान।
कलकत्ते में बस रही, हैं अच्छे धनवान।

इन्द्र दमन भूमि का शासक, देवी का वह रहा उपासक।
उसने यह मन्दिर बनवाया, चांदी सोना बहुत लगाया।
खान पान का व्यर्थ बखेड़ा, बुद्धिमान वह चहत निबेड़ा।
पर यह मूरख छोड़े नाहीं, फूट बढ़ाते जाति माँही।
राजा और पुजारी तक्षक, तीनों रहें उपस्थित रक्षक।
कभी न देखा कोई मरता, तीनों वँह पर हर्ता कर्ता।
पेट मूरति का रहता पोला, उसमें इक पत्थर का गोला।
प्रति दिन पत्थर को नहलाते, चरणामृत उसका पिलवाते।
पंडों ने यह होगी ठानी, चरणामृत था विष का पानी।

चरणामृत के स्थान में, दीना गरल पिलाय।

ठाकुर के संग सभी का, वस्त्र दिया बदलाय।।

काल ग्रास वह भये बेचारे, पंडे थे उनके हत्यारे।
दुष्टों ने यह बात फैलाई, ले गये संग इन्हें यदुराई।
पर धन सम्पति हरने हारे, बहु षड्यन्त्र रचें हत्यारे।
अनपढ़ जनता भोली भाली, उनकी समझ न सके कुचाली।

प्रश्न– रामेश्वर जी देखिये, चमत्कार दिखलाय।
गंगोतरि के नीर से, तरत लिंग बढ़ जाय।

उत्तर– उस मन्दिर में अति अंधियारा, दिन में रहे अँधेरा कारा।
जलती रहें सदा वँह बतियाँ, दिवस दोपहरी संध्या रतियाँ।
जुँही लिंग पर पानी छलके, दीपक बिंब बिज्जु सम झलके।
पत्थर घटे न बढ़े बेचारा, अवलोका है कैयक बारा।

प्र॰कुंडलिया– रामेश्वर के लिंग को, कीना स्थापित राम।
होता वेद विरुद्ध तो, क्यों करते अस काम।।
क्यों करते अस काम, पूजते क्यों कर पाहन,
रामेश्वर को पूज किया सागर अवगाहन।
बाल्मीकि मुनि लिखें राम राजा अवधेश्वर,
पूजा थापा स्वयं लिंग, जाकर रामेश्वर।।

उ॰कुंडली॰– रामचन्द्र के काल में, नहीं था लिंग निशान।
दक्षिण का राजा कोई, राम नाम का जान।।
राम नाम का जान, उसी ने यह बनवाया,
थापित कीना लिंग रामेश्वर वही कहाया।
महावीर वेदज्ञ राम नीतिज्ञ भुआला,
नहीं मन्दिर नहीं लिंग रामचन्द्रहु के काला।।

पढ़िये बाल्मीकि रामायन, जिसमें किया राम गुण गायन।
सीता सहित राम जब आये, रामेश्वर पर प्रभु पधराए।

सेवक संग रहे हनुमाना, उतरा सागर तीर विमाना।
तब सीता सन बोले रामा, यही स्थान है प्यारी भामा।

अत्र पूर्व महादेवः प्रसादमकरोत् विभुः सेतु बन्ध इति ख्यातम्।।
बाल्मीकि रामायण लंका कांड सर्ग १२५। श्लोक २०

तव वियोग में जानकी, विचर विचर गये हार।
चार मास इस ठौर पर, हमने दिये गुजार।।

प्रभु का ध्यान धरत दिन राती, तोर मिलन हित जलती जाती।
लंका पर चढ़ने के हेतु, हमने ही यह बाँध्यो सेतु।
महादेव देवन के देवा, व्यापक प्रभु की कीनी सेवा।
सकल सामग्री हमने पाई, तब लंका पर करी चढ़ाई।
पार जाय रावण को मारा, जिससे दुखिया था संसारा।
तुम्हें उबार लौट पुन आए, सकल शोक संताप नशाए।

प्रश्न — रंग है कलिया कन्त को, जिसने हुक्का पिलाया सन्त को।

सो॰ — देखें कलिया कन्त, दक्षिण में है मूरति।
हुक्का पीते सन्त, गुड़ गुड़ गुड़ मूरति करे।।

यह तो सभी पोप की माया, ठौर ठौर पर जाल फैलाया
मूरति है अन्दर से पोली, उसमें धरे तमाखु गोली।
पृष्ट भाग में छेद निकारा, नाली खैंची भित्ति द्वारा।
भीत ओट बैठे हैं पंडें, हुक्का पीते संड मुसण्डे।
गुड़ गुड़ाय मूरति का हुक्का, पंडे पिंये गिरायें थुक्का।
नाक रु मुख होंगे छिदवाए, वापस जिनमें धूँआ आए।
धूम्र देख कछु भोले भाले, बुद्धि के जिन दिये दिवाले।
दे देते हैं पैसा पाई, भारत में बहु चली ठगाई।

प्रश्न— यह मूरति डाकोर की, चली भक्त के साथ।
सवा रत्ति से तुल गई, जगत झुकाए माथ।।

उत्तर– भक्त नहीं कोई होगा चोरा, चतुर रहा कुछ थोरा थोरा।
जब पूछे कोई कहाँ से आई, कह दिया आपने आप ही आई।

सवा रत्ति से मन भर मूरत, जो तोले सो जानहु धूरत।
ऐसी गप्पें भंगड़ हाँके, बुद्धि शून्य हैं मस्तक जाँके।

प्रश्न– भूतल से ऊपर रहें, सोमनाथ भगवान।
बिना सहारे लटकते, वह शिवलिंग महान।।

उत्तर– चुम्बक पत्थर की बनी, छत भूमि और भीत।
लोह लिंग यूँ खड़ा था, लोह चुम्बक की प्रीत।।

जब कीनी महमूद चढ़ाई, दस हजार थे यवन सिपाई।
सोमनाथ का मन्दिर तोड़ा, पत्थर ईंट न छोड़ा रोड़ा।
एक लाख क्षत्रिय रणबांके, बैठे रहे मूर्ति कँह झांके।
बिनती करते पोप पुजारी, राख लिहो अब हे त्रिपुरारी।
इन म्लेछों के दल को मारो, निज त्रिशूल से इन्हें सँहारों।
राजाओं को धीर बँधाते, मत हो चिन्तित शंकर आते।
इन को मारहिं चण्डी काली, रक्त पियेंगी खप्पर वाली।
स्वप्न माँहि आए हनुमाना, भैरव सग लिये बलवाना।
कहा उन्होंने मत घबराएँ, छिन में शत्रु दल विनसांए।
अनिक ज्योतिषी कहने लागे, अष्टम चन्द्र पड़ा है आगे।
युद्ध मुहूरत अभी न आया, सन्मुख खड़ी योगिनी माया।
राजा थे इनक विश्वासी, पर पंडे थे सत्यानाशी।
जब यवनों ने घेरा डाला, भाग उठे तब सकल भुवाला।

केतिक सैनिक कट गये, भागत छोड़े प्रान।
रक्त नदी में बह गये, असि घाट कर स्नान।

पकड़ लिये सब पोप पुजारी, घोंपी उनके पेट कटारी।
जब मूरति को लागे तोड़न, पोप हाथ तब लागे जोड़न।

ले लो तीन करोड़ रुपैय्या, मूरति को मत तोड़ो भैय्या।
तब बोला मुस्लिम सेनानी, यह तुम लोगों की नादानी।
हम नहीं पत्थर ईंट पुजारे, हम हैं बुत के तोड़नहारे।
पकड़ हथौड़ा बूत पर मारा, टुकड़ा टुकड़ा पारा पारा।
वह बुत था अन्दर से पोला, जिसमें रत्न भरे अनमोला।
अष्टादश करोड़ के हीरे, रत्न जवाहर धौरे पीरे।
मूरति के अन्दर से पाये, सब के सब गौरी हथियाये।
बर्सन लगे पोप पर कोड़े, रोय पुजारी द्वै कर जोड़े।
लूट लिया सब माल खजाना, अत्याचार किया मन माना।

पोप पुजारी पकर के सब कँह किया गुलाम।
सब कलमा पढ़ने लगे, तज कर सीताराम।

काहू से आटा पिसवाते, काहू से माटी खुदवाते।
काहू से टट्टी उठवायें, मार मार सब काम करायें।
चना चबेना खाने लागे, जुल्म सहें उनके दुर्भागे।
हाय हाय पत्थर की पूजा, इससे बढ़ कर पाप न दूजा।
यदि ईश्वर की भक्ति करते, रण में वीर जूझ कर मरते।
कभी न होतीं यह दुर्गतियाँ, देते तोड़ यवन दल दतियाँ।
करते किसी वीर की अर्चा, मिटता कभी न तेज सुवर्चा।
वही वीर रक्षा को आता, यवन सैन्य को मार भगाता।
भैरों दुर्गा वीर भवानी, कोई न भुइयाँ आई मसानी।
गड़ी रहीं निज ठौर ठिकाने, समय पड़ी सब भये बिराने।

प्रश्न– द्वारिका के रणछोड़ जी, सब के तारन हार।
नर्सी मेहता भक्त की, हुँडी दीनी तार।।

उत्तर – किसी धनी ने हुंड़ी तारी, नहीं कोई बैंकर कृष्ण मुरारी।
पोपों ने यह गप्प उड़ाई, हुँडी तारी यादवराई।
उन्नीस सौ चौदह के सम्मत, तोपों से जब भई मरम्मत।

भूल गये क्या साखे सारे, अंगरेजों ने गोले मारे।
तोपों के जब गिरते गोले, मन्दिर गिरते खा हिचकोले।
कहाँ रहे पत्थर के देवा, बरसों बीतें करते सेवा।
केवल लड़ते रहे बघेले, टूट पड़े जिमि बाघ बघेले।
शत्रु सैन्य को मार पछारा, डूबत अपना देश उबारा।
टूट फूट गई मूर्ति बिचारी, उठ कर मक्खी तक नहीं मारी।
जो कोई होता कृष्ण समाना, महावीर योधा बलवाना।
तुर्त उड़ाता उनके धुरें, विस्मृत होती हुरें हुरें।
जिसका मार खाए रखवारा, मरे न क्यों तस पूजन हारा।
पूज्य देव ही जिनके हारे, भक्तों को पुन कौन उबारे।

प्रश्न –देवी है ज्वालामुखी, चमत्कार प्रत्यक्ष।
जो कोई उस को भेंट दे, सब कुछ करती भक्ष।।

जो कुछ भेंट मिठाई पाती, आधी देती आधी खाती।
चमत्कार वहँ जाकर देखें, जा अपने नैनों से पेखें।
अकबर जल की नहर बहाई; पर ज्वाला नहीं बुझने पाई।
लोह तवे उस पर जड़वाए, किसकी शक्ति उसे बुझाए।
हिंगलाज की देवी भारी, अर्ध रैन को करे सवारी।
पर्वत पर निज दर्सन देती, भक्तों के संकट हर लेती।
गिरि को नित्य कराए गर्जन, असुरों के हिय करते लर्जन।
चन्द्र कूप जा देखें बोले, कर्ण कुहर केपर्दें खोले।
योनि चक्र जो कर ले लंघन, पुनर्जन्म का टूटे बन्धन।

दोहा–जो कोऊ बाँधे ठूमरा, महा पुण्य कहलाय।
हिंगलाज दर्शन बिना, पुरुष अपूर्ण बजाय।।

उत्तर – ज्वाला जी देवी नहीं, गिरी से निकसे आग।
इतना भी नहीं समझते, हाय देश दुर्भाग।।

चमसे में जैसे घृत डारें, अग्नि पर रख उसे बघारें।

घृत में तब अग्नि लग जाती, लपट उठाती थोड़ा खाती।
फूँक मार कोई उसे बुझाए, बुझ जाए ठंडी हो जाए।
वैसे ही यह खाती ज्वाला, नहीं कोई इसमें भेद निराला।
ज्यों चूल्हे में कोई कुछ घाले, अगन देव सब चटकर डाले।
बन में जैसे लागे अगिया, भस्मी भूत होय बन बगिया।
इसमें भेद न होता रंचक, चमत्कार बतलाते वंचक।
देखी वह देवी हिंगलाजा, उसका मंदिर जहाँ विराजा।
मंदिर और कुन्ड की नाली, अगर बगर जल रचना खाली।
नहीं कोई देखी वहां सवारी, नहीं कोई वस्तु वहँ पर न्यारी।
एक कुण्ड है जिसमें दलदल, इधर उधर कुछ बहता है जल।
बुद बुद उठते पानी माँही, और वहाँ कोई वस्तु नाँही।
सफल जातरा उसको मानें, देवी उसको मूढ़ बखानें।

दोहा– योनि जंतर पोपने आपहि लिया बनाय।
परधन ठगने हेत यह, अच्छा रचा उपाय।।

महाँ पुरुष हो ठुमरे बाँधे, ठुमरे लादो पशु के काँधे।
क्या वह पशु हो पुरुष महाना, बुद्धि दें इनको भगवाना।
जो नर करे धर्म पुरुषारथ, महां पुरुष वह बने यथारथ।

प्रश्न– अमृतसर तालाव का अमृत का सा नीर।
जो वाको अचवन करे, मिटे मृत्यु की पीर।।

एक मुरेठी का फल मीठा, आधा खट्टा सरस बसीठा।
महल झूलना की दीवारा, गिरती नहीं पर झूमनहारा।
सर रवाल में पर्वत तरते, जल के ऊपर रहें विचरते।
अमरनाथ के दर्सन पाएं, हिम के लिंग स्वयं बन जाएं।
जुगल कपोत हिमालय वासी, दर्शन देत पुन्य की रासी।
दर्शन देकर पुन छिप जाते, जाने कौन कहाँ से आते।

उत्तर– अमृतसर के नाम से, नहीं जल अमृत रूप।

जब जंगल होगा वहाँ, होगा उदक अनूप।।

शुद्ध नीर को अमृत बोलें, उपमा की तुलना से तोलें।
जिस विधि कहते पोप पुरानी, अमृत की जिमि कथा बखानी।
यदि वह साँचहि अमृत होवे, तब तो मरे न कोई रोवे।
होगी ऐसी भित्ति बनावट, कारीगर की चतुर चुनावट।
हिलती है पर गिरती नाँहीं, कार्य कुशलता इसके माँही।
सर रवाल में टीला तरना, यह भी कारीगर का करना।
अमरनाथ में हैम पहारा, हैम लिंग तो तुच्छ बेचारा।
जुगल कपोत पोप के पाले, जिनके बंद बुद्धि के ताले।
गिरि के ओझल होकर छोड़े, उड़ते फिरें कबूतर जोड़े।
इस प्रपंच से टका कमावें, झूठ कबूतर पड़े उड़ावें।

प्रश्न– हरद्वार हर पैडियां, मनहु स्वर्ग का द्वार।
स्नान करे मुक्ति मिले, फल पावे नर चार।।

करे तपोवन माँहि निवासा, बने तपस्वी पूरे आसा।
तीरथ देव प्रयाग महाना, गंगोतरि में करे सनाना।
गुप्त काशि जहँ उत्तर कासी, दरसन पाय सुरग का वासी।
धन्य धन्य तिरयुगी नारायण, पार करे निज भक्त पारायण।

पूजा बद्रि केदार की, मनुष करहिं छः मास।
शेष मास छः देवता, करें चरण सहवास।।

है नैपाल में शिव का आनन, अरु नितंब केदार के कानन।
तुंग नाथ में जानु वाके, अमरनाथ में पग हैं ताके।
जो जन उनका कर ले दर्सन, स्नान करे अरु पग का परसन।
भव बंधन उनके कट जायें, अमर होंय अरु मुक्ति पायें।
बद्रि केदार स्वर्ग को मारग, सूधा जाय सुरग कहँ पारग।

उत्तर – गिरि के गमन को, पंथ एक हरद्वार।
स्वर्ग नरक कुछ भी नहीं, सब बातें निस्सार।।

हर की पैड़ी जल का सरवर, तीन ओर सीढ़ी अरु पत्थर।
हर पैड़ी नहीं हाड़ की पैड़ी चुभें हड्डियाँ ऐसी बैड़ी।
मृतकों की जहँ अस्थि पड़ती स्नान समय तलवों में गड़ती।
बिन फल भोगे पाप न छूटे, ज्ञान बिना भ्रम जाल न टूटे।
कभी तपोवन होगा प्यारे, अब तो वहाँ पर बसें भिखारे।
तप करने से तपी कहावे, व्यर्थ न वहँ पर समय गंवावें।
दुकानदार वहँ सौदा बेचें, तकड़ी की डंडी को एंचे।
क्या वे भये तपस्वी सारे, झूठ बोलते गंग किनारे।
गंगोत्तरि जहाँ निकसी गंगा, नीचे आई हिमाचल संगा।
गो मुख है पोपों की माया, वहीं पोपने स्वर्ग बनाया।
उत्तर काशी आदिक थाना, लाभ उनहें जो धरते ध्याना।
नहीं तो बनिये बनज कमावें, दर्सन बेचें पर धन खावें।
गप्पे देव प्रयाग पौरानी, जिसमें जोड़ी झूठ कहानी।
अलख नंद व गंगा संगम, इनको मानहिं तीर्थ विहंगम।
निवसें वहाँ देवता सारे, कैसे झूठ गपौड़े मारे।
काशी गुप्त नहीं कोई भाई, उसको देखें लोग लुगाई।
तीन युगों की धूनी झूठी, यह पोपों की चाल अनूठी।
कुछ पीढ़ी से होगी जलती, पोप गृहस्थी जिसपर पलती।
जैसे पारसीक अरु खाखी, धूनी की नित रखती राखी।
उष्मा होती है गिरी अंदर, तप्त नीर रहता गिरि कंदर।
वहीं नीर बह बह कर आवे, तांते तप्त कुण्ड कहलावे।
ठंडा जल है जिसके मांही, गिरि के भीतर का वह नाँही।
वह ऊपर का आवे शीतल, सलिल करें शीतल भूमि तल।
भूमि केदार नाथ सरसावनि, मन हर्षावनि चित्त लुभावनि।
वहाँ भी छिपी पोप की माया, पाहन पर मंदिर बनवाया।
जात्रुन का पंडे धन हरते, विषय वासना पूरी करते।
बद्री नारायण भी देखे, हैं केदार सम वहाँ भी लेखे।
वहाँ भी ठ़ग बैठे बहुतेरे, जो जात्रुन को रहते घेरे।

रावल जी हैं वहां के मुखिया आनंद लूटें सब विधि सुखिया।
एक नार को उसने छोड़ा, अनिक नार सग नाता जोड़ा।
पशुपति इक मंदिर को धामा, पंच मुखी मूरति को नामा।
जहाँ न कोई वर्जन हारा, वहीं पोप ने पाँव पसारा।
जैसे धूरत तीरथ वासी, चोर लुटेरे सत्यानासी।
वैसे नहीं यह लोग पहाड़ी इतनी वृति नहीं बिगाड़ी।
वहाँ की भूमि अति सरसावनि, अन्तः करण वृत्ति की पावनि।

प्रश्न— विन्ध्याचल विन्ध्येश्वरी, सकल सिद्धि दातार।
अष्टभुजी काली लखें, मानत सब संसार।।

विंध्या देवी चतुर अनूपा, दिन में तीन बदलती रूपा।
चमत्कार उस मन्दिर माहीं, एकहु मक्खी उसमें नाहीं।
तीरथराज प्रयाग सुहाए, फल मिलता वहाँ मूँड मुँडाए।
गंग यमुन संगम को स्नाना, करे सो पावे पद कल्याना।
उड़ी अयोध्या कैय्यक बारा, जीव जन्तु सँग लेकर सारा।
गई स्वर्ग में पूरी आसा, राम्चरण ढिग करती वासा।
वृन्दावन लीला को धामा, विहरें जहाँ स्याम अरुस्यामा।
ब्रजयात्रा गोवर्धन दरसन, बिना भाग्य नहीं दर्शन पर्सन।
सूर्य ग्रहण कुरुछेत्तर मेला, भीड़ भाड़ जहाँ टेंलम टेला।
क्या यह बातें मिथ्या सारी, कोटि कोटि मानहिं नर नारी।

उत्तर— तीन मूर्ति पाषाण की और न कोई बात।
रूप न को ऊ बदलती, सब ठगने की घात।।

तीन बार करती सिंगारा, भेष बनावें न्यारा न्यारा।
चतुर पुज़ारी बदले भेखा, जा देखे जिसने नहीं देखा।
भिन भिनाँय मक्खी वहाँ लाखों, जायँ देख लें अपनी आँखों।
कोऊ प्रयाग में होगा नाऊ, चातर ठग बछिया का ताऊ
उस नाऊ ने श्लोक बनाया, मुण्डन का माहात्म्य दिखाया।
अथवा दिया पोप को पैसा, जिसने लिखा महातम ऐसा।

न्हाय प्रयाग स्वर्ग यदि जाता, गृह में लौट न कोई आता।
डूब मरे जो जल कें माँही, उनकी भी तो सद्गति नाँहीं।
आतम द्यौ मण्डल में उड़ती, गर्भ योनि में पुन आ जुड़ती।
कहें प्रयागहि तीरथ राजा, यह भी नाम पोप ने साजा।
जड़ नहीं होते राजा परजा, ज्ञान शून्य ईश्वर ने सरजा।
उड़ी अयोध्या कैय्यक बारा, यहाँ झूठ कोई वार न पारा।
कुत्ते गर्दभ मानुष हाथी, सगरे उड़े स्वर्ग के साथी।
मूत्र पुरीष गन्दगी सारी, सबने कीनी स्वर्ग सवारी।
तीनहुँ बार स्वर्ग में जाए, पुनः लौट सरजू पर आए।
कहीं अयोध्या गई न आई, पोपों ने इक गप्प लगाई।

एहि विधि निमिषारण्य की, झूठी गप्पें जान।
तीरथ यात्रा में कहां, किसे मिले भगवान।।

कहते पंडे पोप पुजारी, मथुरा तीन लोक से न्यारी।
तीन लोक से न्यारी नाहीं, तीन जन्तु हैं मथुरा माही।
जल थल नभ सब जिनके मारे, चैन न पाएं लोग बेचारे।
चौबे जन्तु सब से भारी, जिनसे दुखिया नगरी सारी।
जब यात्री न्हाने को जाते, चौबे अपना हाथ फैलाते।
मानों टैक्स लेत सरकारी, आय खड़े यह लीलाधारी।
खड़े खड़े यह बकते झकते, यमुना तीरे फिरें भटकते।
हे यजमानो लाओ लाओ, लाडू पेड़े हमहुं खिलाओ।
जय जय बोलें जमना मैय्या, हम को भी कुछ देदो भैय्या।
दूजे कच्छु जमुना नीरे, रहें विचरते तीरे तीरे।
कोऊ कछुआ काट न खाये, जल में यात्री पैठ न पाएं।
विकट रक्त मुख नभ पर बन्दर, भरे पड़ें मथुरा के अन्दर।
शाख शाख बैठें कपिराऊ, बड़े चपल अति दुष्ट सुभाऊ।
जूते पगड़ी टोपी छाते, आँख बचाते तुर्त उठाते।
काटें खावें मार गिरावें, अति ऊधम यह दुष्ट मचावें।

इन तीनों के पोप पुजारी, मथुरा तीन लोक से न्यारी।
मनों चना कछुओं को डालें, खिला खिला गुड़ बन्दर पालें।
दान दक्षिणा चौबे पाते, लड्डू पेड़ें लोग खिलाते।

बृन्दाबन पहले रहा, अब वेश्या बन जान।
गुरु चेला लल्ला लली, रही न कुल की कान।।

ऐसे ही कुरछेत्तर माँही, स्वारथ बिना अवर कछु नाँही।
एहि विधि दीप मालिका मेला, गोवर्धन में ठेलम टेला।
ब्रज यात्रा आदिक सब स्वारथ, इनमें कुछ भी नहीं परमारथ।
इनमें जो नर धर्माचारा, इन बातों से रहते न्यारा।

प्रश्न– मूरति पूजन तीर्थ से, नर की मुक्ति होय।
चली सनातन काल से, झूठ न कहता कोय।।

उत्तर– आदि सर्गसे होय पुरातन, उसकी संज्ञा होय सनातन।
क्यों कर इन्हें सनातन मानें, वेद न ब्राह्मण इन्हें बखानें।
बीस पचीस वर्ष शत बीते, चली मूर्ति पूजा तब ही ते।
वामी जैन चलाने हारे, उन ही के यह कारज कारे।
नहीं थी पहले पूजा पाहन, नहीं तीरथ नहीं गोपी काहन।
शिखर पालीटन अरु गिरिनारा, शत्रुञ्जय अरु आबु पहारा।
जैनिन ने यह तीर्थ बनाये, नास्तिकता के भाव फैलाये।
जैन धर्म को देख पुरानी पोपों ने भी की मनमानी।
पंडों की बहियां अरु खाते, यह प्रत्यक्ष हमें बतलाते।
ताम्र पत्र भी यही बतायें, अन्तिम निश्चय यही करायें।

एक सहस वा पंचशत, वर्ष पूर्व परिमान।
तीरथ मन्दिर किसी का, मिलता नहीं निशान।।

तांते यह सब तीर्थ नवीना, मानहिं जग इतिहास प्रवीना।
इनमें से नहीं कोई पुरातन, इनकी संज्ञा व्यर्थ सनातन।

प्रश्न— तीरथ के फल जो कहे, कहा महातम नाम।
क्या यह सगरे झूठ हैं, अथवा पूरहिं काम।।

कहते पाप नाशिनी काशी, जीवनमुक्त बनारस वाशी।
गंगा खोले सुरग दुआरा, स्नान करे फल पाए चारा।

उत्तर — यदि तीरथ सब पाप निवारण, धर्म अर्थ मुक्ति के कारण।
तौ दारिद होते धनवाना, राज पाट पाते सुख नाना।
अन्ध बेचारे पाते नयना, अरु गूँगे जन पाते बयना।
कुष्ठी का तनु निर्मल होता, जो मारे गंगा में गोता।
एहि विधि होते देखा नाहीं, ताँते तथ्य न इनके माहीं।

प्रश्न—गंगा गंगेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि। मूच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णु लोकं स गच्छति ।।१।।
हरिर्हरति पापानि हरिरित्यक्षर द्वयम ।।२।।
प्रातः काले शिवं दृष्टवा निशि पापं विनश्यति। आ जन्म कृतं मध्याह्ने सायाह्ने सप्त जन्मनाम् ।।३।।

उत्तर— पोप रचित सब श्लोक यह, ले ले तीरथ नाम।
उदर पूर्ति के हेतु सब, करते अपना काम।।

शत शत कोश दूर से बोले, 'गंगा' नाम सुरग पट खोले।
हरि हरि हरि का नाम उचारे, उसके संकट कटते सारे।
राम कृष्ण शिव दुर्गा देवी, तरें भक्त जो उनके सेवी।
प्रातः शिव का दर्शन पावे, बिल्व पत्र अरु भंग चढ़ावे।
रजनी कृत उसके दुष्कर्मा, नष्ट होय पावहिं सद्धर्मा ।
शिव के दर्शन करे दोपहरी, ध्यान धरे शिवलिंग जलहरी।
जीवन भर के दुःख निवारे, इस विधि कहते पोप पुजारें।
साँझ समय जो दर्शन पावे, सात जन्म के पाप नशावे।
यह दर्शन का कहा महातम, गिरे गर्त में पतित दुरातम।

दर्सन पर्सन आदि यह, सब बातें बकवाद।
घण्टा घुग्गु सब बृथा, चरणामृत परसाद।।

हरि हरि शिव शिव नाम सिमरना, महाँ असम्भव भवनिधि तरना।

नाम जपे ते छूटें पापा, तब तो जगत होय निष्पापा।

दु:ख छूट जाते यदि सारे, तो क्यों रहते दुखी बेचारे।
पाप नशावे गंग किनारा, तभी तो फैले पापाचारा।
क्यों कोई डरे पाप से भाई, जब हरि सिमरे पाप नशाई।

प्रश्न– नाम जपन तीरथ दरस, क्या सब कुछ निर्मूल।
अथवा इस में तथ्य है, और शास्त्र अनुकूल।।

उत्तर– वेदादिक सच्छास्त्र का, पढ़ना अरु सत्संग।
परमारथ धर्माचरण, यह तरने के ढंग।।

वैर न राखे अरु निश्छलता, योगाभ्यास चित निर्मलता।
मन वच कर्मन सत को धारे, झूठ पाप का बीज उखारे।
गुरु पितु मात अतिथि की सेवा, ब्रह्मचर्य देवन को देवा।
केवल एक ब्रह्म की पूजा, गनहिं न ईश्वर के सम दूजा।
धर्म संहित करना पुरुषार्थ, यही श्रेय का मार्ग यथारथ।
इत्यादिक जो शुभ गुण सारे, यही जगत को तारन हारे।
यही तीर्थ हैं पाप निवारक, यही पतित जन के उद्धारक।
जल थल तो नहीं तीर्थ कहावें, यह तो उल्टे स्वयं डुबावें।
नाव पोत भी तीर्थ कहाते, नद नदियों से पार लगाते।

समान तीर्थेवासी। अ.४ चा. ४/१०८।। नमस्तीर्थ्याय च । यजु.आ. १६ मंत्र ४२ ।।

सह पाठिन को कहें सतीरथ, शिक्षा लें कर यत्न भगीरथ।
सच्चरित्र जो साधु मानस, वेद पठित अथवा वैखानस।
अन्न वस्त्र उनको दे दाना, यही तीर्थ करते कल्याना।

यस्य नाम महद्यशः यजु.अ. ३२/३

इस विध प्रभु का नाम सिमरिये, प्रभु के गुण मन भीतर धरिये।
प्रभु का नाम ब्रह्म परमेश्वर, दयावान न्यायी विश्वेश्वर।
सर्व शक्तिमय नाम सुहावा, यह ताके गुण कर्म सुभावा।
ईश गुणों को तुम भी धारो, इस प्रकार प्रभु नाम चितारो।

सभी बनो तुम भी बलशाली, तुम भी धारहु दया सुचाली।
विष्णु सम निर्धन को पालो, शिव सम निज सामर्थ्य बढ़ालो।
डरो पाप से पुण्य कमाओ, ईश्वर के गुण मन में लाओं

बड़ा बने बड़े कार्य कर, शक्ति बढ़ाता जाय।
कभी न करे अधर्म को, राखे दया बनाय।।

जाओ बढ़ाते अपना साधन, चहे मार्ग में आवे बाधन।
भले होय थोड़ा विज्ञाना, तौ भी सीखो वस्तु बनाना।
सब का सुख दुख निज सम जानो, सब की रक्षा मन में ठानों।
विद्वानों में हो विद्वाना, दुष्टों को कर दण्ड प्रदाना।
भद्रजनों की रक्षा करना, दुर्जन पापी से नहीं डरना।
एहि विधि सिमरें जो प्रभु नामा, वे नर होते पूरन कामा।

प्रश्न— गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु है, गुरु जानो मँहदेव।
तन मन धन से गुरु की, तांते कीजे सेव।।

गुरु चरणन चरणामृत पीजे, गुरु की जूँठ प्रसादी लीजे।
गुरु आज्ञा कीजे अनुकूला, गुरु सेवा सब धर्मन मूला।
यदि हो लोभी गुरु अपावन, तो समझो नारायण बावन।
मोही हो तो रामसमाना, कामी होय कृष्ण भगवाना।
चाहे गुरु हो पापाचारा, कबहुँ न टूटे श्रद्धा तारा।
सन्त रु गुरु दर्सन हित जावे, पग पग अश्वमेध फल पावे।

उत्तर– गुरु नहीं ब्रह्मा विष्णु सम, यह ईश्वर के नाम।
ईश्वर सब से उच्च है, सत्य मुक्ति का धाम।।

गुरु महातम अरु गुरु गीता, यह भी पोप कपट अपनीता।
गुरु माता गुरु पिता अचारज, गुरु अतिथि कर्ता शुभ कारज ।
परम धर्म है इनकी सेवा, ज्ञान मान विद्या के देवा।

यदि गुरु होवे कामी क्रोधी, लोभी मोही अरु दुर्बोधी।

ऐसे गुरु को छिन में त्यागे, बाकी परछाई से भागे।
ऐसे गुरु को करे सिखावन, त्याग करावे धर्म अपावन।
फिर भी यदि कुकर्म न छोड़े, ऐसे गुरु से नाता तोड़े।
मारे पीटे प्राण निकारे, दोष नहीं यदि उसको मारे।
अनपढ़ मूरख दुष्टाचारी, वे नहीं गुरु पद के अधिकारी।
गुरु नहीं वे निपट गडरिये, उनकी संगति को परिहरिये।
वे तो भेड़ चराने हारे, केवल अपना स्वार्थ सँवारे।
एहि विधि शिष्यन धन अपहारक, नहीं जगत के कुछ उपकारक।

लोभी गुरु लालची चेला, दोनों खेले दाव। भव सागर में डूबते, बैठ पत्थर की नाव।।

गुरु समझे यह चेला चेली, भोली भाली गुड़ की भेली।
चेला भी स्वारथ का अंधा, खाय गुरु की झूँठ सोगन्धा।
वह जाने गुरु पाप विमोचक, मनके भाव दोउन के रोचक।
दोनों ही स्वारथ के बेटे, दोनों अंध कूप में लेटे।
दोनों डूबे भोजल पानी, दोनों चढ़ें नाव पाहानी।
दोनों के सिर धूली डारो, अपना जीवन आप सुधारों।
पोप पुजारी गुरु गडरिये, इनकी संगति को परिहरिये।
यह सब स्वारथ साधें अपने परमारथ नहीं, साधें सपने।

जो सज्जन परमार्थी, करें स्वार्थ का त्याग।
सहन करें संकट सदा, जरें पराई आग।।

गुरु गीता अरु गुरु महातम, इनके लेखक दुष्ट दुरातम।

प्रश्न– "अष्टादश पुराणानां कर्ता सत्यवती सुतः" ।।१।।
"इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थमुपबृंहयेत् ।।२।। महाभारत

अष्टादश पुराण के कारक, व्यास देव भव सागर तारक।
उनके वचन सत्य परमाना, तिनको ईश्वर रूप बखाना।
ग्रन्थ पुराण और इतिहासा, हैं वेदार्थ बखाने व्यासा।

पितृ कर्म में धर्म है, सुनना कथा पुरान।
कथा सुने हरि वंश की, उसे मिले भगवान।।

अश्व मेध जब होय समापत, दशवें दिन लख समय निरापत।
श्रवण करे कछु कथा पुराना, यदि वैकुण्ठ धाम हो पाना।
जाने वेद पुराणों द्वारा, नहीं पुराण वेदों से न्यारा।
इस विधि हैं परमाण पुराना, जिनमें कथा कथानक नाना।
सब पुराण सगरे इतिहासा, पंचम वेद कहें मुनि व्यासा।
है पुराण में पूजा पाहन, हैं अवतार राम अरु काहन।
दर्सन पर्सन तीरथ दाना, प्रभु प्रापति के साधन नाना।

उत्तर– अष्टादशहु पुराण के, कर्त्ता होते व्यास।
तो क्यों इतनी गप्प लिख, करते सत्यानास।।

सूत्र शारीरिक व्यास रचाए, योग शास्त्र लिख योग सिखाये।
ऐसेथे पण्डित विद्धाना, था अगाध मुनिवर को ज्ञाना।
ऋक से ले थर्वण के पारा, महा व्यास जो रहा अपारा।
व्यास पार कर व्यास कहाए, ऐसा ऋषि क्यों गप्प रचाए।
सम्प्रदाय पखपाती धूरत, अविवेकी स्वारथ की मूरत।
वेद विरोधी रचे पुराना, लेकर नाम व्यास भगवाना।
व्यर्थ भागवत आदिक पोथे रचे जिन्होंने मिथ्या थोथे।
कहाँ व्यास विद्या भण्डारा, कहाँ यह निर्गुण सार असारा।

शिव आदिक के नाम युत, नहीं इतिहास पुराण।
ब्राह्मण ग्रंथ पुराण है, इसमें शास्त्र प्रमाण।।

"ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणनि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति"
ऐतरेय शतपथ अरु सामा, गोपथ है पुराण को नामा।
नाराशंसी गाथा कल्पा, ब्राह्मण के हैं नाम विकल्पा।
इनको ही कहते इतिहासा, ब्राह्मण ग्रंथ रचे नहीं व्यासा।
याज्ञवल्क्य शनकादि बखानक, इत्यादिक इतिहास कथानक।

जहाँ जगत निर्माण बखाना, उसकी संज्ञा भई पुराना।
वैदिक शब्द समर्थ बतावें, एहि कारण यह कल्प कहावें।
दे दृष्टान्त कथा जहाँ कहिये, गाथा संज्ञा वाकी गहिये।
जो इति वृत्त होय नर शंसी, उसका वर्णन नाराशंसी।

इन सबसे वेदार्थ का, होता नर को ज्ञान।
ताँते ब्राह्मण ग्रंथ की, संज्ञा भयी पुरान।।

जहाँ ज्ञानी की गरिमा सुनिये, पितृ कर्म संज्ञा वहाँ गुनिये।
अश्वमेध की होय समापति, इनको सुने तो भागे आपति।
तनिक विचारें अपने मन में, व्यास मुनि जब नहीं थे जनमें ।
पितृ कर्म था कौन कहाता, पढ़ता कौन रु कौन पढ़ाता।
तांते ब्राह्मण परम पुरातन, पढ़ते सुनते आये सनातन।
नहीं भागवत आदिक पोथे, मन गढ़न्त बुद्धि के थोथे।
वेदाध्ययन किये मुनि व्यासा, कीने वैदिक अर्थ प्रकासा।
वेद व्यास की पदवी पाई, वेदों की शिक्षा फैलाई।
आर पार जो रेखा जावे, वही चौड़ाई व्यास कहावे।
आर पार वेदों को कीना, व्यास नाम एहि कारण दीना।

अनिक शिष्य इनके रहे, जैमिनि अरु शुक देव।
वेदों की शिक्षा गही, कर चरणन की सेव।।

कृष्णद्वैपायन था नामा, पढ़े यजु ऋक् थर्वण सामा।
चतुर वेद के जानन हारे, सृष्टि उनको व्यास पुकारे।

जो नर कहते व्यास ने, संग्रह कीने वेद।
उनकी मिथ्या कल्पना, अरु बुद्धि में भेद।।

उनके पिता पित के दादा, दादा के दादा परदादा।
शक्ति वसिष्ठ पाराशर आदिक, परदादा ब्रह्मा उत्पादक।
सब थे चतुर्वेद के ज्ञाता, ज्ञान दिवाकर भवजल त्राता।

प्रश्न– जेतीं बात पुराण की, सब झूँठी सब काँच।
सब गप्पें सब त्याज्य हैं, अथवा हैं कुछ साँच।।

उत्तर– इनमें गप्प भरीं बहु झूँठीं, जो स्वभाव विपरीत अनूठीं।
कोई कोई इनमें साँची जाने, न्याय घुणाक्षर के सम मानें।
कागद में जिम घुण लग जाता, सुन्दर अक्षर बने सुहाता।
जो जो वेदों की वे साँची, जो पोपों की सो सब काँचीं।
शिव पुराण में यथा बखाना, शिव जी को परमेश्वर माना।
ब्रह्मा विष्णु आदिक देवा, शिव के दास करें सब सेवा।
वैष्णव विष्णु को प्रभु मानें, शिव ब्रह्मा को किंकर जानें।
यही बखाने विष्णु पुराना, विष्णु को ईश्वर परमाना।

देवी भागवत में लिखा, सब देवी के दास।
देवी है परमेश्वरी, पूरे सब की आस।।

पढ़ें उठा कर खण्ड गणेशा, उसके किंकर विष्णु महेशा।
एक मनुष कृत होंय पुराना, भेद भाव क्यों होते नाना।
निज निज सम्प्रदाय पखपाती, अपने मत की लिखें सुहाती।
पूर्व रु अपर विरोधी बातें, निज मत श्लाघी पर पर घातें।
विद्वानों के नहीं यह कारज, लिखने वाले गप्प अनारज।
सृष्टि की रचना सम्बन्धी, मूरख पोप मचाते अन्धी।
जिस पुराण पर आँख उठाएं, निज निज डफली पड़े बजाएं।
कहें शैव शिव सृष्टि विधााता, कोऊ कहे ब्रह्मा उपजाता।
देवी को कोउ जननी माने, गणपति लिखा गणेश पुराने।
सूर्य्य पुराणी कहें दिवाकर, सृष्टि रचना करे प्रभाकर।
वायु पुराणी कहते पवना, इससे भया सृष्टि को सबना।
पवन सूर्य्य सृष्टि के कारण, जगत रचाएँ करें विदारण।
अब हम तुम से पूछें भैय्या, पवन सूर्य्य के कौन रचैय्या।

आपहि जो उत्पन्न भये, वे किम जग उपजाँय।

प्रलय काल सूरज पवन, मृत्यु विवर विलाँय।।

पंच तत्व से पिंड तुम्हारा, उत्पन्न हो कर नशहि असारा।
क्या मानोगे तनु को कर्ता? क्या यह जग का कर्ता धर्ता।
जग रचना की विधि विलक्षण, पण्डित जन अब सुने विचकण।

सवैय्या—इच्छा भई शिव के मन में इस ही छन में जगती पुन जनमें।
जनमे नारायण के सर में तहाँ नाभि कमल उपजा तन में।।
जल मय सगरा जग देख विरञ्चि अञ्जलि नीर बहा छन में।
छन में बुदबुद से पुरुष बना जिमि विद्युत हो जलमय घन में।

सवैया— वह नर देख प्रजापति को , झट बोल उठा तुम कौन हो बेटा।
जनकहुँ पूत कहो तुम मूरख, बोले प्रजापति मार चपेटा।।
तू ममे पूत कपूत न जानहि, क्यों करते विरथा झगरेटा।
इतने में इक ज्योतिर्लिंग, उठा जिसने ब्रह्माण्ड लपेटा।।

चकित होय तब दोनों ठाढ़ें, दोनों के मन कौतुक बाढ़े।
कहाँ आदि इसका कहाँ अन्तः, पहुँचा कवन दिशा पर्य्यन्ता।
आदि अन्त जो इसका पावे, वही पिता तब माना जावे।
कूर्म रूप विष्णु धर लीना, जल में नीचे भयो विलीना।
हंस देह ब्रह्मा ने धारी, उड़ गये ऊपर उडारी।
दिव्य सहस्र वर्ष जब बीते, उभय रहे रीते केरीते।
उसका अन्त किसी नहीं पाया, तब ब्रह्मा ने रचा उपाया।

एक केतकी का तरु अरु इक देखी गाय।
इन दोनों को देख कर, ब्रह्मा रचा उपाय।।

पूछा उनको हमें बताएँ, कैसे थाह लिंग की पाएँ।
वे बोले हम स्वयं न जानें, क्यों कर इसका अन्त बखानें।
तब ब्रह्मा ने बात विचारी, बोले साक्षी दिहो हमारी।
झूँठ न बोलेंपुन वे बोले, झूँठ वचन ते हियरा डोले।

क्रुद्ध भये ब्रह्मा रिसियाये, कहने लागे भ्रुकुटि चढ़ाये।
भस्म करेंगे देह तुम्हारी, जो नही मानिहो बात हमारी।
थरथर कंपन लगे बेचारे, हम दोनों हैं शरण तुम्हारे।
जो कछु हमें कहो वह करिहैं, तुमरे काज हेत हम मरिहैं।
एहि विधि कहा झुकाए माथा, ब्रह्मा चले उन्हें ले साथा।
जब वे पहुँचे लौट ठिकाने, जहां से गये थाह को पाने।
विष्णु ने यह स्पष्ट बताया, हमने इसका अन्त न पाया।
अतल वितल पाताल धरातल, थक थक हारे गये रसातल।
हमने इसका लख्यौ न मूला, देख देख महिमा हौं भूला।
तब विरञ्चि सुन सुन हर्षाये, आदि अन्त हमने तो पाये।
साक्षी दोनों संग हमारे, देंगे सन्मुख साक्ष्य तुम्हारे।
तुर्त केतकी तरु यह बोला, लिंग नहीं यह हर हर भोला।
इसके सिर हम फूल चढ़ाते, पुष्पों की वर्षा वर्षाते।
सत्य कहूँ मैं गैय्या बोली, कबहुँ न झूँट कहूँ मैं भोली।
निज पय की बरसाऊँ धारा, लिंग नाथ यह पूज्य हमारा।
भई तत्काल लिंग से बानी, क्यों बकते हो झूठ कहानी।
रे तरु! तूने कीना पापा, तांते देऊँ तुझे अभिशापा।
किसी देव पर फूल तुम्हारे, नहीं चढ़ेंगे रे हत्यारे।
जो कोई केतकि फूल चढ़ाए, उसका नाश तुर्त हो जाए।
ए री गैय्या चतुर सयानी, तूने झूठी कथा बखानी।
तेरो मुख तों होय अपावन, पूँछ पूज्य होगी अति पावन।
तेरी भई झूँठ में निष्ठा, तांते तू खायेगी विष्ठा।
शापित हो ब्रह्मा तेहि काला, झूँठ बोल कीना मुख काला।
कहीं न होगी पूजा तोरी, यह धिक्कार पड़े तोहे मोरी।
सत्य देख कर विष्णु तेरा, गद्‌गद् चित्त भया अति मेरा।
पूजन होगा तेरा सारे, तेरा पूजन जग को तारे।

अन्दर से उस लिंग के, निकसे शिव भगवान।
जटा जूट धारण किये, करें जगत कल्यान।।

शिव बोले तुम लड़ने लागे, निज कर्तव्य दोउन ने त्यागे।
जग रचना हित तुम्हे पठाया, पर तुम को तो लड़ना भाया।
क्यों नहीं अब तक सृष्टि बनाई, क्यों लड़ते हो भाई भाई।
द्वै कर जोड़ उभय जन बोले, हर हर हर हर बं बं भोले।
नाथ नहीं कोई रहा पदारथ, किस से सृष्टि बने सकारथ।
यह सुन कर हँस दीने भोला, काढ़ जटा से भस्म का गोला।
बोले गोले को ले जाओ, इस राखी से सृष्टि रचाओ।
इन पोपों से पूछों भाई, जब लग सृष्टि न बनने पाई।
पंचभूत का रहा अभावा, किसी वस्तु का था नहीं भावा।
तो यह ब्रह्मा विष्णु महेशा, कैसे बने रहे किस देशा।
कैसे इनके बने शरीरा, कमल लिंग गैय्या तरु नीरा।
कैसे बना भस्म का गोला, क्यों कर बन गए बं बं भोला।

पढ़ें भागवत खोल कर, क्या कुछ करे बखान।
कैसे यह सृष्टि बनी, इतना जगत महान।।

विष्णु नाभि से नीरज निकसा, उस नीरज से ब्रह्मा विकसा।
ब्रह्मा के पग रहे अनूठे, उन चरणों के दोऊ अँगूठे।
इक से भये स्वायंभव राजा, सब से पहला पुरुष बिराजा।
दूसर से सतरूपा रानी, मनु स्वायम्भव के मन भानी।
रुद्रदेव मस्तक से जनमें, भस्म रमाई जिनके तन में।
अरु मरीचि आदिक दश पूता, सभी ललाटज शक्ति अकूता।
दशहुँ प्रजापति उनके जाये, सकल जगत जिनका यश गाये।
उन के भई त्रयोदश कन्या, शील तेजमय आतम मन्या।
सब की सब कश्यप सों ब्याहीं, इक से इक बढ़ कर चित चाहीं।

सवैय्या– दिति से दैत्य भये सगरे अरु अदिति से उपजे सब देवा,
दनु से दानव वंश भया, थे देवन के सगरे दुःख देवा।
विनता से जनमें पंछी अरु कद्रु से अहिवंश जनेवा,।
कूकुर स्यार जने सरना सब नार करें कश्यप की सेवा।।

हाथी घोड़े जन्तु सब, तरु सब कंटक हार।
कश्यप की जनने लगीं, शेष रहीं जो नार।।

वाह रे वाह भगवत निर्माता, लाल बुझक्कड़ के बड़ भ्राता।
ऐसी बातें लिखते भाई, तनिक न तुमको लज्जा आई।
नर नारी रज वीर्य संयोगा, जो जनमें सो मानुष होगा।
सृष्टि क्रम से लिख विपरीता, बुद्धि कोष तब हो गया रीता।
नार गर्भ से हाथी घोड़े, ऐसे गप्प कौन पुन जोड़े।
गर्भाशय में कहां ठिकाना, जिसमें ठहरे जन्तु नाना।
कंटकहार झाड़ झंकाड़ा, गर्भाशय था या खलवाड़ा।
धिक धिक पोप पोप की लीला, कैसी बात लिखी अश्लीला।

इन पोपों ने जगत को भ्रम में रक्खा डाल।
न जाने कब देश की, सुनिहैं दीन दयाल।।

अन्धेपोप रु अन्ध पुजारी, अन्धी श्रद्धा माननहारी।
यह आश्चर्य मोर मन भारी, क्यों मानें इनको नर नारी।
सिंह बाघ जिन ने उपजाये, क्यों नहीं मात पिता तिन खाये।
जो नर इतना भी नहीं जानें, वे क्यों मानुष लगे कहाने।
भागवत आदि बनाने हारे, क्यों नहीं गए गर्भ में मारे।
जब जनमें तब ही मर जाते, मृत्यु मुख में तभी समाते।
आर्यावर्त दुख से छुट जाता, जो इनका भागवत नहीं आता।

प्र॰सोरठा—जिसका होय विवाह, गीत उसी का गाइये।
बुद्धि न पावे थाह, तांते नहीं विरोध कुछ।।

जब विष्णु के हों गुणगाना, विष्णु ही तब हो भगवाना।
शेष देव सब उनके चाकर, शिव ब्रह्मा नक्षत्र दिवाकर।
जब शिव को कहिये परमातम, तब भोले आतम को आतम।
परमेश्वर की सब कुछ माया, जिसे जहां चाहा जनमाया।
पशु से पुरुष पुरूष से जन्तु, प्रभु को कैसे कहें परन्तु।

ईश्वर पर नहीं उठती शंका, क्या जाने नर बुद्धि रंका।
बिन कारण यह सृष्टि रचाई, अद्‌भुत माया प्रभु दिखलाई।
वह प्रभु कर्ता करे कराए, आप ही खेले आप खेलाए।

उत्तर– जिस मानुष का ब्याह हो, उसके गाइये गीत।
इस को तो हम मानिहैं, यहीं ज़गत की रीत।।

एक बात हम को बतलाएं, गीत ब्याह वाले के गाएं।
पर यह कभी न हमने देखा, तुम लोगों का उल्टा लेखा।
वर को जहां पर बड़ा बनाएं, वर के पितु को तुच्छ दिखाएं।
भाट कहें वा तुमको चारण, करने लागे विरद उचारण।
बड़े पोप जी चोबर कट्टू, हैं खुशामदी पूरे टट्टू।
पूरे गप्पी गप्प लगावें, चारण भी तुमसे शरमावें।
जिसके पीछे तुम लग जाओ, उसको तो आकाश चढ़ाओ।
जिसको पुन तुम चहो गिराना, उसका नहीं पुन ठौर ठिकाना।
चूल्हें में जाये सच्चाई, तुमरे मुख में पड़े मिठाई।
मानुष में हो संभव माया, प्रभु पर नहीं माया की छाया।
पारब्रह्म मायावी नाहीं, केवल सत्य प्रभु मन माहीं।

पशु पंछी जनतीं यदि, कश्यप मुनि की नार।
आजहुं उपजाती स्त्रियां, पशु तरु काठ क़बार।

सृष्टि क्रम जो पूर्व बताया, वही सत्य मति मांहि समाया।
पोप देव ने खाया धोखा, कीना कश्यप अर्थ अनोखा।

तस्मात् काश्यप इमाप्रजाः।।शत.७५।१।५।। कश्यप कस्मात् प श्यको भवतीति। निरु.अ.२/२

कश्यप ने सब सृष्टि बनाई, पोपदेव को समझ न आई
पारब्रह्म को कश्यप नामा, जिसने की सृष्टि अभिरामा।
कश्यप से पश्यक परयोज़न, सकल जगत को देखे जो जन।
जीव रु उसके सगरे कर्मा, जो देखे होकर निर भरमा।
उस पश्यक को कश्यप कहिये, मह भाष्य रीति सों लहिये।

आद्यन्त विपर्य्यय, महाभारत परमान।
पहले को पाछे रखे, पिछला पहले जान।।

तांते 'क' के स्थान पकारा, 'व' सथाने पुन करें ककारा।
कश्यप पश्यक यूँ बन जाता, पश्यक प्रभु संसार विधाता।
इसका अर्थ पोप नहीं पाया, भर भर लोटा भंग चढ़ाया।
सृष्टि क्रम से लिख विपरीता, बिरथा जन्म गँवाया रीता।

मारकण्डेय पुराण में, लिखते ऊट पटांग।
बढ़ बढ़ कर गप्पे लिखीं, पी पी प्याले भांग।।

दुर्गा पाठ लिखा क्या सुंदर, मनहु झूठ का बहा समुन्दर।
देवों से निकसा परकासा, उससे भर गई सगरी आसा।
उससे देवी भयी सुरूपा, दिव्य ज्योति सौंदर्य अनूपा।
देवी ने महिषासुर मारा, अरु सृष्टि का भार उतारा।
रक्त बीज विन्दु अरिविन्दु, रजनीचर तमसा हर इन्दु।
एक विन्दु जंह पर गिर जाये, रक्त बीज उसका बन जाये।
उसने इतना रुधिर बहाया, जिसमें सगरा जगत समाया।
इतने रक्त बीज वहां जनमें, सब संसार भरा इक छन में
ऐसे ऐसे लिखे गपोड़े, भंग तरंग दौड़ाये घोड़े।

रक्त बीज से भर गया, जब सारा संसार।
कहां खड़ी देवी रही, जो थी सिंह सवार।।

कहां खड़ी देवी की सेना, इन बातों की समझ परे न।
पशु पंछी तरु पर्वत भारे, कहां गये सारे के सारे।
क्या सब गये पोप के घर में, अथवा डूब गये सागर में।
अब तुम सुनो भागवत लीला, कितना बड़ा झूठ का टीला।

चतुर श्लोकी भागवत, विष्णु किया प्रदान
ब्रह्मा जी को दे दिया, मानहु था वरदान।।

ज्ञानं परमं गुह्यं में यद्विज्ञानसमन्वितम्। सरहस्यं तदंगंच गृहाण गदितं मया।।

भागवत स्कंध २ अ. ६ श्लोक १०

झूठ भागवत को है मूला, क्यों कर सत्य पुष्प फल फूला।
ब्रह्मा से बोले नारायण, सुनहु भागवत प्रभु पारायण।
परम गुह्म मेरो यह ज्ञाना, अति रहस्यमय अरु विज्ञाना।
धर्मादिक चारहु फल दाता, जो जन सिमरे सायं प्राता।
लिख विज्ञान युक्त यह ज्ञाना, 'परमं' विशेषण व्यर्थ लगाना।
संग 'रहस्य' के 'गुप्त' विशेषण, यह भी है पुनरुक्ति श्लेषण।
सभी व्यर्थ सब मूल अनर्थक, तांते भागवत सकल निरर्थक।
ब्रह्मा जी को यह वर दीना, मोह मुग्ध तुम भवहु कभी ना।
पुन देखें दसवें असकन्धे, ब्रह्मा भये मोह में अन्धे।
मोह मुग्ध हो वत्स चुराये, नारायण का वर झुटलाये।
अपनी कही आप झुटलाई, ताँते इसमें नहीं सच्चाई।
नहीं स्वर्ग में कोऊ अबोधा, राग द्वेष स्पर्धा नहीं क्रोधा।
पुन क्यों क्रुद्ध भये सनकादी, स्वर्ग द्वार पर भले प्रमादी।
क्रोध भया यदि स्वर्ग मझारे, केहि विधि स्वर्ग नाम पुन धारे।

द्वारपाल थे जय विजय, विष्णु धाम के द्वार।
शाप दिया सनकादि ने, दिये भूमि पर डार।।

जय अरु विजय दोऊ थे भैय्या, विष्णु द्वार के थे रखवैय्या।
नारायण का था आदेशा, भीतर करे न कोऊ प्रवेशा।
सनकादिक डयौढ़ी पर आये, पर वे भीतर जान न पाये।
द्वार पाल छरिये ने रोका, स्वामी की आज्ञा से टोका।
सनकादिक ने उनको शापा, तुमने किया महत्तर पापा।
जाओ भूमि पर तुम गिर जाओ, राक्षस बन कर कष्ट उठाओ।
जय अरु विजय हृदय में डोले, द्वै कर जोड़ विनय कर बोले।
महामुने हम को बतलायें, पुनः स्वर्ग को कैसे आएं।
सनकादिक बोले अस बानी, स्वर्ग प्राप्ति की विधि बखानी।

जो तुम करो प्रभु की भक्ति, विष्णु चरण पंकज अनुरक्ति।
सात जन्म मँह पाओ स्वर्गा, मर्त्य लोक से हो अपवर्गा।
जो नारायण के संग लरिहौ, विष्णु के कर कमलन मरिहौ।
तीन जन्म मँह मुक्ति पहियो, पुन प्रभु चरणन दर्सन लंहियो।
देखें नारायण को न्याया, अपने किंकर को मरवाया।
दोनों थे निर्दोष बेचारे, आयसु पाय खड़े थे द्वारे।
सनकादिक भञ्जहिं अनुशासन, द्वारपाल ठाड़े निज आसन।
विष्णु को समुचित था देखें, किसका दोष रहा यह पेखें।
द्वारपाल परितोषक पाते, जो थे अपना धर्म निभाते।
सनकादिक को देते दण्डा, जो स्वभाव के थे उद्दण्डा।
यह विष्णु की उल्टी रीति, नारायण की अनुचित नीति।

नारायण के घर यदि, ऐसा पड़ा अँधेर।
क्यों नही उनके भक्त जन, दुर्गति पावें फेर।।

जय अरु विजय जन्म पुन धारें, राक्षस उनको लोग पुकारें।
हिरणयाक्ष थे जेठे भ्राता, बन वराह विष्णु ने धाता।
था हिरणकश्यप बलवाना, वह नहीं मानें था भगवाना।
अब वराह की सुनो कहानी, महाँ असम्भव अनृत खानी।
हिरणयाक्ष के मन में आई, भूमि लपेटी मनहुँ चटाई।
गोल मोल कर रख सिरहाने, सोय गया पुन लम्बी ताने।
शूकर देह विष्णु ने धारी, पकर दन्त से अवनि निकारी।
युद्ध भया दोनों का भारा, हिरणयाक्ष को प्रभु ने मारा।

पोपों को भूगोल का, नहीं तनिक भी ज्ञान।
चौड़ी है वा गोल है, किसके भूमि समान।।

रख सिरहाने भूमि लपेटे, तौ पुन स्वयं कहाँ पर लेटे।
धरी धरा शूकर निज दन्ते, कहाँ खड़े दोनों उपरन्ते।
कँह पर पग धर लड़ी लड़ाई, पृथिवी तो लिपटी लिपटाई।

पोपों की छाती पर ताड़े, लड़ते रहे युगों लौं गाढ़े ।
रखी रही जब भूमि सिरहाने, पोप खड़े तब कौन ठिकाने।
गप्पी के घर गप्पी आये, दोना गप्पी नाम धराये ।

घनाक्षरी कबित्त

भाई हिरणयाक्ष के हिरण्यकश्यप भए, बेटा प्रहलाद वाको रामचरण दासा।
गुरु जो पढ़ावे प्रहलाद को न भावे, वह राम राम राम राम रटे श्वास श्वासा।
गिरि से गिराया तप्त स्तंभ को तपाया प्रहलाद नहीं जला यह राम का तमासा,
खंभ फोड़ निकसे नृसिंहदेव विकसे, अरु पेट फाड़ दैत्य का कर दियो विनासा।

उत्तर– कैसी बढ़िया गप्प बनाई, लोह खम्भ को दिया तपाई।
यदि कथानक हैं यह सांचे, तो उसको जो भागवत बाँचे।
पर्वत से नीचे जुड़ लुढ़कावे, चकनाचूर तुर्त हो जावे।
चहे पुत्र को पिता पढ़ाना, बन जाए बेटा विद्वाना।
क्या करता था पिता बुराई, मूढ़ पुत्र को समझ न आई।
वह चाहता था बनूँ वैरागी, निर्बुद्धि मूरख दुर्भागी।

कुण्डलियां– जलते खम्भे पर चढ़ीं, चींटीं जो यह साँच।
लिपट गये प्रहलाद पुन, लगी न वाको आँच।।
लगीन वाको आँच, इसे जो साँची मानें।
उसे लगाओं तप्त, खम्भ से तो हम जानें।।
जले नहीं तो चमत्कार, सब सत्य अचम्भे।
तो प्रहलाद भी जला नहीं, लग जलते खम्भे।।

चण्ड अग्निसे खम्भ तपाया, पै नृसिंह को नहीं जलाया।
वर नरसिंह दियो भगवाना, साक्षात थे पुरुष पुराना।
इक्किस पीढ़ी भक्त तुम्हारी, स्वर्ग जायेंगी बारी बारी।
भयीं न थीं तब इक्किस पीढ़ी, रही अधूरि सुरग की सीढ़ी।

ब्रह्मा और प्रजापति, कश्यप पुन हिरणक्ष।

हिरणकश्यप चार यह, पीढ़ी हैं प्रत्यक्ष।।
हिरण्याक्ष अरु हिरणकश्यप, गये स्वर्ग तत्काल।
कुम्भकर्ण रावण वही, दन्त वक्र शिशुपाल।।

एक बार जब स्वर्ग पधारे, पुन वर्पो जनमें इह संसारे।
क्या प्रभु भूले अपनी बानी, अथवा थी सब झूठ कहानी।

छप्पय– अब सुनिये अक्रूर पूतना केर कथानक।
रथ चढ़ चले अक्रूर अश्व वायु के बानक।।
चले भोर को साँझ भई, गोकुल में पौने।
पवन वेग से उड़े कोस पर चारहु गौने।।
भगवतिये के भवन की परकम्मा लेते रहे।
भूल गये वा मार्ग को पूछ पोप से क्या कहे।।

सवैया– पूतना के तनु की चौड़ाई भागवती छः कोस बतावें।
मोहन ने जब भींच लिये थन तो उसको नभ माँहिं उड़ावें।।
गोकुल अरु मथुरा मग अंतर पूतना धाई की देह गिरावें।
कोस छः कोस की देह तले पुन गोकुल मथुरा क्यों न दबावें।।

अजामेल इक भक्त कहाए, उसके गृह में नारद आये।
नारद जू ने उसको प्रेरा, तू है भक्त नारायण केरा।
सुत का नाम रखो नारायण, जो तुम साँवहु प्रभु पारायण।
अजामेल ने ऐहि विधि कीना, सुत को नाम नारायण दीना।
अजामेल मरने के बेला, खटिया पर था पड़ा अकेला।
अपनेसुत को तुर्त पुकारा, कूद पड़ा नारायण प्यारा।
मन का भाव प्रभु नहीं जाने, प्रभु की बुद्धि नहीं ठिकाने।
वह तो अपना पूत बुलावे, नारायण को समझ न आवे।
ऐसा है यदि नाम महातम, आज कल्ह कहाँ है परमातम।
लाखों नाम सिमरने वाले, भिखमंगे कर लेकर प्याले।

लाखों कैदी कारावासे, रहें सम श्वासे प्रश्वासे।

क्यों कहीं खुलें जेल के द्वारा, नहीं होता उनका छुटकारा।

ज्योतिष विद्या के विरुध, मेरु गिरि परिमाण।
लंबा चौड़ा लिख दिया, पढ़िये तनिक पुराण।।

प्रियव्रत नृप रथ चक्कर रेखा, जहाँ से जलधि निकला देखा।
देख रहे पोपों के नैना, जैसे नैना वैसे बैना।
लिखते भूमि का परिमाना, उंचस कोटी योजन माना।
ऐसी ऐसी गप्पें हांकीं, भागवत हैं गप्पों की झाँकी।

बोप देव का है लिखा, ग्रंथ भागवत नाम।
नाम मात्र का भगवत, नहीं भागवत को धाम।।

था जयदेवा इसका भाई जिसने गीत गोविन्द बनाई।
उसका ग्रन्थ हिमाद्रिनामा, जिसमें श्लोक लिखे अभिरामा।
तीन पत्र थे पास हमारे, मिले खोज से न्यारे न्यारे।
नष्ट भया उनमें से एका, जिसमें लिक्खे श्लोक अनेका।
उन श्लोकों के जो थे आशय, श्लोक बद्ध हौं किये महाशय।

हिमाद्रेः सचिवस्यार्थे सूचना क्रियतेऽधुना, स्कन्धाध्याय कथानाञ्च यत्प्रमाणं समासतः ।।१।।
श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं च मयेरितम्, विदुषा बोपदेवेन श्रीकृष्णस्य यशोन्वितम् ।।२।।

कुंडलिया– बोप देव ! सूची लिखें, भागवत की संक्षेप।
जाको पढ़ कर नृपति के, दूर होंय विक्षेप।।
दूर होय विक्षेप भागवत, ग्रन्थ महाना।
नृप को नहीं अवकाश, ग्रन्थसब व्यर्थ सुनाना।।
पाय सचिव की आयसु, पुस्तक छाँट समूची।
बोप देव ने रची, भागवत की यह सूची ।।
नष्ट पत्र के श्लोक दश, खाये गये अजाना।
श्लोक ग्यारवें से लिखूँ, पढ़ लेवें विद्वान।।

"बोधन्तीति हि प्राहुः श्रीमद्भागवतं पुनः, पंच प्रश्न शौनकस्य सूतस्यात्रोत्तरं त्रिषु ।।११।।"
प्रश्नावतारयोश्चैव व्यासस्य निर्वृतिः कृतात्, नारदस्यात्र हेतूक्तिः प्रतीव्यर्थ स्व जन्म च ।।१२।।
सुप्तघ्नं द्रौण्यभिभवस्तदस्त्रात्पाण्डवा वनम्, भीष्मस्य स्वपद प्राप्तिः कृष्णस्य द्वारिकागमः ।।१३।।
श्रोतुः परीक्षितो जन्म धृतराष्ट्रस्य निर्गमः कृष्ण मर्त्यत्याग सूचा ततः पार्थ महापथः।।१४।।
इत्यष्टादशाभिः पादै रध्यायार्थः क्रमात् स्मृतः, स्व पर प्रति बन्धोनं स्फीतं राज्यं जहौ नृपः ।।१५।।
इति वैराज्ञो दाढर्योक्तौ प्रोक्ता दौणिजयादयः। इति प्रथमः स्कन्ध।।१।

द्वादश स्कन्धों कीयह सूची, बोपदेव ने लिखी समूची।
सचिव हिमाद्रि के कर दीनी, नरपति ने सूची सुन लीनी।
इसी भान्ति के शेष पुराना, जिनमें भरे गपोड़े नाना।
उन्निस बीस अवर इक्कीसा, इक से इक गप्पों में बीसा।

मँहभारत में कृष्ण का, अत्युत्तम इतिहास।
भगवतिये इस बोप ने, कर दिया सत्यानास।।

मँहभारत में चरित सुहावन, सिरी कृष्ण के हैं अति पावन।
उत्तम गुण अरु कर्म सुभाऊ, वरणे हैं श्री यादव राऊ।
जीवनभर कीने शुभ कर्मा, एकहु कर्म न कियो अधर्मा।
वरं बोप ने दोष लगाए, यदु नन्दन जू चोर बनाए।
दूध दही माखन की चोरी, गोप वधू सों खेलें होरी।
कुब्जा दासी के सँग संगम, ऐसे मूरख पोप विहंगम।
पर नारिन सों रास रचाना, हास विलास नाच अरु गाना।
इनको सुन सुन पढ़ पढ़ सारे, निंदा करहिं अन्य मतवारे।
भागवत आदि ग्रन्थ न होते, गप्प न ऐसी झूठ पिरोते।
भारत की दुर्दशा न होती, आरज जनता क्यों पुन रोती।

द्वादश ज्योति लिंग है, कहता शिव हु पुरान।
उनमें चिन्ह न ज्योति का, दीपक से हो भान।।

प्रश्न– सृष्टि की समरथ घटी, समझ न सकती वेद।
सिमरति की रचना भई, भया वेद उच्छेद।।

सिमरति भी जब समझ न आए, तब ऋषियों ने शास्त्र बनाए।
और घटा लोगों का ज्ञाना, उनके हित तब रचे पुराना।
शूद्र रु नारी हेत बनाए, इनको वेद समझ न आए।

तुच्छ बुद्धि इनकी रही, एक शूद्र इक नार।
पठन श्रवण का नहीं दिया, दोनों को अधिकार।।

उत्तर– यह मिथ्या है बात तुम्हारी, तुच्छ बुद्धि नहीं शूद्र रु नारी।
इनको यदि पढ़ाया जाये, इनकी भी समरथ बढ़ जाये।
वेदों के हैं सब अधिकारी, क्या ब्राह्मण क्या शूद्र रु नारी।

देखों नारी गार्गी, पढ़े वेद जिस चार।
कैसे वह विदुषी भई, जो नहीं था अधिकार।।

शूद्र जानुश्रुति जाको नामा, था वेदज्ञ ज्ञान को धामा।
रैक मुनि से विद्या पाकर, शूद्र भया वह ज्ञान दिवाकर।
यजुर्वेद छब्बिस अध्याया, उसमें स्पष्ट लिखा यह आया।
वेदों के सगरे अधिकारी, सुनें पढ़ें सब नर अरु नारी।
पोपों ने यह जाल बिछायें, एहि विधि मिथ्या ग्रन्थ बनाए।
सत्य विमुख लोगों को कीना, पठन स्वत्व शूद्रों से छीना।
हाय ग्रहों का चक्र चलाया, जिसमें भोला जगत फँसाया।
'आ कृष्णेण हू रजसा' मंतर, कहते हैं सूरज का तन्तर।

'इमं देवा' चन्द्र का, मंगल अग्निर्मूर्ध।
'उद्बुध्यस्व' बुद्ध का, मन्त्र कहे जो ऊर्ध।।

'अतियद' बृहस्पति का मन्तर, 'शुक्रमन्धस' शुक्र का जन्तर।
शनि का 'शन्नो देवी' कहिये, नौ ग्रह के यह मन्तर लहिये।
'कया नश्चित्र' राहु का मानें, केतुं कृण्वन् केतु को जाने।
केतु कण्डिका या को नामा, कहते हैं यह स्वारथ कामा।
सगरे उल्टे अर्थ लगाए, सूर चन्द्र नक्षत्र पुजाये।
'आ कृष्णेन' का सूरज नायक, धरा सूर्य्य आकर्ष विधायक।

द्वितीय राज गुण करे विधाना, तृतीय मन्त्र अग्नि का माना।
चौथा है यजमान विधाता, पंचम नाम वेद को ज्ञाता।
छटा वीर्य्य अरु अन्न बताए, सप्तम प्रभु जल प्राण कहाए।

मंत्र आठवां मित्र का, नवम ज्ञान आदान।
ग्रह वाचक इनको कहें, अपढ़ मूर्ख नादान।।

प्रश्न– ग्रह फल होवे वा नहीं, सम्मति कहें विचार।
क्रूर रु शुभ ग्रह निमित से, दुखी सुखी संसार।।

उत्तर– धूर्त पोप जैसा कहें, वैसा नहीं परिणाम।
दुख सुख नर भोगें वही, जैसे करते काम।।

सूर्य रश्मि से होवहि गर्मी, चन्द्र किरण से ठंडी नर्मी।
उष्ण शीत ऋतु इनके कारण, काल चक्र यह करते धारण।
कुछ नर ठंडी से दुख पावें, कुछ के तन को सूर्य तपावें।

ग्रह फल वैसा हो नहीं, जैसे पोप बतांय।
शनि मंगल की दशा कह,लूट लूट कर खांय।।

रवि शशि क्रूर घरों में बैठे, शनि देव तब पग मंह पैठे।
रहे विपत्ति वर्ष अढ़ाई, शीघ्र उपाय करहु कुछ भाई।
छूटेंगे गृह द्वार तुम्हारे, देस विदेस फिरोगे मारे।
जप तप दान कराओ पूजा, इसका और उपाय न दूजा।
अरे पोप तू ठगने हारा, ग्रह से क्या सम्बन्ध तुम्हारा।
क्या वस्तु ग्रह हमें बताओ, क्या फल इसका सब समझाओ।

पोप–दैवाधीनं जगत्सर्वं मंत्राधीनाश्चदेवताः। ते मंत्रा ब्राह्मणाधीना स्तस्माद्ब्राह्मण दैवतम्।।
दैवाधीन सकल संसारा, सकल देव मन्त्रण आधारा।

विप्रों के आधीन हैं, सगरे मन्त्र विचार।
तांते ब्राह्मण देव हैं, पूजे सब संसार।।

मन्त्रों के बल देव बुलाए, उनसे काज सिद्ध कराएं।
यह सब ब्राह्मण के अधिकारा, सब सृष्टि का विप्र सहारा।
हम जीते हैं मन्त्र भरोसे, क्या कर सकते नास्तिक तो से।

सो॰— यदि डाकू और चोर, देवों के आधीन हैं।
चोर देवता तोर, जो चोरों को प्रेरते।।

तब तो राक्षस देव तुम्हारे, एक ही कर्म नाम से न्यारे।
यदि तुम्हारे मन्त्र अधीना, तौ तुम काहे दारिद दीना।
मन्त्रों के बल देव बुलाओं, राजाओं के कोप उठाओ।
अपने गृह भर लो सम्पत्ति, काहे उठाओं वृथा विपत्ति।
काहे भटकहु मारे मारे, छाया पातर हाथ सम्हारे।
शनिवार टारहि तुब भारा, भरो तेल से पात्र हमारा।
घर में देव कुबेर बुलाओ, मुँह माँगा धन उस से पाओ।
क्यों निर्धन के धन को हरते, जो पहले ही भूखों मरते।
तुम को देवें तो ग्रह राजी, नहीं देवें तो होत नाराजी।
क्या प्रमाण है इसमें भाई, हम को दो प्रत्यक्ष दिखाई।

कुण्डलिया— इक को रवि शशि आठवां, इकको तीसर होय।
दोनों को बैठाइये जलती चलती लोय।।
जलती चलती लोय, दग्ध हो इक के अंगा,
दूजा शीतल रहे, चहे हो तन से नंगा।
पौष मास नहीं लगे शीत इक को सगरी निशि,
तब मानें प्रत्यक्ष देत फल तुमरे रवि शशि।।

कहो ग्रहों से क्या तुव नाता, चाचा ताऊ अथवा भ्राता।
डाक तार क्या जाय तुम्हारी, अथवा पकड़े आँय बेगारी।
वे तुम्हार ढिग प्रति दिन आवें, अथवा आप स्वयं वहां जावें।
मन्त्र शक्ति यदि तुमरे हाथा, द्वार द्वार क्यों रगड़ों माथा।
घर बैठे राजा बन जाओ, खाओ पीओ मौज उड़ाओ।

निज शत्रु को वश में कीजे, जिसको चहो उसे धर लीजे।

प्रभु आज्ञा माने नहीं, करे वेद विपरीत।
नास्तिक उस को जानिये, करे न प्रभु से प्रीत।।

पोप करें जिमि वेद विरोधा, वे नास्तिक मूरख दुर्बोधा।
ग्रह का दान तुम्हें नहीं देवे, स्वयं ग्रस्त जन उसको लेवे।
तो क्या उसमें चिन्ता भाई, इसमें उस की होय भलाई।
जो तुम कहो हमीं अधिकारी, तौ क्या तुमरी ठेकेदारी।
जो तुम ठेकेदार कहाओ, अपने घर सूर्य बुलाओ।
जल कर मरो दहे रवि तापा, छार होंय सृष्टि से पापा।
रवि शशि आदिक जड़ हैं सारे, क्या फल दें निर्जीव विचारे।
साक्षात् तुम ग्रह की मूरत, ग्रह का दान ग्रहें अति धूरत।
ग्रह का अर्थ घटे तुम ऊपर, तुम ही तो ग्रह हो इस भू पर।

ये ह्नन्ति ते ग्रहाः।

ग्रहण करें जो ग्रह कहलावें, तांते ग्रह हम तुम्हें बुलावें।
जहां पर पड़ते चरण तुम्हारे, शनि मंगल वहाँ पहुँचे सारे।
निर्धन धनी सेठ वा राजा, जहां तुम्हारा चरण विराजा।
ग्रह बन कर तुम उन्हें चिमटते, बिना लिये वहां से नहीं हटते।
जो कोई तुमरे आये न ग्रासा, उसका करते सत्यानासा।
ठौर ठौर पर निन्दा करते, खाते पीते और विचरते।
उस को कहते हो तुम नास्तिक, स्वयं धूर्त बनते हो आस्तिक।

पोप — ग्रहण लगे रवि चन्द्र को, विचरें नखत आकाश।
ज्योतिष का प्रत्यक्ष फल, पहले करें प्रकाश।।

सत्यवादी— लगे ग्रहण प्रत्यक्ष जो, सो गणना का काज।
ज्योतिष फलित असत्य है, इक छलना इक व्याज।।

शेष फलित विद्या है कांची स्वाभाविक सम्बन्धित सांची।
उलटे सूधे घूमन हारे, रवि शशि पृथिवी आदिक तारे।

इनकी गति का ऐसा लेखा, गिन गिन पहुँचे ऐसी रेखा।
जिसे ज्योतिषी तुर्त बतावे, ग्रहण समय इतने लग ज़ावे।
इतना ग्रहण मोक्ष को काला, इतना अंश होयगा काला।
छादयत्यर्कमिन्दुर्विधु भूमिभाः।

सवैया– वाक सिद्धान्त शिरोमणि का अरु सूर्य सिद्धान्त भी एसो ही बोले,
सूरज ग्रहण लगे जब चन्दा रवि अरु भूमि के बीच में डोले।
चन्दा को ग्रहण लगे जब भूमि सूरज चन्द के मध्य में होले।
चन्द्र की छाया धरा पे पड़े अरु भूमि का बिंब पड़े शशिं गोले।।

ज्यों सूरज अरु दीप की, पड़े देह पर जोत।
रुक जाये परकाश सब, उल्टी छाया होत।।

एहि विधि ग्रहण काल में जानो, पोप पाखण्डी मिथ्या मानो।
राजा रंक दीन धनवाना, देख पड़े जग में गति नाना।
ग्रह गोचर क्या करें बेचारे, कर्म गति टरति नहीं टारे।
जो कछु मानुष जग में करता, वैसा ही फल उसका भरता।
ज्योतिषि ग्रह गति सोच विचारें, गिन कर लग्न मुहूर्त सुधारें।
पुन ब्याहें अपनी सन्ताना, फिर भी कष्ट पड़े आ नाना।
पति मरे कोऊ नारी रोती, यौवन में ही विधवा होती।
काहू की मर जावे नारी, ग्रह गति विरथा गई विचारी।
कोई आयु भर रहता रोगी, नर निज कर्मन का फल भोगी।

ग्रह विचरें आकाश में, पृथिवी नभ से दूर।
मेल न कर्ता कर्म का, क्यों होवे ग्रह क्रूर।।

केवल जीव कर्म का करता, निज कर्मों के फल को भरता।
कर्मों का फल प्रभु भोगावे, नियम मांहि जो सृष्टि चलावे।
ग्रह चक्र यदि सत्य तुम्हारा, तो इक तुम से प्रश्न हमारा।
जनमें दो नर एक ही काले, एक ही क्षण में होने वाले।
इक चढ़ता हाथी अंबारी, गली गली का एक भिखारी।

भोजन के बिन भटके नगरी, इस विध भरे उदर की गगरी।

प्रश्न — क्या कहते बतलाइये, झूठा गरुड़ पुरान।
मृत की गति जिसमें लिखी, मानहिं लोक प्रमान।

उत्तर सो॰—झूठा गरुड़ पुरान, मिथ्या गप्पें हांक दीं।
केवल वेद प्रमाण, करें भरे अपना किया।।

नरक सुरग का है यमराजा, न्यायासन पर वहीं विराजा।
चित्र गुप्त हैं जिसके मंत्री, सकल चलाएं शासन तंत्री।
उनके गण हैं बड़े भयंकर, कज्जल गिरि सम अति प्रलयंकर।
वही जीव को पकर ले जाएं, यम के सन्मुख जा ठहराएं।
जीव मात्र के कर्म विचारे, नरक स्वर्ग में उनको डारे।
तर्पण श्राद्ध पुण्य अरु दाना, यह जो कर्म लिखे हैं नाना।
यम के पैंडे की वैतरणी, सब जीवों को पड़ती तरणी।
उसके हेत करें गोदाना, पाँय जीव जिससे कल्याना।
मिथ्या कर्म यदि यह सारे, को पुन मृतक जीव को तारे।

उत्तर— सभी गपोड़े पोप के, इन में नहीं कछु सार।
नरक सुरग के ब्याज से, लूट लिया संसार।।

जो जन मर कर यमपुर जाते, यम का न्याय वहां पर पाते।
यमपुर में यदि पाप कमावे, उन पापों का फल कहां पावें।
क्या कोऊ दूसर है यमराजा, जिसका पुर कहीं और विराजा।
यमगण यदि गिरि के आकारा, क्यों नहीं दीखें नयनों द्वारा।
जिस घर में प्राणी मर जावें, यम गण किमि उस मांहि समावें।
घर का द्वारा अतिशय छोटा, अरु यम दूत गिरि सम मोटा।
जो मानो सूक्ष्म तनु धरते, घर में घुस कर जीव पकरते।
पहले तनु के हाड़ रु गोड़े, क्या पोपों के घर रख छोड़े ।
आग लगे जंगल के अन्दर, बनके वृक्ष जलें गिरि कंदर।
अगणित कीट पतंगे मरते, किमि गण उनके जीव पकरते।

लाखों यम गण दौड़े आवें, गिरि तनु आपस में टकरावें।
अंग अंग उनके तब टूटें, जनु पर्वत से पत्थर छूटें।
गरुड़ पुरानी के घर पड़ते, पत्थर जैसे अंग लुड़कते।
फिर तो दब कर सब मर जायें, घर से बाहर कबहुं न आयें।
श्राद्ध न पहुंचे मृतकों ताईं, हैं यह पोप मृतक परछाईं।
हाथ पेट मुख इनके खाते, यह मुर्दों का माल पचाते।

किसी गांव मं जाट कोऊ, रहता सह परिवार।
उसके घर में गाय इक, कपिला रही दुधार।।

बीसक सेर दूध वह देवे, दहि माखन से घर को सेवे।
पाधा रहता ताक लगाये, कब गैय्या मेरे हां आये।
पिता जाट का मरने लागा, लगा टूटने जीवन तागा।
पाधा उसने तुरत बुलाया, गुनगुनाय संकल्प कराया।
तब बोले पाधा जी भैय्या, यह जो तेरे घर में गैय्या।
इसका तुरत करो तुम दाना, तेरे पितु का हो कल्याना।
बीस रुपल्ली जाटव देता, नहीं पुरोहित उसको लेता।
यम के पैंडे है वैतरणी, सब जीवों को पड़ती तरनी।
यह गैय्या वैतरणी तीरे, पार करे नदिया मंह नीरे।
जाटव ने मन मांहि विचारा, दूध बिना मरिहैं परिवारा।
अस विचार बाभण को बोला, बिनती करूं पसारूं झोला।
मेरी गैय्या रहने दीजे, जेता चहें रुपैय्या लीजे।
नई मोल ले लेना गैय्या, बैतरणी की जो हो नैय्या।
बोले तबहुं पुरोहित बाबा, मूरख तो कँह लाज न आवा।
पिता न मरिहैं बारम्बारा, उससे भी तोहे डाँगर प्यारा।
कुटुम सबन्धी बैठे सारे, बोल उठे सब बिना विचारे।
सभी पुरोहित के सिखलाये, सब थे पट्टी प्रथम पढ़ाये।
विवश होय संकल्प कराया, रस्सा बाभण को पकराया।
क्रिया कर्म जब भया समापत, अब बाभण पर आई आपत।

बाभण पाछे जाटव लागा, गया वहाँ पर भागा भागा।
आंगन मंह गैय्या अवलोई, भरी दूध की थी बटलोई।
भवें तान बाभण को बोला, तूने झूठ तराजू तोला।
बापू मेरा होगा रोता, वैतरणी में खाता गोता।

जाट—रे बाभण मैं तोहे बुलाऊँ, बाभण—आऊँ बटलोई धर आऊँ।
जाट—बटलोई क़ो यहां धर दीजे, बाभण—अच्छा अच्छा आज्ञा कीजे।
जाट—तुम बाभण हो इतने झूठे, बाभण—किस कारण तुम हमसे रूठे।
जाट—किस कारण यह लीनी गैय्या, बाभण—पार करे वैतरणी बहिया।
जाट—क्यों नहीं गैय्या वहाँ पठाई, हम थे तोर भरोसे भाई।
बाभण—तुमरे दान रु पुण्य प्रभावा, दूसर बनी वहां पर गावा।
उसने उनको पर लगाया, क्यों तुमरे मन में यह आया।
जाट—कौन दिशा वैतरणी बहती, कौन किनारे गैय्या रहती।

बाभण— त्रिंशत कोटि कोस़ पर, नदी यहां से दूर।
भूमि कोटि उञ्चास में, बह रही है भरपूर।।

जाट— चिट्ठी पत्री डाक रु तारा, क्या आया कोई हरकारा।
जिसने आकर यह बतलाया, मोर पिता को पार लगाया।

बाभण— नहीं वहांपर आना जाना, अपने तो इक गरुड़ पुराना।

जाट— सन्तति की उपजीविका, हित यह ग्रंथ बनाय।
तेरे पुरखों ने रचे, तेरे लिये उपाय।।

सन्तति के सम अवर न प्यारा, तव पुरखों ने यही विचारा।
मैं जब पितु की पत्री पाऊँ, तब मैं वहां गाय भिजवाऊँ।
अपने पितु को पार लगाकर, गय्या राखूँ घर में लाकर।
दूध भरी बटलोई लाओ, बात न झूठी अधिक बनाओ।
बाभण को इक धक्का दीना, बछड़ा गाय दूध सब लीना।
बाभण बोला जाओ जाओ, देकर दान बहुर लौटाओ।
नहीं कुछ बिगड़े इसमें मेरा, सत्यानास होयगा तेरा।

जाट सरीखा हो यदि लोका, फेर कपट यह जाये रोका।

दशहुँ गात्र के पिण्ड से, हो सपिण्ड दश अंग।
बन शरीर उस पिण्ड का, मिले जीव के संग।।

धर शरीर अंगुष्ठ प्रमाना, प्राणी यमपुर होय रवाना।
कैसी मिथ्या कथा जुटाई, सत्य न इसमें रञ्चक राई।
जब तनु हो अंगुष्ठ प्रमाना, तब हो यदि यम लोक पयाना।
फिर तो प्राणी जब मर जावें, यम गण बृथा पकरने आवें।
दश दिन पाछे चहिये आना, जब वह यमपुर करे प्रयाना।
जो प्राणी का तन बन जावे, काहे लौट न घर को आवे।

प्रश्न– कुछ नहीं मिलता स्वर्ग में, ताँते करिये दान।
दिया दान मिलता वहाँ, दान करे कल्यान।।

उत्तर– स्वर्ग माँहि यदि कुछ नहीं पावें, फिर क्यों लोग स्वर्ग में जावें।
उससे तो यह अच्छी सृष्टि, जहाँ पर होती सुख की वृष्टि।

धर्मशाल अरु यहाँ सराएँ, ठौर ठौर यात्री सुख पाएँ।
इष्ट मित्र अरु भोज निमन्त्रण, सभा समाजों के आमन्त्रण।
वसन आभूषण खाना पीना, खेल कूद अरु सुख सों जीना।
निर्दय कृपण स्वर्ग के वासी, हृदय शून्य सब सत्यानासी।
ऐसा स्वर्ग हमें नही चहिये, तुम्ही पोप जी जाकर रहिये।

प्रश्न– नहीं यम नहीं यमलोक है, तोर कथन अनुसार।
तो प्राणी कहाँ जात हैं, देह त्यागती बार।।

मर कर कहाँ पिरानी जाता, किससे जाय न्याय को पाता।
कँह पर बैठा यम का राजा, कहाँ पर उसका न्याय समाजा।

उत्तर– झूठी कोरी कल्पना, लिखता गरुड पुराण।
वेद विहित सब सत्य है, सुनिये वेद प्रमाण।।

"यमेन वायुना सत्य राजन्" (यजु २०/४)

यम अरु वायु शब्द पर्याया, यम पद वायु अर्थ में आया।
जब यह आतम तजे शरीरा, इसको लेकर उड़े समीरा।
अन्तरिक्ष में करे निवासा, मर्त्यलोक की मिटती आसा।
धर्मराज ईश्वर को नामा, समदर्शी वह न्याय को धामा।

प्रश्न– गोदानादिक व्यर्थ यदि, व्यर्थ पुण्य अरु दान।
तो पुन कैसे जगत में, जीव पाँय कल्यान।।

उ॰सोरठा–दान करे कल्यान, दान न वर्जित हो सके।
दे सुपात्र को दान, अनुचित दान कुपात्र को।

प्रश्न– लक्षण कहें सुपात्र का, किसे दान अधिकार।
किसका नाम कुपात्र है, कैसे करे विचार।।

उत्तर– सुनिये नर कुपात्र के लक्षण, पण्डित जन जो कहें विलक्षण।
स्वारथ पर्क छली और कामी, कपटी विषयी लोभी वामी।
मोह युक्त पर हानि कारक, लंपट झूठा पर धन हारक।
अलस कुसंगी अनपढ़ धूरत, केवल स्वार्थ सिद्धि की मूरत।
बार बार दाता सो याचे, नाना नाच भीख हित नाचे।
नहीं देवे तो धरना मारे, भिक्षा माँगके अरु पुन अकड़े।
कबहुँ न मन में हो सन्तोषा, जो नहीं देवे उस पर रोषा।
अनिक बार जिस सेवा कीनी, एक बार यदि 'न' कर दीनी।
उसका तुर्त शत्रु बन जाना, ठौर ठौर करना अपमाना।
साधु वेष निज तन पर धारे, पर धन लोभी ठगने हारे।
सब कुछ अपने ढिग हो भाई, फिर भी कहे पास नहीं पाई।
मन ही मन नित जलते रहना, सब सृष्टि को झूठा कहना।
माँगे भीख चौबीसों घण्टे, करे भीख में झगड़े टंटे।
न्यौता पाकर पीवे भंगा, सेरों खाए अन्न लफंगा।
पीकर दुष्ट भाँग का चुल्लु, बैठे जिमि टहनी पर उल्लु।
सत्य मार्ग का करे विरोधा, झूठ प्रचारे नित दुर्बोधा।

मेरी ही नित सेवा कीजो, जो कुछ माँगो हम को दीजो।

विद्या पढ़ना और पढ़ाना, बिरथा ज्ञान ध्यान अशनाना।
मिथ्या मात पिता अरु भ्राता, मिथ्या पति पत्नी का नाता।
ऐसी शिक्षा देने बारे, सब कुपात्र धन हरने हारे।

सुपात्र लक्षण—जो इन्द्रिय जित शुद्धाचारी, शीलवन्त जो हैं नर—नारी।
परमारथ रत और उदारा, उत्साही निर्भय प्रभु प्यारा।
जग की उन्नति चाहने हारे, वेदाज्ञा को पालन वारे।
ईश्वर के गुण कर्म सुभाऊ, सृष्टि क्रम को मानहिं राऊ।
पुरुषारथ की करें कमाई, ईश्वर से लौ रखें लगाई।
कभी न करते ठकुर सुहाती, उद्यम करके खाँय चपाती।
समाधान प्रश्नों का कर्त्ता, जग में निर्भय होय विचरता।
सब का दुख सुख निज सम जाने, आत्मवत सब प्राणी मानें।
क्लेश अविद्या और दुराग्रह, कभी व्यर्थ नहीं करते आग्रह।
अमृत सम जानहिं अपमाना, अरु बिष के सम मानहिं माना।
श्रद्धा से जो जितना देवे, आदर से उतना ही लेवे।
आपातकाल विना नहीं याचे, सदा रहे प्रभु के रंग राचे।
नहीं देवें तो बुरा न माने, ईश्वर की इच्छा परमाने।
सुखी जनों से मैत्री राखे, करुणा वचन दुखी सों भाखे।
भले जनों में आनन्द पावें, दुष्ट जनों के निकट न जावें।
ईर्षा द्वेष मान अपमाना, सब से ऊपर रहे सुजाना।
पर हित तन मन धन को त्यागे, परमारथ में चित अनुरागे।
यह सुपात्र के लक्षण जानो, दान पात्र इन ही को मानो।

प्रश्न— दाता किते प्रकार के, किन का गहिये दान।
लक्षण दाता के कहें, विस्तृत करें बखान।

उत्तर— दाता तीन प्रकार के, उत्तम मध्यम नीच।
उत्तम जानहु स्वर्ण सम, नीच सरीखे कीच।।

उत्तम देश रु काल विचारे, परमारथ का काम सँवारे।

दे सुपात्र को लख अधिकारी, धर्म वृद्धि हो जिससे भारी।
निज स्वारथ हित देवें दाना, कीरति हित वा करे प्रदाना।
मध्यम कक्षा का वह दानी, ऐसे बहुत धनी अरु मानी।
जिसके मन में नहीं परमारथ, उसका जानो दान अकारथ।
रंडी भड़ुए भाट मिरासी, इनको देवें बहु धन रासी।
भाँड मिरासी कीरति गावें, सुन सुन यह कुप्पा हो जावें।
देते समय करें अपमाना, देना पर दुर्वचन सुनाना।
सज्जन को दुख देने खातर, पाएं जिनका दान कुपात्तर।
ऐसे दानी नीच कहावें, जग में दुष्टाचार फैलावें।
जो परखे सो उत्तम दानी, विद्यावान गुणी का मानी।
बिना परख जो देते दाना, मध्यम दानी उन्हें बखाना।
जो धन निष्फल व्यर्थ लुटावें, धन को सिकता माँहि बहावें।
ऐसे दानी नीच कहाते, जीवन भर वे दु:ख उठाते।

प्रश्न– दिये दान का फल कहाँ, मिलता है बतलाँय।
अगली दुनियाँ में मिले, अथवा जग में पाँय।।

उत्तर– लोक और परलोक में, फल मिलता सब ठौर।
फल दाता परमात्मा, नहीं दाता कोई और।।

जैसे पापी डाकू चोरा, करते रहें पाप अति घोरा।
स्वयं न जावें कारागारे, राजा इनको बाँधे मारे।
सज्जन की करता रखवारी, प्रभु को अपनी परजा प्यारी।
एहि विधि ईश्वर भोग भोगावे, जैसा करे सो वैसा पावे।

प्रश्न– करें समर्थन वेद का, यह गरुड़ादि पुरान।
अथवा वेद विरुद्ध यह, क्या इसमें परमान।।

उत्तर– वेद विरुद्ध पुराण सब, इनकी उल्टी रीत।
काम न इनको सत्य से, रखें झूठ से प्रीत।।

सब के शत्रु एक के मीता, एहि विधि यह पुराण विपरीता।

यह जाने आपस में लड़ना, इनको उचित नहीं है पढ़ना।
तन्त्र ग्रन्थ भी यही सिखावें, लड़े परस्पर मरें मरावें।
वे नर पशु जो इनको मानें, मूरख इनको सत्य प्रमाने।

गिनिये दिन उपवास के, कितने कहें पुरान।
जो इतने दिन ब्रत रखे, निकसें उसके प्रान।।
शिव पुराण तेरस लिखे, सोमवार उपवास।
जो उस दिन व्रत नहीं रखे, वाको सत्यानास।।

रविवासर आदित्य पुराणे, स्वर्ग पाय जो इसे प्रमाणे।
चन्द्र खण्ड में सौम्य सितारे, मंगल बुद्ध बृहस्पति वारे।
शुक्र शनीचर राहु केतु, रख उपवास सुरग के हेतु।
वैष्णव व्रत की तिथि एकादश, वामन की तिथि होती द्वादश।
चतुर्दशी नृसिंह पुरानी, पुन अनन्त चौदस भी मानी।
चन्द्रदेव की पूरणमासी, व्रत राखे मिलती धन रासी।
दशमी को कहते दिकपाला, नवमी दुर्गा होय कृपाला।

वसुओं की पुन अष्टमी, मुनि की सप्तम जान।
कार्तिक स्वामी की छठी, नाग पंचमी मान।।

तिथि चतुर्थी कहें गणेशा, गौरी तृतीया स्वर्ग संदेशा।
दुतिया कहिए अशनु कुमारन, संकट मोचन पाप निवारन।
प्रतिपद आद्या देवी केरी, पितर अमावस रैन अँधेरी।
इन तिथियों में जो नर खाये, वह पापी नरकों में जाये।
सकल पुराण यही बतलाते, ऐसा लेख सभी में पाते।
उचित नहीं पोपों को खाना, जायें निकल भले ही प्राना।
जो नर इनमें अन्न उपारे, उसको खुले नरक में डारे।

निर्णय सिन्धु आदि पुन, पढ़िये तनिक विचार।
बात बात पर लड़ मरें, यह दम्भी मत वार।।

दशमी मिला कहें एकादश, एकादश को माने द्वादश।
क्या विचित्र लीला है भाई, भूखे मरने हेत लड़ाई।

था चालाक एकादशी, व्रत का धूर्त गँवार।
स्वारथ सिद्धि के लिये, इसका किया प्रचार।।

"एकादश्याम् अन्ने पापानि वसन्ति"।

कुण्डलिया– **बसहिं पाप सब अन्न में एकादशि के वार।**
व्रत राखे गोरस पिये, करे न अन्न आहार।।
करे न अन्नाहार, पोप जी तनिक बताएं।
किसके बसते पाप, अन्न में यह समझाएं।।
तुमरे वा तुव पितु पुरखा के क्या अभिशापा।
एकादशि की तिथि में किसके बसते पापा।।

पाप यदि एकादशि माँहीं, सब ब्रतियों को सुख क्यों नांही।
उल्टे क्षुत से दुःख उठावें, दुख परिणाम पाप का पावें।
महा पाप है भूखों मरना, समुचित नाहीं व्रत को करना।
इस पर लिखते एक कहानी, पोप रचित स्वारथ मन मानीं।

ब्रह्म लोक में कंचनी, रहती थी इक नार।
कछुक दोष उससे भया, वहां से दई निकार।।

पतित भई पृथिवी पर आई, प्रभु को अपनी टेर सुनाई।
स्वर्ग माँहि हौं पुन कब आऊँ, किस विधि प्रभु के दर्शन पाऊँ।
कहें देव तू वेश्या नारी, यद्यपि है अपराधिन भारी।
पर एकादशि व्रत फल पाकर, पुनः स्वर्ग सुख पावे आकर।
गिरी कंचनी पा अपमाना, किसी नगर में सहित विमाना।
समाचार राजा ने पाये, वेश्या दरस हेत उठ धाये।
को नारी तुम कहाँ से आई, तब उसने सब कथा सुनाई।
नृप ने तब डोंडी पिटवाई, जिसने रखी एकादशि भाई।

वह इस को अपना फल देवे, जो चाहे वह मुझ से लेवे।
पर कोई मिला न बरती वाको, जो अपना फल देता ताको।
घटना वश इक शूद्रा नारी, भूखी रही उस दिवस मझारी।
पति सों उस की भई लड़ाई, रोटी नहीं पकाई खाई।
पकर सिपाही उसको लाए, राजा को सब वचन सुनाए।
आज्ञा करें उसे भूपाला, यह विमान परसो तत्काला।

ज्यों ही नारी ने छुआ, उड़ने लगा विमान।
एकादशि के बर्त ने, वेश्या का कल्यान।।

यह तो भया बर्त अनजाने, तुर्त भेजता स्वर्ग ठिकाने।
जान बूझ कर जो जन राखे, उसका कौन महातम भाखे।
क्यों मति हीन नयन नहीं खोलें, निपट निरर्थक बातें बोलें।
जो यह सांची कथा तिहारी, गई स्वर्ग को वेश्या नारी।
तो इक पात स्वर्ग पहुँचाएं, ब्रत के फल से उसे उड़ाएं।
जो पत्ता उड़ जाए ऊपर, तौ मानें तुम सांचे भू पर।
पुन हम ग्यारस का ब्रत राखें, सत्य वचन हम तोसे भाखें।
जो नहीं उड़े पान को पाता, तो त्यागो ब्रत अति दुख दाता।

चौबिस हैं एकादशी, पृथक पृथक हैं नाम।
कोई धनदा कोई पुत्रदा, पूरहिं सब के काम।।

दारिद दुखी अनिक कंगाला, ब्रत रख रख कर भये बेहाला।
यौवन गया बुढ़ौती आई, बर्त रखे रोटी नहीं खाई।
अनिक मरे व्रत रखने हारे, जग से निष्फल गए बेचारे।
धन नहीं मिला पुत्र नहीं जनमा, मरे अकाम दुखी अति मनमाँ।
शुक्ला पक्षे ज्येष्ठ महीने, बहते धार प्रवाह पसीने।
एक घड़ी भर जल नहीं पायें, कोमल मन व्याकुल हो जाएं।
वंग देश में जाय निहारें, ब्रत रखती सब विधवा नारें।
अतिशय दुःख उठांय बेचारीं, जल नहीं अँचवें ब्रत की मारी।

पर यह दुर्जन पोप कसाई, लिखते समय दया नहीं आई।
निर्जल को सजला लिख देता, नीर पिलाय तृषा हर लेता।
पर यह पोप दया क्या जानें, यह तो अपना स्वारथ मानें।
मरो जियो यह भाग्य तुम्हारे, केवल भर दो उदर हमारे।
नार सगर्भा किम व्रत राखे, इनको व्रत कोऊ शास्त्र न भाखे।
नये विवाहित लड़की लड़के, भूखे रहें सांझ अरु तड़के।
इनके लिए नहीं उपवासा, पर यह पोप निपट दुर्वासा।
इन को भी उपवास रखवाएं, रंचक दया न इन पर खाएं।
होय उदर में यदि अजीरण, उठती बारम्बार समीरण।
उस दिन केवल शर्बत पीये, अथवा दुग्ध पान कर जीये।
भूख लगे पर जो नहीं खाते, भोजन करे भूख बिन भाते।
दोनों रोगी को दुख पावें, व्याधि जलधि में गोते खावें।
इन पोपों को कोई न माने, इनका वचन न कोऊ प्रमाने।

गुरु सिख मन्त्र उपदेश रु, मत मतान्त चारित्र।
इन को अब वर्णन करें, सुनहु कान दे मित्र।।

सुनहु मूर्ति के पूजन हारे, कहते वेद अनन्त अपारे।

उत्तर– इक्किस हैं ऋक की शाखाएं, जिन में हैं अनगिनत ऋचाएं।
एकोत्तर शत यजु की शाखें, एक सहस्र साम की भाखें।

थर्वण की नव शाखा गनिये, लुप्त भईं इनमें बहु सुनिये।
उनमें होगी तीरथ चर्चा, उन में होगी मूरति अर्चा।
पढ़ पुरान हम यह अनुमानें, ताँते मूरति आदिक मानें।
मूरति पूजा को वहाँ नाहीं, तो किम लिखी पुराणन माहीं।
क्या शंका जब लिखी पुराने, कार्य देख कारण अनुमाने।
कार्य पुराण वेद हैं कारण, अब तो शंका भई निवारण।

उत्तर– देखें सब संसार में, शाखा वृक्ष समान।
तरु विरुद्ध होती नहीं, यह प्रत्यक्ष प्रमान।।

शाखा ऊँची लंबी मोटी, बाँकी टेढ़ी पतली छोटीं
तरु के सदृश होंगी सारी, जानहिं सगरे नर अरु नारी।
अद्यावधि हैं मिलती जेतीं, साम्य भाव प्रगटाएं तेतीं।
जल थल तीरथ उनमें नाहीं, नहीं मूर्ति पूजा उन माहीं।
ताँते लोप भई शाखाएं, उनमें भी नहीं झूठ कथाएं।
यहाँ नहीं तो वहाँ किम मानें, नहीं परस्पर विरुध बखानें।
एक शाख हो कंटक वारी, बिन कंटक दूसर की धारीं
चार वेद पूरण हम पाये, उनमें तीरथ नज़र न आये।
वेद विरुध शाखा नहीं संभव, ताँते तुमरी बात असम्भव।
ताँते यह जो लिखे पुराना, नहीं वेदों की शाख समाना।
सम्प्रदाय पखपाती सारे, इन पोथों के रचने हारे।
इक दूसर से करें लड़ाई, निन्दा झगड़ा करें बुराई।
ईश्वर कृत जब वेद बखानो, पुन क्यों अन्य ग्रन्थ को मानो।
आश्वलयन आदिक विद्वाना, लिखे ग्रन्थ मुनियों के नानां
उनको भी तुम वेद बताते, परख न उनकी क्यों कर पाते।
जो ऋषि जिसका हे निर्माता, उसका नाम संग विख्याता।
फिर भी सबको जानहु वेदा, क्यों इनमें कुछ लखहु न भेदा।
बड़ पीपर सेमर अरु पाकर, भिन्न भिन्न नामों को पाकर।
संज्ञा भिन्न भिन्न आकारा, रूप रंग रस गन्ध नियारा।
जो कोई लखे तुरंत पहिचाने, तुम क्यों लागे धोखा खाने।
चारहु ब्राह्मण अंग उपंगा, नाम रचन हारों के संगा।
ताँते यह सब शास्त्र कहाते, वेदों से विपरीत न जाते।
वेदों के अनुकूल प्रमाने, वेद विरुध पुस्तक नहीं मानें।

लुप्त शाख में मानिहो, यदि तुम मूर्ति विधान।
तो सब मिथ्या कल्पना, करिहैं लोक प्रमान।।

कोई नर तुमसे आय बखाने, लुप्त शाख को सत्य प्रमाने।
शूद्र वर्ण माने उत्कृष्टा, ब्राह्मण क्षत्रिय को निकृष्टा।
पुण्य कर्म को कहे बुराई, दुष्ट कृत्य को कहे भलाई।

अनृत भाषण को कहे धर्मा, सत्य वचन को कहे अधर्मा।
लिखा लुप्त शाखा में ऐसा, तुम को पड़े मानना वैसा।
जिस के मन में जो कुछ भावे, लुप्त शाख के नाम चलावे।
तो तुम भी यह उत्तर दोगे, मोर युक्ति का आश्रय लोगे।
तुर्त कहोगे 'ऐसा नाहीं' ऐसा नहीं वेद के माहीं।

जैमिनि व्यास पतंजलि, जब तक थे विदमान।
तब तो सब शाखा रहीं, सब धर्मों की खान।।

जो तुम कहो रहीं तब सारीं, उन ऋषियों ने पढ़ी निहारीं।
क्यों नहीं लिखे उन्होंने नामा, होते सिद्ध पोप के कामां
तीरथ मूरति आदिक अर्चा, क्यों नहीं इनकी कीनी चर्चां
तब भी लुप्त रहीं यदि मानें, पुन कैसे अस्तित्व प्रमानें।
जैमिनि का मीमाँसा दर्शन, कर्म काण्ड जहाँ किया प्रदर्शन।
मुनि पातञ्जंलि योग बखाना, ब्रह्म उपासन कियो विधाना।
सूत्र शारीरिक व्यास रचाया, ज्ञान महत्त्व वहाँ दिखलाया।
लिखते सभी वेद अनुकूला, कुछ भी नहीं वेद प्रतिकूला।
उनमें मूरति पूजा नाहीं, नहीं तीर्थ तिन ग्रन्थन माहीं।
नहीं प्रयाग पुष्कर अरु काशी, नहीं कोऊ राम अवध के बाशी।
चिन्ह न इनका वेदों माहीं, होता तो क्यों लिखते नाहीं।
ताँते लुप्त भई जो शाखा, यह अनर्थ उनमें नहीं भाखा।
यह जो शाखा ग्रन्थ बताएं, किसी भाँति नहीं वेद कहाएं।
रख वैदिक इन माँहि प्रतीका, व्याख्या करते सुन्दर नीका।
संसारी जन के इतिहासा, नाना विधि कीने परगासा।
सब को देते वेद अदेशा, मनुष मात्र हित ज्ञान संदेशा।
जन विशेष का वर्णन नाहीं, कथा कहानी उनमें नाहीं।
ताँते अनुचित मूरति पूजा, इससे बड़ा पाप नहीं दूजा।
राम कृष्ण आदिक जन जेते, महां पुरुष थे सगरे तेते।
उनकी निन्दा करें पुजारी, मूरति पूजक अत्याचारी।

जग जननी सीता को मानें, गौरी सती नार सब जानें।
यह मूरख उनको नचवावें, रास रचाय भीख मंगवावें।
मन्दिर में रख मूरति पाहन, माँगें भीख नाम ले काहन।
ले ले उनका नाम पुकारें, आओ आओ सेठ निहारें।
दरसन कर चरणामृत लीजे, ठाकुर को कुछ पैसे दीजे।
शिव गौरी यह सीता रामा, दर्शन कीजे स्याम रु स्यामा।
यह लक्ष्मी अरु विष्णु तुम्हारे, भूखे बैठे सभी बेचारे।
तीन दिनों से भोग न पाया, किमि करते पैसा नहीं आया।
नहीं मिला इन को जल पाना, तड़प रहे भूखे भगवाना।
इन के ढिग इक कौड़ी नाहीं, दाना नहीं पेट के माहीं।
सीता को नथुनी बनवा दो, राधा को चोली सिलवा दो।
अन्न वस्त्र जल्दी भिजवाएं, ठाकुर जी को भोग लगाएं।
टूटा फूटा मन्दिर सारा, कैसे ठाकुर करें गुजारा।
बरखा बरसे पानी चूए, मरे पड़े हैं चूहे मूए।
सीता माता के सब जेवर, कंठी कड़े छड़े पग नेवर।
चोर उठा कर ले गये सारे, ठाकुर नंगे खड़े विचारे।
चाँदी की नहीं आँख बनाई, कौड़ी उसके ठौर लगाई।
देखो कैसे धूर्त पुजारी, ठाकुर कीने बन्द पिटारी।
फिरते सदा गले लटकाए, वानरि जिमि शिशु हृदय लगाये।
गद्दे तकिये स्वयं लगाते, ठाकुर ठकुरानी नचवाते।
दुनियाँ को तो गरमी लागे, ठाकुर के पट बन्द अभागे।
जब कोई तोड़े मूरति आकर, तब घिघियाते हाथ फैला कर।
तोड़ दई सीता महारानी, गौरी तोड़ी हाय भिवानी।
अब कोई मूरति नई मँगाऊँ, अच्छे शिल्पी से बनवाऊँ
पत्थर श्वेत होय बहु मेला, मूरति का को रेशम चोला।

नारायण को घृत बिना, लग नहीं सकता भोग।
बहुत नहीं थोड़ा सई, दें श्रद्धा से लोग।।

जहाँ पर होवे मेला ठेला, कोई छोकरा ला अलबेला।
रास पड़े तहाँ भीख मँगावें, यह उनका अपमान करावें।
मोर मुकुट सिर पर पहनाते, मुरली धर से भीख मँगाते।
इन बातों पर करें विचारा; है कितना अपमान तुम्हारा।
मन में सोच बताँय पुजारी, राम कृष्ण क्या रहे भिखारी।
इनको धूर्त नचाने वाला, जाति का मुख करता काला।
इससे बढ़कर क्या अपमाना, हिन्दू का याचक भगवाना।

जिस युग में जीवित रहे, ऐसे पुरुष महान।
स्वाँग बनाता तब कोई, काढ़ न लेते प्रान।।

मंदिर में सीता की मूरत, कोई दुष्ट पधरा कर धूरत।
मूरति हित पैसे मंगवाता, राजा राम उसे मरवाता।
हाँ उनसे तो दण्ड न पाया, पर विरोधियों से दिलवाया।
समय समय पर अब भी पाते, पर यह दुष्ट ध्यान नहीं लाते।
जब लग मूरति पूजें जायें, तब लग कभी सुःख नहीं पायें।

मूरति पूजा आदि ने, किया देश का ह्रास।
राज पाट सब कुछ गया, कर दिया सत्यानाश।।

पाप कर्म का फल अब पावें, दीन दुखी हो दास कहावें।
पत्थर पर कीना विश्वासा, पत्थर से सब टूटी आसा।
हे नर! आतम बल को धारो, भुज बल से निज देश उबारो।
पाथर की नैय्या नहीं तारे, परमेश्वर ही पार उतारे।
जेते पापी पोप पुजारे, वामी सब में बड़ हत्यारे।
जब करते काहू को चेला, पढ़ें मंत्र बैठाय अकेला।
"दं दुर्गायै नमः भं भैरवाय नमः। ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।"
ऐसे ऐसे मंत्र उचारें, फूँक कान के भीतर मारें।

बंगाले के देश में, मंत्र एकाक्षर देंय।

चेलों के शिर पर मूँडते, लोभी धन हर लेंय।।

"ह्रीं, श्रीं, क्लीं "शावरतं" वं॰ प्रकी "हुं फट स्वाहा"। कामरत्न तंत्र बीज मंत्र ४

धनी शिष्य का करत हैं, वे पूरण अभिषेक।
भेद भाव यहाँ भी रखें, धूरत शून्य विवेक।।

हां ह्रीं हं बगला मुख्यै फट स्वाहा"। शा॰ प्रकी.प्र ४१"

देते नाना विधि के जंतर, मारण मोह उचाटन मंतर।
वशी करण मंतर बतलाते, कहीं पर विद्वेषण करवाते।
जड़ मंतर क्या करे बेचारा, यह केवल ठगने का द्वारा।
ऐसी क्रिया करें यह धूरत, प्राण हरें बन यम की मूरत।
जब काहू को मारा चाहें, तब धूरत परजोग कराएं।
जिसको जो चाहे मरवाना, उससे गहें पदारथ नाना।
सोना चाँदी नकद रुपैय्या, हाय जाति की डूबी नैय्या।

मिट्टी अथवा चून का, पुतला एक बनाँय।
उसे शत्रु का नाम ले, मुख से फूँक लगाँय।।

अंग अंग में छुरियाँ घोपें, लाल नेत्र कर उस पर कोपें।
हृदय कंठ नाभि में मारें, छुरियाँ अंग अंग में डारें।
कर पद नयनन कील चुभाते, उसके हिय पर मूर्ति बनाते।
कहीं भैरव कहीं दुर्गा काली, बड़ी भयंकर मूरति काली।
उसके हाथ त्रिशुल गहाएं, पुतले के हिय संग लगाएं।
वेदी मँह पुन करते होमा, गुन गुनाँय मंतर अरु स्तोमा।
माँस काट आहूति डालें, इस प्रकार विश्वास जमालें।
चतुर दूत कोऊ उधर पठावें, जो उसको विष आदि खिलावें।
जुंही बेचारा मारा जाता, तब यह पोप सिद्ध बन जाता।
कहता देखी सिद्धि हमारी, ऐसे हैं भैरव बलकारी।

"मारय, उच्चाट्य, विद्वेषय, छिन्धि, भिन्धि, वशीकुरु, खादय, भक्षय, त्रोटय, नाशय, मम शत्रून वशीकरु, हुं फट स्वाहा"। कामरत्न तंत्र उच्चाटन प्रकरण मं॰ ५।७।।

ऐसे मंत्र जपें मद पीवें, मुर्गी बकरे खाकर जीवें।

लाल रेख सिन्दूर की, भृकुटी मध्य लगाँय।
मानहुं दरसें जगत को, हम सब रक्त बहाँय।।

कभी कभी पुरुष कोऊ मारें, उसको काट होम कर डारें।
काली जी की भेंट चढ़ावें, मांस प्रसादी उसकी खावें।
भैरवी चक्र माँहि जो जावें, मद्य मांस वहाँ पीवें खावें।
जो स्वीकार करे नहीं पीना, उसका वहाँ असंभव जीना।
उसी ठौर पर उसको मारें, उसका मांस होम कर डारें।
उनमें से जो होय अघोरा, भीष्म कर्म यह महाँ कठोरा।
मृत मानुष का खायें माँसा, इनके मनमें बसे जिघाँसा।
अजरी बजरी करने वाले, विष्टा मूत्र पियें भर प्याले।

बीज मार्ग के एक हैं, दुजे चोली मार्ग।
दोनों के दोनों पतित, चलते सदा कुमार्ग।।

छप्पय– चोली मारग वाले गुप्त स्थान बनाएं।
अथवा नीचे पृथिवी में निज चक्र लगाएं।
त्रिया पुरुष अरु बेटा बेटी सब की आएं।
माता बहिन पुत्र वधु लज्जा नहीं खाए।।
खाते पीते मांस मद नंगे चीर उतारते।
ऐसे निर्लज नीच यह सब को नग्न निहारते।।

छप्पय– नार पुरुष के गुप्त स्थान की पूजा करतीं।
सभी नारियाँ पत्र पुष्प उस ऊपर धरतीं।।
एहि विधि करते पुरुष नग्न करके इक नारी।
बहिनी बिटिया होय पतोहू वा महतारी।।
मद पी पी मतवार हो चोली सभी उतार दें।
निकट रखी इक नांद में निज जिन चोली डार दें।।

छप्पय— जो चोली जिस नर के कर में पुन आ जाये।
चोली वाली नारी उससे रैन रमाए।।
भाई भगिनी सुसर पतोहू तजें विचारा।
त्याग शील अरु शर्म करें निज निज मुँह कारा।।
मतवाले होकर लड़े बे सुध भूमि पर गिरें।
ऐसे कर्म कुकर्म कर भव सागर चाहें तिरें।।

सोरठा— जब हो प्रातःकाल, निज निज गृह को सब चलें।
लेते होश सँभाल, पुन भगिनी भगिनी बने।।

सोरठा— बीज मारगी घोल, पीते जल में शुक्र को।
वीरज का खंघोल, जो संगम में पतित हो।।

प्रश्न— वामी अच्छे नहीं तो, शैव भले लो मान।
पढ़े लिखे मानें सभी, शिव कारक कल्यान।।

उत्तर— कौन शैव को अच्छा माने, भूत बसें सब एक ठिकाने।
कोई भूत कोई प्रेत कहावे, इनमें कोई अन्तर नहीं आवे।
जैसे वामी मन्तर देते, फूँक मार सम्पत हर लेते।
तेहि विधि शैव मन्त्र का दाता, माल लूट कर मौज उड़ाता।

मन्त्र देंय पंचाक्षरी, तन पर भस्म रमाँय।
रुद्राक्ष धारण करें, पाहन लिंग पुजाँय।।

ड़िम डिम डुम डुम बं बं हर हर, बकरे के सम करते बर बर।
इसको सुन हो गौरी राजी, महादेव को ही नाराजी।
नाराजी का कारण सुनिये, सत्यासत्य सोच कर गुनिये।
जब शिव भस्मासुर से भागे, उनके पीछे लौंडे लागे।
हर हर बं बं ताल बजाते, महाँदेव सुन सुन शर्माते।
पार्वती सुन कर हर्षावे, अतहि क्रोध शंकर को आवें
गुल गुल करें बजायें गाला, महाँदेव तब होंय निहाला।

पार्वती मन उपजे क्रोधा, ऐसे शैव महा दुर्बोधा।
दक्ष प्रजापति को जब मारा, सिर को काट आग में डारा।
धड़ पर अज कर सीस लगाया, बकरे के सम उसे बुलाया।
बकरा बोले गुल गुल गुल गुल, शंकर सुन सुन होते परफुल।
गौरी मन में बुरा मनावें, उसके पितु का स्वाँग लगावें।

ब्रत रखते शिव रात्रि का, अरु मानें कल्यान।
हर हर बं बं के किये, किसे मिला भगवान।।

शैव रु वामी एक समाना, भ्रम भटके अज्ञान निधाना।

गिरि पुरी बन कनफटे, पर्वत सागर नाथ।
पुन अरण्य अत ही बुरे, कछुक गृहस्थी साथ।।

कितने इनमें पोप पुजारी, दो घोड़ों पर करें सवारी।
वामी होकर शैव कहावें, कुछ निज को वैष्णव दरसावें।

"अन्तः शाक्ता वहिश्शैवाः सभा मध्ये च वैष्णवाः। नाना रुपधराः कौला विचरन्ति महीतले।।"

तन्त्र श्लोक जिसके यह अर्था, सुनिये कितने करें अनर्था।
मन से तो हैं शक्ति पुजारी, बाहर शैव भस्म तनुधारी।
सभा माँझ वैष्णव कहलाते, नाना रुप कौल दर्साते।

प्रश्न— वैष्णव मत तो है भला, करें न मांसाहार।
नारायण का जप करें, तिलक माल कर धार।।

उत्तर— एक सरीखी सब की लीला, क्या काला क्या नीला पीला।
निज को कहें विष्णु को दासा, जिसका है वैकुण्ठ निवासा।
श्री वैष्णव सर्वोत्तम इनमें, चक्राकिंत दग्धे तनु तिन में।

प्रश्न— क्यों तुम कुछ नहीं कुछ नहीं कहते, श्री वैष्णव में सब गुण रहते।
माथे तिलक विराजे बिन्दु, जिमि नारायण पद अरविन्दु।
पीत रेख श्री मध्य सुहावे, श्री वैष्णव एहि हेतु कहावे।
नारायण बिन अन्य न ध्यावें, नहीं दर्सन शिव लिंगहु पावें।

हमरे मस्तक सिरी बिराजे, लिंग देख महारानी लाजे।
स्तोतर पढ़े आलमन्दारा, मद्य मांस नहीं करें आहारा।
मन्त्र सहित पूजें नारायण, पुन क्यों नहीं यह सत्य पारायण।

उ०– मस्तक पर हरि पद तिलक, श्री की पीत लकीर।
दोनों के होते हुए, कैसे भये फकीर।।

माथे पर की चित्र पोताई, तुमरे कर की यह चतुराई।
जिमि चित्रित हो हस्ति ललाटा, लाल सिन्दूर हर्द अरु आटा।
चरण चिन्ह यह कहाँ से आया, मस्तक ऊपर जिसे लगाया।
क्या तुम गये विष्णु के धोरे, चरण चिन्ह मस्तक पर तोरे।
क्या वह श्री जड़ है वा चेतन, जो रहती वैकुण्ठ निकेतन।
जो उस श्री को चेतन मानो, तिलक रेख को जड़ पुन जानो।
जड़ होने से यह श्री नाहीं, चेतनता नहीं इसके माहीं।
क्या श्री बन गई बिना बनाए, अथवा इसको कोई रचाए।
बिना बनाई जो तुम जानो, तो इसको श्री कैसे मानो।
निज कर से तुम इसे बनाते, मस्तक पर निंज इसे लगाते।

जो श्री बसे ललाट पर, तो क्यों रुप कुरुप।
केते वैष्णव जनों के, मुख जिमि छाजंन सूप।।

मस्तक पर तो सिरी बिराजे, खाली पेट तँबूरा बाजे।
सदावर्त में रोटी खाएं, द्वार द्वार पर हाथ फैलाएं।
रे निर्लज कुछ लाज न आती, श्री होते नहीं मिले चपाती।

परिकाल कथा– वैष्णव भक्त नाम परिकाला, चोरी का तिस काम सँभाला।
संड मुसंडा बड़ा लड़ाका, जहाँ तहाँ नित मारे डाका।
लूट मार कर धन जो लावे, वैष्णव साधुन भेंट चढ़ावे।

सोरठा– बीत गया कुछ काल, धन नहीं आया हाथ में।
कहाँ से लावे माल, परिकाल चिन्ता करे।।

नारायण के मन में आया, मोर भगत बहु दुःख उठाया।
अस जिय जान तुरत भगवाना, भूषण बस्तर पहरे नाना।
सेठ बने बैठे रथ ऊपर, घोड़ों के पग बाजें नूपर।
जहाँ परिकाल खड़ा वहाँ आए, भगत वछल भगवान कहाए।

जब देखा परिकाल ने, लीना खड्ग उठाय।
झपट पड़ा उस सेठ पर, रथ लीना ठहराय।।

अरे सेठ तुम कहाँ पधारे, धर दो जो कुछ गैल तुम्हारे।
सेठ न बोला डर के मारे, कण्ठे छल्ले छाप उतारे।
बात भई इक वहाँ अनूठी, अँगुरी में इक फँसी अँगूठी।
परीकाल ने अँगुरी काटी, चोरों की ऐसी परिपाटी।
भे प्रसन्न तब दीन दयाला, नारायण निज रूप सँभाला।
चतुर्भुजी हो दीना दर्सन, लगे देव पुष्पों के बर्सन।
कहो भगत क्या इच्छा तोरी, तुम पर भई दयालुता मोरी।
भगतराज तू मेरा प्यारा हौं जानूँ सब भाव तुम्हारा।
जो धन माल लूट तुम लेते, सब बैष्णव साधन को देते।
धन्य धन्य यह तेरी भक्ति, हरि चरणन में तव अनुरक्ति।

किसी एक साहुकार के, भृत्य भया परिकाल।
उसके साथ जहाज में, बैठ चला तत्काल।।

देस विदेस चला व्यापारी, भर जहाज में लहे सुपारी।
परिकाल चतुराई कीनी, एक पूग दो टुकड़े कीनी।
अजी सेठ! यह अर्ध सुपारी, तोर पोत में रखी हमारी।
लिख दो हम को कागद पाहीं, जीवन का भँरवासा नाहीं।

अंर्ध छालिया पोत में, जो राखी इस काल।
इसका केवल एक ही, स्वामी है परिकाल।।

बनिया बोला भोले भाई, लिंख देता हूँ लो लिखवाई।
अर्ध छोड़ तुम लिओ हजारा, भरा पड़ा है पोत हमारा।

परिकाल मन में मुस्काया, बनिया मुर्गा खूब फँसाया।
बोला हम कछु कपट न करिहैं, सोई लेंगे जो कछु धरि हैं।
भोला भोला बनिक बेचारा, कागद पर सब कुछ लिख डारा।
जब जहाज बंदर पर आया, परीकाल कागद दिखलाया।
अर्ध सुपारी बनियाँ देवे, परीकाल उसको नहीं लेवें
इस जहाज की अर्ध सुपारी, आधी आधी भागीदारी।
परिकाल पुन गया अदालत, कागद उसका करे वकालत।
बहुतेरा बनिया समझाए, पर उसका विश्वास न आए।
हार गया बनिया बेचारा, अर्धहु अर्ध भया बँटवारा।
बनिये से ले अर्ध सुपारी, साधुन के चरणन मँह डारी।

उस डाकू परिकाल की, मूरति अभी पुजांय।
वैष्णव जन इस भांति से, चोरों को फुसलांय।।

दुष्ट देश की करते हानि, भक्त माल में लिखी कहानी।
वैष्णव अरु सेवक तिन केरे, नारायण और उनके चेरे।
सब चोरो की वृत्ति वाले, वेद विरोधी यह मतवालें
कोई कोई उनमें भी है सज्जन, शेष करें सब कीच निमज्जन।
इनमें रह कर करे भलाई, निस्सन्देह बहुत कठिनाई।
वैष्णव भी आपस में फूटे, भिन्न भिन्न भागों में टूटे।
भिन्न भिन्न टीके अरु माला, भेष भाव सब केर निराला।

गोपी चन्दन बगल में, मध्य रेख हो लाल।
रामानन्दी तिलक यह, चित्रित करते भाल।।

अगर बगर द्वै पतली रेखा, काला बिन्दु मध्य सुलेखा।
नीमावत का करे निशाना, मस्तक पर यह तिलक सुहाना।
माधव मत की रेखा कारी, गौड़ बंगाली तुल्य कटारी।
रामप्रसादी तिलक लगावें, चन्द्र रेख दोऊ ओर सजावें।
बीच सुपेद गोल इक विन्दु, मनहु खिला सरवर मँह इन्दु।

रक्त रेख जनु लच्छमी, नारायण हिय मांहि।
रामानन्दी मानते, इस में संशय नांहि।।

मोहन के मन राधा वासा, दर्शन ते हो पाप विनासा।
ऐसा मानहि गुरु गुसाईं, राधा रहे कृष्ण मन माहीं।
भक्तमाल में लिखी कहानी, क्या विचित्र और चित्त लुभानी।
इक दिन एक पेड़ के साये, कोऊ नर सोया पांव फैलाये।
सोया सोया मरा बेचारा, तरु की जड़ में लिये सहारा।
पंछी था इक शाखा ऊपर, उसने विष्टा कीनी भू पर।
गिरी बीठ मृत मस्तक पाँइ, फैली तुर्त तिलक की नाँई।
यम ने अपने दूत पठाए, विष्णु दूत भी भागे आए।
वे यमपुर वे स्वर्ग ले जाएं, निज निज स्वत्त्व दोऊ जितलाएं।
विष्णु तिलक है लगा निहारो, यम के दूतो भगो गँवारो।
नारायण को यह है दासा स्वर्ग माँहि यह करे निवासा।
यमदूतों को पुनः पछारा, रख विमान में प्रभु का प्यारा।
नारायण अति ही हर्षाये, स्वर्ग माँहि निज भक्त पठाए।
अकस्मात विष्णु का टीका, मस्तक पर जों बन गया नीका।
उस की जब यह महिमा भाई, उच्च स्वर्ग मँह पदवी पाई।
जो प्रीति से तिलक लगावे, वेद शास्त्र तस महिमा गावे।
रे भाई बुद्धि के भोले, देख हृदय की आंखें खोले।
तिलक बिन्दु तो स्वर्ग ले जावे, जो नर सगरा तन पोतावे।
अथवा मुख को कर ले काला, तब तो मिले बैकुण्ठ निराला।
इन छूंछी बातों को त्यागो, सोये बहुत तनिक अब जागो।
अनिक मूढ़ इनमें हैं खाखी, धूनी तपें रमायें राखी।
लक्कड़ का बाँधे लंगोटा, रखें हाथ में चिमटा सोटा।
सुलफा पीयें जटा बढ़ायें अपने को वे सिद्ध बतायें।
दम से रखें नयन मतवारे, भाँग चरस पीते, मतिमारे।
चुकटी चुकटी माँगे आटा, रोट पकायें दाल रु बाटा।
मांगे कौड़ी पैंसा धेला, जहाँ कहीं बालक मिले अकेला।

बहका कर उसको ले जावे, उससे भी घर घर मँगवावें।
बहुधा हैं मजूर इन माँही, कोई कुलीन नर इनमें नाँही।
विद्या धन की करें बुराई, बुद्धि इनके निकट न आई।
जो विद्या के हों अभिलासी, उनकी सभी उड़ाएं हासी।

पठितव्यं तदपि मर्त्तव्यं दन्त कटा कटेति किं कर्त्तव्यम्।

विद्या पढ़ कर भी मरे, अन पढ़ भी मर जाँय।
पुन क्यों साधु व्यर्थ में, कट कट दंत लगाँय।।

दर्सन करिये चारहुं धामा, केवल यही साधु को कामा।
साधु सन्त की सेवा करना, राम सिमरना और विचरना।
अहो अविद्या की यह मूरत, खाखी मूरख पक्के धूरत।
जो इनके दरसन को जावें, बच्चा बच्ची उन्हें बुलावें।
भले होय कोऊ पिता समाना, पर यह सब के दादा नाना।

कुंडलिया – रूँखड़ सूँखड़ गोदड़ी, सब हैं एक समान।
औधड़ जोगी कनफटे, सब मूरख अँजान।।
सब मूरख अँजान, अकाली सुतरे साईं।
विद्या के सब शत्रु, मूढ़ पशुओं की नाईं।।
निपट निरक्षर शुष्क ठूँठ जनु झूँखड़ खूँखड़।
सब खाखी के तुल्य, गोदड़ी सूँखड़ रूँखड़।।

रहा एक खाखी का चेला, निर्बुद्धि माटी का ढेला।
जल भरने कूएँ पर आया, संथा घोखत गुरु पठाया।
कहता सिरी गणेसा जनमें, धोखे अरु सुख माने मन में।
मत अशुद्ध धोखे साधूड़ा, ठीक उचारण नहीं तब मूढ़ा।

श्री गणेशाय नमः, एहि विधि वाक्य उचार।
उलट पुलट क्यों बोलता, संथा पढ़हु विचार।।

क्रुद्ध हुआ साधु का ढोटा, भागा गया उठा कर लोटा।

गुरु ढिग बोला जा सिरियासा, महाराज इक बाभण आया।
मोर अशुद्धि काढन लागा, ताँते आया भागा भागा।

छप्पय– खाखी सुन कर बात शिष्य की भागे आये।
पण्डित को लखि मूढ़, उसे दुर्वचन सुनाये।।
क्यों रे बम्मण मोर शिष्य को, क्यों बहकावे।
गुरु की लण्डी कहा पढ़यो जो उसे पढ़ावे।।
एक विधि का पाठ तूँ जाणे विद्या दूर है।
तीन भांति का हम पढ़े, क्यों इतना मगरूर है।।

दोहा– सिरी गणेसाजन्न में, ऐसा है इक पाठ।
सिरी गनेसायन्न में, इसका दूजा ठाठ।।
सिरी गणेसायं नमें, तीसर भांत उचार।
बहुत दूर विद्या पढ़ी, मन मँह तनिक विचार।।

उत्तर– सुन साधु विद्या अति दूरी, इसमें काहे की मगरूरी।
बिना पढ़े विद्या नहीं आवे, तेरा कौन शिष्य बहकावे।

साधु– चल बे बम्मन तू क्या जाने, साधु को दुनिया सन्माने।
सब पंडित दौरी में रगड़े, क्यों बिरथा साधु से झगड़े।
भाँग माँहि विद्वान मिलाये, इक चुल्लु में सभी उड़ाये।
तू क्या जाने चेत बाबूड़े, मिले नहीं तुम को साधूड़े।
बहुत दर संतन घर भाई, सब त्यागे भाई पितु मई।

पंडित– तुम अपशब्द न बोलते, जो होते विद्वान।
समुचित वाक्य उचारते, यदि होता कुछ ज्ञान।।

खाखी– क्या मेरा गुरु बनने आया, बच्चा तुम को काल पठाया।
हम तेरा उपदेस न मानें, क्या लंडी हम तुम को जानें।

पंडित– तुम में बुद्धि कहाँ से आवे, बिन विद्या कुछ समझ न पावे।

खाखी— वेद शास्त्र तो सगरे जाने, पर सन्तों को जो नहीं माने।

उसने पढ़ा न कुछ भी भाई, सगरी विद्या धूल मिलाई।

पंडित— सन्त नहीं तुम हो हुड़दंगे, अनपढ़ मूरख करते दंगे।
सन्त पुरुष तो सेव्य हमारे, सन्त जगत के हैं रखवारे।
सज्जन धर्मी सन्त कहावें, परमारथ में जन्म बिहावें।

खाखी— रात दिवस हम रहते नंगे, त्यागे बस्तर नंग धड़ंगे।
धूनी तापें गाँजा पीयें, दम लगाय सुलफे के जीयें।
भंग पियें हम कैय्यक लोटा, साफी सुल्फा चिमटा सोटा।
धुस्तुर गाँजा भाँग पकायें, इनका शाक बना कर खायें।
खाँय संखिया अरु अहिफेना, नहीं काहू से लेना देना।
डूबे रहें नशे के अन्दर, नहीं चिन्ता हम स्वयं पुरन्दर।
भीख माँग कर टिक्कड़ खाते, अपने हाथों आप पकाते।
कुछ नहीं समझे दुनियाँ तांईं, दुनिया एक सुपन की नाईं।
रात पड़े उठती वह खाँसी, मनहु गले में पड़ रही फाँसी।
नहीं सोयें नहीं सोने देते, भाग गये यहाँ आकर केते।
इत्यादि है सिद्वि हमारी, तू क्या जाने मूर्ख अनारी।
हम हैं पूरे साधू खाखी, साँच कहें नारायन साखी।
जो तू निन्दा करे हमारी, भस्म करें हम देह तिहारी।
साधू हैं हम नहीं साधूड़े, क्यों मरता है चेत बाबूड़े।

सोरठा— कहाँ अविद्या जाय, ऐसे मूरख छोड़ कर।
खाखी के बिरमाय, रमण जोग इनके हृदय।।

यह जन जानें पीना खाना, नशा प्रमाद रु पंच सनाना।
लड़ना भिड़ना व्यर्थ विचरना, चरस तमाखु पीना भरना।
घण्टा अरु घड़िया बजाना, झाँझ पीटना राख रमाना।
धूनी रहना सदा तपाते, यही काम है इनको आते।
कोई सत्कर्म नहीं यह जानें, भले बुरे को नहीं पहचानें।
संभव पत्थर को पिघलाना, खाखी को दूभर समझाना।

इनकी आतम कबहुं न तोले, तेल न निकसे रेत बरेतें
शूद्र मजूर किसान कहारा, इनसे भरा पन्थ यह सारा।
साधु भये भूख के मारे, रोटी खाते राम सहारे।
चरस उड़ाएं पीएं भंगा, यह नर क्या जानें सत्संगा।
'नमः शिवाय' नाथों का मंतर, झाड़ फूंक अरु जंतर तंतर।
'नरसिंहाय नमः' यह खाखी, तन पर चौल चढ़ायें राखी।

सीतारामाभ्याम् नमः इन का दूजा मन्त्र।
बाहू पर बाँधे फिरे, हनुमान का जन्त्र।।

सवैय्या– 'श्री राधाकृष्णाभ्याम् नमः, यह कृष्ण उपासक मन्त्र रटें।
अरु 'नमो भगवते वासुदेव, जप जानें सगरे पाप कटें।।
'गोविन्दाय नमः' रटते, बंगाल के साधु छुटाय लटें।
कुछ मूँड मुँडाय के बैठे रहे, कछु मूरख लंबी बढ़ाय जटें।।

गवरगण्ड जो होते धूरत, मूरत निष्ठुरता की सूरत।
यह सगरे हैं उनके लक्षण, साधु जन जो हों य विलक्षण।
"साध्नोति पराणि धर्म कार्य्याणि यः सः साधुः।"
परमारथ के साधे कारज, विद्यावान हृदय का आरज।
सच्चा साधु वही कहावे, पर हित निज सर्वस्व लगावे।

खाखी– चल बे मूरख तू क्या जाने, साध की महिमा कौन पछाने।
सन्तों का घर बहुत महाना, सन्तों के बस में भगवाना।
किसी सन्त से नहीं अटकना, नहीं तो चीमटा लगे चटकाना।
फोड़ें चीमटा मार कपाला, बड़ा बना है बिद्दा वाला।

पंडित– अच्छा खाखी ज़ाओ जाओ गाँजे का दम जाय लगाओ।
हम पर क्रोध करो मत खाखी, जाओ रमाओ मुख पर राखी।
कैसा राज्य जानते नहियाँ क्यों बिरथा लेते गल बहियाँ।
मार पीट जो ख़ाखी करिहौ, कारावास भोगते मरिहौं।
अथवा कोई तुम को मारे, धरे रहेंगे चिमटे सारे।

खाखी– चल चेले चल यहाँ से, किसका दर्शन कीन।
निन्दा करता सन्त की, राछस बुद्धि मलीन।।

पंडित– किसी सन्त का साधुड़े, किया न तूने संग।
एहि कारण तू बन रहा, जड़ मूरख हुड़दंग।।

खाखी– हम हैं आप महातमा, हम से बड़ा न को।
गरज़ न राखें अन्य की, बस बस रहने दो।।

पंडित – जिनके भाग भाग के भागे, वे नर तुम से होय अभागे।
तुम समान होवे अज्ञानी, मूरख जन की यही निशानी।
चला गया आसन पर खाखी, चिलम चरस भर कर इक राखी।

संध्या की आरति भई, तब बुढ़े के पास।
कर कर के 'डण्डोत' सब, आये हरि के दास।।

खाखी पूछे रे रमदसिया, सीताराम चरण मँह बसिया।
आज पढ़ा तू क्या रे चेले, क्या करता था बैठ अकेले।
गोविन्द दसिया अरे बताओ, कहा पढ़े तुम पाठ सुनाओ।
हम तो पढ़े रामसतव राजा, आप पढ़े क्या हैं महाराजा।

गुरु–हम सगरी गीता पढ़े। रामदास–गुरु जी किसके पास।
गुरु–नहीं गुरु हम कोई करें, सब जग हमरो दास।।

प्राग राज जब कीन्ह निवासा, उहाँ रही पढ़ने की आसा।
नहीं जाणूं थे एकहु अच्छर, सुलफा पीते रहे निरच्छर।
जब कोई लंबी धोती वाला, अथवा कोउ पहरे मृगछाला।
तिरबेणी के जाय किनारे, आकर पहुँचे पास हमारे।

गीता का एक गोटका, पूछें तुर्त निकार।
क्या अक्खर बतलाइये, अहै कलंगी वार।।

सोरठा– नहीं दौरी नहीं दण्ड, सारी गीता रगड़ दी।

रमदसिया उद्दण्ड, हम गुरु को नहीं धारते।।
मन्त्र फूँक के कान में, लेते शिष्य बनाय।
तूँबे का मन्तर पढ़ें, लेते मूँड मुँडाय।।

"जल पबित्तर सथल पवित्तर और पवित्तर कूआ, शिव कहे सुन पार्वती तूँबा पवित्तर हुआ।"

जिन को बुद्वि न रत्ती माशा, उनसे जग को कैसी आशा।
यह नर परमारथ क्या करिहैं, कौन कार्य इनसे शुभ सरिहैं।
लक्कड़ और जलाँयें गोसे, खाखी रहते राम भरोसे।
जो यह लक्कड़ नहीं जलायें, एक मास के दाम बचायें।
उनके कंबल वस्त्र बनायें, सुख पायें आनन्द उठायें।
पर यह महाँ मूर्ख निर्बुद्धि, कहाँ से लावे इतनी बुद्धि।

बने तपस्वी ताप कर, धूनी को दिन रात।
चिलम चमेली जग रही, पीते साँझ प्रभात।।

धूनी से यदि बने तपस्वी, तब तो सगरे तपी बनस्वी।
बने तपस्वी जटा बढ़ाए, राख रमाए तिलक लगाए।
इसमें तो नहीं कुछ कठिनाई, सब बन सकें तपस्वी भाई।
यह खाखी ऊपर से त्यागी, मन में माया के अनुरागी।

प्रश्न दोहा– खाखी अच्छे नहीं तो, अच्छा पंथ कबीर।
फूलों से उत्पन भये, बाराणसि के तीर।।

मूरति का यह करते खण्डन, निर्गुण प्रभु का करते मण्डन।
फूलों के अन्दर उपजाए, फूलों मं ही अन्त समाये।
जन्में नहीं थे जब देवेश्वर, ब्रह्म विष्णु और महेश्वर।
तब भी साहिब रहे कबीरा, बड़े सिद्ध अरु ज्ञान गभीरा।
वेद पढ़ा नहीं जाको जाने, वाको सत्त कबीर पछाने।
उसने सच्चा पन्थ खाया भब बन्धन से लोक छुड़ाया।

सोरठा– 'सत्य नाम कबीर', यह कबीर का मन्त्र है।

यमदूतन को तीर, मृत्यु पाश को काटता।।

उत्तर– पत्थर तो पूजें नहीं, मानें नहीं पुरान।
पर यह गद्दी पलंग को, पूजें सम भगवान।।

पूजे तकिये और खड़ावें, पूजें दीपक जोत जलावें।
वे छोटे यह बड़े पुजारी, इनकी जड़ पूजा नहीं न्यारी।
फूलन जन्में फूल समाये, बुद्धि माँहि यह बात न आए।
क्या भुंगे थे साहब कबीरा, फूलन निकसी प्राण समीरा।
अथवा कलि रहें पुहपन की, काशी जी के बन उपवन की।
काशी का पट बिनने हारा, नहीं था उसका कोई घर बारा।
बड़ी भोर वह गंगा तीरे, चला नहाने धीरे धीरे।

मग में देखी टोकरी, पड़ी सड़क के पास।
प्रात काल के पवन में, उड़त पुष्प की बास।।

देख फूल की भरी चँगेरी, तुर्त उठाया करी न देरी।
टोकरिया मँह बच्चा पाया, उसे जुलाहा घर में लाया।
उसी रात का बालक जनमा, पाकर हुआ सुखी अति मन माँ।
बना जुलाहा उसका पालक, दिन दिन बढ़ने लागा बालक।
विद्या पढ़ने का अभिलाषी, ढूँढ फिरा बालक सब काशी।
जात जुलाहा कौन पढ़ावे, अपमानित हो बालक आवे।
तब वह लगा तँबूर बजाने, अंट संट कुछ गाना गाने।
नीच जुलाहे आदिक जेते, उसके पीछे लग गये तेते।
वेद शास्त्र की निन्दा करता, मन मँह विप्र जनों से जरता।
कैय्यक मूरख लोग फँसाए, मरे तो साहब कबीर कहाएं
जीवन में जो गीत बनाए, चेलों ने संग्रह करवायें
उन गीतों को पढ़ने लागे, गुरु कबीर के मत में पागे।

दो उंगली से दाब कर, बन्द करें दोऊ कान।
कहते अनहद शब्द यह, सुन तो हो निर्वान।।

मनो वृत्ति को सुरति कहते, अनहद माँहि सुरति कर रहते।
इसको कहें सन्त को ध्याना, इसको कहें ध्यान भगवाना।
यहाँ न पहुँचे मृत्यु काला, यह है इनका ध्यान निराला।
टीका बरछी रूप लगावें, चन्दन माल गले लटकावें।
अब तुम कीजो तनिक विचारा, कैसा हे अनुचित व्यापारा।
क्या नर आतम उन्नति पावे, क्या कुछ इससे ज्ञान बढ़ावे।
क्या बच्चों के खेल समाना, ऐसे कब मिलि हैं भगवाना।

प्रश्न– हुए देस पंजाब में, नानक उनका नाम।
उनका तो मार्ग भला, सँवरे जिससे काम।।

वे नहीं पूजत रहे पाषाना, निराकार मानहिं भगवाना।
बनें न साधु रहे गृहस्थी, बुत की कबहुँ न करें परस्थी।
उसने हिन्दु बहुत बचाये, मुसलमान होने नहीं पाये।
उनका मन्त्र सुनहु तुम स्वामी, कैसे भक्त रहे निष्कामी।

"ओं सत्त नाम कर्त्ता पुरुष निर्भो निर्वैर अकाल मूर्त अजोनि सहभं गुरू प्रसाद जप आदि सच जुगादि सच है भी सब नानक होसी भी सच।। जपजी पौड़ी।।१।।"

सत्य नाम है ओं का, वहीं साँचा कर्तार।
निर्भय रखे न वैर को, वह साँचा दर्बार।।

कबहुं न व्यापे उसको काला, नहीं योनि मँह आने वाला।
गुरु किरपा से उसको जप ले, उसका नाम तपस्वी तप ले।
युग के आदि मध्य अरु अन्ते, वही सत्य युग युग उपरन्ते।

उत्तर– आशय तो अच्छा रहा, अरु अच्छा था भाव।
विद्या का उनमें वरं, रहा नितान्त अभाव।।

नहीं थे वेद शास्त्र के ज्ञाता, संस्कृत पढ़ना नहीं था आता।
निर्भय को निर्भो लिख दीना, पद का शुद्ध प्रयोग न कीना।
'स्तोत्र संसकृति' उनका पेखें, फिर उनकी विद्या को देखें।

वे चाहते थे ख्याति पाऊं, संस्कृत में भी टाँग अड़ाऊं।
बिना पंढ़े संस्कृत नहीं आवे, पढ़ने ही से सब कुछ पावे।
ग्रामीणों के सन्मुख जाकर, संस्कृत के बन गये दिवाकर
नहीं जिन्होंने सुनी सुनाई, वे गँवार क्या समझें भाई।
हमने इसका कारण जाना, चाहते रहे प्रतिष्ठा पाना।
जो नहीं ऐसा होता कारण, क्यों करते पुन यत्न अकारण।
कह देते संस्कृत नहीं जानूं, केवल साँचा सरल बखानूं।
मन में रहा कछुक अभिमाना, चाहते होंगे निज सन्माना।
अवस दम्भ कछु होगा कीना, बिना दम्भ माने कोई ना।
इनके ग्रन्थ सभी एहि कारण, निन्दा अस्तुत करें अकारण।
कहीं वेद की निन्दा करते, कहीं अस्तुति के वचन उचरते।
पढ़े शास्त्र नहीं देखे वेदा, यही एक निन्दा मँह भेदा।
मत कोई पूछे इनसे अर्था, उनमें रही न अर्थ समर्था।
यही सोच शिष्यों के आगे, पहले ही निन्दा करने लागे।
कहीं कहीं वेद प्रशंसा करते, नास्तिक कहलाने से डरते।

वेद पढ़त ब्रह्मा मरे चारो वेद कहानी।.साध की महिमा वेद न जाने। सुखमनी पौड़ी ७
नानक ब्रह्मज्ञानी आप परमेश्वर। सुखमनी पौड़ी ८

छप्पय– ब्रह्मा तो मर गये वेद के पढ़ने हारे।
नानक जी भी अमर नहीं पुन रहे बेचारे।।
विद्या के भण्डार वेद मानहिं सँसारा,
जग में फैला ज्ञान सकल वेदों के द्वारा।
चतुर्वेद के ज्ञान को जो कोऊ कहे कहानियें,
उन की सभी कहानियें बिरथा कभू न मानियें।

मूरख ही यदि सन्त कहावे, तो वेदों को किस विध पावे।
बिन विद्या को महिमा जाने, ज्ञानी जन ही वेद पछाने।

सवैया – वेद को मान करें यदि नानक, तौ निज पंथ को कैसे चलाते।

संस्कृत का इक जानें न अक्षर, केहि विधि शिष्य को वेद पढ़ाते।
क्यों कर पाते गुरु पदवी अरु कैसे स्वयं गुरुदेव कहाते।
अच्छा था यदि नानक जी नहीं संस्कृत विद्या में टांग अड़ाते।

संस्कृत हीन पंजाब था, जब नानक प्रगटाय।
मुसलमान से दुखी था, उस से लिया बचाय।।

नानकजी के जीवन माँही, उनका पंथ चला कछु नांही।
वरं गवारन की यह रीति, मरने पाछे होवहि प्रीति।
जीवन में कछु करहिं न माना, मरने पर मानहिं भगवाना।
नानक जी नहीं थे धनवाना, नहीं थे सिद्ध और विद्वाना।

नानक चन्द्रोदय में लिखा, नानक बहु धनवान।
जन्म साखि में भी कहा, पूरन सिद्ध महान।।

ब्रह्मादिक देवन सों भेटे, शिव अरु गोरख सभी लपेटे।
सब ने इनका आदर कीना, सब से ऊँचा आसन दीना।
नानक जी का भया विवाहा, सोना चांदी रत्न अथाहा।
हाथी घोड़े ऊँट सवारा, थे अगनित नहीं पारावारा।
इसी तरह सब भरे गपोड़े, कहां रहे वह हाथी घोड़े।
दोष नहीं नानक जू केरा, दोषयुक्त हैं इनके चेरा।

नानक जी के सुत दोऊ, रामदास श्रीचन्द।
दोनों ही के नाम से, द्वै मत चले अमंद।।

प्रथम निर्मले पुनः उदासी गुर मत के थे दोऊ प्रकासी।
इनमें जितने गद्दी धारी, भाषा के वे भये लिखारी।
ग्रन्थ मांहि निज वचन मिलाए, जो जो भाव जिसे जब भाए।
दसवें भये गुरु गोविन्दा, महावीर शत्रु दल भिन्दा।
उनके पाछे नहीं मिलाई, ग्रन्थ मांहि निज भाषा भाई।
इनसे पहले पुस्तक जेते, सभी एकट्ठे कीने तेते।

सब करी एक भीड़ बँधवाई, धर्म ग्रन्थ की पदवी पाई।
इन लोगों ने नानक पाछे, पुस्तक लिखे अनिक कछु आछे।
जिस प्रकार के रहे पुराना, जिन में भरे कथानक नाना।
इस प्रकार के ग्रन्थ रचाये, गप्प गपौड़े बहुत लगाये।
ब्रह्म गियानी बन परमेश्वर, निज को कहन लगे भुवनेश्वर।

त्यागी कर्मोपासना, ब्रह्म बने सब आप।
इस मूरखता की बात ने, बहुत फैलाया पाप।

नहीं तो नानक जी की बानी, थी प्रभु भक्ति रस में सानी।
अच्छा था उस को अपनाते, पग पग पर धक्के नहीं खाते।
अब आपस में लड़ने लागे, आतम श्लाघा में सब पागे।
हमीं बड़े हैं कहें उदासी, निर्मल उनकी करते हासी।
कहें अकाली सुतरे साईं, हमसे कोई ऊँचा नाईं।

इनमें गोविन्द सिंह जी, रहे बड़े बलबीर।
योद्धा और पराक्रमी, बुद्धिमान रणधीर।।

इनके पुरखा भक्त बेचारे, यवनों के बहु कष्ट सहारे।
चाहते उनका लें प्रतिकारा, बांध कमर में तेज दुधारा
यह सामग्री हीन बेचारा, चमक रहा उत यवन सितारा।

पुरश्चरण कर गुरु ने, जग में किया प्रसिद्ध।
चण्डी ने दर्सन दिया, मों को देवी सिद्ध।

चण्डी ने मोहे दई कृपाना, विजय हेत दीनो वरदाना।
कहा जाओ यवनों को मारो, निज जाति के काज सँवारो।
बहुत भये उनके तब संगी, सिक्ख बना इक फिर्का जंगी।
गुरु ने राखे पंच ककारा, कड़ा केस कंघा करवारा।
पंचम कसना नीचे काछा, युद्ध भेस यह बाना आछा।
चक्रांकित के पंच सँरकारा, वामी मत के पंच मकारा।
तैसे ही गुरु के पांच ककारा, इन पांचों से सिंह सवारा।

शत्रु मारे सीस पर, लाठी अरु तलवार।
लंबे लंबे केश ही, हो जाते रखवार।।

कंगण सिर पर रखें अकाली, यह भी वस्तु बचाने वाली।
कर कंकण रोके रिपु वारा, रोके लाठी आदि प्रहारा।
कूद फांद को हितकर काछा, अटक न करता रण में आछा।
मल्ल अखाड़े में जब जावें, कुश्ती लड़ते दांव चलावें।
नट भी पहन लगावें बाजी, कच्छ जांघ में होती साजी।
नग्न न होवे—गुह्य स्थाना, तांते उत्तम कच्छ लगाना।
चौथा कंघा केश सुधारे, जूएं लिक्षा आदि निकारे।
पंचम कर्द शत्रु भयकारी, इस को तन से करें न न्यारी।
गुरु गोबिंद सिंह मतिमाना, समुचित था यह रीत चलाना।
वह थे बड़े समय के ज्ञाता, जाति हित यवनों से त्राता।
पर अब वह समय अतीता, पंच ककार भये सब रीता।
समय गया अब तजें न वर्दी, केवल वर्दी से हमदर्दी।
इस को मानें धर्म निशाना, जो था केवल रण का बाना।
मूरति की पूजा नहीं मानें, ग्रन्थ साहब वरु लगे पुजाने।
क्या नहीं ग्रन्थ की पूजा, ग्रन्थ पदारथ जड़ है दूजा।
पत्थर पूजे मूर्ति पुजारा, पूजे सिक्ख साहब असवारा।
दोनों ही ने हाट लगाई, गाहक फँसावें कर चतुराई।
दर्सन करते और कराते, लोगों से भेंटा चढ़वाते।
वे ठाकुर को सीस निवाए, यह पुस्तक को माथ झुकाए।
मूरति पूजक वेदहु माने, पर यह सिक्ख नहीं सन्माने।
पढ़ते सुनते सिक्ख न वेदा, कैसे पाँय वेद को भेदां
जो यह उनको सुनें सुनावें, कैसे पुन निज पंथ चलावें।
इनमें जो हो बुद्धि मन्ता, वैदिक मत में जाँय तुरन्ता।
करी इन्होंने एक भलाई, छूत छात की व्याधि उड़ाई।
खान पान प्रतिबन्ध हटाए, इक पंगत में सब बैठाए।
जो यह त्यागें विषयासक्ति, तज अभिमान करें प्रभु भक्ति।

उन्नति करे वेद मत केरी, मिटे तुर्त अज्ञान अँधेरी।

प्रश्न– दादू जी का मत कहो, वह तो है निर्दोष।
एक मात्र जिसमें भरा, भजन भाव का कोष।।

उत्तर– अच्छा केवल वैदिक मारग, पकड़ा जाय तो पकड़ सुमारग।
खाते रहो अन्यथा गोते, क्यों अज्ञान नींद में सोते।
दादू जन्म भूमि गुजराता, साधु भये सब तज कर नाता।

गृह को तज कर जा बसे, जयपुर निकट आमेर।
धन्धो के तेली रहे, तेल निकारें पेर।।
वेद शास्त्र को छोड़ कर, रटते दादू राम।
सस्ता सौदा मुक्ति का, क्या पढ़ने से काम।।

कौन प्रभु की लीला जानें, दादू जी भी लगे पुजाने।
सत्योपदेशक जब मिट जाएं, ऐसे पंथ तभी प्रगटाएं।
शाहपुर में इक राम सनेही, चला पन्थ थोड़े दिन से ही।
सगरे वेद रु शास्त्र विसारें, राम राम नित राम पुकारें।
राम जपन में मुक्ति मानहिं, विद्या का अक्षर नहीं जानहिं।
पर जब भूख लगे है भाई, राम न देता पैसा पाई।
मिलता अन्न गृहस्थी द्वारे, वहाँ पर जाते मारे मारे।
राम सनेही मूर्ति न पूजे, स्वयं बने पर मूरति दूजे।
बहुत करें नारिन की संगत, रंगे गये नारिन की रंगत।

रह नहीं सकते राम जी, बिना राम की संग।
अनपढ़ भोंदू घूमते, पियें तमाखू भंग।।

राम चरण ने पन्थ चलाया, राम सनेही पन्थ कहाया।
राजस्थान मेवाड़ निवासी, वह साधु था शाहपुर वासी।
राम नाम सिद्धान्त बनाते, राम नाम का जाप जपाते।

इनका इक पुस्तक बहु मानी, उसमें सन्त दास की बानी।
क्या लिखते हैं लखहु नमूना, भाषा भाव ज्ञान से सूना।
"भरम रोग तब ही कट्या निरंजन राइ, तब जम का कागज फट्या कट्या करम तब जाइ।।"
साखी ६।

"महमा नांव प्रताप की, सुणौ सरवण चित लाइ।
राम चरण रसना रटो कर्म सकल झढ़ जाइ।।
जिन जिन सुमरया नाँव कूँ सो सब उतरया पार।
राम चरण जो बीसर्या सो ही जम के द्वार।।

राम बिना सब झूठ बतायो

राम भजत छूट्या सब क्रम्मा, चन्द अरु सूर देह परकम्मा।
राम कहे तिन कूँ भय नाहीं, तीन लोक में कीरति गाहीं।

राम रटत जम जोर न लागै

राम नाम लिख पथर तराई, भगति हेति औतार हि धरही।
ऊंच नीच कुल भेद विचारे, सो तो जनम आपणो हारे।
सन्तां के कुल दीसै नाहीं, राम राम कह राम सम्हांहीं।
ऐसो कुण जो कीरति गावै, हरि हरि जन कौ पार न पावै।
राम सन्तां का अन्त न आवै, आप आपकी बुद्धि सम गावै।"
बुद्धिमान अब तनिक विचारें, क्या जग का यह पन्थ सुधारें।
राम राम को रटते जाना, मिट जायें सब भ्रम अज्ञाना।
कैसे यम का शासन छूटे, कर्म बन्ध कैसे पुन टूटे।
पाप करे अरु फल नहीं पावे, पापी का साहस बढ़ जावे।
जान पड़े पढ़ इसका पोथा, यह गँवार अनपढ़ था थोथा।
अंट संट सब कुछ लिख डारा, गपड़ चौथ नहीं सार असारा।
राम कहे ते छूटे करमा, यह असत्य केवल इक भरमां
बिरथा अपना जन्म गवाएं, लोगों को भी साथ डुबाएं।
जम का भय तो बहुत बड़ा है, कौन मृत्यु से मनुष लड़ा है।
चोर सिपाही ठग ओर डाकू, बाघ सर्प मच्छर अरु नाकू।
इनका भय भी छूटे नाहीं, व्यर्थ पड़े मूरख भ्रम माँही।

रात दिवस रटते रहो, राम राम पुन राम।
पकर सिपाही बाँध ले, राम न आवे काम।

शक्कर शक्कर कहते जाएं, पर कबहुं शक्कर नहीं खाए।
मुख मीठा नहीं होय तुम्हारा राम नाम क्या करे बेचारा।

पुण्य कर्म कीने बिना, कबहुँ न उतरे पार।
राम राम रटते रहो, डूबोगे मँझधार।

राम न सुनहीं एकहु बारा, पड़े रटो तुम जीवन सारा।
न कुछ बना न बनिहै भाई, काहे बिरथा आयु विहाई।

सवैया– जन्म अनन्त के पाप छुटे, मन राम रटे मुकति फल पावे।
सत्य गुरु समझो उसको जो, श्वास प्रश्वासहि राम रटावे।।
ईश्वर से गुरु का पद ऊँचा, ईश्वर का गुरु पन्थ दिखावे।
ध्यान धरो गुरु मूरति का नर, कौन गुरु बिन पार लँघावे।।

छप्पय– तजे वेद अरु शास्त्र बने गुरु अनपढ़ धूरत।
पाहन को छुड़वाय पुजायें अपनी मूरत।
स्वार्थ कपट अरु छल से यह निज उदर प्रपूरत।
ईश्वर से भी बड़े बने धोखे की सूरत।।

साध चरण को धोय कर चरणामृत पी जावते।
आप तो डूबे मूर्ख यह, चेले संग डुबावते।।

गुरु से दूर जाय जब चेला, अन्य ठौर पर कहीं अकेला।
गुरु नख डाढ़ी सिर के केशा, अपन संग वह रखें हमेशा।
उनको नित्य धोय कर पीवें, चरणामृत को पीकर जीयें।

निज स्वारथ की सिद्धि हित, राम सनेही नाम।
रमणी के संग रम रहे, राँड सनेही काम।।

छप्पय– जहाँ देखो वहाँ राँड सन्त को रहती घेरे।
चरण चाप दण्डौत करे फिरती चौफेरे।।

इन राँडों से भरे रहें सन्तों के डेरे।
खाती इनकी जूँठ प्रसादी साँझ सबेरे।।
हा हा आर्यावर्त का बेड़ा भरा डुबा दिया।
भारत माँ के मुकुट को मिट्टी माँहि मिला दिया।।

दोहा – चली खेड़ापा देश से, इसकी दूजी शाख।
ऐसे ऐसे मतों ने, किया देश को राख।।

मारवाड़ में गाम खेड़ापा, वहाँ से चला पन्थ दुष्पापा।
राम दास इक चतुर प्रवीना, ढेड़ जाति का कर्म कमीना।
उसके गृह में थीं दो नारी, दोनों ही थीं ढेड़ चमारी।
औघड़ बन वह फिरने लागा, कुत्तो के संग खांय अभागा।
राम दास पुन हो गया वामी, मद्य मांस परतिरिया गामी।
बना फेर वह कूँडा पंथी, मूँड मुँडाया पहरी कंथी।
दोनों नारी संग सिरानी, राम नाम की गावे वानी।
गाता फिरता पहुँचा सीतल, जोध पुरा में यह भूमि तल।

रामदेव का कामड़िया, पाछे बना गँवार।
जिस के सबदों को सुने बहुधा ढेड़ चमार।

वहाँ पर रामदास को पाया, जो ढेड़ों का गुरु कहाया।
उसने इस को शिष्य बनाया, खेड़ापा में पांओं जमाया।
रामचरण की सुनें कहानी, बनिया वाकी जाति पछानी।
साधू ग्राम दाँतड़ा माहीं, गुरु बनाया उसके ताहीं।
शाहपुरा में वहां से आया, अपना सिक्का तहां जमाया।
होंय लोग जहां भोले भाले, जो चाहे वहाँ पाँव जमा ले।

रामचरण के वचन से, ऐसा होता भान।
ऊँच नीच का भाव तज, चेला करहिं समान।।

अब भी कूँडा पन्थी आते, मिट्टी के कूँडों में खाते।

जूँठ साधु की खाते पीते, इसी नीच वृत्ति पर जीते।
वेद शास्त्र सब से छुड़वाते, मात पिता से यह बहकाते।

बच्चों को बहकाय कर, चेला उन्हें बनाँय।
राम नाम का मन्त्र दे, घर घर भीख मँगाँय।।
राम नाम के मन्त्र को, कहते छुच्छम वेद।
पतन हुआ है तभी तो, भारत का हा खेद।।

सवैय्या– राम दास हर रामदास की वाणी वेद से ऊँची जानें,
आठ डँडौत करे उसकी अरु ले परकम्मा गावहिं गाने।
पुरुष रु नारिन एक समानहिं रामहु राम का मंत्र जपाने,
पाप कहें पढ़ना यह मूरख, मूरखता कँह उत्तम मानें।।

दोहा – पंडताई पूने पड़ी, औ पूरबले पाप।
राम राम सुमरयां बिना, रह गयो रीतो आप।।

वेद पुराण पढ़े–पढ़ गीता, राम भजन बिन रह गये रीता।
ऐसे ऐसे रच दिये पोथे, तत्व हीन निस्सार रु थोथे।
सती नारियों को बहकाते, पति पूजा को पाप बताते।
गुरु साधु की पूजा धर्मा, यह नारिन हित है सत्कर्मा।
जो ब्राह्मण नहीं राम सनेही, उस को नीच गने मत एही।
राम सनेही हो चांडाला, उस को मानहिं सद्गति वाला।
ईश्वर का अवतार न मानें, फिर भी प्रभु अवतार बखानें।
भगति हेत अवतारहि धरहि।
इस प्रकार पाखण्ड चलाया, जिसने भारत देश गिराया।

प्रश्न – सम्प्रदाय अच्छा कहें, गोकुलिये गोसाइं।
सम्पति से भरपूर है, लेश दुःख का नाइं।।

उत्तर – सब ऐश्वर्य गृहस्थ का, गोसाइयों का नाम।
विषय विलासी पन्थ यह, सब कुकर्म का धाम।।

प्रश्न — गोसाइयों के पन्थ का, अपना यह परताप।
क्यों नहीं मिलता अन्य को, यह बतलायें आप।

उत्तर — अन्य लोग ऐसा करें, माया जाल फैलाँय।
वे भी सब ऐश्वर्य को, इन से बढ़ कर पाँय।।

प्रश्न — लीला सब गो लीक की, इसमें कपट न पाप।
कृष्ण कृष्ण रटते रहें, गोसाईं निष्पाप।

उत्तर — नहीं लीला गोलोक की, लीलाधर यह आप।
गोसाईं निज स्वार्थ रत, फैलाते हैं पाप।।

जो लीला गोलोकहिं माने, तो गोलोकहु अस विधि जाने।
यह तैलंग देश से निकसा, वहां से सकल देश मँह विगसा।
लक्ष्मण भट्ट रहा तैलंगी, मात पिता अरु तज अर्धंगी।
वहां से चल कर आया कासी, मूंड मुंडाय भया संन्यासी।
लखन भट्ट के पितु महतारी, काशी पुने लिये संग नारी।
जिसने उसको मूंडा चेला, उससे करने लगे झमेला।
पहले हम को देते फांसी, पुन करते इस को सन्यासी।
इस की रोवे तरुणी नारी, कहां जाय यह नार विचारी।
गुरु ने वहा करो मत रोषा, इस मँह मेरो तनिक न दोषा।
सन्मुख ठाड़ा पुत्र तुम्हारा, हमें कहा मैं अभी कँवारा।
कहा नार ने मुझे बचाओ, मुझ को भी सन्यास गहाओ।
संग संग मैं इसके जाऊँ, नह यहीं पर प्राण गँवाऊ।
यह सुन कर गुरु अति रिसियाने, लक्ष्मण को लागे समझाने।
क्या अनर्थ तूने यह कीना, झूठ बोल गुरु मन्तर लीना।
भगवा चोला अभी उतारो, गृह परिवार गृहस्थ संभारो।
लक्ष्मण ने नारी अपनाई, भगवे वस्तर दीन जलाई।

देखो तो इस पन्थ का, झूठ कपट ही मूल।
ऐसे ऐसे मत भये, वेदों के प्रतिकूल।।

जब यह पुन पहुँचे तैलंगे, लोग कहें यह गीदड़ रंगे।
तुर्त जाति से बहिर निकारा, पुन यह भ्रमने लगा बेचारा।
तिया संग चम्पारन आया, जंगल में इक शिशु को पाया।
उस बच्चे के चार चौफेरे, अग्नि रही थी उसको घेरे।
जिसने इस बच्चे को त्यागा, उस को था शिशु से अनुरागा।
बच्चा तज कर आग लगाई, कहीं जीव कोई जाय न खाई।
लक्ष्मण ने शिशु तुर्त उठाया, उस को अपना पुत्र बनाया।
पुन काशी में रहने लागे, दोनों पुत्र प्रेम में पागे
जब वह बालक भया सयाना, मात पिता का तनु अवसाना।
काशी में रह विद्या पाई, वहां से लीनी फेर विदाई।
विष्णु स्वामी का ठाकुर द्वारा, लक्ष्मण सुत वहां जाय पधारा।
चेला बन वहां रहने लागा, भई खट पट तो वहां से भागा।
पुनः लौट कर आया कासी, मूंड मुंडाय भया संन्यासी।

जाति बहिष्कृत विप्र कोऊ, काशी करत निवास।
उसकी कन्या इक युवा, रहती उसके पास।।

उसने कहा युवक के ताहीं, त्याग अवस्था तोरी नाहीं।
यह मेरी कन्या तुम ब्याहो, तजि सन्यास यदि तुम चाहो।
उसने कहा तुर्त विवाही, सुठ सुशील सुन्दर मन चाही।
पितु पर पूत जाति पर घोड़ा, बहुत हीं तो थोड़ा थोड़ा।
नार लिये गुरु पास पधारा, विष्णु स्वामि ने बहिर निकारा।
वहां से चल कर ब्रज में आया, जहाँ अविद्या का तम छाया।
वहाँ लगा यह जाल बिछाने, नाना विधि कर पंथ फैलाने।
कहने लगा सुनहु ब्रजवासी, हौं उतरा गोलोक निवासी।
मरे सखा रहे नन्दनन्दन, भक्तवछल प्रभु असुर निकन्दन।
मेरे कर यह पठा सन्देशा, ताँते आया हौं ब्रज देशा।

दैव जीव गो लोक के, जो आये इह देश।
उन को पावन मैं करूँ, करूँ ब्रह्म उपदेश।

जिस जिस को मैं पावन पाऊँ, तिस तिस को गोलोक पठाऊँ।
कुछ मूरख नर जाल फँसाये, चौरासी वैष्णव कहलाये।

उनके लिये मन्त्र रच दीने, उनमें भी कछु अन्तर कीने।

"श्री कृष्णाः शरणं मम। क्लीं कृष्णाय गोपी जन वल्लभाय स्वाहा।" गोपाल सहस्र नाम

यह दोनों साधारण कहिये, मन्त्र विशेष समर्पण लहिये।

"श्री कृष्णः शरणं मम सहस्र परिवत्सर मित काल जात कृष्ण वियोग जनित ताप क्लेशानन्त तिरोभावोऽहं भगवते कृष्णाय देहेन्द्रिय प्राणान्तः करण तद्धर्माश्च दारागार पुत्राप्त वित्तेह पराण्या त्मना सह समर्पयामि दासोहं तवास्मि।।"

देह इन्द्रिय अन्तःकरण, संपति सुत अरु नार।
सभी समर्पे कृष्ण को, यह साँचा व्योहार।।

यही समर्पण मन्त्र कहावे, लूट माल शिष्यों का खावे।

"क्लीं कृष्णायेति"

क्लीं आदि वामिन के अपने गोसाँईं भी लागे जपने।
निस्संशय गोसाँई वामी, वाम पन्थ की नाँई कामी।

"गोंपी वल्लभेति"

गोपिन ही के मोहन प्यारे, शेष वृथा ही जपें बेचारे।
जो केवल नारी रंग राचे, रास करे गोपिन में नाचे।
वह तो निश्चय भोग विलासी, अथवा हिंजड़ा तियगन वासी।
क्या ऐसे थे वे यदुनन्दन, दुष्ट दलन अरु असुर निकन्दन।

"सहस्र परिवत्सरेति"

सहस्र वर्ष तो गनहिं निरर्थक, नहीं सर्वज्ञ गुसाँई समर्थक।
सहस्र वर्ष से बिछुड़े कान्हा, झूठ तुम्हारो यह अनुमाना।
जब जनमें थे वल्लभ नाहीं, नहीं था वल्लभ मत जग माँही।
दैवी जीव कहाँ थे सारे, पहले क्यों नहीं आय उबारे।
'ताप क्लेश' दोनों पर्याई, यह पुनरूक्ति बृथा लगाई।
'सहस' कहा पुन कह्यो 'अनन्ता' ऐसे पंडित बुद्धि मन्ता।

रहे तिरोहित जो पुरुष, समय अपार अनन्त।
वल्लभ उसका क्या करे, होय न जाका अन्त।।

कृष्णर्पण कीजे केहि काजे, कृष्ण तो पूरण काम विराजे।
वे नहीं देहादिक के कामी, सफल काम नन्द नन्दन स्वामी।
तन भी अर्पित होवे नाँही, मल अरु मूल भरा तनु माँही।
मल विष्टा का कैसा अर्पण, किसका हो उससे संतर्पण।
पाप पुण्य यदि दोनों देवे, उसका फल भी मोहन लेवे।
सुख दुख दोनों मोहन पावें, नाना विधि के कष्ट उठावें।

सिरी कृष्ण का नाम ले, सब कुछ लेते आप।
खाते पीते भोगते, फिर भी हैं निष्पाप।।

यदि कृष्ण का रूप गुसैयाँ, रमणी रमण कहावें सैयाँ।
तो तन का मल भी वे पावें, खावें पीवें मौज उड़ावें।

दान करो मत अन्य को, ऐसा करें बखान।
केवल तारण हार है, गोसाँईं को दान।।

कैसी चतुराई की बातें, पर धन हरने की सब घातें।
वैदिक धर्माचार नशावनि, इनकी लीला परम अपावनि।

तस्मादादौ सर्व कार्य्ये सर्व वस्तु समर्पणम्। दत्तापहार वचनं तथा च सकलं हरेः।।६।।
न ग्राह्य मिति वाक्यम् हि भिन्न मार्गपिरं मतम्। सेवकानां यथा लोके व्यवहारः प्रसिध्यति।।७।।
यथा कार्य्यं समर्प्यैव सर्वेषां ब्रह्मता ततः। गंगात्व गुण दोषाणां गुण दोषादि वर्णनम्।।८।।

गोसाइयों के ग्रंथ में, एहि विधि श्लोक अनेक।
सार हीन स्वारथ पर्क, झूठे शून्य विवेक।।

पंच सहस्र वर्ष अनुमाना, भयहु कृष्ण को तनु अवसाना।
अर्ध रात्रि श्रावण को मासा, भई वल्लभ की पूरी आसा।
मुख मुरली तनु सोहे फेंटा, कृष्ण करी वल्लभ सों भेंटा।
इन मूढ़ों को कौन बताए, चले गये सो बहुर न आए।

गोसाँई का जो हो चेला, इनको देवे पैसा धेला।
वाके देह जीव की शुद्धि, पर धन हरते चातुर बुद्धि।
इस प्रकार के लोभ दिखाए, चेले चेली बहुत फँसाये।
निवृत दोष यदि सब होते, तो उनके चेले क्यों रोते।
क्यों उनके घर दारिद नाचे, उनके तनु क्यों व्याधि राचे।
पाँच विधि के हैं वह दोषा, क्यों कर चेले हों निर्दोषा।
दोष स्वाभाविक हैं कामादि, इनसे कैसे छुटें प्रमादी।
देश विशेष काल कृत पातक, दूजे दोष मनुष के घातक।
भक्ष्याभक्ष्य पदारथ खाना, तीजा पाप लोक ने माना।
झूठ कपट आदिक यह सारे, वेद कहें यह पातक भारे।
चौथे दोष कहें संयोगज, चोरी जारी भोग अभोगज।
माता भगिनी गुरु की नारी, इनको भोगे जो व्यभिचारी।
महा दोष यह चौथा जाना, यह संयोगज पातक नाना।
स्पर्शज पातक पंचम कहिये, पंच महा पातक यह गहिये।
इन दोषों को दोष न जाने, इस प्रकार वल्लभ मत माने।

जो मन चाहे सो करे, यह वल्लभ आचार।
दोष न लागे किसी को, गोस्वामी आधार।

बिना समर्पण किये पदारथ, कोई वस्तु नहीं होय सकारथ।
पहले गुरु को अर्पण कीजे, मन मानी पुन पाछे कीजे।
सब दोषों को ही निरविरति, यह गोसाइयों की परविरति।
ताँते इनके चेला चेली, गुरु की रखते गरम हथेली।।
पुत्र वधु कन्या निज नारी, धन संपति अरु सैर सवारी।
सब कुछ गुरु को कर दें अर्पण, गोसाँई का करते तर्पण।
पहले भोगें गुरु महाराजा, नरम गरम कोमल अरु ताजा।
चेला चेली पीछे आवें, बासी रोटी पीवें खावें।

नहीं समर्पण हो सके, भोगा हुआ पदार्थ।
ताँते अर्पे गुरु को, पहले वस्तु यथार्थ।

गुरु को अर्पे नार नवीली, सुन्दर दुलहिन छैल छबीली।
पाछे अपने गृह में आवे, गुरु की जूँठ प्रसादी खावे।
सकल वस्तु अर्पे हरि ताँईं, पाछे भोगें शिष्य गोसाईं।
अन्य मती के सुने न बैना, कानों सुनें न देखे नैना।
ब्रह्म भाव सब माँही राखे, गुण केवल निज मत के भाखे।
जिमि नदियाँ मिल गंगा माहीं, गंगा नाम रुप है जाईं।
एहि विधि सब मत न्यारे न्यारे, ब्रह्म जलधि मँह मिलते सारे।
ताँते अपने गुणहु बखाने, दोष युक्त सब पन्थ बिराने।
अरे गुरु गोसाईं चातुर, माया मोह कपट के पातुर।
ब्रह्म ज्ञान नहीं तुमने चीना, तू है ब्रह्म बोध से हीना।
एक हु लक्षण तुम्हें न आवे, शिष्यों को तू क्या समझावे।
अवरन की कन्या अरु नारी, शुद्ध करे यह बुद्धि तुम्हारी।
पर तेरी निज पत्नी बाला, शुद्ध उन्हें को करने वाला।
जब लौं उनको करे न अर्पण, शुद्ध करो करवाय समर्पण।
तब लौं यह सब रहें अपावन, कैसे पाँय कृष्ण पद पावन।
वे सब रहे अशुद्ध बेचारीं, पतित रहे तब सन्तति सारी।

करो समर्पित शीघ्र ही, निज कन्या वधु नार।
अन्य मतन के नरन को, डूब रहीं लो तार।।

पर धन नारी भोगन कारण, बन बैठे हो ब्रह्म अकारण।
ईश्वर के गुण कर्म स्वभावा, तुमरे अन्दर एक न पावा।
ताँते त्यागो सड़े समर्पण, पर धन जारी लेना अर्पण।
जो कुछ हुआ हुआ सो भाई, अब यह त्यागो तुर्त बुराई।
सुन्दर वेद मार्ग को धारो, अब तो मानुष जन्म सुधारो।
सुख से चार पदारथ पाओ, पारब्रह्म की महिमा गाओ।
निज मारग मानें गोस्वामी, 'पुष्टि मारग' परतिय गामी।
खान पान अरु भोग विलासा, गोसाँईं इन्द्रिय के दासा।
विषय भोग में मानें तुष्टि, ताँते करते तन की पुष्टि।

पर इनसे कोई पूछे जाकर, रे पुष्टि मारग के चाकर।
जब व्याधि हों तनु के अन्दर, कुष्ठ अर्श उपदंश भगन्दर।
झींक झींक कर तुम मर जाते, हाय हाय कर प्राण गँवाते।
पुष्टि नहीं यह कुष्ठी मारग, त्यागो ऐसा दुष्ट कुमारग।
हाड़ माँस कुष्ठी के गलते, तन के धातु सकल पिघलते।
ऐसी ही है इनकी लीला, मरते तज कर संयम शीला।
नरक मार्ग भी यही बखाना, जहाँ पर कष्ट पाँय नर नाना।
ऐसे मिथ्या जाल फैलाये, भोले भाले लोग फँसाये।

भोले लोग फँसाय कर, बने कृष्ण भगवान।
धर्मी जन के वेश में, डाकू चोर समान।।

निरखें इनके ग्रंथ गपोड़े, क्या क्या बकते ओढ़े पोड़े।
दैवी जीव जिते यहाँ आने, उन सब को गोलोक पठाने।
हम आये करने उद्धारा, लीला पुरुषोत्तम अवतारा।
बिना सुने उपदेश हमारा, काहू को नहीं मिले किनारा।

कुंडलिया— एकहि नर गोलोक में, सिरी कृष्ण भगवान।
शेष रहें सब नारियाँ नारिन को सन्मान।
नारिन को सन्मान, पुरुष को नहीं कोई स्थाना।
क्या चेले गोसाँईं के, बन रहे जनाना।।
जिसके हों दो नार, उठाए दुःख प्रखरतर।
कोटि नार गोलोक माँहि, श्री कृष्ण एक नर।।
जो मानो श्रीकृष्ण को, समरथ का भंडार।
बल रखती होंगी अवस, सिरी कृष्ण की नार।।

जिस नारी के केशव संगी, सिरी कृष्ण की जो अर्धंगी।
वह भी होगी समरथ वाली, जाके पति ऐसे बलशाली।
काम चेष्टा मद मतवारी, नर से रखे अधिक बल नारी।
जिस विधि देखें इह अवनीतर, एहि विधि हो गोलोकहुँ भीतर।

छप्पय— तुल्य समर्था रखे यदि वहाँ नर अरु नारी।
तब तो हो गो लोक माँहि सौतन डाह भारी।।
जहाँ एक नर कान्ह नार पुन लाख हजारी।
कठिनाई से लड़ भिड़ आती होगी बारी।।
नरक भया गोलोक क्या जहाँ रात दिन रार है।
रोग भगंदर आदि भी होंगे वहाँ धिक्कार है।।

गनहिं गोसाईं निज को कान्हा, भोग करें नित प्रमदा नाना।
उनको होते रोग अनेका, अर्श कुष्ठ वीरज अभिसेका।
व्याधि ग्रस्त हो हा हा करते, रो रो जर जर गर गर मरते।
जिस माधव का रूप गुसाईं, मरता है कुष्ठी की नाईं।
तो गोलोक स्थान का स्वामी, जो तिय रमें रैन दिन कामी।
यही दशा उस की भी होगी, जो भोगी सो होगा रोगी।
जो कहो कृष्ण न होवे रोगी, पुन क्यों मरें गुसैयाँ भोगी।
गोसाईं उनके ही रूपा, साक्षात यह कृष्ण स्वरूपा।

प्रश्न — मर्त्य लोक आये प्रभु, धर लीला अवतार।
ताँते यहाँ पर रोग हो, नहीं गोलोक मझार।।

नहीं गोलोक माँहि कोऊ रोगा, रैन दिवस चहे भोगहु भोगा।
रोग शोक सब इह संसारे, ऊर्ध्व रोगों से न्यारे न्यारे।
जहाँ भोग तहाँ रोग प्रसारा, अनुभव करता सब संसारा।
अच्छा यह बतलाओ गुसाईं, केतिक गोपी वहाँ बियाई।
उनके होंगे छोरी छोरा, करते होंगे बालक रोरा।
तुम कहते वहाँ नर नहीं कोई, तो जन्मे जो कन्या सोई।
कन्याएं पुन किन से ब्याहें, वे युवती हो नर हो चाहें।
जो तुम कहो कृष्ण भगवाना, उनके नहीं होती सन्ताना।
कहो नपुँसक कृष्ण तुम्हारा, निस्सन्तान पड़ा बेचारा।
अथवा बन्ध्या महिला सगरी, गऊ लोक हिजड़ों की नगरी।

तिरिया ही तिरिया भरी, उस गौलोक मझार।
जिमि दिल्ली के शाह की, रहीं हजारों नार।।

तब तो कान्हा भये सेनानी, पल्टन राखें साथ जनानी।
उचित न करना तन मन अर्पण, धन संपत अरु नार समर्पण।
ब्याह समय निज पति को अर्पे, तन मन सर्बस उसे समर्पे।
क्या अधिकार गोसाँई केरा, जाल बद्ध मछली सम चेरा।
करें परिश्रम शिष्य कमावें, गोसाईं, जी माल उड़ावें।
जाति बहिष्कृत सब गोसाईं, समझे जाँय पतित की नाईं।
इन्हें तैलंगी नहीं मिलाते, इनके साथ न पीते खाते।

जब काहू के भवन में, गोसाईं पधारॉय।
कठपुतली जिमि बैठ कर, टक टक देखत जाँय।।

देखें पर मुख से नहीं बोलें, कठपुतली सम हिलें न डोलें।
कैसे बोले मूर्ख बेचारा, चुप्पी का ही उचित सहारा।
बोले प्रकटे मूरखताई, चुप्पी साधे यही भलाई।
तिय गन को इक टक अवलोके, रूप सुरा पी खाता झोके।
बार बार जिस ओर निहारे, वह नारी जनु लगी किनारे।
बड़े भाग्य वह समझे अपने, यौवन के पूरे हों सपने।
उस नारी के रिश्ते नाते, धन्य धन्य कर सब हर्षाते।
सब प्रमदा गुरु के पग परसे, मन का नेह नयन सों दरसे।
जिस पर करें दया की दृष्टि, जिस पर होय प्रेम की वृष्टि।
उस की अँगुरी नेक दबायें, पग से मन की बात बतायें।
उसका पति और वह नारी, जाँय गुसाईं पर बलिहारी।
नारी का पति अरु सब नाते, हँस हँस कर तिय को समझाते।
करहु गुसाईं की पद सेवा, मन इच्छित गहिओ फल मेवा।
यदि उसके पति आदि न मानें, तो कुटनी अरु दूत सयाने।
उनके द्वारा नार बुलाते, तस्कर पर घर सेंत लगाते।
ऐसे अनिक दूत और दूती, जिनकी यही कर्म करतूती।

गोसाइयों के मन्दिर बसहीं, मिस सतीत्व तिय गन के नसहीं।

किस विध मांगे दक्षिणा, कैसे लेते दान।
किस प्रकार पर धन हरें, गोसाईं मन म्लान।।

सवैय्या – लाओ भेंट गोसाईं जी की, बहु रानी की भेंट चढ़ाओ,
मुखिया जी की बेटी जी की, लालहु जी की भेंटा लाओ।
पाहरिया की ठाकुर जी की, भेंट गवैय्या केरि मँगाओ,
तन मन धन से श्रद्धा कर के, भेंटा चरणों तले धराओ।।

भेटा चढ़ती सप्त स्थानें, इस प्रकार यह सात दुकानें।
शिष्य कोई जब इनका मरतां, गोसाईं उस पर पग धरता।
जो कुछ वहाँ से मिलती सम्पत, ले गोसाईं होता चम्पत।
ऐसी करते क्रिया अंचारज, करने लगे गुसाईं अनारज।
कहीं कहीं चेले यदि चाहें, उनके ब्याह गुसाईं कराएं।
कभी करें केसरिया स्नाना, जो गोसाईं के मन भाना।
प्रमदा मिल कर स्नान करातीं, केसर का उबटन उबटातीं।
कभी एकट्ठे मिल नर नारी, बहुधा तिय गन होतीं सारी।
उबटन करके नार नहलायें, गुरु को चौकी पर बैठायें।
न्हाये गोसाईं बाहर आते, निज लंगोट वहीं तज जाते।
उसे गोसाईं गीला छोड़ें, प्रमदा उनको तुर्त निचोड़ें।
धोंवन का चरणामृत पायें, नयन चढ़ाएं अधर लगाएं।
गुरु को बीड़ी पान खिलातीं, उसमें सुखद सुगन्धि मिलातीं।
मुख में पान गुसैय्याँ डालें, धीरे–धीरे उसे चबा लें।
स्वर्ण रज के रखें कटोरे, प्रेम सहित गुरु जी के धोरे।
पीक उगल कर उसमें ढालें, चेली चेले पीक संभालें।
थूकों की बटती प्रसादी, धिक धिक मूर्ख दरिद्र प्रमादी।
उस को 'खास' कहें यह भौंदू, तोंद बढ़ा कर बैठे तोंदू।

केवल वैष्णव हाथ का, खाते हैं कुछ लोग।
अन्य किसी के छुए का, नहीं लगाते भोग।।

कैते ऐते बन गये पावन, सकल सृष्टि को गनहिं अपावन।
वैष्णव कर का भी नहीं खाते, लकड़ी धो कर फेर जलाते।
पर घी आटा, गुड़ नहीं धोवें, जो धोवें तो बैठे रोवें।
कहते हैं हम रास रचाएं, ठाकुर जी को भोग लगाएं।
ठाकुर जी हित रखे गवैय्या, दूध हेत ठाकुर की गैय्या।
सत्य बात तो यह है भाई, निज स्वारथ की बात बनाई।
सब अपने हित पीना खाना, ठाकुर जी का रखा बहाना।
रंग उड़े जब आवे होली, पिचकारी से रंग दे चोली।
तिय के गुह्य ठाँव रंग डारें, ताक ताक पिचकारी मारें।
महाँ अनर्थ करें यह धूरत, साक्षात विषयन की मूरत।
शास्त्र निषिद्ध कर्म भी करते, रस विक्रय कर जेबें भरते।

प्रश्न – अपने हाथ न बेचते, नहीं कोई इनकी हाट।
चेले पत्तल बेचते, फिर बजार धर बाट।।

दाल भात अरु शाक कचौरी, लड्डु मठरी घृत मँह बौरी।
इनके बेचें नौकर चाकर, स्वयं न बेचें कहीं पर जाकर।

उत्तर – ब्राह्मण हैं सब शिष्य भी, उन्हें लगायें पाप।
बच जायें वे पाप से, जाँय गुसाईं आप।।

आप तो डूबे भले गुसैयाँ, अपने संग डुबाये सैयाँ।
जाकर लखहु नाथ के द्वारे, बेंचत यहाँ गुसाईं सारे।
इन लोगों ने देश डुबाया, महाँ पाप का जाल बिछाया।

प्रश्न – नारायण स्वामी मत साँचा, प्रभु भक्ति के रंग में राँचा।
उसमें दोष न देखहि काऊ, मानहि उसे रंक अरु राऊ।

उत्तर– "पाहशी शीतलादेवी वाहनः ताहशः खरः।"

जैसी दैवी शीतला, वैसा गधा वहान।
आप तो डूबे बामणा, संग लिये जजमान।।

यथा गोसाईं पर धन हारी, तोहि विधि यह भी भ्रष्टाचारी।
सहजानन्द नाम ब्रह्माचारी, बुद्धि कुशाग्र चतुर था भारी।
निकट अयोध्या वाको गाऊं सरजु तीरे सुन्दर ठाऊँ।
घर से निकला लगा विचरने, देस देस की यात्रा करने।

कच्छ काठियावाड़ लख, पुन पहुँचा गुजरात।
गाँव गाँव में विचरता, कहीं रात कहीं प्रात।।

उसने देखा लोग बेचारे, यहाँ के बासी भोरे भारे।
झूठ सत्य जो कछु बतलायें, माने कान न पूँछ हिलायें।
वहाँ कुछ उसने शिष्य बनाए, ठगने के हित संग मिलाए।
चेले करने लगे प्रचारा, सहजानन्द ब्रह्म अवतारा।
बड़े सिद्ध सब कला सपूरण, साक्षात ईश्वर परिपूरण।

दर्शन देते भक्त को, धार चतुर्भुज रूप।
छिन में तारे जगत को, करें रंक से भूप।।

दादा खाचर था इक काढी, जिमिदार बहु सम्पति गाढ़ी।
उस पर अपना जाल बिछाया, मोटा मुर्गा देख फँसाया।
जो चाहो दादा हरि दर्शन, चरण कमल नारायण पर्सन।
रूप चतुर्भुज तुम्हें दिखाएं, भव बन्धन तेरे कट जाएं।
गद्‌गद हो कर ठाकुर बोले, मेरी जीरण नैय्या डोले।
दया करहु जो दरस कराओ, मुख माँगा मुझ से धन पाओ।
ले गये उसको गुरु के द्वारे, खाचर दादा फँसे बेचारे।

बीच अँधेरी कोठड़ी, ठाड़े सहजानन्द।
छिलमिल कपड़े पहर कर, किये द्वार सब बंद।।

सहजानन्द खड़ा था आगे, एक शिष्य तिस पाछे लागे।
बगलों में उसने भुज डारी, दोऊ भुजाएं बहिर निकारी।
रुप चतुर्भुज भला बनाया, शंख चक्र कर माँहि गहाया।

सिर पर मोर मुकुट को धारा, क्या जाने यह भेद बेचारा।
शिष्यों ने दादा समझाया, देखो समय दरस का आया।
एक बार जब देखों झांकी, नारायण की सुन्दर बाँकी।
आँखें तुर्त बन्द कर लेना, नहीं पड़े लेने का देना।
इमि कह खोले बन्द किवारा, दादा ने वह रुप निहारा।
करने लगे शिष्य जयकारे, बड़े भाग्य दादा बलिहारे।
दादा ने जब नयना मीचे, शिष्य ओट में दीपक खींचे।
नयना बन्द किये सब ठाढे, सहजू भगे अंधेरे गाढे।
चटपट कपड़े मुकुट उतारे, पुन गद्दी पर आन पधारे।
दादा को जब बाहर लाये, सहजू बैठे वहाँ लखाये।
फँसा जाल में दादा खच्चर, ऐसे उसे लगाये पच्चर।

उसी ठाँव पर जम गया, इनके मत का मूल।
जिमीदार को देख कर, सभी भये अनुकूल।।

इधर उधर पुन विचरन लागा, हा भारत तू बड़ा अभागा।
कहीं मिले जब कोई अनाड़ी, उसकी मले कण्ठ की नाड़ी।
मूर्छित हो जब वह गिर जाये, कहता हमने प्राण चढ़ाए।
इसकी लागी परम समाधि, छूट गई सब आधि व्याधि।
इसके लख कर ढंग निराले, फँस गए काठी भोले भाले।
जब वह मरा तो चेले चटुए, पंथ प्रचारहिं बटुए कटुए।
इस पर सुनिए एक कहानी, यह जन किस विध करते हानि।
किसी चोर ने सेंत लगाई, आ पहुंचा वहाँ कोई सिपाई।

पकड़ ले गया चोर को, राजा के दरबार।
नाक काट दी चोर की, हुकम दिया सरकार।।

उस निर्लज को लाज न आई, क्या जाने वह जगत हँसाई।
कभी हँसे नाचे अरु गाये, तरह तरह के ताल बजाए।
उससे लोग पूछने लागे, क्यों तू ऐसा करे अभागे।

बोला तुम क्या जानो भाई, नारायण की झांकी आई।
सन्मुख खड़े चतुर्भुज रूपा, कोटि काम हर रुप अनूपा।
ऐसा मन आनन्द विभोरा, यथा देख श्यामल घन मोरा।
लोग कहें हमको दिखलाओ, नारायण का दरस कराओ।

तस्कर ने उत्तर दिया, नासा दो कटवाँय।
नाक हटे तो कृष्ण जू, अपना दरस दिखाँय।।

इक मूरख ने नाक कटाया, नारायण पर नज़र न आया।
कहा चोर ने मत घबराओ , तुम भी मो सम नाचो गाओ।
नाक कटी अब लौट न आवे, क्यों नहीं अपनी लाज बचावे।
वह भी मूरख नाचे गावे, नारायण दीखे बतलावे।
फैल गई यह चर्चा सारे, बहुतक नकटे भये बेचारे।
कोई न मन का भेद बतावे, जो नकटा सो नाचे गावे।

नारायण दर्शी रखा, अपने मत का नाम।
नाक कटाना नाचना, इन लोगों का काम।।

एक दिवस इक मूरख राजा, नकट मण्डली माँहि विराजा।
जब देखी राजा की सूरत, सभी नाचने लागे धूरत।
नृप ने नकटा पन्थ सराहा, अपना नाक कटाना चाहा।
राजा को तब बोले धूरत, दशमी को शुभ लगन मुहूरत।
उस दिन अपनी नाक कटाओ, नारायण का दर्शन पाओ।

राज सभा में इक रहा, अति बूढ़ा दीवान।
बड़ा पुराना घाव था, चातुर बुद्धिमान।।

उसने कहा अन्न के दाता, यह विचार तब मुझे न भाता।
पहले मैं निज नाक कटाऊँ जो नारायण दर्शन पाऊँ।
तब तो तुम भी नाक कटाना, नहीं तो पाछे हो पछताना।
जल्दी में मत कुछ कर डारें, करें अनन्तर प्रथम विचारें।

मानी बात दीवान की, ज्योतिषि लिया बुलाय।
शुक्ला पंचमि दश बजे, दीना लगन बताय।।

नियत तिथि पर मन्त्री आया, राजा जी को स्मरण कराया।
महाराज अब करें न देरी, लगन समय मत करें अबेरी।
सेना अपने संग लिवाओ, राजनीति तुम जान न पाओ।
जब ससैन्य नृप वहाँ पधारे, लगे नाचने नकटे सारे।
नकट राज को बोला राजा, बिनती सुनो गुरु महाराजा।
मन्त्री जी भी नाक कटाएं, इनको पहले दरस कराएं।
चक्कु अरु इक लेकर थाली, नाक काट थाली में डाली।
बहने लगी रक्त की धारा, मन्त्री मूर्छित भया बेचारा।
जब कुछ मन्त्री को सुधि आई, वही बात उसको समझाई।

होना था सो हो गया, अब क्या पश्चाताप।
तुम भी कहो दीवान जी, खड़े नारायणं आप।।

मन्त्री को नृप पूछन आये, कहो कहो क्या दर्शन पाए।
मन्त्री ने सब भेद बताया, इस धूरत ने जाल बिछाया।
मनुष सहस्त्रों नकटे कीने, दारुण दुख धूरत ने दीने।
पकड़ लिये तब नकटे सारे, मार मार कर चर्म उतारे।
बड़ महन्त को गधे चढ़ाया, मुँह काला कर नगर घुमाया।
जूते ईटें पत्थर मारे, इस विध उसके प्राण निकारे।
नकटा पन्थ मरा यूं भाई, लाखों की जिस नाक कटाई।
वेद विरोधी सब मतवारे, पर धन हरण चतुर व्यापारे।

लगे भक्त मरने कोई, आते सहजानन्द।
संग लिवायें स्वर्ग को, मिट जायें दुख द्वंद।।

आते हैं वह मरती बारा, श्वेत अश्व पर हो असवारा।
इस मन्दिर में प्रतिदिन आते, अपना दरस दिखा कर जाते।
जब कोई मेला होवे भारी, मन्दिर भीतर रहें पुजारी।

पीछे एक दुकान लगाते, पृष्ठ भाग में छिद्र कराते।
जितने नरिवल लोग चढ़ाएं, सब दुकान में फैंके जाएं।
एक ही नरियल बारम्बारा, बिकता जाये सौ सौ बारा।
एहि विधी बेचें सकल पदारथ, इनको देना दान अकारथ।
जिस जाति के साधु आएं, वैसे ही उनको काम बताएं।
नाई काम करे नाई का, हलवाई पुन हलवाई का।
धोबी से कपड़े धुलवाएं, शिल्पी से मन्दिर बनबाएं।
बनिये से सौदा बिकवाते, शूद्रों से निज पग दबवाते।
निज शिष्यों पर टिकस लगाया, इससे पैसा बहुत कमाया।
लाखों की सम्पत्ति कर ली, सन्दूकों में दौलत भर ली।
गद्दी पर जो पुरुष विराजे, तनु पर वस्तर भूषण साजे।
करे गृहस्थी कोई विवाहा, आनन्द लूटें यह चित चाहा।
जहाँ होय गुरु की पधरावनि, वहाँ पर भेंट गहें मन भावनि।
जेसे लेते भेंट गुसाईं, यह भी लेते उनकी नाईं।
अपने को कहते सत्संगी, अपर मतों को कहें कुसंगी।
चाहे हो धर्मी विद्वाना, करते नहीं किसी का माना।
लखहिं न साधु तिय को वदना, तिय दरसन ते उपजे मदना।
करते बाहर यही प्रसिद्धि, अन्दर करते कारज सिद्धि।
कहीं कहीं कोई व्यभिचारी, पकड़ा गया संग कोऊ नारी।
बड़े बड़े जो हों श्रीमन्ता, उनका आय काल जब अन्ता।
गुप्त कूप में उनको डालें, फिर नहीं उनको कभी निकालें।
उसे फेंक कर करें प्रसिद्धि, सतगुरु जी की देखों सिद्धि।
अमुक भगत के भाग नियारे, देह सहित बेकुण्ठ सिधारे।
स्वयं गुरु सहजानन्द आये, ले गये अपने संग लिवाये।
बहुत बिनन्ती हमने कीनी, राम दुहाई हमने दीनी।
सतगुरु इन को मत ले जाओ, थोड़ा समय और ठहराओ।
बहुत भलाई इनके रहते, अश्रु बहाये कहते कहते।
पर गुरु जी ने एक न माना, बोले आय गया परवाना।

यहाँ न राखें एक मुहूरत, वहाँ पर इस की बहुत जरूरत।

इतने में क्या देखते, आया एक विमान।
दोनों उस में चढ़ गए, नभ में लई उड़ान।।

करते गये पुहूप की वर्षा, उसे देख मन सब का हर्षा
रोग असाध्य जब पाए, अरु जीवन की आस गवाए।
तब वह कहे सुनो भई साधो, रात मिले मोहि राधा माधो।
मैं कल रात बैकुण्ठ पधारूं, यह नश्वर देही तज डारूं।
जो वह साधु मरे न राती, उसको मण्डलि स्वयं उठाती।
गुप्त कूप में उसे गिरावे, इस प्रकार सुनने में आवे।
गये बैकुण्ठ करहिं परसिद्धि, साधु की दिखलाते सिद्धि।

गोकुलिये भी जब मरें, करते शिष्य प्रचार।
गुरु गोसाईं कर गये, निज लीला विस्तार।

गोकुलिया गोसाईं सारे, नारायण स्वामी मतवारे।
दोनों का गुरु मन्त्र समाना, ताँते इन में भेद न माना।
श्रीकृष्णः शरणं मम्।

अर्थ करहिं इस मन्तर केरा, माधव कृष्ण शरण है मेरा।
सिरी कृष्ण मेरे शरणागत, अर्थ मन्त्र के अवरहु आगत।
विद्या हीन पन्थ यह सारे, अंट संट पद रचने हारे।
विद्या के यह नियम न जानें, ताँते वाक्य रचे मन माने।

प्रश्न – माध्व पन्थ तो सत्य है, इस के शुद्ध विचार।
शुद्ध रखें भोजन वसन, शुद्ध अहार विहार।।

उत्तर– माध्व पन्थ नहीं इनसे न्यारा, सब के एक समान विचारा।
यह भी चक्रांकित मत शाखा, चर्म जलाय चिन्ह कर राखा।

एक बार रामानुजी, छापा चिन्ह लगांय।
माध्व पंथ के लोग सब, वर्ष वर्ष छपवांय।।

साधु चक्रांकित मत वाले, रेखहिं पीली रेख कपालें।
माध्व मती की काली रेखा, दोनों में यह अन्तर देखा।
था कोई पण्डित माध्व बेचारा, काली रेख तिलक जिस धारा।
इक महाराजा उसको बोले, क्यों यह पीस लगाए कोले।
तिलक चँदोआ रेखा काली, यह कैसी है छवि निराली।

पंडित — सिरी कृष्ण काले रंग राते, तांते काला तिलक लगाते।
इससे हम बैकुण्ठ पधारें, जग बन्धन के दूख निवारें।

महाराजा — तिलक मात्र से स्वर्ग पधारो, तो सगरा मुख करलो कारो।
फिर उससे भी ऊपर जाओ, उससे बढ़ कर के सुख पाओ।
रहा कृष्ण का सब तनु काला, तुमने बिन्दु लगाई कपाला।
स्याही पोतो सकल सरीरे, कृष्ण बनोगे धीरे धीरे।

प्रश्न — लिंगंकित कैसे रहे, करते लिंग निशान।
शंकर की पूजा करें, सेवहिं मढ़ी मसान।

चक्रांकित का मत है जैसे, लिंगांकित भी जानो वैसे।
दोनों अपना माँस जलावें, निज निज मत के चिन्ह छपावें।
चक्र चिन्ह चक्रांकित केरा, लिंग चिन्ह लिंगांकित हेरा।

सोने अथवा रजत से, मढ़ कर लिंग पाषान।
गल में लटकाये फिरें, लिंगांकित भगवान।

जब जब जो कुछ पीयें खायें, प्रथम लिंग को भोग लगाएं।
इनका मन्तर शैव समाना, शैव शाख इन को भी माना।
अथ ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज के गुण दोष विवेचन।

प्रश्न — ब्रह्म समाज रु प्रार्थना, कैसे दोऊ समाज।
इन दोनों ने रख लिया, डूबत जाति जहाज़।।

उत्तर — थोड़ा लाभ करी बहु हानि, दोऊ समाज ने यह हौं जानी।
सब अंशों में भले न नेमा, कुछ कुछ रखते विद्या प्रेमा।

जो नहीं वेद शास्त्र को जानें, वे नहीं पूरण कुशल सयाने।
वेद शून्य नर की मति कांची, उसकी नहीं कल्पना सांची।
कछुक जाति के लाल बचाये, ईसाइयों के फँद मिटाये।
कछु कछु मूरति पूजा तोड़ी, रीति रिवाज बुरी कुछ छोड़ी।

देश भक्ति इन में नहीं, यही बड़ा इक दोष।
देश प्रेम सब से बड़ा, आर्य पुरुष का कोष।।

ईसाइयों के लिए आचारा, निज संस्कृति को नहीं निहारा।
खान पान आचार विचारा, भारत पन से किया किनारा।
व्याहादिक संस्कार भुलाए, भाव विदेशी बहु अपनाये।
निज भारत की निन्दा करते, पर विदेश परशंसा करते।
ऋषि मुनियों की करहिं बुराई, क्या जाने क्या लखहिं भलाई।
इनके सुनें कहीं विख्याना, करहिं ईसाइयों का सन्माना।
अंगरेजों की करें प्रशंसा, जाति द्रोही नर नृशंसा।
ऋषि मुनियों का लेत न नामा, ऐसे यह जन दूषित कामा।

कहते हैं इस जगत में, सर्व श्रेष्ठ अंगरेज।
भारत पर किरपा करी, दिये प्रभु ने भेज।।

कोऊ न इनसे बड़ विद्वाना, विद्या रत गुण शील निधाना।
जब से बनी सृष्टि यह भाई, ऐसी जाति न जग में आई।
हुआ न है नहीं होगा आगे, धन्य भाग भारत के जागे।
भारतीय थे मूर्ख पुराने, अंगरेजों ने किये सयाने।
वेदों का करते अपमाना, ऐसे मूरख निपट अयाना।
मूसा और मुहम्मद ईसा, इन को जानहिं सन्त मुनीसा।

नानक अरु चैतन्य को, मानहिं पुरुष महान।
मानहिं सन्त न और कोऊ, यह अज्ञान निधान।।

जिन पुरुषों के लीने नामा, उन्हीं मतों के यह शुभ कामा।

यह सब भारत मात सपूता, जननी बधक कुठार कपूता।
इसी देश में यह सब जनमें, तनिक न सोचें अपने मन में।
भारत भाग्य हाय त्तव खोटे, तोर अंक में लोट पलोटे।
बड़े हुए फल खा खा तेरे, दूध दही अरु अन्न घनेरे।
फिर भी तेरी जड़ को छेदें, पुत्र पिता का ह्रदय कुरेदें।
मात पिता दादा का मारग, तज कर भोंदू चले कुमारग।
धर्म विदेशी को अपनावें, इस पर यह विद्वान कहावें।
वेद शास्त्र संस्कृत के कोरे, सच छो तो अनपढ़ भोरे।

केवल अंगरेजी पढ़े नहीं संस्कृत का ज्ञान।
अपने को पण्डित गनहिं, क्या झूठा अभिमान।।

लगे चलाने पन्थ नवीना, वेद शास्त्र संस्कृत से हीना।
इन से कोऊ थिर लाभ न भाई, आर्य वर्त की होय बुराई।
केवल यह मत हानि कारक, भारतीय सद्भाव विदारक।
मुसलमान अंगरेज ईसाई, भंगी कम्मी और कसाई।
सब से मिल कर खाने लागे, तनिक न बुद्धि रखें अभागे।

जाति पाति अरु पीना खाना, भेद भाव यह चहें मिटाना।
इसमें मानहि देश सुधारा, पर उल्टे हो जायं बिगारा।

प्रश्न – जाति भेद प्रभु ने किया, अथवा नर ने आप।
जात पात यदि तोड़ दें, तो क्या होगा पाप।।

उत्तर – ईश्वर कृत इक भेद है, नर कृत दूसर जान।
वर्ण व्यवस्था विषय में, इस का किया बखान।।

मानुष पशु पंछी जल चारी, प्रभु कृत जाति न्यारी न्यारी।
पशुओं में गो घोड़ा हाथी, कभी न होते मिल कर साथी।
वृक्षों में वट पीपल न्यारे, न्यारे बगले कौए कारे।
मछली नक्र मकर जल जन्तु, इक दूजे से भिन्न परन्तु।
एहि विधि ब्राह्मण वैश्य राजन्या शूद्र पतित अरु अन्त्यज अन्या।

सब ईश्वर कृत भेद बनाए, इन जातिन को कौन मिटाए।
किन्तु मनुष्यों में विप्रादि, यही विषय है वाद विवादी।

ब्राह्मणादि जो वर्ण हैं, नर समाज के मांहि।
जाति सामान्य विशेष है, जाति साधारण नांहि।।

जेहि विधि हम पूरब लिख आये, चतुर्वर्ण गुण कर्म बनाए।
जैसा हो गुण कर्म स्वभावा, वही वर्ण गुरु से वह पावा।
अथवा राजा करे परीक्षा, गुण कर्मों की करे समीक्षा।
प्रभु ने कैसा किसे बनाया, क्या स्वभाव है इसने पाया।
करें परख नृप अरु विद्वाना, तभी वर्ण की हो पहिचाना।
एहि विधि भोजन भेद पछानो, नरकृत प्रभु कृत दोनों जानो।
जिमि पंचानन मांसाहारी, बन्दर खाता फल फुलवारी।
यह ईश्वर ने अन्तर डाला, सिंह कपि सों किया निराला।
देश काल वस्तु अनुसारा, भोजन भेद जनों में भारा।

प्र॰ कुंडलिया—कितनी उन्नति कर गये, यह यूरप के लोग।
होटल में मिल बैठ कर, सभी लगाते भोग।।
सभी लगाते भोग नहीं कोई नीचा ऊँचा,
उनके वश में भया आज, यह जगत समूँचा।
हैट कोट पतलून पहर कर करी समुन्नति,
यूरप के लोगों ने कीनी कितनी उन्नति।।

उ॰ कुंडलिया—मुसलमान करते नहीं खान पान परहेज।
वह नीचे क्यों गिर गये, उठते क्यों अंगरेज।
उठते क्यों अंगरेज भेद तुमने नहीं जाना,
उन्नति का नहीं हेतु जूंठ का पीना खाना।
बुद्धिमान अँगरेज ज्ञानप्रिय अरु विद्वाना,
लिया जगत को जीत पराजित मूसलमाना।।

यूरोपीन विद्या के प्यारे, दुर्गुण त्यागो नियम सुधारे।
कबहुं न करते बाल विवाहा, ब्रह्मचर्य का नियम सराहा।
शिक्षित करते कन्या बालक, रीति स्वयँवर के प्रतिपालक।
चतुर पठित सब उन के देशा, करें न दुर्जन वहाँ उपदेशा।
वहां न चले धूर्त की माया, वहां न जाये कोई भरमाया।
सभा मांहि मिल बैठ विचारें, सब मिल कर इक निश्चय धारें।

जो करना होता उन्हें, करते सोच विचार।
कोई दुष्ट कैसे करे, उन पर पुनः प्रहार।।

निज जाति की उन्नत्ति करते, देश भलाई के हित मरते।
तन मन धन सब करते अर्पण, करें जाति हित प्राण समर्पण।
आलस छोड़ करें पुरुषारथ, छिन न गवाएं व्यर्थ अकारथ।
दफतर भीतर बूट ले जाते, पर जूते घुसने नहीं पाते।
निज बूटों का करते आदर, पर पुरुषों का करहिं निरादर।
कुछ सौ वर्ष हुए यहां आए, अब लग भेस नहीं बदलाये।
तजा न अपना निज पहरावा, तजा न अपना देश स्वभावा।
उनकी नकल लगे तुम करने, पैन्ट बूट सिर टोपा धरने।
तांते वे हैं बुद्धिमाना, तुम निर्बुद्धि मूर्ख महाना।
यह गुण हैं उन्नति के कारण, तुम भी दुर्गुण करो निवारण।
वे स्वामी की आज्ञा पालें, कर्म करें आज्ञा नहीं टालें।
यूरुप का व्यापार बढ़ाएं, सारे मिल कर शक्ति लगाएं।

यूरप की कन्या करे, परदेसी से ब्याह।
खान पान उसका तजें, रखें न उसकी चाह।।

क्या यह नहीं है जाति भेदा, तुम नहीं समझे हा हा खेदा।
पर तुम इतने भोले भाले, तुम को चाहे कोई बहका ले।
तांते पहले सोच विचारो, पुन पाछे कोई बात सकारो।
पाछे नहीं पड़े पछताना, फूँक फूँक कर पावं उठाना।

बिना वेद नहीं पाय समीक्षा, बिना शास्त्र नहीं सत्य परीक्षा।
वेद बिना नहीं भारत उन्नति, वेद बिना नहीं जाति समुन्नति।
जिस भारत को व्याधि लागी, उसके तुम नाहीं अनुरागी।
उस की अगद न पास तुम्हारे, भारतीय आचार विसारे।
किस को है परवाह तिहारी, रे मतिमन्द विदेश भिखारी।
भारत तुम को नहीं अपनाता, भटक भटक क्यों धक्के खाता।
अब भी जो तू वेद सकारे, निज संस्कृति की ओर निहारे।
कर सकता है बहुत भलाई, ठकुर सुहाती छोड़ पराई।

तुम कहते हो सत्य का, प्रभु से भया प्रकाश।
तो क्यों ऋषि मुनि वेद पर, रखते नहीं विश्वास।।

पर तुमने तो वेद न देखे, तुम जानो अंगरेजी लेखे।
नाहीं वेद पठन अभिलाषा, वेद ज्ञान की किस विध आशा।

उपादान कारण बिना, मानहु जग निर्मान।
यथा ईसाई मुसलमां; मानें बना जहान।।

जीवेश्वर की व्याख्या देखें, विषय जगत की उत्पत्ति पेखें।
वहाँ पर इसका उत्तर दीना, इसका वहाँ विवेचन कीना।
बिन कारण के कार्य असम्भव, बनी न बिगड़े वस्तु न संभव।
करहु प्रार्थना अरु पछतावा, इससे मानहु पाप नशावा।
बड़ा दोष यह एक तुम्हारा, इस विधि गनहु पाप निस्तारा।
इसी बात ने पाप फैलाए, यही भावना पाप कराए।
तीरथ यात्रा पाप नशाए, यथा पौराणिक पोप बताए।

जैसी कहते तीर्थ कर, मन्त्रा जपहु नवकार।
इस से छूटें पाप सब, मानुष जन्म सुधार।।

तुम भी तो नहीं भ्रान्ति विहीना, मनुष जन्म तुमने भी लीना।
कैसे वचन तुम्हारे माने, तुम को कैसे सत्य प्रमानें

सत केवल निर्भ्रान्त तुम्हारे, क्या तुम हो कोई मानुष न्यारे।
विष संपृक्त अनाज समाना, ग्रन्थ तुम्हारे नहीं प्रमाना।
चौबे छब्बे बनने आये, भये दुब्बे दो और गंवाये।
सब नर अज्ञा तुम भी अज्ञा, केवल पारब्रह्म सर्वज्ञा।
उसी प्रभु की चहो सहाया, जिसने यह ब्रह्मण्ड रचाया।
ईश्वर ने हैं वेद रचाये, सत्य ज्ञान के स्रोत बहाये।
उन्हें सकारो निश्शंका, क्या संकोच झिझक क्यों शंका।
त्यागो अपने मन की ग्लानि, क्यों करते सृष्टि की हानि।
यही दोष तुम में है भारा, जो नहीं साँचा वेद सकारा।
तुम देखों उन्नति के सपने, लोग न समझें तुम को अपने।
पर घर के तुम भये भिखारी, निजी सभ्यता नहीं सकारी।

तुम समझो इस बात से, कर लोगे उपकार।
उल्टे आर्यावर्त का, होवेगा अपकार।।

मात पिता निज बालक पालें, पालहिं पोसहिं उन्हें संभालें।
पर दुनिया के जितने बालक, कौन बने सबका प्रतिपालक।
जो ऐसा श्रम करने लागे, निज बालक तस नशहिं अभागे।
वैसे ही गति होय तुम्हारी, आर्य जाति जो दुखिया भारी।
करने लागे जगत सुधारा, आर्यवर्त सिर मार कुठारा।

बिन माने सत शास्त्र के, बिना वेद के ज्ञान।
कैसे निज सिद्धान्त को, तुम कर सको प्रमान।।
औषध की आवश्यकता, क्या राखे नीरोग।
औषध उस को चाहिए, जाको व्यापे रोग।।

रोगी विद्या हीन कहावे, पठित पुरुष नीरोग सदावे।
रोग अविद्या सब से भारा, जो चाहे इससे छुटकारा।
सत्य ज्ञान अरु सत उपदेसा, इससे नशहि अविद्या क्लेशा।
रोग ग्रस्त हैं ब्रह्म समाजी, करते हैं अंगरेज निवाजी।

इसी अविद्या ही के कारन, जूठ मीठ सब लगे सकारन।
डूब गई भारत की नौका, चौके ऊपर फेरा चौका।

ज्ञान तुम्हारा स्वार्थ हित, अथवा है निस्वार्थ।
अज्ञानी को लाभ हो, तब जाने परमार्थ।।

यदि तुम रखते शुद्ध आचारा, उनसे करते प्रेम व्यवहारा।
उन पर करते तनिक भलाई, फैल न सकती इती बुराई।
तुमने अपना भला विचारा, यह सारा अपराध तुम्हारा।
लाखों जन का किया विनाशा, तुम से क्या जाति को आशा।
जो तुम थे विद्वान् कहाते, ढूब रहों को तीर लगाते।

प्रश्न — हम नहीं कोई मानते, पुस्तक प्रभु प्रणीत।
ग्रन्थ रचे सब मनुष के, हो प्रत्यक्ष प्रतीत।

नहीं सर्वांश सत्य कोई पोथी, मानव की प्रज्ञा है थोथी।
ग्रहण करें हम सब के साँचा, साँच माँहि अपना मन राँचा।
बाईबल वेद पुरान कुराना, जो जो सत्य सो हमने माना।
झूठी बात सभी हम त्यागी, ब्रह्म समाज सत्य अनुरागी।

उत्तर— सभी लोग हैं भ्रान्त जब, तुम कैसे अभ्रान्त।
क्या अँगरेजी पढ़न से, बन बैठे सँभ्रान्त।।

पाप कटे ईसा विश्वासा, ईसाइयों की ऐसी आसा।
तोबाः करो पाप हट जाये, दो कानों पर हाथ लगाये।
मुसलमान तोबाः को माने, जग में लगे पाप फैलाने।
पाप करो फिर तोबा करिये, छूटें पाप भव सागर तरिये।
इसी भाव ने पाप बढ़ाया, पापी को निर्भीक बनाया।
ऐसे ही ब्राह्म समाजी मानें, अस विधि पाप निवृत्ति जानें।

जो वेदों को मानते, कभी न बढ़ते पाप।
भोग भोगने के बिना, कबहुं न हो निष्पाप।।

पापाचरण न करते डरते, जग सुधारते स्वयं सुधरते।
भोग बिना यदि पाप नशाई, तब तो ईश्वर हो अन्यायी।
जीवोन्नति तुम कहो असीवा, होय न जीव असीव ससीवा।
सीमित जीव के सीमित धर्मा, सीमित हैं सब वाके कर्मा।
कर्म करे जब जीव असीमित, तिसका फल किमि गहे असीमित।

प्रश्न— प्रभु की महिमा क्या कहें, जिस पर होय दयाल।
पाप पुण्य नहीं देखता, छिन में करे निहाल।।

उत्तर — जो प्रभु ऐसा करने लागे, तब तो भारी पातक पागे।
थोड़ा करे बहुत फल पावे, प्रभु का न्याय नष्ट हो जावे।
कर अपराध प्रार्थना करिये, नशहिं पाप भवसिन्धु तरिये।
इस से फैले जग में ग्लानि, धर्म कर्म की होवे हानि।
दिन दिन होवे पाप पसारा, तोबाः का जब गहे सहारा।

प्रश्न— बड़ा वेद से मानते, हम स्वाभाविक ज्ञान।
ईश्वर ने सब को दिया, उपकारी भगवान।।

हम नहीं ज्ञान नैमित्तिक मानें, स्वाभाविक को ऊँचा जानें।
जो न होय स्वाभाविक ज्ञाना, किस विधि पढ़े वेद अंजाना।
केहि विधि समझे अरु समझाये, केहि विधि सत्य तत्व को पाये।
ताँते उत्तम पन्थ हमारा, पारब्रह्म का हमें सहारा।

उत्तर— नहीं स्वाभाविक ज्ञान वह, जो देवे कोई और।
नैमित्तिक ही ज्ञान है, ज्ञान एक सिरमौर।।

घटे न बढ़े स्वाभाविक ज्ञाना, उसको 'सहज' कहें विद्वाना।
सहज ज्ञान नहीं उन्नति कारक, बहुत नहीं नर को उपकारक।
जंगल वासी सहज गियानी, केवल जाने रोटी पानी।
अधिक न उन्नति वे कर पाये, वन में रहते बर्स गँवाये।
बालक थे जब हम तुम सारे, निपट अज्ञ थे जग व्यौहारे।

क्या करना अरु क्या नहीं करना, कैसे जीना कैसा मरना।
कुछ भी नहीं था हम को ज्ञाना, थे हम केवल पशु समाना।
नैमित्तिक उन्नति का कारण, यही तिमिर का करे निवारण।
पढ़े लिखे तब बुद्धि आई, समझे आज भलाई बुराई।
पूरब जन्म न तुमने माना, पुनर्जन्म भी नहीं परमाना।
मुसलमान के यही विचारा, यही ईसाइयों ने निरधारा।
तुम पर उनका हुआ प्रभावा, उन ही से लीने भावा।
नित्य जीव नित कर्म प्रवाहा, कर्म बिना नहीं हो निर्वाहा।

कर्मवान अरु कर्म का, रहता नित सम्बन्ध।
कोई शक्ति ऐसी नहीं, काटे इन का बन्ध।।

रहा बैठ क्या जीव अकर्मा, क्यों कर तजा स्वाभाविक धर्मा।
रहा निकम्मा अथवा ईश्वर, संचालक जग का जगदीश्वर।
पूर्व रु अपर जन्म बिन माने, कितने दोष आंय नहीं जाने।
कृत हानि अकृत अभ्यागम, नैर्घृण्य वैषम्य समागम।
यह सब दोष प्रभु पर लागें, कौन पुनः प्रभु सों अनुरागें।
को कृत कर्मों के फल भोगे, यदि तुम फेर जन्म नहीं लोगे।
जिसको जो दुःख सुख पहुँचावे, उसका फल बिन देह न पावे।
पुण्य पाप पहले नहीं कीने, पुन क्यों प्रभु ने सुख दुख दीने।

पूर्व जन्म कृत कर्म के, पाप पुण्य अनुसार।
फल नहीं देते जो प्रभु, तो पापी करतार।

बड़ा दोष इक और तुम्हारा, इस पर कीजे तनिक विचारा।
केवल देव प्रभु तुम मानो, अन्य देव को देव न जानो।
जितने जग में दिव्य पदारथ, वे ही हैं सब देव यथारथ।
देव सभी जो हैं विद्वाना, जिनको होवे आतम ज्ञाना।
इन सब को भी कहिये देवा, महादेव प्रभु देवन देवा।
अग्निहोत्र आदिक शुभ कर्मा, यह सब परमारथ के धर्मा
इन को तुम कर्त्तव्य न जानो, महा अनिष्ट किया पहचानो।

हवन यज्ञ हैं अति उपकारी, इनसे मिटती सकल बिमारी।

ऋषि मुनियों को छोड़ कर, झुके विदेशन ओर।
ईसा ईसा कर रहे, दोष तुम्हारा घोर।।

विद्याएं है जग में जेतीं, वेदों से हैं निकसी तेतीं।
वेदहि विद्याओं को भूला, ब्रह्म समाजी क्यों तूँ भूला।
वेद बिना कोऊ ज्ञान असम्भव, अपने आप न विद्या सम्भव।
जग की सब विद्याएं कारज, सब का गुरु है वेद अचारज।
विद्या चिन्ह जनेऊ त्यागा, क्या यह भार लगे इक तागा।
जेहि विधि मुसलिम ओर ईसाई, बन बैठा तू तेहि विधि भाई।
कोट पैण्ट तो लगे न भारा, तमगा बांधे तन को प्यारा।
त्यागा यज्ञ केर उपवीता, तागे से भागे भयभीता।

ब्रह्मा से चल आज तक, ऋषि मुनि भये महान।
उन को तज करने लगा, यूरुप के कल्यान।।

जड़ अरु चेतन जब मिल जाएं, तभी जीव उत्पत्ति पाएँ।
बीजरु अंकुर जब मिल जाते, बड़े बड़े शाखी उपजाते।
उत्पत्ति पूरव जीव न मानो, उत्पन्न का पुन नाश न जानो।
यह सब पूर्व रु अपर विरोधी, बोध न तुझ को रे दुर्बोधी।
उत्पत्ति पूर्वे यदि जग मांहि, जड़ चेतन दोनों ही नाहीं।
तो यह जीव कहां से आया, अरु संयोग किन्होंने पाया।
दोनों यदि सनातन मानो, तब तो ठीक बात तुम जानो।
पर तुम मानो केवल ईश्वर, आदि सृष्टि में इक जगदीश्वर।
नहीं था दूजा कोई वदारथ, तो तुमरा सिद्धान्त अकारथ

तांते यदि उन्नति चहो, चहो प्रभु का राज।
मिल कर आर्यसमाज से, ठीक करो सब साज।।

नहीं तो तुम से कछु नहीं सरि है, देश डूब मँझधारहिं मरि है।

हम अरु आप दोऊ मिल जाएं, दोनों मिल कर देश उठाएं।
इसी देश का बना सरीरा, इसका खाया अन्न समीरा।
इस माटी में कूदे खेले, यहाँ के सुन्दर बन अरु बेले।
इसकी उन्नति धर्म हमारा, यह भारत प्राणों से प्यारा।
तांते जेहि विधि आर्यसमाजा, लड़े मरे भारत के काजा।
यदि तुम इसके बनो सहायक, आर्य समाज लड़े बन नायक।
काम अकेले का नहीं भाई, सफल काम हो जन समुदाई।

प्रश्न – सबका खंडन तुम करो, उचित नहीं यह रीत।
सगरे अच्छे धर्म हैं सब से करिये प्रीत।।

जो तुम करते सब का खण्डन, अरु निज मत का करते मण्डन।
क्या विशेष तुम हो बतलाते, जो तुम निज समाज में पाते।
क्या नहीं कोई तुल्य तुम्हारे, तुम ही सांचे यहां पधारे।
तुव समान कोई हुआ न होगा, यह अभिमान तजहु बड़ रोगा।
इक से एक बड़ा यहां भाई, अति विशाल प्रभु की प्रभुताई।

उत्तर – अच्छा यह बतलाइये, धर्म सभी का एक।
अथवा इस सँसार में, होते धर्म अनेक।।

जो तुम मानहु धर्म अनेका, तो पुन इस पर करहु विवेका।
होंय परस्पर वे अविरोधी, आपस में वा लड़ें विरोधी।
जो तुम कहौ विरोधी सारे, इक दूसर से लड़ने हारे।
तब तो होगा एकहि धर्मा, शेष नाम के धर्म अधर्मा।
जो अविरूद्ध इन्हें तुम कहते, पुन यह सब क्यों लड़ते रहते।
धर्म न चाहिये पुनः अनेका, यदि मन्तव्य सबहुं को एकां
तांते एकहि धर्म बखाना, धर्म नहीं हो सकते नाना।
यही बात हम कहें विशेषा, इस में नहीं झूठ को लेशा।

सब धर्मों के नरों को, नृप यदि कोई बुलाय।
सहस धर्म से कम नहीं, प्रतिनिधि उनके पाय।।

चारो जैनी और कुरानी, खिष्ट किश्ननी और पुरानी।
सभी धर्म चारहुं में आते, नाम मात्र से अलग कहाते।
कोई राजा बन कर जिज्ञासु, मन से जो हो धर्म पिपासु।
वामी से पूछे जा पहले, जो माने निज नियम सुनहले।
अब लग मैंने गुरु न धारा, तांते तुमरे पास पधारा।
कौन धर्म है सब से उत्तम, वही धर्म मैं गहूं नरुत्तम।

वामी — सब से उत्तम धर्म हमारा, मिथ्या जानो शेष हजारा।
मर कर सभी नरक मँह जाएं, केवल कौल स्वर्ग को पाएं।

"कौलात् पर तरं नहि"

पर कौल से नहीं कोई धर्मा, शेष पन्थ सब निपट अधर्मा।
वाम मार्ग देवी को माने, मद्य माँस नित पीने खाने।
सेवन करते पंच मकारा, जिससे मिले मुक्ति का द्वारा।
चौंसठ तन्त्र शास्त्र हमारे, वाम मार्ग सृष्टि को तारे।
जो तू मुक्ति चहे अकेला, बन जा तुर्त हमारा चेला।

जिज्ञासु— पहले अन्य महात्मा, जन से करहुँ विचार।
जिस को सर्वोत्तम लखहुँ, उसे गुरु लूँ धार।।

वामी — क्यों चक्कर में पड़ता राजन, कहीं पूर्ण हो तेरा काज न।
वे तुम को निज जाल फँसायें, मिथ्या बातों से बहकायें।
केवल पकड़ो शरण हमारी, वाम पन्थ की लीला न्यारी।
भोग मोक्ष दोनों हम मांही, अन्य किसी मारग में नाहीं।
शैव पास राजा पुन आया, वाको अपना भाव बताया।
उत्तर वही शैव ने दीना, उत्तम शैव शेष सब हीना।
केवल इतना कहा विशेषा, जो तू चाहे मिटें कलेशा।
शिव रुद्राक्ष रु भस्म रमाओ, लिंग दरस कर मुक्ति पाओ।
इसके बिना नहीं छुटकारा, शैव पन्थ मुक्ति का द्वारा।
फेर नवीन वेदान्ती, निकट गये महाराज।

प्रश्न किया जाकर वहीं, निज मुक्ति के काज।।

वेदान्ती – हम ही पारब्रह्म परमेश्वर, हम ही सकल जगत भुवनेश्वर।
यह सब मिथ्या है संसारा, पारब्रह्म का खेल पसारा।
चेतन शुद्ध हुआ यदि चाहे, निज को ब्रह्म न माने काहे।
जीव भाव को तजहु नरेशा, मुक्त होय छूटें सब क्लेशा।

कौन धर्म अच्छा कहूँ, नहीं कोऊ धर्म अधर्म।।
पुण्य पाप कुछ भी नहीं, नहीं सत्कर्म कुकर्म।।

जिज्ञासु – जो तुम पारब्रह्म नित मुक्ता, क्यों पुन नश्वर तनु से युक्ता।
पारब्रह्म गुण कर्म स्वभावा, क्यों तुम में कोऊ देख न पावा।

वेदान्ती – लखहि शरीर भ्रान्ति के कारण, ताँते भ्रम का करहु निवारण।
हम तो तनु को देख न पायें, सब कुछ ब्रह्म हि ब्रह्म लखाएं।

जिज्ञासु– तुम किसको हो देखते, को है देखन हार।
वेदान्ती –ब्रह्म॰ को देखता, यह वेदान्त को सार।

जिज्ञासु – क्या दो ब्रह्म अहैं संसारे, एक दृश्य इक देखन हारे।
वेदान्ती – द्रंष्टा दृश्य दोऊ है आपे, अपने अंदर आप वियापे।

जिज्ञासु – रे मूरख पागल मति अंधे, आप चढ़ें कोऊ अपने कंधे।
चला नृपति पुन जैनी पाँही, कही बात जो थी मनमाहीं।

वही बात उसने भी भाखी, केवल यह विशेषता राखी।
सभी धर्म जिन के बिन खोटे, डगमग बेपेंदी के लोटे।
कोऊ अनादि ईश्वर यहाँ नाँही, पड़ा जगत प्रभु के भ्रम माँही।
नहीं कोई जंग का रचने हारा, नित्य अनादि यह संसारा।
हम सत कल्पी सत्य विचारा, ग्रहण करो तुम पंथ हमारा।
पुन राजा को मिला इसाई, उसने अपनी करी बड़ाई।
वाम मार्ग से वचन बखाने, लगा गीत ईसा के गाने।

कुंडलियाँ– मनुष मात्र पापी सभी, सब हैं अवगुन हार।
निज बल से छूटें नहीं, ईसा तारण हार।।
ईसा तारण हार, कियो आतम बलिदाना।
वही प्रभु का पुत्र, सत्य का वह परवाना।
करे सिफारिश तरे वही चहे होय सुरापी।
अपने आप न छुटे मनुष मात्तर सब पापी।।

पुन नृप गया मौलवी पाहीं, वही प्रश्न कीने उस ताँही।
उसने कहा सुनहु महाराजा, तू इसलाम दीन मँह आजा।
ला शरीक अल्ला इक नंबर, दूजे नंबर पर पैगम्बर।
तीजी पोथी पाक कुराना, इन तीनों को हमने माना।
यह तीनों दुनियाँ के त्राता, इन के बिन नहीं मिले निजाता।
जो इसलाम मज़हब नहीं माने, उसे दोज़खी काफिर जानें।
वह पापी नरकी नालायक, वाज़िबुलकत्ल कत्ल के लायक।
वैष्णव के पुन गया नरेशा, उसको अपना कहा संदेशा।
वही कहीं उसने भी बातें, वही पर धन हरने की घातें।

तिलक छाप को देखकर, डरता है यमराज।
ताँते सब से उच्च है, वैष्णव मत महाराज।।

राजा ने मन माँहि विचारा, मच्छर तो इक जाय न मारा।
आय सिपाही पकर ले जाए, यह बैठा यमराज डराए।
जो जो मिले उसे मतवारे, अपने अपने डोरे डारे।
कोई कहता है सत्य कवीरा, डूबत नाव लगाए तीरा।
कहे कोई साँचा है नानक, नानक पंथ धर्म को बानक।
दादू वल्लभ सहज़ा नंदी, सब इक दूसर के प्रति द्वंदी।
सगरे अपना पंथ सराएं, शेष पंथ सब झूठ बताएं।
नृप निश्चय कीना मन माँही, साँचा गुरु कोउ इनमें नाहीं।

कुंडलिया– हैं नौ सौ निन्यानवें, इक के विरुध गवाह।

सब झूठे दम्भी गुरु, भटकत हैं गुमराह।।
भटकत हैं गुमराह, यथा रंडी के भड़वे।
अपने मधुर बताँय, पराए कहते कड़वे।।
दुकनदार ठग हैं उनके, व्यापार अपावन।
इक इक के वैरी पापी, नौ सौ निन्यावन।।

"तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवा भिगच्छेत्। समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्म निष्ठं।।१।। तस्मैस विद्वानुपसन्नाय सम्यक् प्रशान्त चित्ताय शमन्विताय। येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं प्रोवाच तान्तत्त्वतो ब्रह्म विद्याम् ।।२।।"

मुण्डक १ खं.२ में १२।१३

ताँते जो नर ज्ञान पिपासु, शुद्ध सत्य का जो जिज्ञासु।
ब्रह्म निष्ठ गुरु के ढिग जावे, हाथ जोड़ कर सीस निवावे।
जो गुंरु चतुर्वेद का ज्ञाता, वही सकल दुःखों से त्राता।
धूरत बैठे जाल बिछाये, इनसे अपना आप बचाए।
शान्त चित्त जिज्ञासु पाकर, गुरु को उचित सुमार्ग बताकर।
ब्रह्म ज्ञान का दे उपदेशा, उसके काटे सकल कलेशा।
ईश्वर के गुण कर्म स्वभाऊ, समझाए उसको गुरु राऊ।
सकल बताए उसको साधन, जिनसे मिटें शिष्य के बाधन।
धर्म अर्थ मुक्ति अरु कामा, जिनसे मिटें शिष्य के बाधन।
धर्म अर्थ मुक्ति अरु कामा, जिनसे प्राप्त करे अभिरामा।
ऐसे गुरु ढिग जाय नरेशा, बोला नाथ कटहु मम क्लेशा।
मैंने निरखे गुरु हजारा, सब का है मत न्यारा न्यारा।
इक का चेला यदि बन जाऊं, तो पुन सब का शत्रु कहाऊँ।
सब से बैर एक से प्रीति, केहि विधि सुख मिलि है एहि रीति।
सभी पंथ फिर फिर मैं हारा, मोकों सूझत नहीं किनारा।
शरण पड़ा मैं गुरो तुम्हारी, पार करो अब नाव हमारी।

आप्त विद्वान— सभी अविद्या जन्य हैं, वेदों के विपरीत।
ताँते सब को त्याग कर, चलिये पंथ सुनीत।।

सब मतवाले स्वारथ साधक, वेद विरोधी सत्पथ बाधक।
पामर नर इनमें फँस जायें, यह उनको बहकाएं खाएं।।
ठगे जाँय वे भोले भाले, उनको लूटें यह मतवाले।
मानुष जन्म गवाँय अकारथ, हाय दुष्ट पापी नर स्वारथ।।

सगरे मत जिस बात पर, सहमत हो वह साँच।
वही वेद मत ग्राह्य है, शेष पंथ सब काँच।।

यह यह प्रश्न करहु वहाँ जाकर, सबको एक ठाँव बिठला कर।
सब की सम्मति होवे एका, चाहे उनके मार्ग अनेका।
तब नृप ने सब मत बुलवाये, साज समाज सहित वह आये।
सब के बीच खड़े नर नाथा, अरु बोले वह उन्नत माथा।
सुनो सुनो सगरे मतवारो, पीछे बोलो प्रथम विचारो।
तुम सब धर्म सत्य को मानो, अथवा धर्म झूठ को जानो।
"सत्य धर्म है" बोले सारे, सत्य हि नर को पार उतारे।
मिथ्या वचन पाप है भारा, एक सत्य सिद्धान्त हमारा।
अनिक प्रश्न राजा ने कीने, सबने एकहि उत्तर दीने।
ब्रह्मचर्य्य अरु विद्याभ्यासा, पुरुषारथ सत्संगतिबासा।
पूरण यौवन माँहि विवाहा, सदाचार पूछत नरनाहा।
सब ने कहा यही शुभ कर्मा, इनसे उल्टे सभी कुकर्मा।
पुन नृप कहे सुनहु रे सन्तो, मठधारी अरु साधु महन्तो।
इन बातों पर सहमत सारे, पुन क्यों रचे पंथ पद न्यारे।
सगरे मिलकर धर्म प्रचारा, जिन सुधार कर जगत सुधारा।
शुद्ध सत्य पर कर विश्वासा, झूठ दंभ का करहू विनाशा।

हाथ जोड़ बोले सभी, सुनहु गरीब निवाज।
सत्य बात तुमसे कहें अब काहे की लाज।।

ऐसा करें यदि हम सारे, तज दें मारग न्यारे न्यारे।
कौन सुने तब बात हमारी, भूखा मरता सत्य पुजारी।।
छोड़ जाँयगे चाँटे चेले, मक्खी मारें बैठ अकेले।

भोजन का किमि चले गुजारा, भूखों मरिहै सब परिवारा।
यह आनन्दचैन सुख टूटें, भोग विलास हाथ से छूटें।
जाने हैं हम नहीं अंजाना, फिर भी राखें अलग ठिकाना।
रोटी खाइये शक्कर सेती, यह दुनियाँ मक्कर की खेती।
सीधे नर को कोई न देवें, तांते हम मक्कर से लेवें।
जो धूरत सो खाय पदारथ, सूधे जन का जन्म अकारथ।

राजा – दुष्ट कर्म निस दिन करहु, अरु पावहु आराम।
नृप क्यों दण्ड न देत हैं, देख तुम्हारे काम।।

मतवाले – नरपति भी चेले किये, किस विधि देवें दण्ड।
सब प्रबंध पक्के किये, टूटे नहीं पाखण्ड।।

राजा – रे पर संपति हरने वालो, घोर कुकर्मी मन के कालो।
प्रभु के सन्मुख क्या बोलोगे, पापों के पट जब खोलोगे।
महाँ घोर तब कष्ट उठाओ, तजहु कपट सन्मार्ग आओ।

मतवाले – जब होवे तब देख लें, अब तो करहिं आनन्द।
नरक सुरग किसने लखा, अब तो परमानन्द।।

जैसे बालक को फुसलाना, अरु उसके पैसे हथियाना।
महाँ पाप पापों में नायक, यह अपराध दण्ड के लायक।
एहि विधि शिशु सब भोले भाले, जन को धूर्त फँसाने वाले।
क्यों नहीं दण्ड नृपति से पायें, जो जन लूट लूट कर खायें।
अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मंत्रदः मनु० अ०२ ।५३
ज्ञान रहित नर होता बालक, दाता ज्ञान पिता अरु चालक।
बुद्धिमान तब फँसे न जाला, फँसता मूरख भोला भाला।
उनका जब तुम धन हर लेते, फेर नृपति क्यों दण्ड नहीं देते।

मतवाले – राजा परजा सभी फंसाये, फेर दण्ड कोई कैसे पाये।
जब कोई नरपति दैगो दण्डा, जब देखें अब फूटे भण्डा।
तब लेंगे कोई दूजा रस्ता, अब क्यो छोड़े सौदा सस्ता

जिज्ञासु — मुफ्त माल जो बैठे मारो, क्यों नहीं बाल पढ़ाय सुधारो।
इस से जग का हो कल्याना, तुम भी पढ़ लिख हो विद्वाना।

मतवाले— पहले त्यागें सुख सब अपने, परमारथ के देखें सपने।
आप पढ़ें पुन बाल पढ़ायें, घर घर शिक्षा देने जायें।
वृथा गवाएं क्षणिक जवानी, पड़े सुनाएं ज्ञान कहानी।
हमें लाभ क्या इसमें भाई, सहें विपत्ति मुफत पराई।
बिना परिश्रम सम्पति आवे, क्यों विद्या के पीछे धावे।

जिज्ञासु— क्या तुम कुछ नहीं सोचते, इस का दुष्परिणाम।
रोगी होकर मर मिटो, होते हो बदनाम।।

मतवाले—"टका धर्मष्टका कर्मटका हि परमं पद्म। यस्य गृहे टका नास्ति हा ! टका टकटकायते।।"
आना अंश कलाः प्रोक्ताः रुप्योऽसौ भगवान् स्वयं, अतस्तं सर्व इच्छन्ति रुप्यं हि गुणवत्तमम्।।
तू बालक क्या जाने दूनियाँ, सब पैसे की छुनियाँ मुनियाँ।

कुंडलिया— टका धर्म है जगत में, टका धर्म का सार।
टके बिना नहीं पुरुष का, चलता कोई व्यौहार।।
चलता कोई व्यौहार टका मुक्ति का दाता,
टके बिना नहीं मात पिता सुत भगिनी भ्राता।
जैसे कैसे टका कमाना, केवल जग में धर्मा,
टका ज्ञान अरु ध्यान, टका ही उत्तम कर्मा।।

दोहा — इक आना इक है कला, करे सकल कल्यान।
षोडश कला सम्पूर्ण है, रुप्यक ही भगवान।।

जिसके घर में टका न होता, वह मर जांये रोता रोता।
बिना टके नहीं खाना पीना, टके बिना बिरथा है जीना।

जिज्ञासु— ठीक कहा यह तुमने भाई, अपने मन की बात बताई।
यह जो तुमने जाल बिछाया, जिसमें सारा जगत फँसाया।
इस में तुमरा अपना स्वारथ, सृष्टि का नहीं कुछ परमारथ।
सृष्टि का करते विध्वंसा, करते पूरण मन की मंसा।

जेहि विधि सत उपदेश से, बढ़े लाभ अरु ज्ञान।
त्यों मिथ्या उपदेश से, जग की होवे हान।।

जो था तुम को धन का स्वारथ, पाप किया क्यों घोर अकारथ।
कर लेते कोई और विहारा, रोटी का चल जाय गुजारा।
कहीं नौकरी जाकर करते, पापी पेट जाय कहीं भरते।
निन्दा होती नहीं तुम्हारी, रे धूरत रे पेट पुजारी।

मतवाला – अधिक परिश्रम करना पड़ता, कौन एड़ियाँ पड़ा रगड़ता।
सौदा करते पड़ता घाटा, घर घर माँगत फिरते आटा।
यह व्यापार है सांचा मोती, इसमें कभी न हानि होती।
जो आवे सो लेना ही लेना, नहीं किसी भड़वे का देना।
देकर तुलसी दल चरणोदक, सगरी आयु खावें मोदक।
कंठी बाँधे मूँड मुँडाये, अपना चेला उसे बनाए।
बन जाता वह पशु समाना, चलें जिधर हम चहें चलाना।

जिज्ञासु – किस कारण कर देत हैं, इतना धन यह लोग।
क्या इन के बुद्धि नहीं, अथवा है कोई रोग।।

मतवाले – धर्म स्वर्ग और मुक्ति हित, देते हम को दान।
दान पुण्य से समझते, अपना यह कल्यान।।

जिज्ञासु – तुम तो स्वयं न जानहु मुक्ति, तत्स्वरूप मिलने की युक्ति।
आपहु डूब रहे मँझधारा, औरों को तुम चाहो तारा।
क्या पाएं यह नर अरु नारी, सेवा करके फेर तुम्हारी।

मतवाले – इस दुनिया में मिलता नाहीं, मिलता है उस दुनिया माँही।
जब मर कर परलोक सिधारें, वहाँ जाय सब लेखा तारें।

जिज्ञासु – मिल जाये वा नहीं मिल जाये, उस दुनिया की कौन बताये।
पर तुम को क्या मिले वहां पर, देह त्याग तुम जाओ जहाँ पर।
यहाँ नरक तुम निश्चय पाओ, घोर यन्त्रणा वहां उठाओ।

मतवाले — अपने भजन प्रताप से, होय स्वर्ग मँह बास।
नरक नहीं हमको मिले, हम हैं हरि के दास।।

जिज्ञासु — टका हेत सब भजन तुम्हारा, संग न जाये टका बेचारा।
सभी रहेगी धरी धराई, संग न जाएगी इक पाई।
तन भी यहीं भसम हो जावे, जिस के हित सब पाप कमावे।
जो तुम करते प्रभु की भक्ति, विषयों की तजते आसक्ति।
मलिन न होता जीव तुम्हारा, धिक धिक मानुष जन्म बिगारा।

मतवाले— क्या हम सभी अशुद्ध हैं; क्यों कर लीना जान।
अपने मन के भेद को; जानते हैं भगवान।।

कुंडलिया— महां पुरुषों के कर्म को; जाने नहीं सँसार।
बाहर लीला और है; मन का और व्यापार।।
मन का और व्यापार रखें गज दँत समाना।
खाने के कोई और बहिर कोई दिखलाना।।
हम भीतर से पावन बाहिर औरे धर्मा।
क्या जाने सँसार; महां पुरुषों के कर्मा।

जिज्ञासु — जो भीतर से होते पावन, वे नहीं होते बहिर अपावन।
तुम तो बाहर भीतर काले, तुम को प्रभु नरक में डाले।

मतवाले — गोरे काले कुछ सई; इस की नहीं परवाह।
शिष्य हमारे हैं भले; चलें धर्म की राह।।

जिज्ञासु — जैसे लम्पट तुम गुरु; त्यों चेले बदराह।
पाथर की नैया चढ़े; बीच समुद्र अथाह।।

मतवाले — एकहि मत जग में नहीं सम्भव, सभी एक हो जायं असम्भव।
जन जन के गुण कर्म स्वभावा, भिन्न भिन्न सृष्टि में पावा।

जिज्ञासु — लें सब शिक्षा बालापन में, एकहि भाव, बैठाए मन में।
सद्भाषण को ग्रहण करावें, झूठ पाप का त्याग सिखावें।

एकहि मत सब का हो जाये, भेद भाव पुन रह नहीं पावे।
धर्माधर्म रहें संसारे, दोनों टरहिं न कबहुँ टारे।
किन्तु रहेंगे बहुशः धर्मी, थोड़े से रह जायें अधर्मी।
इससे जग में हो सुख वृद्धि, सुख सम्पत की हो समृद्धि।

इक सी शिक्षा दें यदि, पण्डित अरू विद्वान।
इक मत हो पुन जगत में, तब होगा कल्यान।

मतवाले— कलि का पहरा आजकल, नहीं सतजुग की बात।
दिन के सुपने ले रहे, पड़ी अँधेरी रात।।

जिज्ञासु — कलियुग तो इक काल है, वह निष्क्रिय जड़ जान।
पाप पुण्य नहीं कर सके; इक वस्तु निष्प्रान।।

काल न होवे धर्म का साधक, काल नहीं कर्मों में बाधक।
तुम्हीं आप कलियुग की मूरत, पर धन हरने वाले धूरत।
पाप पुण्य नहीं समय स्वभावा, है सत्संग कुसंग प्रभावा।

इतना कह कर नृपति वह, गया आप्त के पास।
हाथ जोड़ कहने लगा, कर के दृढ़ विश्वास।।

तुमने नाथ किया उद्धारा, इन सब से पाया छुटकारा।
भेंट न होती यदि तुम्हारी, दुर्गति होती अवस हमारी।
इनके जाल बीच फँस जाता, मानुष जीव व्यर्थ गँवाता।
पाँखड का हौं करिहौं खण्डन, वेद धर्म का करिहौं मण्डन।

आप्त — मनुष मात्र का धर्म यह, कर सत्य उपदेश।
सन्यासी अरु विज्ञ मिल, बेगि बचावें देस।।

प्रश्न — जो नर ब्रह्मचर्य के धारक, अरु सन्यासी ज्ञान प्रचारक।
वे तो सगरे हैं निर्दोषा, अथवा हैं उनमें भी दोषा।

उत्तर — आश्रम तो सब ही भले, अति उत्तम गुणकार।
पर दुष्टों ने आज कल, यह भी दिये बिगार।।

केते पुरुष बने ब्रह्मचारी, सिर पर रखते जटा सँवारी।
झूँठ मूँठ करते सिद्धाई, पुरश्चरण जप जाल बिछाई।
अनपढ़ जन्म गँवाय अकारथ, ब्रह्मचर्य्य यह नहीं पदारथ।
वेदाध्ययन ब्रह्म को अर्था, वेद ज्ञान से बढ़े समर्था
बिना ब्रह्म कैसे ब्रह्मचारी, इस आश्रम की प्रथा बिगारी।
अज गल सों यह निपट निरर्थक, इन लोगों का कौन समर्थक।
इसी भान्ति के जो सन्यासी, चारहुँ धाम परसते कासी।
भ्रमते दण्ड कमण्डल धारे, भीख माँगते द्वारे द्वारे।
उन्नत करें न वैदिक मारग, व्यर्थ डोलते फिरें कुमारग।
बालापन में हो सन्यासी, भोंदू मूर्ख अविद्या रासी।
जल थल तीरथ मूरति दर्शन, दशों दिशा का करते परसन।
जान बूझ कर धारें मौना, करें निरर्थक आवा गौना।
खाते पीते निर्जन स्थाने, पड़े रहें यह लंबी ताने।

फँस कर ईर्षा द्वेष में, यह निंदक दिन रैन।
उदर पूर्ति अपनी करें, बोलें कड़वे बैन।।

दण्ड कमण्डल वस्त्र कषाया, धारण करके जग भरमाया।
कृत्य कृत्य अपने को जानें, सबसे उत्तम निज को मानें।
करत नहीं कोई सत्कर्मा, नहीं उपदेश करहि सत धरमा।
इनका व्यर्थ जगत में वासा, इन लोगों से कैसी आसा।
जो सन्यासी पर उपकारक, ज्ञान प्रदाता जगत सुधारक।
वे सन्यासी साधु साँचे, जिनके मन परमारथ राँचे।

प्रश्न — **अच्छे गिरि पुरि भारती, और गोसाईं लोग।**
बहुत साधु जिनके यहाँ, खाते मोहन भोग।।

मंडलि बाँध जहाँ तहाँ भ्रमते, कुछ दिन रहे हुए पुन रमते।
मत अद्वैत सदा परचारें, पढ़े लिखे कुछ देश सुधारें।

उत्तर – गिरि पुरि आदिक नहीं सनातन, नये चले नहीं चले पुरातन।
मंडल भोजन हेतु बनाए, जहाँ देखा भोजन वहाँ धाये।
बहुत साधु रोटी के मारे, मंडलियों में मिलें बेचारे।
इनमें हैं बहुदम्भी चातर, भोजन भट्ट कर्म के कातर।
सब मिल एक महन्त बनावें, गद्दी ऊपर उसे बैठावें।
सूरज डूबे दिन के अन्ता, गद्दी पर जम जाँय महन्ता।
खड़े होंय सब साधु बम्मन, उसकी करते सब परकम्मन।
फूलों की वर्षा बर्सावें, श्लोक पढ़े अरु पुष्प चड़ावें।

"नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र पराशरं च। व्यासं शुकं गौडपादं महान्तम्"

साष्टांग दण्डौत कर, करते जय जय कार।
जो जन ऐसा नहीं करते, देते तुर्त निकार।।

यह है केवल दम्भ प्रदर्शन, दर्शक जन के लिये आकर्षन।
इसे देख मूरख फँस जाएं, उनका माल लूट यह खाएं।
केते हैं गृहस्थ मठधारी, सन्यासी अरु घर में नारी।
भोग विलासी सत्यानासी, अकर्मण्य मूरख सन्यासी।
समुल्लास पंचम को देखें, सन्यासी के कर्महुँ पेखे।
यह संन्यासी व्यर्थ कहावें, मूरखता में जन्म गँवावे।

अच्छी शिक्षा जो करें, उनका करें विरोध।
ऐसे मूर्ख रखोड़िये, अनपढ़ अति दुर्बोध।।

शैव पंथ के कुछ अभिमानी, अपने को मानें बहु ज्ञानी।
बहुधा तन पर भस्म चढ़ावें गल माला रुद्राक्ष सजावें।
शास्त्रार्थ करने जब लागें, शंकर के मत सों अनुरागें।
शंकर मत का करते मंडन, चक्रांकित का करते खंडन।
वेद विरोधी जितने मारग, दम्भ कपट से भरे कुमारग।
उन सबको खंडन नहीं करते, केवल चक्रांकित से लरते।
इनके मन में यही विचारा, खण्डन व्यर्थ असारा।

सन्यासी का क्या परयोजन, चैन उड़ाएं खाएं भोजन।
हम महातमा सबसे न्यारे, शास्त्रार्थ से रहें किनारे।

ऐसे ऐसे लोग सब हैं भूमि के भार।
भीख माँगते मर गए, किया न कुछ उपकार।।

तभी तो मुस्लिम जैन ईसाई, दिन दिन बढ़ते जाएं भाई।
इनका दिन दिन होय विनाशा, सब आशा सब भई दुराशा।
फिर भी इनके खुलें न नैना, गिरता जाय देस दिन रैना।
खुलें परन्तु कैसे नैना, जब लग तजें न निज सुख चैना।
जब लग करें न आतम शुद्धि, नहीं उपजे परमारथ बुद्धि।
मन में कुछ उत्साह न आवे, कैसे नयना खुलने पावे।
यह तो चाहें पीना खाना, जग में अपनी पैठ जमाना।
सबसे बड़ी यही अभिलाषा, इससे परे न कोई आशा।
जग की निन्दा से अति डरते, ताँते बात बहुत नहीं करते।

जब लग तीनों एषणा, रखती मन में वास।
तब लग है बहु रुपिया, नहीं साँचा सन्यास।।

लोक प्रतिष्ठा यदि मन माँही, तो वह नर सन्यासी नाँही।
धन की इच्छा नहीं तियागी, सन्यासी नहीं वह दुर्भागी।
पुत्र लालसा मन में पागे, पुत्र भाव चेलों में जागे।

मुख्य कर्म सन्यास का, करना अति उपकार।
वेद मार्ग उपदेश कर, तारहि सब संसार।।

निज अधिकृत जब काम न करते, वृथा नाम सन्यासी धरते।
यथा गृहस्थी पूरहिं स्वारथ, करते निज व्यौहार यथारथ।
रैन दिवस श्रम करें न हारें, अरु अपना संसार सँवारें।
उनसे अधिक करें संन्यासी, सत्य वेद विद्या को रासी।
परमारथ में समय लगावे, छिन नहीं अपना व्यर्थ गँवावे।
सब आश्रम तब ही हों उन्नत, भारत को समृद्ध समुन्नत।

अरे तुम्हारे सामने दिन दिन होवे हान।
लोग ईसाई हो रहे, बढ़ रहे मूसलमान।।

अपने घर को शीघ्र बचाओ, बिछड़ गये जो उन्हें मिलाओ।
कर सकते यदि करना चाहें, यदि खोले कर्तव्य निगाहें।
वर्तमान को प्रथम विचारें, तत्पश्चात भविष्य सुधारें।
एहि विधि करहु न मिलकर जब लौं, आर्यवर्त नहीं सुधरें तब लौं।
शेष देश भी सुधरें नाहीं, सब उन्नत तब उन्नति माहीं।
वेद शास्त्र उन्नति के कारण, ब्रह्मचर्य आदिक का धारण।
घर घर होवे सत उपदेशा, होय समुन्नत तब यह देशा।

बातें अनिक पाखण्ड की, होतीं सत्य प्रतीत।
सावधान इन से रहे, यही चतुर की रीत।।

साधु वेश में कितने धूरत, बने ठने सिद्धों की मूरत।
करते हैं वे निज परसिद्धि, हम को पुत्र दान की सिद्धि।
उनके ढिग बहु जावहिं नारीं, भोली दुःख में ग्रस्त विचारीं।
हाथ जोड़ मांगहि सन्ताना, बाबा सब को दें वरदाना।
जिस जिसके बेटा हो जाये, वह समझे बाबा से पाये।
जा पूछे कोई इनसे भाई, बाबा ने क्या सिद्धि दिखाई।
सूरी कुतिया जनती बच्चे, मुर्गी देती बच्चे कच्चे।
किस बाबा के ढिग वे जातीं, किस साधु की आशिष पातीं।
जो कोई आकर यह बड़ हाँके, शक्तिमान यमराज कहाँ के।
हम बालक को जीवित राखें, ऐसे वचन यदि कोऊ भाखें।
पुन वे धूर्त स्वयं क्यों मरते, क्यों मृत्यु की राह पकरते।
सुनहु सुनाऊँ इनकी माया, कैसा कैसा ढंग बनाया।
कैसे कैसे जाल बिछावें, जिन में बहुत चतुर फंस जावें।
धनसारी के ठग क्या करते, पर धन कैसी विधि से हरते।
पाँच सात मिल कर पाखण्डी, बन जाते हैं साधु दण्डी।

दूर दूर देशों में जावे, वहाँ पर अपना जाल बिछातें

उन में जो हो संड मुसंडा, कर में राखे मोटा डण्डा।
उस धूरत को सिद्ध बनावें, वा को वन में गुप्त बैठावें।

चले जाँय उस गाँव में, जहाँ रहते धनवान।
घूम घूम कर पूछते, बन कर के अँजान।।

कहो यहाँ कोई साधु आया, बड़ा सिद्ध हमने सुन पाया।
वाके मस्तक तेज विराजे, हेरत फिरें उसे तो राजे।
जो मांगे उससे वर पाये, हम भी उसे ढूँढते आये।
मन की बातें सब बतलाता, नहीं कुछ पीता नहीं कुछ खाता।
योगिराज अति वृद्ध पुराना, पर देखन में लगे जवाना।
हम तो तजकर निज गृह द्वारा, दर्शन हित छानी बहु छारा।
हमने सुना इधर वे आये, देखे हों तो कोई बतलाये।
तब वे कहते मूढ़ विचारे, नहीं वे हमरे गाँव पधारे।
जो वे सिद्ध तुम्हे मिल जाँय, कृपया हम को अवस दिखाए।
हम भी उनके दर्शन करि हैं, दर्सन कर भवसागर तरिहैं।
एहि विधि दिन भर करहिं प्रचारा, रात होय तो करहिं किनारा।
जंगल में मिल मौज उड़ावें, पीवें खावें नाचें गावें।
कछु दिन पाय वहीं मिल चेले, किसी धनी से मिलें अकेले।
उसको कहें सिद्ध जी आये, हमने उनके दर्शन पाये।
चलो चहो दिन दर्शन करना, यदि चाहो भवसागर तरना।

उस को वे ठग पूछते, जब वह हो तैय्यार।
क्या पूछोगे सिद्ध से, क्या है प्रश्न तुम्हार।

कोई कहता मोहे सुत की इच्छा, कोई नर माँगे धन की भिक्षा।
व्याधि से कोई छुटकारा, कोऊ शत्रु को चाहे मारा।
सब को साधक सँग ले जावें, नियत स्थान पर उन्हें बिठावें।
धन इच्छुक बैठाएं बाएं, रोगी को पधराएं दाएं।

सुत काम सन्मुख बैठारें, भिन्न भिन्न दिक से पैठारें।
विजय शत्रु पर जो जन चाहे, उस को लाते हो पछवाहे।
सन्मुख थित को आगे लाएं, यह साँकेतिक ढंग रचाएं।
नमस्कार जब करने लागे, सिद्ध समाधि से जनु जागे।

सिद्धाई की झपट से, कहे पुकार पुकार।
क्या मेरे हाँ पुत्र है, जो तोहि देऊँ निकार।

धन इच्छुक नर को बोले, क्या मैं बैठा थैली खोले।
धन की इच्छा से जो आया, युहीं अकारण मुझे सताया।
रोगी को कहता तुम जाओ, किसी वैद्य की औषध खाओ।
मैं कोई वैद्य नहीं हूँ भाई, मेरे पास न रखी दवाई।

रोगी रोगी के लिए, रक्खे अलग निशान।
साधक के सँकेत सब, सिद्ध करे पहिचान।।

पिता रुग्ण तो हिले अँगूठा, देखो कैसा ढंग अनूठा।
माता हित तर्जनी हिलावे, भ्रात होय मध्यमा चलावे।
पुन अनामिका नार निशानी, छिंगनी कन्या होत हिलानी।
उसको देख सिद्ध फिर गरजे, सुन सुन सबका जियरा लरजे।
तेरा पिता रुग्ण तब भ्राता, तब कन्या को रोग दबाता।
तेरी नारी रोगिन भाई, पर मेरे हां नहीं दवाई।
चकित होय रहते सब ठाड़े, जनु पत्थर की मूरति गाड़े।

जब साधक उन को कहे, देखा कैसे सिद्ध।
यूँ ही तो नहीं हो रहे, दुनिया में परसिद्ध।

मोहित हो तब चारों कहते, बीता समय बहुत दुख सहते।
दया तुम्हारी दर्शन पाये, बड़े भाग्य यह यहाँ पर आये।

साधक – बहुत दिवस यहाँ रहे न स्वामी, चले जांयगे यह मनगामी।
जो तुम आशिष चाहो लेना, श्रद्धा से कुछ भेंटा देना।

तन मन धन से कीजे सेवा, बिन सेवा नहीं मिलता मेवा।
सन्तों की गति अपरम्पारा, तारहिं जिसको चाहें तारा।
क्या जानें क्या दें वरदाना, यह हैं साक्षात भगवाना।
लौट गृहस्थी घर को आवें, चमत्कार लख अति हर्षावें।
चले जाँय साधक भी सारे, भेद न खुले इसी डर मारे।
धनिको के मित्रों पँह जाएं, उनके सन्मुख सिद्ध सराएं।
घेर घार उन को ले जाते, सब को वही दम्भ दिखलाते।
मचे धूम जब ग्राम मझारा, वहाँ पर होती भीड़ अपारा।
जंगल में लग जाता मेला, नर नारिन का ठेलमठेला।
तब वह सिद्ध मौन को धारे, मत कोई अपनी बात बिगारे।
सबको कहे सिद्ध तुम जाओ, मत इतना तुम हमें सताओ।
तब साधक कह उठे तुरंता, चले जाँयेगे सिद्ध महन्ता।
कोलाहाल नहीं उनको भावे, ताँते निकट न कोई आवे।

साधक को कोई धनी तब, लेता निकट बुलाय।
कहे कान में सिद्ध सों, हम को दियो मिलाय।।

जो वे बात बताँय हमारी, हम मानेगे कृपा तुम्हारी।
बात पूछ साधक ले जाये, उसे जाय उस ठौर बैठाये।
मनकी बातें सिद्ध सुनावे, सब जनता सुनकर हर्षावे।
होने लगती तब बहु चर्चा, बड़े सिद्ध की करते अर्चा।
पैसा रुपा मोहर मिठाई, कपड़ा बर्तन दूध मलाई।
श्रद्धा से सब भेंट चढ़ावें, फूलों की वर्षा बर्सावें।

जब लग होती मानता, तब लग लूटें , खाँय।
कुछ दिन तक वहाँ ठहर कर, पुन रमते हो जाँय।।

काहू को सूत का वर देते, उससे रुपये हजारों लेते।
चुटकी देते राख उठा कर, मूरख लेते सीस झुका कर।
पुत्र होयगा घर में तेरे, दीप जले मिट जाँय अँधेरे।

हमरी बात न होवे काँची, जो तब भक्ति होगी साँची।
इस प्रकार के ठग बहुतेरे, घूम रहे हैं चार चौफेरे।
जान सकें इनकी विद्वाना, फँस जाएं मूरख अंजाना।
ताँते करहु सुजन सत्संगा, दर्शन मारे धूर्त भुजंगा।
औरों को भी साथ बचाओं, सज्जन संगति का फल पाओ।
विद्या ही मानुष के नैना, बिन विद्या नर अंध अनयना।
बचपन से जो शिक्षा पाए, वही मानुष मानुष कहलाए।
वही ज्ञानी अरु वही विद्वान्ना, उसे सत्य की हो पहिचाना।
जो नर सदा कुसंगति रहते, महामूढ़ वे बहु दुख सहते।
जाकी है प्रवृत्ति ज्ञाने, वही ज्ञान की महिमा जाने।

"न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्षं स तस्यनिन्दां सततं करोति।"
यथा किराती करिकुम्भजाता मुक्ताः परित्यज्य विभर्ति गुंजाः।।वृ॰चा॰अ॰११ श्लोक १३।।

जो जाके नाहीं गुण जाने, उसको वह नित बुरा बखाने।
यथा भील गज मुक्ता त्यागे, गुंज माल पहरे अनुरागे।
एहि विधि जो पण्डित अरु ज्ञानी, सत्संगी धर्मी गुण खानी।
इन्द्रिय जित पुरुषारथि योगी, भोग विरत अरुविषय वियोगी।
वही प्राप्त करते फलचारा, उभयलोक सुख पाँय अपारा।

आर्य्यावर्त्ती जनों के मत वरणे संक्षेप।
पढ़े प्रेम से जो पुरुष छूटें मल विक्षेप।।

आर्य्यवर्त के नृपों का, वर्णहुं अब इतिहास।
सद्ग्रंथों से जो मिला, उसको करहुँ प्रकास।
राजवंश कुछ आरजवर्ती, अब वर्णहुँ हौं पीढ़ी परती।
महाराज श्रीमान युधिष्ठिर, प्रबल प्रतापी वीर युधिष्ठिर।
उनसे आदि अन्त यशपाला, चक्रवर्त्ति जो भये भुवाला।
वर्णहुँ उनका हौं इतिहासा, सगरे भये काल को ग्रासा।

मनु स्वायंभव आदि से, धर्म पुत्र पर्य्यन्त।
उनका वर्णन नहीं करुँ, जानहिं सब श्री मंत।।

उन सगरे नृपतिन की करनी, यहँ भारत आदिक में बरनी।
अरु यशपाल नृपति से अगले, वर्तमान ग्रन्थों में सगले।
मिलते हैं उनमें पढ़ लीजे, ध्यान मोर सूची पर दीजे।

पाक्षिक थीं द्वै पत्रिका, उनसे कर अनुवाद।
करहुँ भेंट में आप की, पढ़िये त्याग प्रमाद।।
इक थी मोहन चन्द्रिका, अरु दूजी हरिचन्द।
दोरु चन्द्रिका निकलती, रही वहाँ स्वच्छन्द।।
राज पूताना देश में है मेवाड़ प्रदेश।
नाथ द्वारा चित्तौड़ में है विख्यात विशेष।।

एहि विधि यदि आरज विद्वाना, करत रहें नित अनुसंधाना।
करते रहें ग्रंथ परगासा, अंध्कार का हो पुन नासा।
रहे पत्र के जो संपादक, उनके परम मित्र आल्हादक।
उनसे पुस्तक गही पुरानी, सत्रहसौ ब्यासी निर्मानी।

मार्गशीर्ष और शुक्ल पख, उन्निस उन्तालीस।
लिखा लेख द्वय पत्र में, किरण बीस उन्नीस।।

आर्यवर्त देशीय राजवंशावली

आदि युधिष्ठिर हाथ में, शासन की बगडोर।
दिल्ली में यशपाल तक, नृपति भये सिरमोर।।

इक सौ चौबीस पीढ़ी राजा, जिनका जग में तेज विराजा।
चार सहस इक सौ सत्तवन, आरज राज रहा सरसावन।
दिवस चतुर्दश अरु नवमासा, दिल्ली ने जग को अनुशासा।
नाम नृपों के बंस रु ब्योरा, सब कुछ लिखूँ ज्ञान जो मोरा।

सत्रह सौ सत्तर बरस, दस दिन ग्यारह मास।
त्रिंशत पीढ़ी धर्म सुत, कुल ने किया प्रकास।।

छप्पय– नृपति युधिष्ठिर जू के सुत इक भये परीक्षित।
उनके हाँ जनमेजय पुत्र भये मन इच्छित।।
उनके दूजे राम छत्र मल वाको जायो।
भये चित्ररथ दुष्ट शैल्य ताको उपजायो।।
उग्रसेन उनके हुआ धीर वीर बलवंत नर।
शूरसेन जन्म्यो पुनः चक्रवर्ति सिर छत्र धर।।

छप्पय– शूरसेन के पुत्र युवन पति थे महाराजा।
वाके पुन रणजीत भये इक बाँके राजा।
रक्षाक उनके भय करे जग जिनकी सेवा।
शुचिरथ उनके भये नाम जग जाको लेवा।
शूरसेन दूजे भये तेजवन्त परताप युत।
उनके पर्वत सेन थे जग में मेधावी सुत।।

छप्पय– सोनवीर पुन भीमदेव तिन नृहरि देवा।
पूर्ण मल्ल करदवी पुत्र जनु अमृत मेवा।।
तासु अलंभिक उदयपाल भे सुत परतापी।
उदय पाल के दुवन मल्ल अरिदल संतापी।।
उनके भये दमात पुन भीमपाल उनके भये।
चक्रवर्ति क्षेमक पुनः कौरव सिंहासन क्षये।।

कुंडलिया–क्षेमक के परधान ने दिया नृपति को मार।
नाम रह्यो जसु विश्रवा लीना तख़त सम्हार।।
लीना तख़त सम्हार रुं अपना वंश चलाया।
चौदह पीढ़ी वर्ष पंचशत राज्य कमाया।।
तीन महीने दिवस सतारह तक मनमाना।
मार नृपति को राज्य करे क्षेमक परधाना।।

छप्पय— वीर विश्रवा का सुत था दुर्जय पुरसेनी।
पुरसेनी का वीर सेन जनु स्वर्ग निसेनी।।
अनंकशायी पुन वाको हरिजित पूत सपूता।
अरिदल बल का दलन हेत मानहुँ यम दूता।।
वाको सुखपाताल था धँसी जड़े पाताल में।
वीर न वाके तुल्य कोऊ चहुँ दिग में चहुँ काल में।।

छप्पय— सुख पाताल का कद्रुक वाको सज्ज नरेश।
अमरचूड़ जनु चूड़ामणि देवन देवेशा।।
अमर चूड़ के अमीपाल दशरथ पुन जाये।
दशरथ के सुत वीरसाल दश दिग यश छाये।।
वाके सुत थे वीरसाल सेन दीप सों बुझ गये।
अपने ही परधान के क्रूर करों से जुझ गये।।

कुंडलिया—वीर महा परधान ने नरपति कर संहार।
स्वयं सिंहासन ले लिया यह लील्हा कर्तार।।
यह लील्हा कर्तार वंश सोलह जग व्यापे।
दिनकर सों परचंड चंड शत्रु दल कापे।।
चार शताबद पैंतालिस पुन वर्ष बखाना।
पाँच मास दिन तीन रजाये कुल परधाना।।

छप्पयं— वीरमहा के अजितसिंह थे सिंह समाना।
सर्वदत्त पुन भुवनपती तिस पुत्र बखाना।।
वीरसेन पुन महीपाल सुत भये भुवाला।
उनके पाछे राज गहा सुत शत्रुशाला।।
संधराज उनके भये तेजपाल पुन आ गये।
रवि मंडल सम धवल यश जिनके जग में छा गये।।

छप्पय– तेजपाल के माणिक चंद अवनी के चन्दा।
काम सेनि पुन वाके बेटे कीर्ति अमन्दां।।
उनके शत्रु मर्दन वाके जीवन लोका।
जिनके भये हरिराज प्रजा पालक गत शोका।।
थे हरिराजहु के सुवन वीरसेन दूजे बली।
उनके आदित केतु थे राज्य श्री तिन तज चली।।

कुंडलिया–आदित केतु मगध पति मारे गये निष्पाप।
धंधर नृप तिहिं मारकर बने दिलीपति आप।।
बने दिलीपति आप हृदय के ताप मिटाए।
थे प्रयाग के नरपति अब दिल्लीश कहाए।।
शक्ति दयी बहाय तोड़ शासन का सेतू।
मार छार कर दिये मगध पति आदित केतु।।

कुंडलिया–चौहत्तर अरु तीन सौ वर्ष एकादश मास।
छब्बिस दिन लौं राजकर भ्ये काल के ग्रास।।
भये काल के ग्रास राज्य अपना विस्तारा।
अरि मारा जन तारा दुष्टन पकर पछारा।।
अन्त भये सब छार डूब गये भाग्य नछत्तर।
नौ पीढ़ी कर राज वर्ष छय सौ चौहत्तर।।

छप्पय– भये महर्षी धंधर के सुत दुष्ट विदारक।
सनरच्ची सुत उनके जग के बल विस्तारक।।
सनरच्ची के महायुद्ध वाके दुर्नाथा।
तीन लोक के नृपति झुकाएं जिनको माथा।
उनके जीवन राज थे जीवहुँ को प्रति पालते।
रवि रश्मि थीं निकलतीं जिनके सुन्दर भालते।।

दोहा– रुद्र सेन उनके भये, पुन अरलिक रजपाल।
पुन लक्ष्मी बेमुख भयी, गये काल के गाल।।

कुंडलिया–महापाल सामन्त ने दिया नृपति को मार।
वर्ष चतुर्दश राजकर भयो अंत में छार।।
भयो अंत में छार उसे विक्रम ने मारा।
उज्जैनी के राजा जाने सब संसारा।।
वर्ष त्रानवें राज किया जग को प्रतिपाल।
लिया सिंहासन छीन मार नरपति महिपाला।।

छप्पय– पुनः विक्रमाजीत नृपति आहव में हारा।
समुद्र पाल योगी पैठन ने वाको मारा।।
वह उमराव रहा शाली वाहन राजा का।
सोलह पीढ़ी तलक रहा शासन था जाका।।
वर्ष बहत्तर तीन सौ चार मास शासन किया।
दिन सत्ताइस प्रजा को आनन्द नाना विधि दिया।।

छप्पय– समुद्र पाल के चन्द्रपाल चन्दा सों चमके।
तिनके पुत्र सहायपाल दिन कर सों दमके।।
देवपाल नरसिंह पाल वंशज अनुरागे।
सामपाल रघुपाल पुत्र तिनके पुन आगे।।
गुबिंद पाल तिनके भये महाबलि शर चाप धर।
तिन के अमृतपाल थे, मनहुँ सिंह थे खरनखर।।

छप्पय– ब्रलीवाल महिपाल भये तिनके हरिपाला।
सीसपाल पुन पुत्र भये अति धीर भुवाला।।
मदन पाल पुन कर्म पाल के विक्रम पाला।
मलुख चन्द्र ने मार उसे ढेरी कर डाला।।

मलुख चन्द बोहरा रहा राजा पच्छम देस का।
सिंहासन उस ने लिया, विक्रम पाल नरेस का।।

दोहा– मलुखचन्द्र के वंश का, दश पीढ़ी तक राज।
इन्द्रप्रस्थ में था रहा, बहुत सँवारे काज।।
वर्ष एक सौ कानवें, सोलह दिन इक मास।
जगत ढँढोरा पीट कर, भये अन्त में नास।।

सवैय्या– मलुखचन्द्र के पुत्र भये पुन वीर महाबलि विक्रम चँदा,
अमीनचन्द्र पुन रामचन्द हरिचन्द पुत्र उन के सुख कँदा।
उन के थे कल्यान चन्द पुन भीम चन्द हरते दुख दँदा,
लोव चन्द रु गोविन्द चन्द जिन काटयो दुःखरु दारिद फँदा।।

दोहा– पद्मावति रानी रही, गोविंद चँद की नार।
बिना पुत्र के मर गई, तज सँसार असार।।

कुँडलिया–दर्बारी मिल कर सभी, करने लगे विचार।
किसके सिर पर जब रखें, सिंहासन का भार।।
सिंहासन का भार कठिन है इसे उठाना,
दिग्मँडल में फैल रहा, शासन का ताना।
हरिप्रेम बैरागी ने बगडोर सम्हारी,
लगे चलाने राज्य सकल मिल कर दर्बारी।।

दोहा– पीढ़ी चार रु अर्धशत, बर्स रहा अधिकार।
इक्किस दिन ऊपर गनहु, किया राज्य विस्तार।।

छप्पय– हरिप्रेम के पुत्र भये अति वीर गोविंदा।
तीन लोक के राजा मस्तक केअर विंदा।।
उनके सुत गोपाल प्रेम आजानु सुबाहु।
जिनका नाम प्रसिद्ध वीर जग में महबाहु।।

महाबाहु बन में गये, राजपाट को त्याग कर।
मोह ममता ठुकरा दई, हरि चरण अनुराग कर।।

दोहा– महाबाहु शासन तजा, तजा राज अरु पाट।
शासन से उनका हुआ अन्तः करण उचाट।।
आधिसेन वंगेश ने, पाया यह सँदेश।
दिल्ली की गद्दी गही, त्यागा अपना देश।।
ग्यावन अरु शत वर्ष पुन, द्वै दिन ग्यारह मास।
बारह पीढ़ी राज कर, भयो वँश यह नास।।

सवैय्या– आधिसेन के सेन बिलावल, केशवसेन रु माधव सेना,
सेन मयूर रु भीमसेन कल्यान सेन था अति बल सेना।
वाके सुत भये हरिसेन पुन क्षेम सेन नारायण सेना।
लक्ष्मी सेन दमोदर सेन, सुसेनन की चतुरंगिणि सेना।।

कुंडलिया–दामोदर से दुखी था, दीपसिंह उमराव।
सँग मिलाई सेन उस, उन्नत किया प्रभाव।।
उन्नत किया प्रभाव नृपति से करी लड़ाई।
काट नृपति का गला दीपसिंह गद्दी पाई।
नृप सेना दल दई दीपसिंह वीर वृकोदर,
चक्रवर्ति नृप बना दीपसिंह मार दामोदर।।

दोहा– सप्तोत्तर शत वर्ष दिन, बारह और छः मास।
छः पीढ़ी तक राज्य कर, अन्तहु भये उदास।।

छप्पय– दीपसिंह के राजसिंह भये सिंह समाना।
रणसिंह बांके पुत्र कुशल कर गहें कृपाना।।
वाके नरसिंह भये हरीसिंह वाके बेटा।
अरि दल फारे मार मार जिमि सिंह चपेटा।।

जीवन सिंह वाके भये उत्तर दिग लड़ने गये।
पृथ्वी राज चौहान पुन पाछे दिल्ली पर छाये।।

दोहा– जीवन सिंह को मारकर, पृथ्वीराज चौहान।
दिल्ली के राजा भये, नभ में उड़े निशान।।

कुंडलिया–वर्ष छियासी बीस दिन अरु पीढ़ी पुन पांच।
राज्य किया इस वँश ने, लगी फूट की आंच।।
लगी फूट की आंच चढ़े मोहम्हमद गोरी।
आर्य राज पुन नष्ट भया, आंधी झकझोरी।।
हा भारत की फूट बड़ी तू सत्यानासी।
नाशे सभी चौहान राज कर वर्ष छियासी।।

छप्पय– पृथ्वी राज के अभयपाल पुन दुर्जन पाला।
उदयपाल सुत उन के अन्तिम थे यशपाला।।
चढ़ आयो गजनीश उन्होंने दिल्ली घेरी।
प्रबल शहाबुद्दीन करी रजधानी ढेरी।।
पांडव से ले आज तक राज्य श्री आती चली।
आपस में सँग्राम कर अपने ही पैरों दली।।

दोहा– दिल्ली पति गोरी भये, पकड़ लिये चौहान।
अँधा कर परयाग में, लीने उन के प्रान।।
सत सौ चौवन वर्ष दिन, सत्रह अरु इक मास।
त्रेपन पीढ़ी राज कर, गौरी वंश विनास।।
ग्रन्थों में मिलता बहुत, इन लोगों का हाल।
बने भवन गिरते अवस, क्रर कर्म अति काल।

आर्य महाकवि जयगोपाल विरचिते सत्यार्थप्रकाश कवितामृते एकादशः समुल्लासः समाप्तः।

अनुभूमिका

सोरठा

छूट गये जब वेद, सत्यासत्य प्रकाश कर।
कौन करे पुन भेद, विद्या दीपक बुझ गया।

छयी अविद्या की अँधियारी, छिपी वेद विद्या उजियारी।
जहाँ तहाँ फैला धुंधकारा, अँधकार का हुआ पसारा।
मत मतान्त उपजे तब नाना, जिमि वर्षा ऋतु कीट प्रधाना।
जन्मे जैन रु उपजे बोधी,वामी आदिक वेद विरोधी।
रामायण महँ भारत माहीं, नामहु जैन बौध का नाहीं।
रामकृष्णकी अधिक कथाएँ, जैन ग्रंथ में पाई जाएँ।
ताँते जैनी नहीं पुराने, जिस प्रकार यह जैनी जाने।
जो यह होता पंथ पुरातन, वर्णन करते ग्रंथ सनातन।
जो कोई इस पर तर्क उठाए, जैन कथानक व्यास चुराए।
राम कृष्ण की कथा चुराई, पुन रामायण आदि बनाईं।
तो पहले यह उत्तर दीजे, पाछे तर्क चहे जो कीजे।
पढ़ें रामायण भारत सारा, उनमें क्यों नहीं नाम तुम्हारा।
उनको वर्णहि ग्रंथ तुम्हारे, ताँते तुम ही हो पछवारे।
पुत्र न वणहिं पितु को जन्मा, सुत नहीं था पितु उत्पत्ति छन मां।
पहले भये शैव अरु वामी, पाछे बौधी जैनी नामी।
समुल्लास द्वादश के मांही, मनघडंत लिक्खा कछु नाहीं।

जैन ग्रंथ में जो लिखा, वही लिया संग प्रीत।
बुरा न मानें जैन जन, यही सत्य की रीत।

सत्य झूठ के निर्णय कारण, करमें करी लेखनी धारण।
नहीं मोको कोई वैर विरोधा, ताँते करें न बिरथा क्रोधा।
सुनो सुनो हे बोधी जैनी, यह मम लेख झूठ की छैनी।

इसको पढ़ कर करे विचारा, झूठ साँच हो न्यारा न्यारा।
ज्ञान बढ़े अरु बढ़े भलाई, जिस कारण नर देही पाई।
जब लग एक बने नहीं वादी, दूजा बने नहीं प्रतिवादी।
प्रेम सहित नहीं करे विवादा, मन से तज कर वैर प्रमादा।
तब लग सत्य झूठ को ज्ञाना, हो नहीं सकता सत्य निदाना।
विद्वज्जन हैं काल विधायक, सत्य झूठ के हैं निर्णायक।
जब लग वे निर्णय नहीं करते, अनृत तज सतपथपग धरते।
तब लग अधंकार जग मांही, हाथ पसारा सूझत नाहीं।
अनपढ़ मूरख दुःख उठाते, भूले भटके राह न पाते।
विद्वज्जन हैं उत्तरदाई, जग में जिती बुराई भलाई।

सदा विजय हो सत्य की, होय झूठ का नाश।
एहि कारण मिल प्रेम से, कीजे सत्य प्रकास।

प्रेम सहित मिल करहु विवादा, मन में रखें न वैर विषादा।
लिख कर लेख सत्य प्रगटाएं, मनुष जन्म का लाभ उठाएं।
यही मुख्य मानुष को धर्मा, मिटे कुकर्म रहे शुभ धर्मा।
इसके बिन उन्नति नहीं होती, जाग न सकती सृष्टि सोती।

जैन बोध अतिरिक्त मत अतिशय लाभ उठाँय।
निज ग्रंथन को जैन जन, नहीं किसे दिखलाँय।

बहुत परिश्रम हमने कीना, कुछ सहाय मित्रों ने दीना।
मुंबापुरि की आर्यसमाजा, वहाँ के मंत्री कियो सुकाजा।
कृष्णदास जू सेवक लाला, दोनों मुझ पर भये दयाला।
अनिक ग्रंथ हैं उनसे पाये, जिनसे हमने लाभ उठाए।
काशी में पुन जैन प्रभाकर, मुंबई में प्रकरण रत्नाकर।
छपे ग्रंथ पढ़ने में आए, तब हम जान जैन मत पाए।
निज मत ग्रंथ न जो दिखलावें, केहि विधि वे विद्वान् कहावें।
जान पड़े यह इन बातों से, डरते प्रतिपक्षिन घातों से।

ग्रंथों में बहु भरे गपोड़े, नभ के महल दौड़ाए घोड़े।
भरा पड़ासब वादवितंडन, मत करदे कोऊ इनका खंडन।
अपने भगत उधर चल जायें, उनके ग्रंथ देखि यदि पाएं।
उन पर श्रद्धा करने लागें, उनमें मिले हमें पुन त्यागें।

बहुत लोग ऐसे यहां, अपने लखहिं न दोष।
पर छिद्रों को ढूढते, पर पर करते रोष।

पहले अपने दोष निकालें, अपना मुख निर्दोष बना लें।
पुन दूसर के देखें दोषा, तब उनको होवे सन्तोषा।

बौद्ध जैन के मतों पर, अब हौं करहुँ विचार।
समझ सोच इसको पढ़ें, करहिं सत्य निर्धार।

अथ द्वादश समुल्लासारम्भः

चारवाक बौद्ध जैनादिक नास्तिक मतों पर विचार

पक्का नास्तिक था कोई, पुरुष बृहस्पति नाम।
यज्ञादिक शुभ कर्म से, सदा चले था वाम।

वेद शास्त्र कोऊ ग्रन्थ न माने, प्रभु की सत्ता नहीं प्रमाने।
यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्योरगोचरः भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।
जो कुछ बना सो होय विनासा, सब प्राणी मृत्यु के ग्रासा।
जब लग जीव रहे तन माहीं, तब लग जीवन पुन कछु नाहीं।
सुख से जीयो जब लग जीयो, मौज करो अरु खावहु पीयो।
जो कोऊ देवे धर्म दुहाई, कहे लोक परलोक सहाई।
जिसने जग में धर्म बिगारा, पुनर्जन्म में हो दुखियारा।
चार वाक तब उत्तर देवें, मर कर नहीं जन्म पुन लेवें।
मर कर होय राख की ढेरी, को जनमें पुन अगली बेरी।
जिस तन में देही ने खाया, वह माटी में मिला नशाया।

फिर नहिं लौट जगत में आवे, क्यों भोले विरथा भरमावे।
जेहि केहि बिधि आनंद उठाओ, चलो नीति से सुःख बढ़ाओ
संपत्ति के भरलो भंडारा, मन माना भोगहु संसारा।
केवल एक मात्र यह लोका, इसके पीछे नहीं परलोका।

चतुर्भूत परिणाम से, निर्मित सकल सरीर।
इन चारहुं के योग से, चेतन प्राण समीर।

मरणानन्तर जीव न पहिये, ताँते जीव अलग नहीं कहिये।
हम मानहिं परतक्ख प्रमाना, नहीं प्रत्यक्ष जीव को माना।
नहीं प्रत्यक्ष जीव को माना, किसने जीव लखा किस जाना।
गौण प्रमाण सभी हैं बाकी, केवल सत्य नयन की झांकी।
सुन्दर नार आलिंगन कीजे, पुरुषारथ का फल पा लीजे।

उत्तर

भूमि आदिक भूत अचेतन, उपज न सकता इनमें चेतन।
मातु पिता संयोजन सृष्टि, है प्रत्यक्ष देखती दृष्टि।
वर्तमान जो मनुष्य आकारा, आदि सृष्टि से इसी प्रकारा।
नहीं रुप में आया अन्तर, यही रहा अरु रहे निरन्तर।
पहले पहल बने जो प्रानी, कौन रही तिन माता नानी।
नहीं कोई पिता पितामह जिनका, जन्म भया पुन कैसे तिनका।
ईश्वर ने उनको उपजाया, उसने रच दी सबकी काया।
यदि कोऊ कहता मूढ़ अचेतन, मद सम उपजे आतम चेतन।
पर जड़ को मद होता नाहीं, भय केवल चेतन के माहीं।

नष्ट पदारथ होत हैं, होता नहीं अभाव।
एहि विधि तिरुहित जीव हों, पर उनका नित भाव।

जब सदेह होवे जीवातम, तब प्रगटावे सत्ता आतम।
जब यह जीव देह को त्यागे, फिर यह देह कभी नहीं जागे।
रंग रूप खो देती सारा, जब यंह आतम करे किनारा।

लिखा बृहद आरण्यक माँही जीव बिना यह तनु कुछ नाहीं।
"नाहं मोहं ब्रवीमि अनुच्छति धर्मायमात्मेति।"

याज्ञवल्क्य कहते भये, सुन मैत्रेयी बात।
यह अविनाशी आत्मा, निराकार निर्गात।

नहीं मोह सों कहूं सुबैना, मोरे खुले ज्ञान के नैना।
अजर अमर आत्म अविनाशी, देह देह में है परकाशी।
जीव योग से चले शरीरा, झूला झुले प्राण समीरा।
जब यह जीव देह को त्यागे, तो तब हिले डुले नहीं भागे।
तुमको रहे न कुछ भी ज्ञाना, जब निकसे आत्म भगवाना।

कवित्त— जाके संयोग सेती तनुमे हो चेतना,
अचेतना हो देह माँही जाके वियोग से।
वही है जीव जनु पीव देह रानी का,
रम रहा देह भीतर कर्म के नियोग से।
पृथक शरीर से है देखे संसार को,
निज को नहीं देख सके ऐन्द्रिय प्रयोग से।
आँख जिमि देखती है सगरे पदार्थों को,
अपने को देख नहीं सके किसी योग से।

दो॰— द्रष्टा द्रष्टा ही रहे, दृश्य कभी नहीं होय।
ताँते द्रष्टा जीव को, देख सके न कोय।

नहीं आधार बिना आधेया, कारण बिन नाहीं कार्य विधेया।
अंगी के बिन नाहीं अंगा, कर्म न जैसे कर्तृ असंगा।
बिन कर्त्ता प्रत्यक्ष असंभव, हो नहीं सकते कर्म स्वयंभव।

सवैय्या— मान रहे पुरुषारथ का फल, सुन्दर नार समागमको।
आनन्द है छिनमात्तर का, पछताओ पुनः दुःख आगम को।
स्वर्ग की हान रु दुःख की खान में लाभ न त्याग दुरागम को।

मुक्ति विकासक मुक्ति विनाशक आग लगे तेरे आगम को।
जो कहें ऐसा यत्न कर, जिससे पूरे आस।
सुख की वृद्धि हो सदा, और दुःख का ह्रास।।

तब हो मुक्ति सुख की हानि, बनी रहे मन भीतर ग्लानि।
यह पुरुषारथ का फल नांही, दुख सुख भरे पड़े जिस माँही।

चारवाक

दुःख से युक्त आनन्द का, जो नर करते त्याग।
वे दुर्बुद्धि मूढ़ हैं, फूटे उनके भाग।।

यथा धान्य की इच्छा वाले, धान गहे भुस कूट निकाले।
त्यौं सृष्टि में बुद्धिमाना, दुख तज पाते सुख कल्याना।
लौकिक सुख तज स्वर्ग भिलाषा, मुर्ख करे निज जीवन नासा।
निश्चित छोड़ अनिश्चित धावे, वाकी रोटी कुत्ता खावे।
धूर्त कथित सब वैदिक कर्मा, स्वर्ग मोक्ष सब मिथ्या भरमा।
दम्भी खोटी राह लगाते, जप तप होम ज्ञान बतलाते।
कहते हैं परलोक सँवारों, लोक छोड़ परलोक विचारो।
नहीं परलोक किसी नेदेखा, व्यर्थ करें क्यों उसका लेखा।

"अग्नि होत्रं त्रयो वेदा स्त्रिदण्डं भस्म गुंठनम्। बुद्धि पौरुष हीनानां जीविकेति बृहस्पतिः"।।

कहे बृहस्पति धूर्त विचारक, चारवाक मत के प्रचारक।
अग्नि होत्र अरु भस्म लगाना, तीन वेद के मन्तर गाना।
तीन दंड सब व्यर्थ प्रपंचा, इन बातों ने जग को वंचा।
इनके रचने हारे धूरत, सब स्वारथ सिद्धी की सूरत।
बुद्धि शून्य पुरुषारथ हीना, रोटी का इक आश्रय कीना।
कुत्ता काटे काँटा लागे, यही नरक नरक नहीं आगे।
संसारी राजा ही ईश्वर, नहीं कोई दूजा जगदीश्वर।
देह छूटना मुक्ति कहावे, मर जावे बस मुक्ति पावे।
अवर नहीं कोई दूजी मुक्ति, वेदादिक की मिथ्या उक्ति।

उ०— विषयज सुख को सुख गनहु, उद्यम को फल मान।
विषयज दुख निवृत्ति को, मानहु तुम कल्यान।।

यही तुम्हारी मूरखताई, इससे बढ़कर कौन ढिठाई।
पवन शुद्ध हो यज्ञों द्वारा, जल निर्मल नीरुज संसारा।
मुक्ति धर्म अर्थ अरुकामा, चारहुं फल मिलते अभिरामा।
महिमा इसकी मूढ न जाने, लगे धूर्त जग को भरमाने।
नास्तिक भये वेद को निंदहिं, सुख के तरू की जड़को छिंदहिं।
भस्म त्रिखंडहि खंडन करते, इसमें अवस भाव शुभ धरते।
कंटक जन्य दुःख यदि नकी, महानर्क रोगादिक पर्का।
जो नरपति श्रीमन्त सुचारु, प्रजापाल बलवान सुकारु।
तो वह माननीय नरनाथा, समुचित उसे झुकाना माथा।
पर अन्यायी पापी राजा, भ्रष्टाचारी करे अकाजा।
उसको भी यदि ईश्वर माना, तब तो तुम हो मूर्ख प्रधाना।

मरना ही यदि मोक्ष हो, तो नर पशु समान।
कूकर गर्दभ मुक्त सब, निकसे तन से प्रान।।

चारवाक

"अग्नि रुष्णो जलं शीतम् शीतस्पर्शस्तथानिलः।
केनेदं चित्रितं तस्मात्स्वभावात्तस्य व्यवस्थितिः।।१।।
न स्वर्गो नापवर्गोवा नैवात्मा पारलौकिकः।
नैव वर्णाश्रमादीनां क्रियाश्च फलदायिकाः।।२।।
पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं ज्योतिष्टोमें गमिष्यति।
स्व पिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते।।३।।
मृतानामपि जन्तूनां श्राद्धं चेत्तृप्ति कारणम्।
गच्छतामिह जन्तूनां व्यर्थं पाथेयकल्पनम्।।४।।
स्वर्ग स्थिता यदा तृप्ति गच्छेयुस्तत्र दानतः।
प्रसादास्योपरिस्थानामत्र कस्मान्न दीयते।।५।।
यावज्जीवेत्सुखं जीवेहणा ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत।

भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।६।।
यदि गच्छेत–परं लोकं देहादेष विनिर्गतः।
कस्माद्भूयो न चायति बन्धु स्नेह समाकुलः।।७।।
ततश्च जीवनोपायो ब्राह्मणैर्विहितिस्त्विह।
मृतानां प्रेत कार्य्याणिन त्वन्यद्विघते क्वचित्।।८।।
त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्ड धूर्त निशाचराः।
जर्फरीतुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृतम्।।६।।
अश्वस्यात्रहि शिश्नन्तु पत्नी ग्राह्यं प्रकीर्तितम्।
भण्डै स्तद्वत परं चैव ग्राह्य जातं प्रकीर्तितम्।।१०।।
मांसानां खादनं तद्वन्निशाचर समीरितम्।।११।।

उ॰– आभाणक अरु चारवाक तृतीय बौद्ध पुन जैन।
मानहिं सृष्टि स्वभाव से, चारहुँ अन्ध अनैन।।

हैं स्वाभाविक जग उत्पत्ति, चारहुँ मत की यह प्रतिपत्ति।
स्वाभाविक सगरे गुण जेते, उन सों मिलहिं द्रव्य सब तेते।
उनसे बनते सकल पदारथ, यही सृष्टि का नियम यथारथ।
नहीं कोई अन्य जगत का कर्त्ता, विश्वम्भर प्रभु धर्त्ता हर्त्ता।
चारवाक ऐसा ही जानें, आतम अरु परलोक न मानें।

आतम अरु परलोक को, मानहिं बौद्ध रु जैन।
एहि विधि इनके ग्रन्थ में, भरे पड़े हैं बैन।।

शेष बात में सभी समाना, एकहि दृष्टि एकहि ध्याना।

नरक स्वर्ग कुछ भी नहीं, जीव नहीं परलोक।
नहीं वर्ण आश्रम नहीं, सुख लूटो गत शोक।।

कुं॰–मृत प्राणी को श्राद्ध का, यदि भोजन मिल जाय।
पुन यात्री परदेस हित, क्यों पाथेय बंधाय।।
क्यों पाथेय बँधाय, करें नित श्राद्ध रु तर्पण।

अन्न वस्त्र सब उसे यहां से करहु समर्पण।।
नहीं पहुँचे यदि यहाँ तजहु पुन यह मन मानी।
यह तो करहु विचार पाय कैसे मृत प्रानी।

यहाँ का दिया वहाँ यदि जावे, जीव स्वर्ग में मौज उड़ावे।
तो घर के तल बैठ पकाओ, पुन वह अन्न शिखर पहुंचाओ
तृप्त होय यदि ऊपर केरा, तो सत गनहिं श्राद्ध यह तेरा।
ताँते भाई जब लग जीयो, सुख से जीयो खाओ पीयो।
घृत पीओ चाहे लिहो उधारा, देने आवे कौन दुबारा।
जिसने खाया इस तन माहीं, मृत्यु बाद दोनों ही नांही।
किससे माँगे माँगन हारा, जन्म न होवे फेर दोबारा।

जीव जाय परलोक में, मृत्यु के पश्चात्।
झूठे जो ऐसा बकें, झूठी उनकी बात।।

क्यों आतम परलोक हुँ जावे, लौट न क्यों घर वापस आवें।
उनको रोवे सब परिवारा, क्यों नहीं लौटे मोह का मारा।
ब्राह्मण उदर पूर्ति कारण, एहि विधि करते जगत प्रतारण।
मृतक क्रिया करते दशगातर, यह भी उनका स्वारथ मात्तर
जो हैं वेद बनाने हारे, धूरत भाँड निशाचर सारे।

सो॰–धूरत लोगों के वचन, जर्फरी अरु तुर्फरी।
निपट निर्थक बालसम, बोलें बोली तोतरी।।

इन दुष्टों की देखो माया, क्या प्रपंच पाखंड बनाया।
घोटक लिंग गहे पुन नारी, चाहे वह मर जाय बेचारी।
निज पत्नी लाये यजमाना, उसके संग तुरंग जुटाना।
कन्याओं में ठट्ठा करना, इससे भला डूबकर मरना।
लिखा वेद में माँसाहारा, राक्षस इसका लिखने हारा।

उ॰– जब लग चेतन नहीं करे, द्रव्यों का निर्माण।

मिल नहीं सकते जड़ कभी, बिन चेतस बिन ज्ञान।।

इस विधि मिलें नियम अनुसारा, मर्यादा अंदर संसारा।
नहीं स्वाभाविक मिलना तिनका, अवस कोऊ निर्माता इनका
जो स्वाभाविक मिलने पाते, अनिक चन्द्र सूरज बन जाते।
दुख को नरक सुःख को स्वर्गा, मुक्ति को कहते अपवर्गा।
जो नहीं होता आतम भ्राता, दुख अरु सुःख कौन पुन पाता।
जिमि आतम अब दुख सुख पावे त्यों पावे जिस योनि जावे।
वर्णाश्रम कहते सच बोलो, न्याय तुला से सबको तोलो।
जग में सदा करो परमारथ, क्या यह भी हैं सभी अकारथ।
यह तो उत्तम बातें सारी, कवन पंथ जिस नहीं सकारी।

पशु मार कर होमना, लिखा शास्त्र में नाहि।
मृतक श्राद्ध भी नहीं लिखा, वेदादिक के माँहि।।

मन गढ़न्त स्वारथ की रचना, भागवत आदिक के यह बचना।
जो वस्तु है वह नहीं नाशहि, सदा रहे अरु सदा प्रकाशहि
आतम का नहीं होय अभावा, विद्यमान आतम को भावा।
देह जले ये जीव न जलता, अजर अमर आतम नहीं गलता
जीव जाय दूसर तनु माँही, कबहुँ नाश आतम का नांही।
ताँते जो ऋण ले कर खावें, खायें पीयें मौज उड़ावें।
ऋण को लेकर नहीं लौटाते, जन्म धार पुन अति दुख पाते।
इसमें तनिक न संशय भाई, देना पड़ता पाई पाई।

निकल देह से जीव पुन, स्थानान्तर मँह जाय।
भूल जाय संबंध सब, ताँते बहुर न आय।।

दूसरे तन को जाकर धारे, सगरे पूर्व संबधं विसारे।
कुछ भी वाको रहे न ज्ञाना, कौन मात पित दादा नाना।
मैं था कौन कहाँ से आया, पूरव जन्म कहाँ था पाया।
वह तो निज पर ज्ञान भुलावे, ताँते घर को लौट न आवे।

प्रेत कर्म दश गात रु तर्पण, ब्राह्मण के हित श्राद्ध समर्पण।
यह सब उनकी स्वारथ परता, शास्त्र न इसकी आज्ञा करता।
उदर पूर्ति का ढोंग बनाया, विप्र वर्ग की अपनी माया।
चारवाक आदिक मत जेते, वेद ज्ञान से सूने तेते।
क्या जानें वे वेद बेचारे, देख पढ़े न सुने विचारे।
यदि यह करते वेद अध्ययना, कबहुँ न कहते एहि विधि बयना
यह जो कहा उन्होंने भ्राता, भाँड वेद के हैं निर्माता।
यह सब इनकी मूरखताई, मूढों के संग करी ढिठाई।
धूरत भाँड महीधर आदी, बामी टीकाकार प्रमादी।
किये जिन्होंने अर्थ अनर्था,नहीं थी उनमें इति समर्था।
शोक चार वाकों के ऊपर, मिथ्या मत फैलाया भू पर।
कबहुँ वेद के दरस न कीने, अरु अक्षेप वृथा भर दीने।
महिधर आदि की पढ़ टीका, कहें वेद नीरस अरु फीका।
अंट संट सब बकने लागे, नष्ट भ्रष्ट बुद्धि हत भागे।

कु॰– टीका वामी जनों की मन गढन्त निस्सार।
उनको पढ़ कर मूर्ख यह, हो गए भ्रष्टाचार।।
हो गये भ्रष्टाचार वेद के परम विरोधी।
हुआ बुद्धि का नाश मूढ़ दुष्कर दुर्बोधी।।
गिरे जलधि मँह जाय अविद्या केर अनीका।
मन गढन्त यह वामी जिनकी खोटी टीका।।

रे भाई मन माँहि विचारो, बाम पंथ का दम्भ निहारो।
घोड़े के संग नार समागम, शिश्न निक्षेप कुकर्म दुरागम।
यजमानों की कन्या पावन, उनसे ठट्ठा करें अपावन।
कर सकते हैं केवल वामी, लंपट धूर्त नीच अतिकामी।
अवर नहीं कर सकता कोई,दी उतार लज्जा की लोई।
पापी वामी भ्रष्टाचारा, वेद विरोधी टीकाकारा।
चारवाक आदिक मत हीना, निज बुद्धि से काम न लीना।

कैसे काम बुद्धि से लेते, बिन विद्या बुद्धि नहीं चेते।
यदि होता इनको कुछ ज्ञाना, करते साँच झूठ पहिचाना।
यह जो लिखा मांस का खाना, यह भी वाम पंथ का माना।
उनके लिखते टीकाकारा, जँह तँह दीने अर्थ विगारा।
राक्षस भी एहि कारण वामी, मांसाहारी पर तियगामी।
नहीं वेदमें आमिष भक्षण; वेद कहें प्राणी का रक्षण।
लिखा जिन्होंने तिनकँह पापा, तिनको मिले नर्क अभिशापा।
करी जिन्होंने ऐसी टीका, सारशून अरु भ्रष्ट अलीका।
उनसे बड़ अपराधी भारे, वह जो निन्दहिं विना विचारे।
सत्य बात तो यह है भाई, सद्विद्या जिनने नहीं पाई।
वेद विरोध करें अरु करिहैं, वे नर दारूण दुखसे मरिहैं।
ताँते चलहु वेद अनुकूले, मरो न विरथा भटके भूले।
मनुष मात्र को याही धर्मा, वेद विहित राखे निज कर्मा।

छ०— वाममार्ग ने मनगढ़न्त सब वचन बनाये।
करके अर्थ अनर्थ वेद के भाष्य रचाये।
मद्य मांस पर नार समागम धर्म बताया।
अरु कलंक वेदों पर दे निज स्वार्थ सिधाया।
चारवाक निंदन लगे इन बातों पर ध्यान धर।
भटक गये यह वाम की टीका पर विश्वासकर।

दो०—वेद विरोधी पृथक मत, चलतु किया नवीन।
प्रभुको तज नास्तिक भये, जैन बुद्ध मतिहीन।

मूल वेद यदि यह अपनाते, उनके सच्चे अर्थ लगाते।
फिर नहीं तजते वैदिक धर्मा, अरु प्रापत करते सुख परमा।
पर जब समय नाश का आवे, बुद्धि ही उलटी हो जावे।
अब चारवाक आदिक मतों के भेद कहते हैं:।

दो०—चारबाक जैनादि के, करिहौं वर्णन भेद।
किस विध नास्तिक जनों ने, नाश किया हा ख़ेद।

कुछ बातों में सभी समाना, कुछ में सम्मति रखते नाना।
चारवाक की यह प्रतिपत्ति, देह संग आतम उत्पत्ति।
जीव नशहि देह पजंर छूटे, जीवन का सब भंडा फूटे।
पुनर्जन्म परलोक न माने, केवल इक प्रत्यक्ष प्रमाने।
चारवाक हों वाक सुचारू, वाद वितरणी वचन विहारु।
जैन बौद्ध आदिक जो शेषा, चारवाक से कछुक विशेषा।
वे मानें चारहु परमाना, शब्द प्रत्यक्ष आदि अनुमाना।
मानहिं आतम नित्य अनादि, मरे न जन्म अंत न आदि।
पुनर्जन्म परलोकहु माने, आतम की मुक्ति परमानें।
शेष वात में एक समाना, वेदों का करते अपमाना।
नास्तिक द्रोही परमत द्वेषी, महा कुतर्की मल अन्वेषी।

दो०—षट प्रयत्न अरु जगत का, ना कोई सिरजनहार।
इन बातों में एक सम, जैनादिक मत चार।
बौद्ध धर्मं संक्षेप से, अब वर्णहुं मतिमान।
सत्य झूठ निर्णय करें, पण्डित नर विद्वान।

कार्य कारण भावाद्वा स्वभाबाद्वा नियामकात्। अविना भाव नियमो दर्शनान्तर दर्शनात्।

छ०— कारज के दर्शन से कारण हो अनुमानित।
अरु कारज के देखे कारण हो परमानित।
इनके बिन नहीं पूरे हों नर के त्यौहारा।
तांते इक अनुमानहुँ को माने संसारा।
अनुमानहुं को बड़ा मान यह हो गये न्यारे।
चारवाक से अलग भये जैनादिक सारे।

तांते शाखा बौद्ध की चार भई संसार में।
चारों की चारों लगीं निज निज मत परचार में।

माध्यमिका अरु योगाचारा, सौत्रान्तिक दोनों से न्यारा।
वैभाषिक पुन चौथी शाखा, चातुर्विध बौद्वों को भाखा।
बुद्धि गम्य जो होंय पदारथ, मानहिंकेवल उसे यथारथ।
जिसको बुद्धि माने नाहीं, नहीं विश्वास करें तिन माँही।
बौद्ध पुरुष है बुद्धि उपासी, बुद्धि ज्योति है ध्वान्त निवासी।
माध्यमिकों का यही विचारा, निपट शून्य सगरा संसारा।
नहीं जगत में कोऊ पदारथ, केवल मानहिं शून्य यथारथ।
जेते द्रव्य दृष्टि मँह आएँ, नहीं थे पहलेअन्त नशाएँ।
आदि नहीं थे अन्तहु नाहीं, मध्यहुँ छिनछिन मांहि विलाहीं।
मध्य काल जो होय प्रतीति, वाकी भी दिन मांहि अतीति।
देखत देखत होय अभावा, तांते तिसका भी नहीं भावा।
उत्पत्ति से पहले घट नाहीं, टूटे मिले शून्य के माहीं।
केवल ज्ञान समय घट भासे, घट बदले घट ज्ञान विनासे।
विनासें, पट की आकृति घट ने धारी, घट प्रतीत तेहि काल निवारी।
शून्य तत्व तांते इक मानें, सकल जगत को शून्य बखानें।
दूसर मानें योगाचारा, बाह्य न मानहिं यह संसारा।

दो०—नर के अन्तः करण में, रहे वस्तु को ज्ञान।
जो कछु बाहर भासता, कछु नहीं सब सुनसान।

जिमि आतम में है घट ज्ञाना, तबहुँ तुमने घट पहचाना।
अन्दर ज्ञान न होता घट का, तो नर रहता भूला भटका।
घट का ज्ञान न होता वाको, योगाचार नाम है याको।
सौत्रान्तिक तीसर को कहते, यह अनुमान पर्क नित रहते।
वाह्य पदारथ को अनुमानहिं, अनुमिति द्वारा वस्तु पछानहिं।
सकल पदारथ नयन अगोचर, एक देश है तिनका गोचर।
एक देश का करके ज्ञाना, पूर्ण वस्तु का हो अनुमाना।

सौत्रान्तिक इस मत को मानें, कर अनुमान द्रव्य को जानें।
बौद्ध शाख चौथी वैभाषिक, बाह्य ज्ञानको गनहिं स्वाभाविक।
यह मानहिं प्रत्यक्ष पदारथ, बाहर ही को कहे यथारथ।
न कछु भीतर को परतक्खा, यह मन्तव्य मान इन रक्खा।
जिस विधि यह घट देखें नीला, यह पट श्वते रक्त रु पीला।
घट पट आदि बाहर देखें, रंग रुप अंदर नहीं पेखें।

दो०—यद्यपि एक आचार्य है, सबका बुद्ध समान।
बुद्धि भेद से शिष्य वरु, भिन्न भये चहुँखान।

ज्यों रवि डूबे होवहि सन्ध्या, प्रभु के भक्त करें तब संध्या।
पर सन्ध्या काले व्यभिचारी, मद पीयें भोगें पर नारी।
काल एक पर भिन्न विवेका, बुद्धि भेद से कर्म अनेका।
माध्यम सबको क्षणिक विचारें, छिन परिवर्ती जगत निहारें।
अब देखा अगले छिन नाही, रहे क्षणिकता सबके माहीं।
प्रवृत्ति से करहु किनारा, एहि विधि कहते योगाचारा।
प्रवृत्ति है दुख को रूपा, महा क्लेश कर कष्ट स्वरूपा।
प्राप्ति में नाहीं सन्तोषा, तांते प्रवृत्ति है दोषा।
नहीं संतुष्ट लखा कोऊ जगमें, दुख पाता है नर पग पगमें।
एक वस्तु जब नर ने पाई, दूसर की इच्छा उपजाई।
रहते सदा लक्ष्य में लक्षण, सौत्रान्तिक अस कहे विचक्षण।
जेते द्रव्य दृष्टि मँह आते, सब में निज निज लक्षण पाते।
गो चिन्हों से गाय पछाने, घोड़े से घोड़े को जाने।

केवल शून्य ही शून्य हैं, इक पदार्थ जग माँहि।
वैभाषिक यह मानते, शून्य बिना कछु नाँहि।

प्रथम माध्यमिक भी यह मानें, सब सूना सब शून्य बखाने।
यही भाव वैभाषिक लीना, कहीं कहीं अंतर कछु कीना।
बहु विवाद बौद्धो में पायें, शरण वेद की गह सुलझायें।

सभी शून्य यदि जगत में, को पुन जाननहार।
ज्ञाता शून्य न हो सके, यह तो करहू विचार।

शून्य शून्य को जान न पाता, एहि कारण ज्ञाता विलगाता।
दो हैं ज्ञाता ज्ञेय पदारथ, तर्क सिद्ध यह बात यथारथ।
जो कहते हैं योगाचारा, बाहर शून्य सकल संसारा।
यह कैसे हो सकता संभव, अन्दर पर्वत निपट असंभव।
जो पर्वत को भीतर माने, कौन उसे मतिमान बखाने।
पर्वत तनु के बीच समावे, वहाँ अवकाश कहाँ से पावे।
जाँते पर्वत बहिर बखाना, अन्दर केवल पर्वत ज्ञाना।
नहीं प्रत्यक्ष इन्होंने माना, केवल इक अनुमान प्रमाना।
यही बात यदि सांची जानी, तो तुम और तुम्हारी बानी।
नहीं प्रत्यक्ष बने, अनुमेया, अनुमानहु ते होवे ज्ञेया।
जो प्रत्यक्ष न गनिहौ भाई, 'यह घट हैं' तब कहा न जाई।
एक देश को घट नहीं कहिये, घट समुदाय रुप को गहिये।
'यह घट है' यह है प्रत्यक्षा, हम घट देखहिं नैन समक्षा।
यह अनुमान नहीं घट केरा, अंगी का सब अंग बसेरा।
सब अंगों में एकहि अंगी, अंगी अंग अंग का संगी।

अंगी के प्रत्यक्ष से, सब प्रत्यक्ष हों अंग।
घट साबयव प्रत्यक्ष हो, नहीं प्रत्यक्ष अपंग।
वैभाषिक प्रत्यक्ष ही, मानहिं सभी पदार्थ।
उनका भी मन्तव्य यह, तर्क शून्य मिथ्यार्थ

जहां ज्ञान अरु होवे ज्ञाता, वहीं प्रत्यक्ष द्रव्य हो पाता।
दृश्य पदारथ बाहर यद्यपि, अन्तर्ज्ञान होय तस तद्यपि।
उसका मन में रूप आकारा, सदा रहे होवे नहीं न्यारा।
क्षणिक ज्ञान और क्षणिक पदारथ, इसें मानलें यदि यथारथ।
'प्रत्यभिज्ञा' रहे न शेषा, बिसरे रूप रु रंग अशेषा।
देखा सुना भूल सब जायें, सुमरें लाख सुमर नहीं पायें।

अमुक बात मैंने थी कीनी, स्मरण न होवे सिमरति छीनी।
बिसरे नहीं वरु पहला देखा बरसों का मान करता लेखा।
क्षणिक वाद तांते नहीं सांचा, तर्क शून्य झूठा अरु कांचा।

दुख ही दुख हो जगत में, होय न सुःख निशान।
सुख के बिन पुन दुःख की, नहीं होवे पहिचान।

निस बिन दिवस न होवे जैसे, सुख बिन दुःख न जानें तैसे।
सर्व दुख तांते नहीं सांचा, दुख सुख दोनों में मन रांचा।

यदि स्वलक्षण ही गनहिं, तो कोऊ चले न काम।
नेत्र रूप से भिन्न हैं, नहीं रहते इक ठाम।

नेत्र रूप का होवहि लक्षण, याको जाने बुद्धि विचक्षण।
रूप लक्ष्य है लक्षण नाहीं, यह अन्तर है दोनों माहीं।
जेहि विधि घट का रुप अनूपा, अरू चक्षुका भिन्न स्वरूपा।
घट है लक्ष्य रु चक्षु लक्षण, घट से होवे चक्षु विचक्षण।
अलग नहीं भूमि से गन्धि, कबहुँ न भूमि को निर्गन्धि।
धरा गन्धि नाहीं बिलगाएं है अभिन्न इक ठौर बसाएं।
भिन्न भिन्न हैं लक्ष्य अरु लक्षण, एहि विधि कोविद कहें विचक्षण।

उ०– उत्तर दीना शून्य का, जो पूरब सो सांच।
शून्य भिन्न शून्यज्ञ से, ताको लीजे बांच।

सर्वस्य संसारस्य दुःखात्मकत्वं सर्वं तीर्थंकर संगतम्।

तीर्थंकर को पूजते, दोनों बौद्ध रु जैन।
दोनों एक ही रूप हैं, एक दृष्टि दोऊ नैन।।

दोनों भाव चतुष्टय मानें, दुख निवृत्तिहिं मुक्ति बखाने।
दुख है इच्छा की प्रवृत्ति, इच्छा की चाहें निवृत्ति।

निवृत्ति का फल यह माना, शून्य रूप मिलता निर्वाना।
शिष्यों के हित योगाचारा, सिखलाते हैं जैनाचारा।
गुरु का बचन प्रमाण सिखावें, बुद्धि वासना मयी बतावें।

बुद्धि वासना मयी है, लखे अनेकाकार।
इस प्रकार के जैन अरु, राखें बौद्ध विचार।।

"रूप विज्ञान वेदना संज्ञा संस्कार संज्ञक"।

पंच स्कन्ध इनके मत माही, इनके बिन छुटकारा नाही।
रुप वेदना अरु विज्ञाना, संज्ञा चौथा स्कंध बखाना।
पंचम स्कंध गने संस्कारा, पंच स्कंध से हो छुटकारा।
इन्द्रिय सो रूपादिक गहिये, रूप स्कन्ध पहला यह कहिये।
ज्ञान प्रवृत्ति का व्यवहारा, यह विज्ञान स्कन्ध उचारा।
रूप ज्ञान से जाको जनमाँ, सुख दुख उपजे जिससे मनमाँ।
वह व्यवहार प्रतीति रूपा, स्कन्ध वेदना यही अनूपा।
गो आदिक संज्ञा संबन्धा, नामी के संग "संज्ञा स्कन्धा"।
राग द्वेष आदिक जो क्लेशा, क्षुधा तृषा आदिक उपक्लेशा।
मद प्रमाद अभियान नियारा, धर्माधर्म रूप आचारा।
स्कन्ध वेदना यह पुन जनमें, संसकार तिनका हो मन में।
पंचम स्कन्ध यही सँस्कारा, पंच स्कन्ध मुक्ति को द्वारा।

दुख का घर दुख रुप है, दुख साधन संसार।
जो नर दुख से छूटता, उसकी नैय्या पार।।

चारवाक अस मुक्ति माने, दुख निवृत्ति मुक्ति बखाने।
नहीं कोऊ जीव नहीं अनुमाना, बौद्ध लोग अस करहिं प्रमाना।
"देशना लोक नाथानां सत्वाशय वशानुगाः भिद्यन्ते बहुधा लोके उपायैर्बहुभिः किल।।१।।"
गम्भीरोत्तान भेदेन क्वचिच्चोभय लक्षणा। भिन्ना हि देशना भिन्ना शून्यता द्वय लक्षणा।।२।।
अर्थानुपार्ज्य बहुशो द्वादशायतनानि वै। परितः पूजनीयानि किमन्यैरिह पूजितः ।।३।।
ज्ञानेन्द्रियाणि पंचैव तथा कर्मेन्द्रियाणि च। मनो बुद्धिरिति प्रोक्तं द्वादशायतन बुधैः।।४।।

जीवन्मुक्त विरागी ज्ञानी, लोकनाथ बुद्धादिक प्रानी।
ऐसे महापुरुष तीर्थंकर, दुख निवारक हितकर शंकर।
उनके जिते पदारथ रुपा, जो जानहि तिन कहे स्वरूपा।
भिन्न भिन्न हैं जिते पदारथ, जो उपदेशहि तिन्हे यथारथ।
जिनके नाना भेद बताये, जिनको वरणे अनिक उपाये।
उनको माने उन्हें प्रमाने, केवल सत्य उन्हीं को जाने।

सवैय्या

अति गम्भीर प्रसिद्ध भेद से गुप्त कहीं पुन सोप्रकटायें।
नाना गुरुओं के उपदेशक नेता जग के जो कहलायें।
उनको मानें उनको पूजें जो नर लक्षण न्यून सदायें।
उन पर आसा अरु विस्वासा कर दुख से छुटकारा पायें

दो॰—पूजन द्वादश आयतन, यही मोक्ष दातार।
सकल द्रव्य संग्रह करे, पूजा हित निर्वार।।

बारह स्थान विशेष बनाना, ताकी पूजा अरु सन्माना।
पूजनीय नांही कोउ दूजा, बारह स्थानों की कर पूजा।

पूजा द्वादश आयतन, क्या हैं बारह स्थान।
विशद रूप से हौं कहूँ, सुनिये धर का ध्यान।।

नाक कान जिहवा त्वक् नयना, इन्द्रिय पंच ज्ञान के अयना।
कर पद लिंगो पस्थरु वाका, इन्द्रिय कर्म नाम है ताका।
मन बुद्धि यह द्वाद्वश पूजे, कबहुँ न जाये मारग दूजे।
बौद्धों ने इस मत को माना, इन में ही माना निर्वाना।

उ॰— दुख ही दुख होता यदि, दुखमय सब संसार।
तो दुनियाँ में क्यों रमहिं, रैन दिवस नर नार।।

रमण करें प्राणी जग माँही, कोई नर मरना चाहे नाँही।
केवल दुखमय नहीं संसारा, सुःख दुःख दोउन आगारा।

बौद्ध यदि दुख रूप ही मानें, पुन क्यों चाहते प्राण बचाने।
किस कारण नित खाते पीते, दुख ही दुख है पुन क्यों जीते।
व्याधि मँह क्यों पियें दवाई, क्यों सेवहिं नित दूध मलाई।
क्यों शरीर को करते मोटा, जो यह जग है दुखमय खोटा।
खान पान में क्यों सुख माने, क्यों नहीं जाय पड़े शमशाने।

रमते हैं संसार में, फिर भी जग दुख रूप।
जो तुम ऐसा जानते, क्यों गिरते जग कूप।।

ताँते सत्य न कथन तुम्हारा, केवल दुखमय नहीं संसारा।
जीव चहें सुख में प्रवृत्ति, दुख से चहें सदा निवृत्ति।
धर्म कर्म विद्या सत्संगा, इनको तो सब मानहिं चंगा।
सब जानहिं यह हैं सुखकारक, प्राणि मात्र के दूख निवारक।
केवल बौद्ध गनहिं दुखदायी, जिनकी बुद्धि है घुणखाई।
पंच स्कन्ध भी निपट अपरन, क्योंकर कर सकते हैं पूरन।
जो यह स्कन्ध विचारन लागें। अनिक भेद इक इक के जागें।
तीर्थंकर उपदेशक जेते, लोकनाथ मानहु तुम तेते।
पारब्रह्म नाथन को नाथा, वाको नहीं झुकाओ माथा।
ईश्वर को तुम मानहु नाहीं, जो व्यापक है घट घट माँही।
ज्ञान लिया किससे बतलाएँ, तीर्थंकर ने यह समझाएँ।

स्वयं ज्ञान उनको हुआ, यदि तुमरा मन्तव्य।
तो ऐसा नहीं हो सके, तब मिथ्या वक्तव्य।।

कारज होवे नहीं बिन कारण, जग जाने यह तर्क साधारण।
कथन तुम्हारा यदि सच जाने, बिन कारण विद्वत्ता मानें।
तो विद्या बिन पढ़े पढ़ाये, बिना किसी के सुने सुनाए।
बिना किये सज्जन सत्संगा, मज्जन बिना ज्ञान की गंगा।
किस कारण नहीं होते ज्ञानी, ताँते तुमरी झूठ कहानी।
केवल रोगी का बरड़ाना, अंट संट बकना बिन ज्ञाना।

शून्य रूप अद्वैत है, कहें बौद्ध विद्वान।
पर सूनी किमि हो सके, जो वस्तु विदमान।।

कारण रुप सूक्ष्म हो जावे, शून्य कभी नहीं होने पावे।
शून्य बाद ताँते भ्रम जानो, निपट असंभव इसको मानो।

पूजा द्वादश आयतन, हित नर अर्थ जुटाय।
ऐसी पूजा किये ते, नर किमि मुक्ति पाय।।

यदि जीवातम अरु दश प्राना, इनको पूजहु तुम विद्वाना।
मन इन्द्रिय पूजा में मुक्ति, मुक्ति नहीं तब कहिये भुक्ति।
बौद्ध रु भोगी एक समाना, भोग भोगते दोनों नाना।
बौद्ध भोग से बचे न कोरे, मोक्ष पाँय यह किस विधि भोरे।
भोग मोक्ष का शत्रु कहावे, जहाँ भोग तहाँ मोक्ष न आवे।
कितना फैल रहा अज्ञाना। नहीं कोऊ जिसके अवर समाना।
वेद रु प्रभु का कियो विरोधा, एहि कारण यह मूर्ख अबोधा।
नास्तिकता का हैं फल पाते, दुख सागर में गोते खाते।
जो है सृष्टि दुखमय ऐसी, पंचायत पूजा पुन कैसी।
क्या यह पूजा जग में नाहीं, क्या नाहीं दुख पूजा माहीं।
यह क्यों कर मुक्ति की दाता, मुक्ति का क्या इससे नाता।
ऐसी पूजा व्यर्थ प्रयत्ना, आँख मूँद जिमि ढूँढें रत्ना।
वेद रु ईश्वर को नहीं जाना, तभी पड़ा यह दुःख उठाना।
अब भी जो सुख संपति लोचें, एहि छिन नास्तिकता को मोचें।

बौद्धों का वर्णन करे, ग्रंथ विवेक विलास।
क्या इनके सिद्धान्त हैं, कैसे भया विकास।।

"बौद्धानां सुगतो देवो विश्वं च क्षण भंगुरम्।
आर्य्य सत्वाख्ययादत्त्व चतुष्टय मिदं क्रमात्।।१।।
दुःखमायतनं चैव ततः समुदयो मतः।
मार्ग श्चेत्यस्य च व्याख्या क्रमेण श्रूयतामतः।।२।।

दुःखं संसारिणः स्कन्धास्ते च पंच प्रकीर्तिताः।
विज्ञानं वेदन संज्ञा संस्कारो रुप मेव च।।३।।
पञ्चेन्द्रियाणि शब्दा वा विषया ! पन्च मानसम्।
धर्मायतन मेतानि द्वादशायतनानि तु।।४।।
रागादीनां गणो यः स्यात्समुदेति नृणां हृदि।
आत्मात्मीय स्वभावाख्याः सस्यात्समुदयः पुनः ।।५।।
क्षणिकाः सर्व संस्कारा इति या वासना स्थिरा।
स मार्ग इति विज्ञेयः स च मोक्षोऽभिधीयते।।६।।
प्रत्यक्षानुमानं च प्रमाणं द्वितयं तथा।
चतुः प्रस्थानिका बौद्धाः ख्याता वैभाषिकादयः।।७।।
अर्थो ज्ञानान्वितो वैभाषिकेण बहु मन्यते।
सौत्रान्तिकेन प्रत्यक्ष ग्राह्योऽर्थों न व हिर्मतः।।८।।
आकारा सहिता बुद्धि योंगाचारस्य संमता।
केवलां संविदां स्वस्थां मन्यन्ते मध्यमाः पुनः।।६।।
रागादि ज्ञान सन्तान बासनाच्छेद संभवा।
चतुर्णामपि बौद्धानां मुक्तिरेषा प्रकीर्तिता।।१०।।
कृत्तिः कमण्डलुमौण्डयं चीरं पूर्वान्ह भोजनम्।
संघो रक्तम्बरत्वं च शिश्रिये बौद्ध भिक्षुभिः ।।११।।

सुगत देन बौद्धों के देवा, उनकी कीजे पूजा सेवा।
क्षणिक जगत कछु भी स्थिर नाहीं, छिन छिन सगरे द्रव्य नशाही।
आरज अवर आर्या नारी, मान योग दोनों सहकारी।
तत्वों की संज्ञा परिसिद्धि, यह चारहुँ दें जीवनसिद्धि।
यह मन्तव्य बौद्ध के चारा, बौद्ध धर्म के स्तम्भाधारा।
दुखकर सकल सृष्टि को जाने, इसी ज्ञान में समुदय माने।
दुख ही दुख है इह संसारे, पंच स्कन्ध का ज्ञान विचारे।
पंच ज्ञान इन्द्रिय कर्णादी, इन के पांच विषय शब्दादी।
मन अरु बुद्धि धर्म स्थाना, पूजनीय द्वादश यह माना।
राग द्वेष आदिक जो जनमें, नरनारी सबहिन के मन में।

समुदय है यह मन के भावा, इनका मन पर होय प्रभावा।
आतम अरु आतम संबंधी, अरु स्वभाव आतम अनुबंधी।
इसकी संज्ञा कहिये 'आख्या' बौद्ध ग्रंथ में याकी व्याख्या।
'आख्या' से समुदय कँह जानें, एहिविधि बौद्धमती सब मानें।
संस्कार है क्षणिक विनाशी, होय वासना स्थिर अविनाशी।
यही एक बौद्धों का मारग, शेष मार्ग सब गनहिं कुमारग।
शून्य रूप हो जाना मुक्ति, ऐहि विधि बौद्ध जनों की उक्ति।
द्वै प्रत्यक्ष और अनुमाना, केवल मानहिं दोऊ प्रमाना।

वैभाषिक सौत्रान्तिक रु, माध्यम योगाचार।
बुद्धि भेद से हो गई, बौद्ध शाख पुन चार।।

ज्ञान माँहि अर्थों का रहना, वैभाविक शाखा का कहना।
ज्ञान माँहि जो नहीं पदारथ, ऐसी वस्तु सन होय यथारथ।
सब वस्तु भीतर प्रत्यक्षी, नहीं कोऊ बाहर ज्ञान समक्षी।
ज्ञान युक्त बुद्धि साकारा, एहि विधि मानहिं योगाचारा।

नहीं पदारथ मानता, मानहि वस्तु ज्ञान।
माध्यम का मन्तव्य यह, जानहि सब विद्वान।।

कु– रागादिक जो ज्ञान है, वाको चले प्रवाह।
वही वासना रुप बन, देतीकष्ट अथाह।।
देती कष्ट अथाह, वासना दुख का कारण।
ताका हो जड़ मूल सहित मन से नीवारण।।
उससे उपजे मोक्ष, नशहिं तब सब भरमादिक।
तृष्णा का परवाह, मिटे मिटते रागादिक।।

दो॰–चारहुँ शाखा बौद्ध की, करती यही प्रमाण।
यही भक्ति कल्याण यह, यही मुक्ति निर्वाण।।

हाथ कमंडल तनु मृग छाला, मूँड मुँडाय रखें सब काला।

करना वल्कर वस्तर धारण, जिससे होवे लाज निवारण।
पूर्वार्ध भोजन की वेला, कबहुँ रह नहीं बौद्ध अकेला।
रक्ताम्बर धारहिं तन ऊपर, बौद्ध साधु विचरे इमि भूपर।

उ॰– यदि मानते बौद्ध जन, सुगत देव ही देव।
सुगत देव भगवान का, कहो कौन गुरुदेव।।

क्षण भंगुर यदि सभी पदारथ, स्मरण शक्ति पुन निपट अकारथ।
क्षण भंगुर यदि मानहिं ऐसे, पूर्व दृष्ट का सिमरन कैसे।
'यही वस्तु वह' कैसे जाने, पूर्व दृष्ट को किमी पहचाने।
क्षणिक वाद यदि मानें साँचा, पुन तव मोक्ष काँच सम काँचा।
ज्ञान युक्त यदि सभी पदारथ, जड़ में हो पुन ज्ञान सकारथ।
पर हम जड़ में ज्ञान न देखें, बिन चेतन कोऊ क्रिया न पेखें।
जिसको देखें यह दोऊ नयना, उसको झूठ कहे किमी बयना।
आँख लखे पर जीभ न मानें, बेसुर ताल बौद्ध के गाने।
यदि यह बुद्धि है साकारा, रूप रंग कछु राखे न्यारा।
तो किस कारण नजर न आवे, कौन वस्तु जो इसे छिपावे।
ज्ञान ही केवल यदि मन माँही, बहिर वस्तुतः कुछ भी नाँही।
तो कहिये बिन ज्ञेय पदारथ, कैसे होवे ज्ञान सकारथ।
ज्ञेय बिना होवहि नहीं ज्ञाना, एहि विधि सब मानहिं मतिमाना।

जो मानहु तुम मुक्ति को, निपट वासना नास।
तब तो गहरी नींद में, होय मुक्ति परगास।

विद्या विरुध न कोऊ माने, जो सुषुप्ति को मुक्ति वखाने।
बौद्धों ने यह बातें मानीं, तर्क शून्य अरु निपट अजानी।
बुद्धिमानी अब करें विचारा, सत्यासत्य पक्ष निर्धारा।
जैन लोग भी एहि विधि मानें, नाम भेद से यही प्रमानें।

अथ जैन मत वर्णन

प्रकरण रत्नाकर १ भाग, नयचक्र सार लिखित बातों का वर्णन

नूतन पन से बौद्ध जन, गुनहिं पदारथ चार।
समय समय पर उपजते, यही उनका संसार।

सो०— पुद्गल जीव आकाश चौथे कालहुँ जानहिं।
चारहुँ करें प्रकाश, मानें एहि विधि बौद्ध जन।

छन्द्र— धर्मास्तिकाय अरु, अधर्मस्तिकाया।
पुद्गलस्ति अरु, आकाशास्तिकाया।

जीवास्तिकाया यह पाँचहुँ निकाया।
छठे काल को मानें जैनी पदारथ।
षट् द्रव्य से जानें सृष्टि सकारथ।
कालहुँ सकारें न वे अस्तिकाया।
नहीं वस्तुत! काल द्रव्यों में आया।
उपचार से द्रव्य कालहुँ बताबें।
नहीं आस्तिकायों में इसको गिनावे।
धर्मास्तिकायहुँ को इस विधि बखानें।
उपयोग सुनिये यह क्या इसका जाने।

गति परिणामी पन अनुगामी, पुद्गल जीव दोऊ परिणामी।
गति समीप्य ते इसको रोके, अस्तिकाय यह धर्म सुलोके।
यह असंख्य परिमाण प्रदेशे, व्यापक है सब देशे देशे।
अपर अधर्महुँ अस्तिकाया, दूसर द्रव्य जैन बतलाया।
जीब पिण्ड स्थिरता के कारण परिणामी पन करते धारण।
उनकी स्थिति का यही सहारा, यही उन्हें थिर करने हारा।
अस्तिकाय तीसर आकासा, जिसमें सब जग करे निवासा।
सब द्रव्यों का जो आधारा, जीव मात्र जहाँ करें विहारा।
गमनागमन क्रिया को द्वारा, जिसके अन्दर होय प्रसारा।

सर्व वियापी सर्वावासी, अस्तिकाय तीसर आकासा।
चौथा पुद्गल अस्तिकाया, जैन पंथ ने जो अपनाया।
नित्य एक रस कारण रूपा, वर्ण गंध रस सूक्ष्म स्वरूपा।
लिंग कार्य्य का पूरन कर्ता, अरु स्वभाव से जरता गरता।
अस्तिकाय पुद्गल अस माना, चौथा द्रव्य इसे परमाना।

अस्तिकाय पुन जीवहूँ, पंचम करहिं प्रमान।
चेतन है अरु इसी से होवहि दर्शन ज्ञान।

यह अगनित पर्य्यायों द्वारा, परिणामी पुन होने वारा।
भोगनहारा कर्ता जानें, अस्तिकाय यह जीवहुँ माने।
कालहुँ मानहिं छटा पदारथ, छः द्रव्यों की सृष्टि यथारथ।
पाँच अस्तिकायों के रूपा, उनके नव प्राचीन स्वरूपा।
परता अबर अपरता बाँकी, काल दिखावे सबकी झाँकी।

पर्य्यापों से युक्त अरु, वर्तमान का रुप।
एहि विधि छठे पदार्थ को, कहते काल अनूप।

उ०— चार द्रव्य जो बौद्ध ने प्रति पल गने नवीन।
यह मिथ्या विश्वास है, तर्क हेतु से हीन।

जीव अणु आकाश रु काला:, इन में नहीं कोई विकृति वाला।
यह नहीं होते नये पुराने, सब अनादि अविनाशी माने।
कारण रूपहिं सब अविनाशी, आदि अंत नहीं नहीं विनाशी।
नाहीं धर्माधर्म पदारथ, गुण हैं दोनों यही यथारथ।
द्रव्य चिन्ह इनमें नहीं पाएं, अस्तिकाय जीवहुँ में आयें।
समुचित था यदि चारों मानें, धर्माधर्म द्रव्य मत जानें।
वैशेषिक मानत नव द्रव्या, वही सत्य समुचित मन्तव्या।

पंच तत्त्व भूम्यादि अरु, मन आतम दिक काल।
पृथक पृथक नब द्रव्य हैं, नब निर्मित जग जाल।

केवल जीवहुँ चेतन मानें, पारब्रह्म पुन नहीं प्रमानें।
जैन बौद्ध का यह पखपाता, मन गढ़न्त मिथ्या कहलाता।
सुनहु जैन की बात बेढंगी, मानहिं स्याद्वाद सतभंगी।
जैनरु बौद्ध दोऊ जो मानें, सप्त भंग वह हमहुँ बखाने।
'सन् घट' पहला अंग कहावे, यह सत्ता घट की बतलावे।
वर्तमान घट है हम देखें, यहाँ विरोधाभावहुँ पेखें।
दूसर भंग असन् घट कहिये, सूना स्थान घड़ा नहीं पहिये।
पहले भाव घड़े का देखा, असद्भाव पुन अब अवलेखा।
'सन्नसन्न घट' भंग तृतीया, पट वस्तर है घड़ा नहीं या।
घट तो है पर यह पट नाही, घट का भाव नहीं पट माहीं।
उन दोनों से यह अलगावे, भंग तीसरा यह कहलावे।
'घटोऽघट' जिमि अपटः पट है, माना चौथा भंग निपट है।
दूसर वस्त्वाभाव अपेक्षा, निज में है बाकी उत्प्रेक्षा।
एहि कारण घट अघट कहावे, घट और अघट नामं दोऊ पावे।
पंचम भंग सुनहु पुन कैसा, जो जैसा हो कहना वैसा।
घट को पट कहना नहीं चाहिये, घट में घटपन ही को पहिये।
जो घट नहीं तो कहना अनुचित, यदि घट है तो कहना समुचित।
छठा भंग है यांको नामा, जिसे नैन मानहिं अभिरामा।

कहने को तो इष्ट हैं, पर वास्तव में नाँहि।
कथन योग्य भी घट नहीं, यह सतभंग कहाहिं।

"स्यादस्ति जीवोऽयं प्रथमो भंगः" "स्यान्नास्ति जीवो द्वितीयो भंगः"
"स्यादवक्तव्यो जीवस्तृतीयो भंगः" 'स्यादस्ति नास्ति नास्ति रुपो जीवश्चतुर्थों भंगः"
"स्यादस्ति अवक्तव्यो जीवः पंचमों भंगः" "स्यान्नास्ति अवक्तव्यो जीवः षष्ठो भंग"
"स्यादस्ति नास्ति अवक्तव्यो जीव इति सप्तमो भंगः"

एहि विधि आतम है जब कहिये, जड़ताऽभाव जीव मँह गहिये।
पहला भंग यही कहलावे, जड़ से जीवहुँ को बिलगावे।
नहीं जीव जड़ वस्तु माँही, कबहुँ जीब जड़ वस्तु नाहीं।

दूसर भंग इसी को जाने, जड़ वस्तु मँह जीव न मानें।
आतम है पर नहीं कथितव्या, तीसर भंग यही मन्तव्या।
जब आतम तनुसों संजोगे, तब प्रसिद्ध पुन उसे वियोगे।
अप्रसिद्ध जब तजत सरीरा, चौथा भंग कहें मति धीरा।
है आतम पर कथन न जोगू, ताँते वाको कथन अजोगू।
पंचम भंग इसी को वरणा, है अवश्य पर कथन न करणा।

नहीं प्रत्यक्ष प्रमाण से, जीव कथन में आय।
नेत्र न उसको देखते, यह षड् भंग कहाय।।

नहीं काल जीवहुँ अनुमाने, अरु अदृष्यपनहुँ न जानें।
नहीं समरसता छिन परिणामी, ऐसा लखें देह को धामी
'है वा नहीं है' कथन अयोगू, नहीं है वा है' कथन न जोगू।
यही सातवाँ भंग बखाना।, सप्त भंग यह जैन प्रमाना।
नित अनित्य एहि विधि सतभंगी, जैन पंथ की मति बहुरंगी।
धर्म सामान्य रु धर्म विशेखे, गुण पर्य्याय आदि अवलेखे।
सप्त भंग सब वस्तु माँही, बिना भंग कोऊ वस्तु नाँही।
धर्मादिक का नहीं कोऊ अंता, ताँते भंगी सप्त अनन्ता।
स्याद्वाद सत भंगी न्याया, बौद्ध जैन मत ने अपनाया।

समीक्षक

जैन बौद्ध का जो कथन, सप्त भंग विस्तार।
है अन्योन्याभाव में, इसका सारा सार।।

साधर्म्यरु वैधर्म्म के माँही, स्याद्वाद का सार लखाँही।
सहज बात को कठिन बनाना, यह केवल भ्रम जाल बिछाना
अज्ञानी इसमें फँस जाएं, चातुर धूरत लाभ उठाएँ।
आतम माँहि अनात्म अभावा, नहीं अनात्म में आतम भावा
यह प्रत्यक्ष जगत सब जाने, सिद्ध स्वाभाविक कौन न माने।
विद्यमान आतम जड़ दोऊ, यह साधर्म्य लखहि सब कोऊ।
इक चेतन इक जड़ द्वै धर्मा, यहाँ पर जान लिहो वैधर्मा।

जीव माहिं चेतनता राजे, जड़ता उसमें नहीं बिराजे।
एहि विधि जड़ में जड़ता देखें, चेतनता उसमें नहीं पेखें।
जहाँ जहाँ गुण अरु कर्म स्वभावा, तहाँ सधर्म विधर्म के भावा
करहू विचार सधर्म विधर्मा, स्याद्वाद का टूटे भरमा।
इतना व्यर्थ प्रपंच बढ़ाया, वाग्जाल में जगत फँसाया।

अथ जैन मत समीक्षा

केवल जैनी पंथ का, अब हम करें विचार।
क्या क्या इनके मार्ग में, मत है सार असार।

'चिदाचिद् द्वे परे तत्वे विवेकस्तद्विवेचनम। उपादेयमुपादेयं हेयं हेयं च कुर्बतः ।।१।।
हेयं हि कर्तृरागादि तत्कार्य्यमविवेकनः। उपादेयं पर ज्योति रूपयोगैक लक्षणम्।।२।।

चित अचित पर तत्व द्वै, मानहिं जैनी लोग।
जड़ चेतन का जगत में, है संयोग वियोग।।

चित अरु अचित पदार्थ विवेचन, तर्क विचार गंग अभिषेचन।
यह विवेक संज्ञा कहलाये, अरु विवेक उलझन सुलझाये।
जो विवेक का करने हारा, वही विवेकी करत विचारा।
ग्राह्य गहे अग्राह्यहुँ त्यागे, पुरुष विवेकी को भल लागे।
"ईश्वर है कोऊ जगदाधारा" त्यागहु यह अविवेक विचारा।
परम ज्योतिमय जीवहुँ जानो, साहु योग उसे पहिचानो।

बिना जीव नहीं मानते, प्रभु चेतन कोऊ आन।
कोऊ अनादि ईश्वर नहीं, करते बौद्ध प्रमान।

शिव प्रसाद इमि बरणे राजा, बौद्ध जैन है एक समाजा।
पढ़हु तिमिर नाशक इतिहासा, निज विचार इस भाँति प्रकासा
जैन बौद्ध द्वै इनके नामां, पर्य्यायी दोऊ शब्द निकामा।
दोऊ शब्दों का एक पदारथ, भिन्न नहीं कुछ एक यथारथ।
बौद्धों में है प्रायः वामी, मांसाहारी मद्यप कामी।

जैनी इनसे करें विरोधा, उनको कहते निपट अबोधा।
महावीर अरु गणधर गोतम, पूजनीय हैं जो परमोतम।
तिन्हें बौद्ध जन बुद्ध पुकारें, जैनी उनको जिन कह डारें।
जिनसे जैनी लगे कहाने, नाम भेद राजा जी मानें।
तृतिय खण्ड पुस्तक का देखें, शिव प्रसाद वर्णहिं अवरेखे।

शंकर पूरब हो गये, जिनको वर्ष हजार।
सगरे भारतवर्ष में, था जिन बोध प्रचार।

भारतियों के हित के काजा, लिखी विशेष सूचना राजा।
बौद्ध शब्द से भाव हमारा, अवर नहीं कोऊ मारग न्यारा।
मत हम केवल वही बखानें, बुद्ध नाम से जिसको मानें।
महावीर श्री गणधर गौतम, जिनको मानहिं बौद्ध नरोतम।
उनसे चल शंकर पर्य्यन्ता, फैल रहा था दशहुँ दिगन्ता।
आर्य्यवर्त में फैले बोधी, वेदों के थे परम विरोधी।
नृप अशोक ने जिसको माना, अरु सम्प्रति नृप ने परमाना।
जैनी भी हैं उनके माँही, कोई विधि बाहिर निकसें नाही।
जिनसे जैन बुद्ध से बोधा, पर्य्यायी नहीं अर्थ विरोधा।
लिखा कोष मँह अर्ध समाना, अंतर नहीं रंचक भी माना।
दोनों ही गौतम को मानें, दोनों श्रद्धा से सन्मानें।
दीपवंश जो ग्रंथ पुराने, महावीर तिन गौतम मानें।

होगा उनके समय में, उनका मारग एक।
पाछे जिनका नाम अरु, शाखा भईं अनेक।

जैन नाम लिक्खा कहीं नाँही, पढ़ें पुराने ग्रन्थन मॉहीं।
गौतम मत अवलंवी सारे, बौद्ध नाम से गये पुकारे।
जैन नहीं इसके ही कारण भ्रांति भिन्नता खाई निवारण।
पर देशों के रहने हारे, माने कभी न दोनों न्यारे।
बौद्ध नाम से इन्हें बुलावें, जैन बौद्ध सब एक कहावें।

"सर्वज्ञः सुगतो बुद्धो धर्मराजस्तथागतः। समन्तभद्रो भगवान मारजिल्लोकजिज्जिन" ।।१।।
षडभिज्ञो दशवलोऽद्वयवादी विनायकः। मुनीन्द्र! श्रीघन! शास्त्र मुनि! शाक्यमुनिस्तु यः।।२।।
सशाक्यसिंहः सर्वार्थः सिद्धश्शौद्धोदनिश्च सः। गौतमाश्चार्क बन्धुश्च माया देवी सुतश्च सः ।३।।

अमर कोष कां १ श्लो. ८ ।१० तक

अमरसिंह ने भी लिखा, बौद्ध रु जैन समान।
क्या उसने भी भूल की, ऐसा नर विद्वान।

अविद्वान हैं, जैनी जेते, नहीं किसी की सम्मति लेते।
नहीं जाने मन्तव्य स्वकीया, बात न सुनते अरु परकीया।
एकमात्र हठ से बरड़ाते, बिरथा मानुष जन्म गँवाते।
इनमें जो नर हैं विद्वाना, वे मानें जिन बुद्ध समाना।
जीवहि परमेश्वर हो जाता, ऐसा जैनी मत बतलाता।
मुक्ति केवली अर्हन पाई, अवर किसी के हाथ न आई।
सिद्ध अनादि प्रभु नहीं मानें, अर्हन ही परमेश्वर जानें।

तीर्थंकर जिन केवली, वीतराग सर्वज्ञ।
छः अर्हन के नरम यह, मोह शून्य अरु प्रज्ञ।।
चन्द्र सूरि निज ग्रंथ में, आदि देव का रुप।
इस प्रकार वर्णन करें, लक्षण और स्वरूप।।

"सर्वज्ञो वीतरागादि दोष स्त्रैलोक्य पूजितः। यथा स्थितार्थवादी देवोऽर्हन् परमेश्वरः।।१।।

आत्म निश्चयालंकार

तौताति भी पुन यही बखाने, यही रूप अर्हन् का माने।

सर्वज्ञो दृष्यते तावन्नेदानी मस्मदादिभिः दृष्टो न चैक देशोऽस्ति लिंगं वायोऽनुमापयेत्।।१।।
न चागम विधि! कश्चिन्नित्यं सर्वज्ञ बोधकः। न च तत्रार्थबादाना तात्पर्य्य मपि कल्पते।।२।।
न चान्यार्थं प्रधानैस्तदस्तित्वं विधीयते। न चाऽनुवादितुं शक्यः पूर्व मन्यै रबोधितः।।३।।

रागादिक सब दोष विहीना, त्रिभुवन पूज्य ज्ञान लवलीना।
वर्णन सकल पदार्थ यथावत, अर्हन देव त्रिलोक प्रभावत।
वही प्रभु परमेश्वर प्यारा, नहीं कोई दूजा ईश्वर न्यारा।
ईश्वर अन्य देख नहीं पायें, एहि कारण विश्वास न लाएं।

तातें पारब्रह्म नहीं मानें, जो मानें सो झूठ बखानें।
नहीं प्रत्यक्ष लखा जो नयनन, वाको अनुमानें किंमि वयनन।
नहीं प्रत्यक्ष बिना अनुमाना, बिन अनुमान न शब्द प्रमाना।
ईश अनादी दूयर नाँहीं, जिसका वर्णन आगम माँही।
नहीं प्रमाण जब तीनों घटते, अर्थ वाद पुन विरथा रटते।
वृथा कहानी करें पराई, व्यर्थ प्रशंसा निंदा गाई।
व्यर्थ पुरातन चरित सुनाना, पुराकल्प सब व्यर्थ घटाना।

अन्य अर्थ परधान जिमि, है बहुब्रीहि समास।
प्रभु परोक्ष की सिद्धि तिमि, करना व्यर्थ प्रयास।।

जो हैं ईश्वर के उपदेशक, साक्षात द्रष्टा निर्देबक।
जब लग वे नहीं स्वयं सुनावें, किमि उनका अनुवाद करावें।

उ०– ईश अनादि नहीं यदि, को पुन जगत रचाय।
सुगत देव के मात पितु, किसने दिये बनाय।।

यथायोग्य सुन्दर तनु राँचे, ढाल दिये किसने किस साँचे।
सर्व अंग सुन्दर उपयोगी, जुड़ नहीं सकते बिन संजोगी।
जिन द्रव्यों से बना सरीरा, अग्नि पवन पृथिवी अरु नीरा।
वे सब जड़ कछु रखें न ज्ञाना, वे क्या जाने देह रचाना।
वे नहीं स्वयं बनें तनु रुपा, सुन्दर सुधर सुरुचिर स्वरूपा।
अपने आप न बनना जाने, चेतनता नहीं किसी ठिकाने।
प्रथम होय दोष संयुक्ता, पाछे आतम होय वियुक्ता।
जो ऐसा सो ईश्वर नाँही, ईश्वरता नहीं उसके माँही।
जिस निमित्त से मुक्ति पावे, रागादिक जिससे बिलगावे।
वह निमित्त उससे जब छूटे, तत्क्षण उसकी मुक्ति टूटे।
जो है अल्प और अल्पज्ञा, नहीं वह व्यापक अरु सर्वज्ञा।
इक देशी आतम को रुपा, परिमित गुण अरु कर्म स्वरुपा।

व्यापक अरु सर्वज्ञ नहीं, नहीं आतम निर्भ्रान्त।

नहीं ग्रन्थारम्भ कह सके, सब विद्या सब मान्स।।

ताँते अर्हन आतम नाँही, प्रभु के गुण नहीं आर्हन माँही।
तुम केवल प्रत्यक्षहुँ जानो, अप्रत्यक्षहुँ क्यों नहीं मानो।

जेहि विधि सुनते नैन नहीं, अरु देखें नहीं कान।
त्यों साधन उपयुक्त से, देख सके भगवान।।

अन्तःकरण होय जब पावन, योगाभ्यास सिद्ध सरसावन।
सद्विद्या से शुचिमय आतम, तब प्रत्यक्ष करे परमातम।
विद्या के जितने परयोजन, नहीं जानें नहीं पढ़ते जो जन।
त्यों बिन ज्ञान रु योगाभ्यासा, लख नही सकते अलख प्रकासा
ज्यों भूमि के लख रुपादिक, जान भली विधि गँध गुणादिक।
अव्यवहित संबंध समेता, पृथिवी हो प्रत्यक्षो पेता।

भय लज्जा मन में उठे, जब करता कोई पाप।
यह कारज प्रभु ही करे, विलसहि मन में आप।।

क्या सन्देह होय अनुमाने, कौन पुरुष इसको नहीं माने।
सिद्ध भये प्रत्यक्षनुमाना, ताँते आगम सत्य प्रमाना।
नित्य अनादि प्रभु सर्वज्ञा, शास्त्र कार लिखते मर्मज्ञा।
प्रभु का साधक शब्द प्रमाना, एहि कारण सृष्टि ने माना।
त्रय प्रमाण से प्रभु को जानें, पारब्रह्म कहँ जीव पछाने।
अर्थवाद तब क्यों नहीं गहिये, क्यों नहीं ईश प्रशंसा कहिये
समुचित पारब्रह्म गुण गायन, सुख का दाता आनंदायन।
जो है जग में नित्य पदारथ, तिनकी चर्चा सदा सकारथ।
नित जाँके गुणकर्म स्वभावा, जिनके जग में नित्य प्रभावा।
दोष नहीं उनके गुण गाना, ताँते भक्ति करहु भगवाना।

तनिक तनिक सा कार्य्य भीं, अपने आप न होय।
वही कार्य्य होता दिखे, करे जिसे नर कोय।।

पुन यह इतना कार्य्य महाना, पंच तत्व का जगत बनाना।
पर्वत साग़र नदियाँ नारे, चन्द्र सूर्य्य नक्षत्र रु तारे।
जीव जन्तु की उचित व्यवस्था, सब द्रव्यों की साम्यावस्था।
कैसे संभव बिन भगवाना, वही रचे प्रभु देव महाना।
प्रभु परमातम के उपदेशक, जो सन्मारग के निर्देशक।
उनके मुखते जब तुम सुनिहो, उनके भावचित्त में गुनिहो।
तब अनुवाद सहज हो जाए, नहीं कठिनाई उनमें आए।

अनादे रागमस्यार्थो न च सर्वज्ञ आदिमान। कृत्रिमेण त्वसत्येन स कथं प्रति पाद्यते।।१।।
अथ तद्वचनेनैव सर्वज्ञोऽन्यै प्रदीयतें। प्रकल्पेत कथं सिद्धि रन्योन्या श्रययोस्तयोः।।२।।
सर्वज्ञोक्ततया वाक्यं सत्यं तेन तदस्तिता। कथं तदुभयं सिध्येत् सिद्ध मूलान्तरादृते।।३।।

आदिमान सर्वत्र पुन, हो नहीं सके अनाद
उसे अनादि जों कहे, उसका मिथ्या वाद।।

सत्य नहीं यह सत्य आभासे, ऐसा निगम न सत्य प्रकासे।
ऐसे वचन न सत्य प्रमानें, सत प्रतिपादक कैसे मानें।
प्रभु को सिद्ध करे प्रभु वानी, यह तो बात भई मन मानी।
वेद अनादि अनादी ईश्वर, वेदों को रचते जगदीश्वर।
अपनी देना आप गवाई, न्याय कहां का है यह भाई।
अन्योन्याश्रय दोषहि आवे, नहीं अनादिता सिद्धि पावे।

वेद सत्य हैं हेतु यह, कथन किये प्रभु आप।
वेद सिद्ध प्रभु को करें, कैसे वृथा प्रलाप।।

तीजा चहिये कोऊ प्रमाना, करे सिद्ध वेद रु भगवाना।
मान लिहो यदि ऐसा भाई, घूरि मिलेगी सब सच्चाई।
दोष अनावस्था का आवे, सिद्ध न प्रभु सिद्धि हो पावे।

उत्तर

प्रभु गुणकर्म स्वभाव अनादी, अन्त नहीं नहीं उसका आदी।
तुमरी शंका निपट अकारय, जो हैं सकल अनादि पदारथ

अन्योन्याश्रय दोष न तिनमें नित स्वभाव होता है जिनमें।

जिमि कारज से कारण जानें, कारण से कारज पहचानें।

कारण का जिमि कार्य में, रहता नित्य स्वभाव।
तिमि कारण में कार्य का, नित्य स्वभाव प्रभाव।।

एहि विधि प्रभु प्रभु के गुणकर्मा, रहें नित्य नहीं ईश्वर धर्मा।
तांते प्रभु कृत वेदों मांही, अनवस्था कहीं देखें नाही।
तीर्थंकर को तुम प्रभु मानो, निपट असंभव झूठ बखानो।
तिनका तन नहीं बिन पितु माता, जनक जननि बिन जन्म न पाता।
नहीं शरीर यदि होता तिनका, को तपकर पद पाता जिनका।
कैसे होता उनको ज्ञाना, संभव था किमि मुक्ति पाना।

होय आदि संयोग का, सादी है संयोग।
संभव नहीं संयोग पुन, यदि नहीं होय वियोग।

तांते गनहु अनादि ईश्वर, अजर अमर नित सत जगदीश्वर।
सिद्ध होय चाहे कोऊ केता, हो नहीं सकता पूरण वेता।
तनु आदिक की रचना जाने, पूर्ण रूप से इसे पछाने।
किसी सिद्ध की समरथ नाहीं, नहीं कोई न हो जग माहीं।
सिद्ध सुषुप्ति मँह जब जावे, तनमन की सब सुधि बिसरावे।
जब कोई जीव कष्ट में होवे, तव भी ज्ञान बुद्धि सब खोवे।
अस परिछिन्न समर्था वारे, एक देश में रहने हारे।
आतम को जो ईश्वर माने, उसकी बुद्धि नहीं ठिकाने।
केवल मानहिं जैनी भोले, जिनकी बुद्धि अस्थिर डोले।
मात पिता से अर्हन जनमें, जो तुम समझो ऐसा मन में।
उनके मात पिता किमि आये, उनके दादा किन उपजाये।
दादा के दादा को जन्मा, किस विध भया कहो किस छनमां।
अनवस्था नहीं मिटने पाए, इस का अन्त कहां पर जाए।

आस्तिक रु नास्तिक दोऊ, दोनों का सम्वाद।

वरणहुं अब विस्तार से, सुनिये त्याग प्रमाद।

भाग दुतिय प्रकरण रत्नाकर, जिसको जानहिं जैन गुणाकर।
मुम्बापुरी में जो छपवाया, जैन पंथ दर्पण मन भाया।

नास्तिक

प्रभु इच्छा से हो कुछ नाहीं, कर्म प्रबल हैं इस जग माहीं।
कर्म हँसाते कर्म रुलाते, सुख दुख कर्माधीन उठाते।

आस्तिक

सब कुछ हो यदि कर्म ते, कर्म कौन ते होय।
कहो यदि जीवादि से, है साधन पुन कोय।

नयनादिक इन्द्रिय जे साधन, चले कर्म जिनमें निर्बाधन।
किनसे भये श्रोत्र नयनादी, यदि तुम मानहु इन्हें अनादी।
इन्हें स्वाभाविक यदि तुम मानहु, काल अनादी से परमानहु।
तो अनादी नहीं छूटन पावा, मुक्ति का पुन होय अभावा।
प्रागभाव वत सान्त अनादी, यदि कोऊ ऐसा कहे विवादी।
तो बिन यत्न निवृत्त हों कर्मा, निष्फल हों पुन धर्माधर्मा।
जो नाहीं प्रभु फल का दाता, केहि विध जीव कर्मफल पाता।
अपने आप कौन दुख पावे, जान बूझकर कष्ट उठावे।
चोर करे चोरी अरु भागे, डरता है कोई पुरुष न जागे।
कभी न देखा जाता थाने, चोरी का फल चाहता पाने।
राजकर्मचारी तिहिं पकड़े, हाथ पाँव साँकर से जकड़े।
एहि विधि ईश्वर दुख सुख दाता, जीवों से वह भोग भोगाता।
कर्मों में भी गड़बड़ होगी, करे कोई अरु कोई भोगी।

नास्तिक

अक्रिय है प्रभु क्रिया न करता, यदि करता तो फल भी भरता।
प्राप्त केवली मुक्तों को हम, अक्रिय मानें जिनि हम तेहिसम।
तुम भी प्रभु को अक्रिय मानो, कर्मशील उसको मत जानो।

नहीं अक्रिय है सक्रिय ईश्वर, चेतन जग कर्त्ता जगदीश्वर।
चेतन है तो क्यों नहीं करता, क्यों नहीं जग का कर्ताधर्ता।
कर्त्ता पृथक क्रिया से नाँही, क्रिया रहे नित कर्त्ता माँही।

जीवहि ईश्वर बन गया, यथा तथागत देव।
इस प्रकार तुम मानते, करते बानीं सेव।।

को अस कृत्रिम ईश्वर माने, जींवहि ब्रह्मा बना पहिचाने।
सहमत इससे नहीं विद्वाना, सार न इसमें कुछ भी जाना।
यदि निमित्त से प्रभु बन जाए, जीव प्रभु की पदवी पाए।
तो अनित्य पुन होगा परवस, नष्ट होय पुन प्रभुता सर्वस।
पहले रहा निपट यह आतम, कारण वश हो गया परमातम।
जीव दोबारा वह बन जाए, निज स्वभाव को नहीं तज पाये।

जीव भाव से रह रहा, बीता समय अनन्त।
निज जीवत्व न तज सके, अति स्वभाव बलवन्त।।

स्वतः सिद्ध अनादी ईश्वर, एहि विधि मानहु तुम जगदीश्वर।
वर्तमान में आतम देखो, पाप पुण्य करता अवलेखो।
ऐसा नहीं होता जगदीश्वर, पाप पुण्य से ऊपर ईश्वर।
आतम सम दुख दुख नहीं पावे, जीव सरिस नहीं कष्ट उठावे।
सक्रिय नहीं यदि ईश्वर भाई, तो किसने ये सृष्टि रचाई।
प्रागभाववत यदि यह कर्मा, सान्त अनादी इनके धर्मा।
संयोगज हो होय अनित्या, पुन संबंध रहे नहीं नित्या।
क्यों नहीं क्रिया मुक्ति के माँही, क्या आतम में चेतन नाहीं।
मुक्त जीव यदि होंते ज्ञानी, अक्रियता पुन कैसे मानी।
अन्तर क्रिया जीव तब कर्त्ता, चिन्तन के नभ माँहि विचरता।

हिले डुले बोले नहीं, नहीं कछु करता भान।

पड़ा रहे मुक्तात्मा, जैसे इक पाषान।।

एक ठिकाने रहे अकेला, निश्चल जिमि माटी का ढेला।
मुक्ति नहीं यह बंधन भारा, जिसने जकड़ा जीव बेचारा।
चहुँ ओर जिसके अंधियारा, सूझत नहीं जिसको उजियारा।

नास्तिक

पारब्रह्म व्यापक नहीं, यदि होता सब धाम।
सभी द्रव्य चेतन हुते मिटता जड़ को नाम।।

होते सगरे वर्ण समाना, ऊँच नीच का मिटे विधाना।
सब में व्यापक जब प्रभु भाई, पुन क्यों हो लघुताइ बढ़ाई।

आस्तिक

व्याप्य रु व्यापक एकहुँ नाही, है पृथक्त्व दोनों के माहीं।
सर्व देश मँह रहता व्यापक, अगम अनन्त अपार अमापक।
एक देश मँह व्याप्य बिराजे, इक मर्यादा अन्दर छाजे।
ज्यों व्यापक सब मँह आकासा, घट पटादि में करहि निवासा।
घट पट भूमण्डल इक देशी, नहीं व्यापक अरु नहीं सब देशी।
धरा आकाश एक नहीं जैसे, प्रभु अरु सृष्टि एक न तेसे।
गगन रमे ज्यों घट पट माँही, गगन रूप वरु घट पट नाँहीं।
त्यों व्यापक प्रभु सब मँह चेतन, वस्तुतथापि सकल अचेतन।
वे सब चेतन नहीं हो पायें, यद्यपि प्रभुतिन मँह विलसाएँ।
पुण्यवान अरु पुरुष अधर्मी, सुकृत कर्ता अरु दुष्कर्मी।
अनपढ़ मूरख अरु विद्वाना, कभी न होते एक समाना।
सद्गुण विद्या शीलाचारा, न्यूनाधिक इनको सञ्चारा।
नाना भावनुभाव प्रभावा, ताँते सब के भिन्न स्वभावा।
एहिविधि ब्राह्मण वैश्य राजन्या, कोई ऊँचा अरु कोई जघन्या।

समुल्लास चतुर्थ मँह, इसका किया बखान।

पढ़कर उसे विचार लें, सज्जनगण विद्वान।।

नास्तिक

जगत रचा यदि प्रभु ने, जो व्यापक सब धाम।
मात पिता का तो कहो, रहा शेष क्या काम।

आस्तिक

ईश्वरीय सृष्टि का कारक, ईश्वर ही है जग उपकारक।
जीव सृष्टि को जीव रचावे, कूटे छाने पीस पकावे।
सागर पर्वत सूरज वृष्टि, फल अनाज ईश्वर की सृष्टि।
उनको ले जीवातम खाये, अति स्वादिष्ट पदार्थ रचाये।
अपना कारज आपहि करता, नहीं करता तो भूखा मरता।
प्रभु नहीं उसके घर का चाकर, अन्न पकाये आग जलाकर।
इस सृष्टि में जग के ढाँचे, रचे जीव के तनु के साँचे।
प्रभु के इतना काम अधीना, जीव जन्तु को सब कुछ दीना।
आगे संतति का उपजाना, शिल्प सभ्यता कला बढ़ाना।
यह कर्त्तव्य जीव का जानें, यही लोक अरुवेद बखानें।

नास्तिक

चिदानन्द प्रभु ज्ञान स्वरूपा, शाश्वत नित्य अनादि अनूपा।
जगत प्रपंच रुप दुख माँही, उसको पड़ना समुचित नाँही।
आनन्द तज पुन दुःख उठाना, करे न कोई मूर्ख अयाना।
क्यों ईश्वर ने दुख अपनाया, क्यों उसके ऐसा मन भाया।

आस्तिक

प्रभु नहीं गिरता दुःख में, नहीं तजता आनन्द।
इक देशी परपंच में, फँसे सहें दुख द्वंद।।

सर्व वियापी प्रभु अविनाशी, दुख मँह गिरे न घट घट वासी।
चिदानन्द घन ज्ञान स्वरूपा, ब्रह्म अनादी कर्म अनूपा।

वह प्रभु यदि नहीं सृष्टि रचावे, कहो कौन पुन अन्य बनावे।
किसी समरथ जगत बनाना, वही बनावे शक्ति निधाना।
इक देशी है जीव बेचारा, नहीं सृष्टि का रचने हारा।

स्वयं न जड़ कछु बन सके उसमें नहीं कछु ज्ञान।
सिरजन हारा जगत को ताँते इक भगवान।।

सृष्टि रचे आनन्द न त्यागे, दुःख क्लेश उसको नहीं लगे।
ज्यों ईश्वर अणुओं के द्वारा, रचता है सगरा संसारा।
मात पिता के द्वारा वैसे, जग उत्पत्ति करता तैसे।
हैं निमित्त कारण पितु माता, इनसे सृष्टि प्रभु उपजाता।
उसने ही यह नियम बनाया, जो यह अद्भुत जगत रचाया।

नास्तिक

उत्पन्न करना पालना, पुन करना संहार। तज मुक्ति सुख क्यों पड़ा, बिरथा कष्ट मँझार।

आस्तिक

सदा मुक्त है ईश्वर भाई, नहीं उसको दुख अरु कठिनाई।
तीर्थंकर हैं यथा तुम्हारे, एक देश में रहने हारे।
सिद्धि गद्दी जिन साधन द्वारा, मुक्ति हेतु करते उपचारा।
बंधु पूर्व मुक्ति से मुक्ता, ऐसी मुक्ति से संयुक्ता।
ऐसा मुक्त नहीं परमेश्वर, सत्य सनातन प्रभु सर्वेश्वर।
प्रभु अनन्त गुण कर्म सुभाऊ, जग व्यापी राउर को राऊ।
यह ब्रह्माण्ड तुच्छ तिस आगे, इसे बनाते छिन नहीं लागे।
करते धरते इसे बनाते, बँध माँहि प्रभु नहीं पड़ जाते।

वँध मोक्ष सापेक्ष्य हैं, निर अपेक्ष्य यह नाँय।
वँध बिना मुक्ति नहीं, मुक्त बद्ध हो जाँय।।

जो नहीं कभी बद्ध त्रयकाला, हुआ न है नहीं होने वाला।
वाकी मुक्ति के क्या अर्था, सदा मुक्त वह सकल समर्था।

बद्ध मुक्त जीवातम होते, सुख दुख में नित खाते गोते
प्रभु अनन्त व्यापक सब धामा, वाको बंधन से नहीं कामा।
नैमित्तिक मुक्ति क्यों पावे, चक्कर में क्यों आवे जावे।
तीर्थंकर हैं यथा तुम्हारे, ऐसे नहीं हैं प्रभु हमारे।
सदा मुक्त ताँते जगदीश्वर, नहीं बन्धन में आता ईश्वर।

नास्तिक

भोग सके निज कर्म के, जीव आप परिणाम
नशा भंग का ज्यों चढ़े, ईश्वर का क्या काम।।

नशा भंग का कौन चढ़ावे, अपने आप लहर लहरावे।
एहि विधि जीव करें जो कर्मा, पुण्य पाप वा धर्माधर्मा।
अपने आप भोग फल लेता, ईश्वर नहीं कुछ लेता देता।

आस्तिक

लंपट डाकू चोर जुआरी, पापी हिंसक अत्याचारी।
स्वयं न जाये कारावासे, बल से पकर नृपति तिंहि नासे।
एहि विधि ईश्वर जीवहुँ ताँही; योजहि कर्मों के फल माँही।
फल कुकर्म का दे जगदीशा, केवल ईश्वर न्यायाधीशा।

नास्तिक

मुक्त जीव जग में जिते, सब परमातम देव।
एक प्रभु नहीं सृष्टि में, जाकी कीजे सेव।।

आस्तिक

युक्ति युक्त नहीं बात तुम्हारी, निपट निरर्थक बिना विचारी।
प्रथम वद्ध पुन मुक्ति पाए, ऐसा मुक्त पुनः बँध जाए।
नहीं स्वाभाविक मुक्ति ताँकि, क्षणिक मोक्ष की बाँकी झाँकी।
तीर्थं कर चौबीस तुम्हारे, जैसे पूर्व बद्ध थे सारे।
अवस गिरें पुन बन्धन माहीं, उनकी मुक्ति निरंतर नाँहीं

अनिक प्रभु यदि माने भाई, उनकी होगी सदा लड़ाई।
अनिक जीव जैसे नित लड़ते, रहे परस्पर सदा झगड़ते।

नास्तिक

जग निर्माता नहीं कोऊ, अब तो मूरख जाग।
स्वयं सिद्ध है, प्रभु सत्ता को त्याग।

आस्तिक

जैन पंथ की देखिये, किती बड़ी भूल
स्वयं सिद्ध जग को कहें, अस विचार निर्मूल।।

कर्त्ता के विन कर्म न कोई, बिना किये कारज नहीं होई।
कनक खेत से लाये किसाना, बिन पीसे नहीं बने पिसाना।
रोटी मिले न पकी पकाई, बिन खाये नहीं जाये खाई।
धोती कोट कमीज कपासा, खादी मलमल लट्ठा खासा।
कुड़ता कोट कमीज़ पाजामा, यह सब पट बिनुए के कामा।
अपने आप न देखा बनता, कभी न देखा ताना तनता।
जब ऐसा होता नहीं देखा, बिन कर्त्ता कोऊ कर्म न पेखा।
पुन प्रभु कर्त्ता के बिन कैसे, अचरज द्रव्य बने यह जैसें
यह विचित्र संसार महाना, कैसे बना बिना भगवाना।
स्वयं सिद्ध यदि हठ से मानो, ईश्वर को कर्त्ता नहीं जानो।
तो प्रत्यक्ष हमें दिखलाएँ, स्वयं वस्त्र जहाँ बनते जाएँ।
जब ऐसा करना नहीं संभव, को माने पुन बात असंभव।
नहीं युक्ति नहीं कोई प्रमाना, ताँते कर्त्ता है भगवाना।

नास्तिक

मोही है वा प्रभु विरागी, कौन भावना का अनुरागी।
जो विरक्त है प्रभु तुम्हारा, तो प्रपंच क्यों इता पसारा
यदि मोहित तो शक्ति न वाकी, सृष्टि रचाये वह एकाकी।

आस्तिक

ईश्वर में नहीं घट सके, मोह और वैराग।
व्यापक वह किसको गहे, किसे करे पुन त्याग।।

प्रभु से उत्तम वस्तु न कोई, नहीं अप्राप्त द्रव्य कोऊ होई।
ताँते होता मोह न ताको, सभी वस्तु प्रापत हैं वाको।
रहे जीव में मोह रु त्यागा, ईश्वर में नहीं राग विरागा।

नास्तिक

जग कर्त्ता कर्मन फल दाता, प्रभु को मानोगे यदि भ्राता।
तो पर पंची होकर ईश्वर, दुखी रहेगा तब जगदीश्वर।

आस्तिक

नाना विधि कर्मों का कर्त्ता, न्यायी न्याय दण्ड का धर्ता।
कर्मों का फल देने हारा, विद्यावान न्याय आकारा।
नर प्रपंच में फँसता नाँही, पुन शंका क्यों ईश्वर माँही।
ईश्वर की तो शक्ति अनन्ता, सकल समर्थ प्रभु बलवन्ता।
वह प्रपंच में क्यों फँस पाए, वह नहीं फँसकर दुःख उठाएं
तीर्थंकर हैं यथा तुम्हारे, ऐसे नहीं हैं प्रभु हमारे।
तुमने ईश्वर को नहीं जाना, उसका रूप नहीं पहचाना।
इसका कारण निपट अविद्या, भूल गये तुम वैदिक विद्या।

दोष अविद्या आदि से, यदि बचने की चाह।
शरण गहो सच्छास्त्र की, भटक गये तुम राह।।
जैसा मानें जगत को, जैन सूत्र अनुसार।
उसका अब वर्णन करें, सत्यासत्य विचार।।
नहीं जनमें नहीं नष्ट हो, जगत अनादि अनन्त।
नहीं कर्त्ता कोई सृष्टिका, कभी न होता अन्त।।

समीक्षक

संयोजग वस्तु जग माँही, दुनियाँ में कोई देखी नाँहीं।
जिसका होवे आदि न अन्ता, जो देखा सो बिगड़ा बनता।
बिन उत्पत्ति अरु विन नासा, जग में नहीं कर्म को वासा।
जिते पदारथ बनते देखे, नाशवान संयोगज पेखे।
पुन क्यों जगत अनादि अनंता, क्यों नहीं उत्पत्ति अरुतिस अंता।
तीर्थंकर मानहु तुम जिनको, सम्यग बोध नहीं था तिनको।
सम्यग बोध यदि वे राखें वचन असम्भव क्यों अस भाखें।
जैसे गुरु वैसे तुम चेले, ज्ञान शून्य मट्टी के ढेले।
तुमरी बात सुने जो काना, उसे न होय पदारथ ज्ञाना।
जो संयुक्त प्रतक्ख पदारथ, शंका उस पर करहु अकारथ।
उसकी उत्पत्ति नाश न जानो, आँखों देखे अरु नहीं मानों।

ज्ञान न रखते तनिक भी, क्या भूगोल खगोल।
जैनी अरु इनके गुरु, निपट ढोल के पोल।।

अंट संट जिख डारे वैना, जनु फूटे बुद्धि के नैना।
जल काया अरु पृथिवी काया, जीव मान जग को भरमाया।
कहें जीव का क्षिति शरीरा, सभी जीव यावत यह नीरा।
ऐसे वचन असंभव सोई, जिनको मान सके नहीं कोई।

तीर्थंकर जिनको गुनहिं परमेश्वर यह जैन।
सम्यक ज्ञानी अरु कहें, सुनिये उनके बैन।।

रत्न सार जिहिं जैन प्रमानें, धर्म ग्रन्थ जिसको वे मानें।
कहा समय को सूक्षम काला, उसका लेखा लिखा निराला।
असंख्यात समयों को आवलि, कहते उनकी बुद्धि बावलि।

एक कोटि सत्तर सहस, अरु पुन सर्सठ लाख।
दो सौ सोलह आवाल, का मुहूर्त मन राख।

एक दिवस के तीस मुहूरत, पंद्रह दिवस पक्ष को मूरत।

एक मास के दो पखवारा, द्वादस मासहुँ वर्ष पुकारा।

छप्पन लाख करोड़ अरु, छप्पन सहस करोड़।
वर्षों का इक 'पूर्व' हो, दोऊ राशिन को जोड़।

असंख्यात 'पूरव' मिल जाएं तब 'पल्योपम' एक बनाएं।
'असंख्यात' कहते हैं किसको, लेखा कीजे वर्णहिं तिसको।
चार कोस चौरस अरु गहरा, कूआ खोदें अंधा बहरा।
बौने नर के राम लिवाएं, उनसे वह कूँआ भरवाएं।
बौने के रोमों का लेखा, पढिये जैनिन जो उल्लेखा।

चार सहस अरु छानवे, बौने नर के बाल।
मिल कर अबके पुरुष का, एक बाल इस काल।
एक अंगुल भर बालके, कीजे टुकड़े सात।
उस टुकड़े के आठ पुन, खंड कीजिये भ्रात।

उन खंडों से कूआ भरना एक खंड भी न्यून न करना।
सौ सौ वर्ष बाद इक बाला, उस कूँए से जाये निकाला।
जब कूँआ खाली हो जाए, बाल एक भी रह नहीं पाएं
असंख्यात यह भी है काला, गिन ले इसको गिनने वाला।
अब सुनिये पल्योपम गिनती, वैसा माप तौल व मिनती।

असंख्यात टुकड़े करो, उन बालों के फेर।
भर दो उनसे कूप को, गेर ढेर के ढेर।

ऐसा ठस के कूँआ भरना, सेना गुजरे चहे गुजरना।
चक्रवर्ति नृप दल चल जाए, रोम कूप पर दब नहीं पाए।
सौ सौ वर्ष बाद इक बाला, पुन कूँए से जाय निकाला।
जब वह कूँआ होवे रीता, पूरा समय अभी कहाँ बीता।
असंख्यात 'पूरब' पुन बीतें, पाठक गिनती मनमें चीतें।
तब होवे पल्योपम काला, है कोई गिनती करने वाला।

कूँए के दृष्टान्त से, यह पल्योपम काल।
इसको कहें उतारना, लोग बाल की खाल।
पल्योपम जब बीतते, दसकोटानुकोट।
'सागरोपमा' काल यह, कहें बुद्धि के मोट।

सागरोप दश कोटनुकोटा, जब यह समय व्यतीते मोटा।
तब होवे उत्सर्पिणि काला, कैसा भ्रम में जग को डाला।
जब लग इक उत्सर्पिणि पुनः व्यतीते।
'कालचक्र' इक इसको कहना, आगे वर्णहुँ सुनते रहना
अनत काल चक्कर फिर जाए, परावृत्त पुद्‌गल कहलाये।

'अनत काल' किसको कहें, पढ़ें ग्रन्थ सिद्धान्त।
उसमें यह वर्णन किया, देकर नौ दृष्टान्त।

परावृत्त पुद्‌गलहु अनन्ता, इते काल से जीव भ्रमन्ता।
सुनहु गणित के जानन हारो, इते काल को तुम्हीं विचारो।
कर सकते हो गणना कहिये, कर्ण हाथ धर बैठे रहिये।
तीर्थवर देखो सर्मज्ञा, कितने बड़े भये मर्मज्ञा।
जैसे गुरु वैसे हैं चेला, करी गणित की क्या अवहेला।
घोर अविद्या का अँधियारा, सूझत नहीं कहीं हथ पसारा।

रत्नसार पन्ना पुनः, इक सौ अर तेंतीस।
उसके आगे क्या लिखें, सुनहु देव जैनीस।
ऋषभ देव से आदि लौं, महावीर पर्य्यन्त।
चौबिस गिनती में हुए, तीर्थंकर अर्हन्त।

इन सब अर्हन्तों के बचना, संग्रह करके सबकी रचना।
अरु सिद्धान्त ग्रन्थ जैनिन के, वर्णन किये वचन सब तिनके।
रत्नसार पुस्तक वह जाने, जिसको जैनी सत्य प्रमानें।
इक सौ अरु अड़ताली पन्ना, लिखें जैन तहाँ बुद्धि प्रपन्ना।

पृथ्वी काय के जीव के, अनिक भेद लें जान।
कही माटी का रूप हैं, कहीं पर्वत पाषान।

जीव जो उनमें बसने हारे, जो शरीर उन सबने धारे।
लिखते उनका तनु परिमाना, अब विचार कर ले विद्वाना।

छप्पय

असंख्यातवाँ भाग एक अंगुल का जानें।
अति सूक्ष्म तनु उन जीवों का, इस विधि मानें
वर्ष सहस बाईस आयु वे रहते जीते।
हैं पत्थार के रुप नहीं कछु खाते पीते।
एक वनस्पति देह में आतम बसते हैं अनत।
एहि विधि जीवों से सकल भरा पड़ा है यह जगत।
वनस्पति साधारण का माना यह माना।
कन्द मूल वासी जीवों का यह परिमाना।
अनत काय परमुक्ख होंय यह जीव साधारण।
अनत मुहूरत जियें कंद फल मूल उपारण।
पर पूर्वोक्त मुहूर्त ही जाने यहां पर काल का।
जो पहले वर्णन किया गणित बाल की खाल का।
'वनस्पति प्रत्येक' नाम उनका कहलाता।
जहाँ केवल इक इन्द्रिय मय इक जीव बसाता।
इक योजन भर उनके तनुका है विस्तारा।
दस सहस्त्र कोसो का योजन वार न पारा।
पोप पौराणिक यद्यपि चार कोस योजन कहें।
दश सहस्त्र से चौगुना जीव जैन के तनु गहें।
दो इन्द्रिय के जीव का, करते सुनहु बखान।
मुख इन्द्रिय इक वे रखें, इक तनु रखें महान।

जैसे कौड़ी घुग्गु यूका, खटमल पिस्सु मच्छर लूका।
अड़तालिस कोसों की देहा, रखते हैं जीवातम एहा।
बारह वर्ष तलक यह जीयें, मनोनीत यह खायें पीयें।
अर्हन देव बहुत यहाँ भूला, देह सन दीनी तनु अनुकूला।

जूँ अड़ताली कोस की, जैनिन के सिर माँहि।
रह सकती है वहीं पर, और ठौर कोऊ नाँहि।

जूंका इतनी चौड़ी लंबी, देखहिं जैसी मत अवलंबी।
भाग्यवान नहीं दूजा कोई, ऐसी जूँ जिसने अवलोई।
बिच्छु मक्खी कान खजूरे, जिनके तनु योजन भर पूरे।
यह छः मास तलक हैं जीते, कंकर कीड़े खाते पीते।
चार कोस का बिच्छु मक्खी, भले ही जैन के घर हो रक्खी।
अन्य किसी न देखी नाँही, देखें जा जैनी गृह माँही।
ऐसा बिच्छु यदि लड़ जाए, तो क्या करे जैन बतलाए।

जलचर मच्छी आदि का, वरणाई तनु का मान।
लंबा चौड़ा स्थूल पुन, कोटि कोस परिमान।
एक कोटि पूरब बरस, इनका आयु प्रमान
केवल जैनी देखते, जलचर इता सहान।

हाथी आदिक जन्तु चौपाया, रखते लंबी चौड़ी काया।
दो कोसों से नव पर्य्यन्ता, इतने दीरघ काय धरन्ता।
सहस्र चौरासी वर्ष अवस्था, आयुमान तिन केरि व्यवस्था।
इतने बड़े जन्तु देहधारी, वे मानहिं जिनकी मतिमारी।
जलचर गर्भज इते विशाला, कोस करोड़ एक लिख डाला।
पूर्ब वर्ष इक कोटी जीते, मानहिं जैन तर्क ते रीते।
इतनी आयु इतनी काया, अहो जैन ने झूठ फैलाबा।

रत्नसार का ग्रन्थ यूँ, लिखे भूमि परिमान।

पढ़े लिखे भूगोल के, करले इसका ध्यान।

इस तिरछे जग ओर निहारें, कितनां है विस्तार विचारें।
द्वीप असंख्य पड़े अस माँही, जलधि असंख्य अंत कछु नाँहीं
असंख्यात का कहें प्रमाना, जिसको जैन पंथ ने माना।
सागरोपमा काल अढाई, 'असंख्यात' अस जानहु भाई।
असंख्यात इक काल समाना, जग में इतने द्वीप महाना।
विद्यमान इतने ही सागर, धन धन जैनी बुद्धि उजागर।
प्रथम द्वीप है जंबु द्वीपा, सब दीपन का मनहु महीपा।
एक अरब कोसों का माना, लवण जलधि चहुँ ओर महाना।
लवण जलधि का है बिस्तारा, दोऊ अरब कोसों का भारा।
धातकि खण्डदीप पुन राजे, जंबु दीप के चहुँ दिक भ्राजे।
कोस अरब द्वै तिसको माना, इतना धातकि खण्ड महांना।
कालोदधि सागर तिस आगे, आठ अरब कोसों तक लागे।
आगे दीप पुष्करावर्ता, वाका सोलह कोस आवर्ता।
दीप माँझ हैं नाना कोरें, मानो फैल रही हों डोरें।
अर्ध दीप मँह मानव बस्ती, निर्जन शेष सिंह वृक हस्ती।
आगे सागर दीप असंख्या, गिनी न जाए बाकी संख्या।

तिर्यक जन्तु वहाँ पर, अगणित रहें अपार।
कोऊ गणना नहीं कर सके, पाय सके नहीं पार।।

छय छेत्तर हैं, जंबु दीपे, इक दूसर के बसहिं समीपे।
देव कुरु उत्तर कुरु रम्यक, पुन हरि वर्ष चतुर्था सम्यक।

हिम वन्त रु ऐरण्ड वत्त, यह छः छेत्र महान।
जंबु दीप के नाम से, इनको किया बखान।।

सुनो सुनो भूगोलक ज्ञानी, इस विद्या के तुम अभिमानी।
पृथिवी का देखा विस्तारा, अब तुम इस पर करो विचारा।
तुम भूले वा भूले जैनी, बुद्धि दोउन में किसकी पैनी।

जो भूले हैं जैन बेचारे, क्यों पुन मौन भये तुम सारे।
उनको सीधे मारग लाओ, पृथिवी का परिमाण बताओ।
और यदि हो भूल तुम्हारी, जैन बात फिर करहु सकारी।
कुछ भी मन मँह करें विचारा, तो लख पाएँ सार असारा।
सगरे जैन गुरु चेले, गप्प हाँकने में अलबेले।
नहीं भूगोल खगोल पछाने, गणित शास्त्र में निपट अजाने।
ऐसे पुरुष महाँ अज्ञानी, यही जिन्होंने मही बखानी।
कहें अकर्तृक यदि संसारा, नहीं मानें जग का कर्तारा।
नहीं कछु इसमें अचरज भाई, इसमें घोर अविद्या छाई।
एहि कारण नहीं ग्रन्थ दिखाते, गप्प शास्त्र को बड़े छिपाते।
अन्य मती इनको लख पाएँ, पढ़कर इन पर हँसी उड़ाएँ।
अर्हन्तों के निर्मित ग्रन्थन, लोग करेंगे इनका मन्थन।
पोल ढोल का सब खुल जाए। मारग जैन समूल नशाए।
यही अविद्या ग्रन्थन माँही, सतत् असत्य तथ्य कछु नाँही।
कुछ भी बुद्धि जो जन राखे, इन ग्रन्थों को मिथ्या भाखे।
यह जो महाँ प्रपंच रचाया, इसका भाव जान हम पाया।
यह जो जगत अनादी माना, तनना पड़ा तभी यह ताना।
किन्तु झूठ यह झूठ प्रमानों, एकहु बात सत्य मत जानो।
जग का धारण अवस अनादी, पंच तत्त्वका नहीं अस आदी।
परमाणु का नहीं कोई करता, नित्य अनादी यह नहीं मरता।

नियम पूर्व बिगड़े बने, अणु में समरथ नाँहि।
जड़ है हिल डुल नहीं सके, चेतन नहीं इन माँहि।।

द्रव्य नाम का है परमाणु, पृथक पृथक जड़ निश्चल थाणु।
अपने आप न बनने पायें, यथा योग्य नहीं रूप बनाएँ।
ताँते उन्हें बनाने हारा है, चेतन कोई कर्तारा।
ज्ञानवान वह है निर्माता, जिसका गान सकल जग गाता।
देखो पृथिवी सूरज तारे, बन पर्वत सागर अति भारे।

इन्हें नियम अनुसार चलाना, इन्हें बनाना और मिटाना।
चेतन देव अनादि अनन्ता, पारब्रह्म जसु आदि न अन्ता।
केवल कर्म उसी का जानो, उसकी सत्ता को पहचानो।
स्थूल जगत संयोगज रचना, होय अनादि मिथ्या वचना।
कार्य जगत को जो नित माने, कारण रहित उसे पुन जाने।
वही कार्य का होगा कारण, इस पर लागे दोष अकारण।
आपहि कारज आपहि कारण, सब जानें यह दोष साधारण।

अन्योन्याश्रय दोष अरु, आतम आश्रय दोष।
निज कंधे आपहि चढ़े, कौन करो कुछ होश।।

अपना पिता आप नहीं होवे, अहो जैन किस निद्रा सोवे।
ताँते अवस सृष्टि निर्माता, परमेश्वर ही इसे रचाता।

प्र०– पारब्रह्म यदि मानिये, रचता सगरे भौन।
तो बतलाओ ब्रह्म को, रचने हारा कौन।।
उ०– कर्त्ता का कर्त्ता नहीं, हो सकता त्रयकाल।।
कारण का कारण कहाँ, तजहु वाग जंजाल।।

प्रथम होंय कर्त्ता अरु कारण, पाछे होवे कार्य साधारण।
कारण में नाँही संयोगा, नहीं पुन उसमें होय वियोगा।

दो०–जो संयोग वियोग का, पहला कारण होय।
तसु कारण कर्त्ता पुनः नहीं होता पुन कोय।।
समुल्लास अष्टम पढ़ें उसमें है विख्यान।
सृष्टि की रचना विषे, पढ़िये धर कर ध्यान।।

स्थूल बातभी जैन न जानें, केहिविधि सूक्ष्मसृष्टि पहचानें
अनत अनादिगनहिं संसारा, ऐहिविधि मिथ्या रखें विचारा
अनत अनादि द्रव्य पर्याया, यह असत्य मन्तव्य बनाया।
प्रतिगुण अरु प्रति देशहुँ माँही, वस्तु वस्तु में अरु सब ठाईं।

अनत अनादि गनहिं पर्याया, यह सगरा भ्रम जाल फैलाया।
जाको अन्त न हो मर्यादा, अनत कथन ताको भ्रमवादा।
वाके तो सब सान्त संबंधी, नाशवान सगरे अनुबंधी।
यदि अनन्त को अगणित मानें, तो भी उचित न इसे प्रमानें।
जीवापेक्षा होय अनन्ता, प्रभु तो अणु अणु माँहि रमन्ता।

एक द्रव्य में है, समरथ कारण काज।
तिहिं पर्याय अभाग से, अनत गनहिं केहि काज।।

अणु द्रव्य की है जब सीमा, मर्यादित है नहीं असीमा।
अनत विभाग रूप पर्याया, उसमें केहि विधि रहे समाया।
गुण अनन्त इक वस्तु माँही, होवें यह तो संभव नाँही।
गुण प्रदेश इक माँहि समाया, अनत अभाग रूप पर्याया।
यह भी बालिश बुद्धि जानो, रञ्चक सत्य न इसमें मानो।
हो अधिकरण अंतवत जाका, किमि अनंत हो वासी ताका
लम्बी चौड़ी झूठ कहानी, इस विधि लिखी बहुत मन मानी।

अब वर्णहुँ जो जैन मत, मानहिं जीव अजीव।
गुण स्वरूप इनके लिखें, आकृति सीव असीव।।

"चेतना लक्षणों जीवः स्याद जीवस्तदन्त्यकः सत्कर्म पुद्गलाः पुण्यं पापं तस्य विपयर्य!।।"
जिन दत्त सूरी की यह वानी, सगरे जैन पंथ ने मानी।
प्रकरण रत्नाकर मँह उल्लेखा, प्रथम भाग मँह यह अवलेखा।
पुन नव चक्र सार के अन्दर, लिखते पंडित जैन धुरन्धर।

जहाँ जहाँ चेतन पाइये, वाको जानें जीव।
बिन चेतन जड़ वस्तु है, जड़ को नाम अजीब।।

पुद्गल पुण्य कर्म सतरूपा, दुष्कृत पुद्गल पाप स्वरूपा।

समीक्षक

जीवरू जड़के समुचित लक्षण, पर कीनी इक बात विलक्षण।

जड़ पुद्गलको नहीं कछु ज्ञाना, पाप पुण्यमय वह क्यों माना।
जो अनादि जीवों को माना, सो वरु समुचित सत्य बखाना।
जीव अल्प अरु है अल्पज्ञा, मुक्ति पाय होवे सर्वज्ञा।
झूठ नितान्त इसे किमि मानें, किमि सर्वज्ञ उसे परमानें।
जो अल्पज्ञ अल्प अरु सीमित, ताकी शक्ति न होय असीमित।
सदा ससीम रहेगा आतम, बने असीम न हो परमातम।
जगत जीव जीवहुँ के कर्मा बंध आदि जीवों के धर्मा।
इनको मानें जैन अनादी, यहां सत्यता फेर भुला दी।
भूल गये इनके तीर्थंकर, कैसी कीनी भूल भयंकर।
यह संयुक्त सृष्टि है भाई, कौन न जाने यह सच्चाई।
इसके कारण कारज आदी, कभी नहीं हो सकें अनादी।
बन्ध रु कर्म अनादि न सम्भव, हो संयुक्त अनादि असम्भव।

कर्म रु बंध प्रवाह से, मानहु यदि अनाद।
तो इनसे पुन छूटना, जानहु व्यर्थ प्रमाद।।

कबहुँ न छूटे अनादि पदारथ, यही सत्य निर्भ्रान्त यथारथ
जो अनादि का गनहु विनाशा, सकल अनादि द्रव्य हों नाशा
तुमरे जिते अनादि पदारथ, सब नश्वर सब होंय अकारथ।
जब अनादि मानहु अविनाशी, कर्म बंध भी रहें न नाशी।
वे भी नित्य रहेंगे सारे, सतत नित्य नहीं छूटन हारे।

सब कर्मों का छूटना, गनहु मुक्ति का हेत।
नैमित्तिक मुक्ति गिरे, जनु भित्ति मय रेत।

कर्म रु कर्त्ता संबंधी छुटे न कर्म कर्तृ अनुबंधी।
पुन तीर्थंकर अरु तुव मुक्ति, नित्य रहें यह मिथ्या उक्ति।

प्रश्न

यथा धान्यका छील उतारें, अगनि माँहि व उसको बारें।

वह नहीं उगता बीज दोबारा, भले ही करे कोई यत्न अपारा
एहि विधि मुक्त जीव नहीं आवे, जन्म मरण बन्धन नहीं पावे।

उ.– जीव कर्म संबंध नहीं, छिलके बीज समान।
यह समवाय संबंध है नहीं छिलका अरु धान।।
दो.–कर्म शक्ति कर्तृत्व पुन, दोऊ जीव में नित्य।
यह संबंध न मिटेगा, नश्वर नहीं अनित्य।।
कु.– कर्म शक्ति का जीव में, मानहु यदि अभाव।
तो जीवों में होयगा, पत्थर का सा भाव।।
पत्थर का सा भाव मिटे, सब समरथ बाकी।
क्यों भोगेगा मुक्ति, नाश हो शक्ति जाकी।।
ऐसी मुक्ति माँहि, वृथा करना अनुरक्ति।
पत्थर बन कर रहे, मिटें कर्मों की शक्ति।।

है अनादि कर्मों का बन्धन, सुखकर हो अथवा दुख क्रंदन।
बन्धन टूटे मुक्ति पाये। इस प्रकार यदि माना जाये।
तब तो नित्य मुक्ति भी टूटे, लौटे जीव मुक्ति से छूटे।
पुन बन्धन में आबे आतम, त्यागे अपना पद परमातम।
जेहि विधि नाश कर्म का जानो, मोक्ष भंग भी तेहिविध मानो।
साधन द्वारा सिद्ध पथारथ, कबहुँ न होवे नित्य यथारथ।

यदि पुन साधन सिद्ध बिनः मुक्ति लोगे मान।
तो कर्मों के बिना भी; बन्धन पड़े महान।।

मैल वस्त्र में जिमि लग जाती, धोने से निर्मलता आती।
फिर फिर कपड़ा होय मलीना, सदा न वस्त्र रहे मल हीना।
एहिविधि अनृत आदिक कारण, राग द्वेष आश्रय साधारण।
इनसे जीव कर्म फल पाए, मैल पंक इसको लग जाए।
पुन सम्यक दर्शन अरु ज्ञाना, सच्चरित्र शुभ कारज नाना।
मल धो देते इसका सारा, यथा वस्त्र को सज्जीखारा।

मल लगने के कारण सारे, मल को वही लगाने हारे।
जो तुम ऐसा मानहु भाई, तो आवेगी फिर कठिनाई।
मुक्त जीव होगा संसारी, संसारी हो मुक्ति विहारी।
ऐसा करना पड़े प्रमाना, युक्ति युक्त यह सत्य सुहाना।
जिस निमित्त से छूटेगा मल, यह जीवातम होगा निर्मल।
तेहि निमित्त पुन होय मलीना , राग द्वेष में हो लवलीना।

बन्धन मुक्ति जीव का, चले अनादि प्रवाह।
पुन लौटे पुन मुक्त हो, यही जीव की राह।।

प्र॰– निर्मल कभी न जीव था, सदा मैल के संग।
मुक्ति में निर्मल रहे, उठती शान्त तंरग।।

उ॰– जो नहीं था निर्मल कभी, वह निर्मल नहीं होय।
वस्त्र मलिन होता रहे, लाख बार ले धोय।।

शुद्ध वस्त्र जब होय मलीना, धोने से पुन हो मल हीना।
पर सफेद स्वाभाविक रंगा, बना रहे नहीं होय विरंगा।
फिर भी मैल वस्त्र में लागे, कपड़ा अपना रंग न त्यागे।
मुक्त जीव त्यों होय मलीना, मुक्ति पद से हो पुन छीना।

प्र॰– पूर्वोपार्जित कर्म से, देह जीव ले धार,
व्यर्थ प्रभु का मानना, क्यों मानें करतार।।

उत्तर

स्वयं जीव करले तनु धारण, प्रभु न हो यदि इसमें कारण।
तो धारे नहीं ऐसी देहा, जो हो अतिशय दुख की गेहा।
ग्रहण करे नित अच्छे जनमा, जहाँ सुःख मिले तन मन माँ।
जो प्रतिबन्धक मानहु कर्मा, कर्म न जाने दे शुभ धर्मा।
तो भी चोर यथा भय खाए, अन्य पुरुष की वस्तु उठाए।
स्वयं न जाए कारावासे, अपने आपको आप न फासे।

राजा उसे चढ़ाये शूले, झुलवाये फाँसी के झूले।
त्यों प्रभु जीवहिं जन्म धराए, किये कर्म का फल भुगवाए।
न्यायाधीश उसी को मानो, उसी ब्रह्म को सत्य प्रमानो।

प्र०— आवश्यकता है नहीं, फल देवे भगवान।
कर्म लहे फल स्वयं ही, तनु में नशा समान।

उत्तर

जो नित मद के पीने वाले, मद के आश्रय जीने वाले।
भर—भर मुट्ठी भांग रगड़ते, उनको नशे बहुत कम चढ़ते।
कुछ ऐसे जो पीते थोरा, पर मद चढ़े उन्हें घनघोरा!
नशा चढ़े नहीं एक समाना, मद का नाना रूप बखाना।
थोड़ा पिये बहुत चढ़ जाये, बहुत पिये पर नशा न आए।
मद सम यदि कर्मफल मानो, तो प्रभाव भी तेहि विध जानो
बहुत पाप नित करने वाला, पर धन संपत हरने वाला।
उसको दंड मिले अति थोरा, आनन्द लूटें तस्कर चोरा।
जो नर पाप तनिकसा करि हैं, अधिक दुख पा पाकर मरि हैं।
बहुत पुण्य से सुख हो थोरा, तनिक पुण्य से सुःख बहोरा।

प्र०— फल वैसा उसको मिले, वैसा होय प्रभाव।
जो जैसा जिस जीव का, प्रकृत होय स्वभाव।

शुद्ध वस्त्र में ज्यों मल लागे, धोइये कपड़ा मल को त्यागे।
जिस निमित्त से होय मलीना, तिस निमित्त से हो मल क्षीणा।
एहि विधि मानहु जीव अवस्था, नातरु आयेगी अनवस्था।

कुण्डलिया

बिन संयोग पाये नहीं, कबहुं कर्म परिणाम।
दूध खटाई बिन मिले, बने न दधि अभिराम।।
बने न दधि अभिराम, इसी विध जानहु भाई।

नहीं होवे परिणाम कर्म कर लो चतुराई।।
स्वयं एव हो जाय जीव अरु कर्मन योगा।
परिणामहुं नहीं पाय कर्म बिन होय संयोगा।।

उत्तर

दधि अरु अम्ल मिलाने हारा, जैसे तीजा है कोई न्यारा।
एहिविधि तीजा है कर्तारा, जीव रु कर्म मिलाने वारा।
जड़ नहीं मिलते स्वयं पदारथ, स्वयं न धारहिं रूप यथारथ।
एहिविधि आतम है अल्पज्ञा, बहुत न जाने नहीं सर्वज्ञा।
फल निज कर्मप्राप्त नहीं करिहैं, नहीं निज कर्मन हो अनुसरि हैं।
बिन सृष्टि क्रम ईश्वर स्थापित, कर्म नियम न हो प्रस्थापित

प्र०— जो कर्मों से छूटता; वही होता भगवान।
उ०— कर्म न छूटें जीव से, इन्हें अनादी जान।।

प्रश्न— योग कर्म का होवे सादी। उत्तर—कर्म योग पुन नहीं अनादी।

जब लग नहीं भया संयोगा, तब लग जीव अकर्मा होगा।
कर्म अकर्महुं यदि लग जाए, नित्य मुक्ति मुक्तहु नहीं पाए।
मुक्तों को पुन लागें कर्मा, छूटें सकल मुक्ति के धर्मा।

कर्ता का अरु कर्म का, है संबंध समवाय।
नित सबन्ध दोऊन का, कबहूँ नहीं नशाय।।

समुल्लास नवमाँ अवलेखें, वही सत्य उसको पढ़ देखें।
जितना चाहे ज्ञान बढ़ाए, पर आतम अल्पज्ञ कहाए।
फिर भी राखे परिनित ज्ञाना, फिर भी नाहीं प्रभु समाना।
उचित शक्ति बढ़ जाती याकी, फिर भी है इक सीमा याकी।
समरथ बढ़ती योग दुआरा, इसमें नहीं संदेह हमारा।
देह तुल्य आतम परिमाना, एहिविधि जैन पंथ ने माना।
यह नहीं उनका सत्य विचारा, बाल बुद्धि सम वचन असारा।

कुञ्जर जितना जीव हो; कुञ्जर के तनु माँहि।
तव तो गज के जीव को, और ठौर कोऊ नाहीं।।

हाथी मरे कहाँ पर जाए, कैसे च्यूँटी मांही समाए।
च्यूँटी धरे न गज की देहा, वह छोटी पर्वत सम गेहा।
यह कैसी है मूरखताई, कैसी जैन बुद्धि घुण खाई।
अति सूक्ष्म हे जीव पदारथ, अणु में भी रह सके यथारथ।
पर उसमें है शक्ति सगरी, शासन करे देह की नगरी।
प्राण बिजलि नस नाड़ो माँही, आत्म शक्तियां रहे समाहीं।
उनसे दशा देह की जाने, सब कुछ अच्छा बुरा पछाने।
भली बुरी संगति जो लागे, वैसा बन उसमें अनुरागे।

अथ जैन धर्म व्याख्या

वीतराग भावित धर्म, जिन मत में कल्यान।
यही सुदेव सुगुरु जिन, ठग तस्कर सब आन।।

महावीर ऋषभादिक देवा, करो उन्हीं की पूजा सेवा।
हरिहर ब्रह्मादिक मानो, यह कुदेव देव मत जानो।
इनसे जो चाहें कल्याना, वे भोले मूरख अंजाना।
निज देवन का करते माना, औरों का करते अपमाना।
धर्म ग्रन्थ इनके हैं जेते, निन्दा से परिपूरित तेते।

अरीहंत देवेन्द्र कृत; पूजादिक के जोग।
अन्य वस्तु दूजी नहीं, हरे चित्त के रोग।।

एहिविध जो देवन के देवा, शोभन अर्हन ज्ञान सुदेवा।
क्रियावान शास्तर उपदेशक, मल से रहित सत्य निर्देशक।
दयामूल अनुनय जिन भावित, ऐसा धर्म सुदेव प्रभावित।
वही जीव का तारण हारा, दुख से सतत उबारन हारा।
अन्य हरिहर आदि न तारें, किसी जीव को नहीं उबारें।

परमेष्ठी सबन्धि तत, अरिहन्तादिक पाँच।
नमस्कार के योग यह; चार पदारथ साँच।।

दया क्षमा अरु सम्यक ज्ञाना, दरस चरित इनको भल माना।
जैन धर्म का यह है सारा, इसका ही यह करें प्रचारा।

समीक्षक

मनुष मात्र पर दया न जिनकी दया क्षमा सब झूठी तिनकी।
ज्ञान नहीं वह है अज्ञाना, मनुष मात्र जहाँ नहीं समाना।
दर्शन नहीं वह है अंधियारा है जो पक्षपात से कारा,
क्या चरित्र है भूखे मरना, तजो इसे आओ प्रभु सरना।

जैनी

यदि तू जीव सुकर नहीं पाए, तुझ से सूत्र पढ़ा नहीं जाए।
कर नहीं सके विचार प्रकरना, संभव नहीं दनादिक करना
तो केवल अरिहन्तउ पूजे, त्याग देव परधर्महुँ दूजे।
जैन धर्म में श्रद्धा करना, कर जो चाहे पार उतरना।

समीक्षक

यद्यपि करना दया भलाई, पर यह पक्षपात दुखदाई।
किसी जीव को दुःख न देना, यह कैसे हो समझ परे ना।
उचित दुष्ट को दण्ड प्रदाना, डाकू के हर लेना प्राना।
सच्ची दया इसे भी जाने, क्या रहस्य इसमें पहचाने।
एक दुष्ट को दण्ड न देना, प्राणिमात्र की हत्या लेना।
ऐसी दया दया नहीं भाई, दया नहीं यह हे निठुराई।
दया वही जो सुख उपजाये, प्राणिमात्र का दूख नशाए।

मच्छर, पिस्सु नहीं मरे, पानी पीना छान।
दया नहीं इक मात्र यह, इतना तत्त्व पछान।।

दया मया का ढोंग रचाना, यह केवल जैनिन ने जाना।

केवल इनके मौखिक बैना, बर्ते न सकते इसको जैना।
मनुष मात्र पर दया दिखाना, अपना हो वा होय बिराना।
किसी धर्म को चाहे माने, सब को सत्कारे सन्माने।
क्या यह दया नहीं कहावे, पक्षपात क्यों मन में आवे।
पर मतियों को तो तुम मारो, मुख से दया दया पुकारो।
पुस्तक सार विवेक निहारें, दो सौ इक्किस पृष्ठ विचारें।
क्या लिखते हैं जैन दयालु, कहाँ मिलें ऐसे किरपालु।

कु०— पर मतियों के गुणों का, कबहुँ न करें बखान।
बात चीत भी मत करें, उनको शत्रु जान।।
उनको शत्रु जान, करो मत उन्हें प्रणामा।
दिहो दान मत उन्हें, नहीं वे प्रीतिधामा।।
धूप फूल मत दो, हित उनकी मूरतियों के।
करें न यह षट्कर्म जेन इन परमतियों के।।

समीक्षक

बुद्धिमान अब तनिक विचारें, इनकी कैसी दया निहारें।
कितना वैर अन्य सों राखें, दया मया पुन मुख से भाखें।
कितना द्वेष भरा मन माँही, जिसका कोई ठिकाना नाँही।
इनके दयाभाव को तोले, दयावान फिर कैसे बोलें।
घरवालों की करना सेवा, अन्न वस्त्र जल पान कलेवा।
यह क्या धर्म विशेष कहावे, घरवालों को सदा खिलावे।

अन्धा बाँटे रेवड़ी, अपनों ही को देत।
परस पराये हाथ को, खेंच हाथ निज लेत।।

कौन कहे पुन इन्हें दयालु, निज मतियों के हेत कृपालु।
ग्रन्थ विवेक सार अवलेखें, इनकी दया दृष्टि को देखें।
नमुचि नाम का सचिव दीवाना, मथुरा नृप का रहा प्रधाना।
जान धर्म का उसे विरोधी, जल उट्ठे जैनी जन क्रोधी।

उसका बध कर दया दिखाई, ऐसी दया जैन मन भाई।
कर आलोचना भये पुन पावन, कैसी घटना हृदय द्रावन।
दया क्षमा का नाशक कर्मा, कौन कहेगा इसको धर्मा।
हिंसक हैं यह नहीं दयालु कैसे इनको कहें कृपालु।
परमतियों के प्रान निकारें नाम दयालु फिर भी धारें।

सम्यग दर्शन आदि पुन, मोक्ष मार्ग हैं चार।
जैन पंथ माने जिन्हें, उन पर करहुँ विचार।

संग्रह अर्हत केर प्रवचना, पयमागम मत सार।
उसमें कथित पदारथ चारा, चारहुँ साधन मोक्ष दुआरा।
सम्यग दर्शन सम्यग ज्ञाना, पुन चरित्र सम्यग श्रद्धाना।
योग देव ने व्याख्या कीनी, चारों पर निजी सम्मति दीनी।
जेहि रूप्र जीवादि पदारथ, द्रव्य व्यवस्थित बने यथारथ।
जिन उल्लिखित ग्रन्थ अनुसारा, जिसमें भाव न आवे न्यारा।
जिन मत पर श्रद्धा अस प्रीति, सो सम्यक श्रद्धा की रीति।
श्रद्धा 'जिन' के तत्वन माँही, करनी उचित अन्य में नाँही।

जिस विधि लघु विस्तार से तत्वों का हो भी मान।
उसे ज्ञान सम्यक कहें, मानव बुद्धि मान।।

पर मत निदंनीय आचारा, उनके बुरे आचारा विहारा।
उनका तजना चरित कहावे, परमतियों के निकट न जावे।
पाँच अहिंसा आदिक कर्त्ता, दुख न पावे इनका धर्मा।
किसी जीव का बधन नहीं करिये, प्रथम अहिंसा ब्रत को धरिये।
द्वितीय सूनृता प्यारी बानी, सदा बोलिये कान सुहानी।
पुन अस्तेय करहु मत चोरी, लूट मार त्यागहु बर जोरी।
ब्रह्मचर्य चौथा ब्रत मानो, जीवन स्तम्भ इसे ही जानो।
पुन 'अपरिग्रह' कहिये 'त्यागा', वस्तु मात्र से करे विरागा।
इनमें बातें भलीं बहोरी, यथा अहिंसा वर्जित चोरी।

अन्य मतों का पर अपमाना, यह कुकर्म भी अच्छा जाना।
परमतनिन्दा बड़ी बुराई, सगरी नेकी धूलि मिलाई।
जेहि विधि निंदरे हरिहर देवा, कहा करो मत इनकी सेवा।
इनका धर्म न नर को तारे, भव सागर से नहीं उबारे।
नहीं यह थोड़ी निन्दा भाई, जिनसे सगरी विद्या पाई।
पुस्तक पूरन विद्या वाले, धर्म परायण ग्रन्थ निराले।
कहना बुरा उन्हीं सद ग्रन्थन, जहाँ सत्य का कीना मंथन।
अरु निज ग्रन्थन का सन्माना, ठौर ठौर जहाँ झूठ बखाना।
पुर सराहना निज अर्हता, यह हठ करे न बुद्धिमन्ता।
चरित न चरहि चहे कोई जैनी, अनपढ़ हो विद्या की छैनी।
दान पुण्य की शक्ति न राखे, 'जैन पंथ सच्चा' यूँ भाखे।
बस इतने में भया नरोत्तम, सब पुरुषों में वह पुरुषोत्तम।
अन्यमती सब होवें नीचा, कंचन हों तौ भी वे कीचा।
ऐसे कथन करे जो बैना, उनके फूटे मति के नैना।
वे न भ्रान्त बुद्धि के भोरे, मूढ़ हठी असमंजस कोरे।

इनके गुरु थे स्वारथी, और कपट के मीत।
सब की निन्दा यह करें, सब सों करें अनीत।

सब की निन्दा करते जो जन, उनका होता एक प्रयोजन।
सब पर अपना जाल बिछाना, धीवर के सम मत्स्य फँसाना
मारग जैन डुबाने हारा, इसने नहीं कोई पुरुष उबारा।
शेष पंथ है सब उद्धारक, दुख सागर से हैं निस्तारक।
गुरु कुगुरु अरु देव कुदेवा, अन्य मतों के देव सुदेवा।
इस विधि इनको यदि कोई कोसे, जैनी बैठा हृदय मसोसे।

प्र॰कु॰– उन्मारग उत्सूत्र का, जो नर लेश दिखाय।
जिन आदेश उससे त्रुटहि, वह नर अत्ति दुखपाय।।
वह नर अति दुख पाय पाप यह जान महाना।

सम्यक्त्वादि धर्म कठिन, जग मांहि निमाना।
तांते आज्ञा भंग न हो, गहु ऐसा मारग।
त्याग करहु उत्सूत्र और दुखकर उन्मारग।।

समीक्षक

अपनी करना आप बड़ाई, निन्दा करना नित्य पराई।
यह मूरख लोगों का कारज, इसको भला न कहते आरज।
चोरहु निज को भला बताए, पर यह भला न समझा जाए।
स्तुति वही जो दूजे गाएं, दूजे उसको भला बताएं।

समीक्षक—कुण्डलिया

प्र०— बिसियर के सिर की मणि, जेहि विधि कीजे त्याग।
तेहि विधि त्यागहु वह पुरुष, जिहिं न जैन अनुराग।।
इनके चेले अरु गुरु, यदि होते विद्वान्।
ऐसे वचन न बोलते, जिनसे हो अपमान।।
जिनसे हो अपमान मान सज्जन का करते।
मिल जुल कर विद्वान ज्ञान के कोषहुँ भरते।।
पड़ा धूलि में स्वर्ण होय तो कौन न ले ले।
थे तीर्थंकर अनपढ़ अरु अनपढ़ थे चेले।।
दो०— जान पड़े इससे यही, जैनी विद्याहीन।
पक्षपात में मर रहे, मूरख बुद्धि मलीन।।

प्र० अन्य दर्शनी जैन विरोधी, पुरुष कुलिंगी मत दुर्बोधी।
जैन करें नहीं दर्शन वाके, महा पाप है दर्शन तांके।

समीक्षक

देखो कितनी बड़ी बुराई, पामर मन दुर्भाव ढिठाई।
रे भाई जिनका मत सांचा, दृढ़ है लोह समान न काँचा।
वे तो नहीं किसी से डरते, निर्भय सिंह समान विचरते।

पर इनके आचारज जानहिं, अपना मेरा पोला पहचानहिं।
एहि कारण मन में थे डरते, अन्य किसी पर प्रकट न करते।
पोल खोल मत कोई डारे, तभी न मिलते डर के मारे।
अब भी निन्दा अरु अपमाना, करके धूरत चहें फंसाना।

प्र॰– जैन विरोधी धर्म जो, सभी पतित कर देंय।
ताँते तज कर सभी को, शरण जैन की लेंय।।

समीक्षक

सबसे रखना वैर विरोधा, सब की निन्दा सब पर क्रोधा।
निश्चय जैन पाप का आगर, सबहुँ डुबाए दुख के सागर।
जैसे निन्दक जैनी देखे, ऐसे पापी अवर न पेखे।
निन्दा करना सदा पराई, दुष्टन की यह प्रकृति भाई।
भला भले को कहैं विवेकी, नेकी को सब कहते नेकी।
बुरा कहें जो करे बुराई, निन्दा में क्या रखी भलाई।

प्र॰– कहाँ जैन गुरु धर्म कहाँ, जिनवर के बयन।
अन्य मतों के गुरु कहाँ, वें निन्दा के अयन।।

समीक्षक

कुंजड़ी अपने बेर सराहे, कच्चे हों वा खट्टे चाहे।
यह हैं जैन पंथ की बातें, अन्य मतों पर करते घातें।
पाप गनहिं दूजों की सेवा, अन्य देव को कहें कुदेवा।

प्र॰कु॰– जैन पंथ से अन्य गुरु, सर्प्पों से भी नीच।
सर्प डंक जब मारता, होय तुर्त ही मीच।।
होय तुर्त ही मीच मरण हो एकहि बारा।
अन्य गुरु संग बसे मरे नर बारम्बारा।।
ताँते रे नर त्याग अन्य गुरुदेव कुपंथा।
दुख सागर से तारक केवल जैन सुपंथा।.

जैन पंथ सन देखिये, अन्य न कोऊ कठोर।
द्वेषी निंदक मूढ़ जिंहि, सूझत ओर न छोर।।
सूझत ओर न छोर भ्रान्त सब भूले भटके।
औरों से भयभीत चित्त में रहते खटके।।
मत कोई पुरुष पढ़ाये उनको सांची संथा।
ऐसे हैं दुर्बुद्धि निन्दित ज़ैन कुपंथा।।

दौर्भाग्य इनका ही जानें, यह नहीं सत्यासत्य पछानें।
जब लग सत्संगति नहीं करते, विद्वानों की शरण न परते।
तब लग होय न साँचा ज्ञाना, भरा रहे भीतर अज्ञाना।
सन्मारग नहीं होवे प्रापत, कबहुँ न त्यागे इनको आपत।
ताँते यदि चाहें कल्याना, चाहें सत्य यदि पहचाना।
शरण रहें वेदों की भाई, इससे इनकी होय भलाई।

रही नहीं कल्याण की, जिसकी आशा कोय।
तिस कंह शिक्षा वृथा है, वह नहीं सीधा होय।।

जो नर ढीठ दुष्ट मति चातुर, बुरे कर्म करने पर आतुर।
उस पर जो करिहैं उपकारा, वह नर अवस जायगा मारा।
अंध सिंह पर दया दिखाना, उसके नेत्र खोलने जाना।
सिंह मार कर उसको खावे, वह मूरख पाछे पछतावे।

समीक्षक—कुण्डलिया

दूजे लोगों के लिये जैसे रखें विचार।
दूजे भी एहि विध रखें बढ़े न फिर क्यों रार।।
बढ़े न फिर क्यों रार, सर्प सम इनको जाने।
भूखे प्यासे मरें न देवें पीने खाने।।
इनके गुरु को देख सर्प सम इनको पूजे।

जो गुरु खोटे मन में मानहिं दूजे ।।

छ॰— निन्हव दर्शन भ्रष्ट पाच्छता और उसन्ना।
तथा कुसीलय बढ़ते ज्यों ज्यों दर्स अधन्ना।।
विप्रादिक परिव्राजक बढ़ते जाँय त्रिदण्डी।
पूजित और सम्मानित होते नर पाखण्डी।।
त्यों त्यों सम्यकता बढ़े सम्यक दग्सी नरन की।
यह अचरज कितना बड़ा महिमा जिनवर चरनकी।।

समीक्षक—छय्पय

इन जैनों से अधिक कौन होगा दुर्बुद्धि ।
वैर भाव से भरे न इनके मन की शुद्धि।।
कितना रखते द्वेष ईर्षा और विरोधा।
सब को कहते बुरा करें सब पर ही क्रोधा।।
औरों में भी है सही पर इतना रखते नहीं।
जैनों से बढ़ कर भला पापाचारी है कहीं।।

प्र॰— चोरों की संगति करे, भले ही नाक कट जाये।
मूढ़ अन्यमति एहिविधि, नेक नहीं डरपाँय।।

समीक्षक

जो मानुष होता है जैसा, दूजे को भी जाने वैसा।
चोरों के मत दूजे सारे, केवल जैन धर्म के प्यारे।
कैसी बातें मूरखता की, सीमा लखी न जाय जाकी।
है कुसंग का यह परिणामा, भये जैन मूरखता धामा।
जब लग मिटे नहीं अज्ञाना, जब लग नर नहीं हो विद्वाना।
तब लग करता रहे बुराई, कभी न छोड़े नीच ढिठाई।
पर मत निंदक जैनी जैसे, और न जग में देखे ऐसे

प्र॰— मिथ्यात्वी दूजे सकल, सम्यक्त्वी इम जैन।
मिथ्यात्वी के संग से, परे रहो दिन रैंन।

समीक्षक

चामुण्डा काली और ज्वाला, देवी द्वारा और शिवाला।
इनके दर्शन बुरे बताते, गीत देव अपने के गाते।
पाप नाम से इन्हें पुकारो, इन पर बाणी बाण प्रहारो।
राम नवमि को पापहु नामी, करते हो ब्रत की दुष्नामी।
सब कँह बुरे बुरे ही कहते, खोटी खरी लोग सब सहते।
सभी बुरे क्या भले तुम्हारे, ब्रत पजूशसा आदिक सारे।
यह तुम्हार व्रत अति दुखदायक, भूख रूप मृत्यु का सायक।

वाम मार्ग खण्डन किया, यह तो कीना ठीक।
शासन देवी मरुत भी, खण्डन करे अनीक।।
निज देवी नहीं मानते, यदि हिंसा करणार।
तो सृष्टि सब कह रहीं, मिथ्या बचन तुम्हार।।
शासन देवी से पिटा, एक पुरुष इक बार।
बकरे की आँखें कढ़ी, जाने सब संसार।।

काहे नहीं वह दूजी दुर्गा, वह बकरा मारे वह मुर्गा।
देवी निपट पिशाच तुम्हारी, उसने भी क्या बात सँवारी।
यच्चखाण आदिक मत सारे, उन सब को तू श्रेष्ठ पुकारे।
नवमि आदि ब्रत बुरे बखाने, अपने ब्रत सब भले बखाने।
अहो तुम्हारी मूरखताई, ऐसी लखी न कहीं ढिठाई।
अवरन के उपवासहुं निंदहिं, निज उपवासन को अभिविंदहि।
सत्य वचन आदिक ब्रत सारे, यह ब्रत अच्छे हैं संसारे।
शेष व्रत सब व्यर्थ निरर्थक, शास्त्र न इनके होंय समर्थक।
प्र॰—वेश्या चारण भाटन दाना, इनको दिये न हो कल्याना।
ब्राह्मण यज्ञ सुरेश गणेशा, विष्णु ब्रह्मा इन्द्र महेशा।

यह सब झूठे देवी देवा, इनकी करना पूजा सेवा।
इनको जानहु घोर कुकर्मा, ऐसा पूजन दान अधर्मा।
यह सब देव डुबाने हारे, डूबे देव कहाने हारे।
इन देवों के जिते पुजारे, सब निर्बुद्धि भ्रम के मारे।
देवन ढिग ही सब कुछ मानें, सब सुख दाता देवन जाने।
वीतराग सत्पुरुष तथागत, नहीं होते उनकी शरणागत।

समीक्षक

अन्य पंथ के देव को, कहना झूठ कुदेव।
सत्य कहें निज देव को, क्या यह नहीं कुदेव।।

वामपंथ की देवी झूठी, शासन देवी एक अनूठी।
'श्राद्ध कृत्य दिन' पृष्ठ छताली, उसमें लिखते कथा निराली।
एक पुरुष भूखा इक राती, खाय रहा था दाल चपाती।
शासनदेवी वहां पर आईं, उसके मुँह पर चपत जमाई।
बेचारे की आंख निकाली, बकरे की आंखी तँह डाली।
क्या नहीं देवी हिंस्र तुम्हारी, वामपंथ को देवहु गारी।
रत्नसार के प्रथम में भागे, पृष्ठ सतासठ लिखने लागे।

मरूत देवी पाषाण बन, करती सदा सहाय।
तुर्तं बचाती भक्त जब, पथिक कोई आजाय।।

उसकी क्यों नहीं करहु बुराई, वह देवी क्या करे भलाई।
जैन विरोधी क्यों जग जनमें, क्यों आए मानुष के तन में।
जो जनमें तो क्यों बढ़ पाए, क्यों नहीं गर्भ मांहि विनसाए।

समीक्षक

वीतराग का धर्म दयालु, दया धर्म के यह श्रद्धालु।
देख सकें नहीं अवरहिं जीता, ऐसे जैन दया से रीता।
दया दिखाएं कीटन, मांही, नर के लिए धर्म यह नाहीं।

प्र०— जैनी के घर जन्म ले, अवस मुक्ति को पाय।
अन्य मती नहीं मुक्त हो, नरक मांहि वह जाय।।

समीक्षक

क्या जैनी सगरे धर्मातम, नहीं इनमें कोई पापातम।
नहीं हो जैन नरक का वासी, क्या यह सबहि पुण्य के रासी।
यह सब पागलपन के वचना, मूढ़ फँसाने के हित रचना।

प्र०— 'जिन' की मूरति पूजना, यही तत्व अरु सार।
अन्य धर्म की मूर्तियां; तत्त्वहीन निस्सार।।

समीक्षक

क्या कहने जाएं बलिहारी, क़ेवल मूरति सत्य तुम्हारी।
क्या तुमरी नहीं मूर्ति पाषानी, अपना दूध पराया पानी।
पाठन के जिमि पुजारी नहीं तुम्हारी मूरति न्यारी।
झूठ तुम्हारी उनकी झूठी, दोनों में नहीं कोई अनूठी।
स्वयं बनों तुम तत्त्वज्ञानी, औरों को कहते अज्ञानी।
नहीं तुम्हे कुछ तत्त्व ज्ञाना, यह केवल झूठा अभिमाना।

प्र०— दया मया आदिक सभी, जिनवर धर्म आदेश।
अन्य पंथ आदेश जो, जानहु सब व्यपदेश।।

समीक्षक

धिग धिग कैसा यह अन्याया, कितना मन में द्वेष समाया।
जैन बिना क्या सब हैं पापी, दुर्ज़न धूरत शठ संतापी।
कोई सतवादी नहीं धर्मातम, सभी दुष्ट मूरख पापातम।
उनमें कोई परमातम जाने, तौ भी उसकी बात न माने।
हाड चर्म के जैनी जैसे, औरों के भी तन है वैसे।
जैनी होते यदि अनोखे, तो होते सचमुच बिन दोखे।
अपने ग्रंथ साधु और वैना, उनके गीत गांय दिन रैना।
जनु भाटों के जेठे भाई, थकें न करते रहे बड़ाई।

प्र॰– हरिहरादि देवान की, बढ़ती देख विभूत।
जैनी के रोमांच हो, बढ़ता क्रोध अकूत।।

राजाज्ञा भंजक दुख पाए, मृत्यु दण्ड तक कष्ट उठाए।
त्यों जिन आज्ञा भंजन हारा, क्यों नहीं पाए कष्ट अपारा।

समीक्षक

अहो जैन का अन्तःकरणा, जग में कपट दिखावा करणा।
मनोवृत्ति अब देखो भाई, कितनी मन में रखें बुराई।
हरि हर आदिक देव विभूति, लख मन में हो जलन प्रसूति।
पर ऐश्वर्य देख रिसियाएं, ठंडी साँस भरें जल जाएं।
करते होंगे यही विचारा, छीन लएं उनका घर बारा।
अन्य मती हो जाँय भिखारी, उनकी लूटें संपति सारी।
नृप की करते ठकुर सुहाती, नृपति नाम से धरके छाती।
दुष्ट भीरु राजा के टट्टू धर्म नाम पर खाँय निखट्टू।
ताँते राजाज्ञा से डरते, दे दृष्टान्त खुशामद करते।
नृप की झूठ बात क्या मानें आतम को इस विधि अपमानें।
जैसे जैनी देखें द्वेषी, देखें कोई न इनमें बेशी।

प्र॰– सगरे वे जन मूर्ख जो, जैन धर्म विपरीत।
नहीं कोई उनके तुल्य जो, जिन सों राखें प्रीत।

जिन अभिभावित धर्मुपदेशें, वह साधु सत्पथ निर्देशें।
वे गृहस्थ जो जिन अनुयायी, जिन चरणों से प्रीति लगाई।
जिन भावित ग्रन्थों के कर्त्ता, जो अर्हन्तों के अनुसर्त्ता।
से सब ही अर्हन्ता समाना, उनके तुल्य नहीं कोऊ आना।

समीक्षक

छोकर बुद्धि के वचन, लिखते जैन अज्ञान।
जिमि वेश्या अपने सदा, करत रहे गुण गान।

प्र०— जिन उनके उपदेष्टा, अरु उनके सिद्धान्त।
कभी न त्यागे जैन नर, आजीवन मरणान्त।

समीक्षक

महाँ दुराग्रह अरु पखपाता, धिक् धिक् जैन अविद्या राता।
जैन शास्त्र हमने अवलेखा, थोड़ा भला बुरा बहु देखा।
थोड़ा सा भी जिनको ज्ञाना, सत्यासत्य होय पहिचाना।
जैन पंथ को तनिक विचारे, इनके ग्रन्थ कूप में डारे।
त्यागे इनके अर्हन देवा, कबहुँ करे नहीं पूजा सेवा।

प्र०— पूजनीय वे पुरुष हैं, जो जिनके अनुकूल।
योग्य न उनको पूजना, जो जिनके प्रतिकूल।

समीक्षक

पशु सम बाँधे रखे निज चेले, ऐसे दाँव जैन गुरु खेले।
यदि मूरख वश में नहीं आते, तोड़ जाल इनके भग जाते।
करते निज मुक्ति का साधन, होते दूर विघ्न अरु बन्धन।
पर गुरुओं ने मूर्खफँसाए, आज तलक निकसन नहीं पाए।

कु०— तुमें कहें कुमार्गी, देवन कहें कुदवे।
गुरुओं को झूठे गुरु, वर्जहिं उनकी सेव।
वर्जहि उनकी सेव तुम्हे क्या बुरा न लागे।
अपने गुरु अरु धर्म माँहि सब कोई अनुरागे।
ताँतें करहु विचार जगत में हैं बहु मारग।
सभी कहेंगे तुम्हे जैन का मार्ग कुमारग।

प्र०— चाहे मरना ही पड़े, करे न कृषि व्यापार।
यह कुकर्म जैनी करे, वाको नरकागार।

समीक्षक

खेती बाड़ी क्यों करो, क्यों पुन करहु व्यापार।
मरो भूख से जैनियो, जिन वर वचन सकार।

जो सब मानें बचन तुम्हारा, तो मर जाये सब संसारा।
एहि विधि व्यर्थ किये उपदेशा, सत्संगति का नहीं लवलेशा।
जो आया मुख में बक दीना, ऐसे जैन बुद्धि के हीना।

प्र०– महानीच वे लोग जो, जैन पंथ विपरीत।
अन्य शास्त्र को मानते, अहो पतन की रीत।

भले ही सिद्ध होता हो स्वारथ, जीवन होता होय सकारथ।
तो भी जिनके विरुध न बोलें, जिन विरूद्ध जिह्वा मत खोले
अन्य मतों को मन से त्यागे, केवल जिन वर पद अनुरागे।

समीक्षक

मूल पुरुष जो भये तुम्हारे, उनसे आज तलक गुरु सारे।
दई उन्होंने सब को गाली, ऐसे निन्दक रहें कुचाली।
निस्सन्देह आगे भी देंगे, जो कुछ देंगे सो कुछ लेंगे।
जहाँ जैनी निज स्वारथ देखें, कार्य्य सिद्धि होती अवलेखें।
बने वहाँ चेलों के चेले, गिड़गिड़ाँय बकरी के छेले।
डींग हाँकते आय न लाजा, सबको निदरें स्वारथ काजा।

प्र०– जैन साधु होते धर्मातम वरु दूजे भी हैं पुण्यातम।
एहि विधि धर्मी सन्त हमारे, धर्मातम हैं साधु सारे।
कहे पुरुष जो ऐसे बैना, वह नर दूख सहे दिन रैना।

रहे नर्क में वह पुरुष, वर्ष कोट अनुकोट।
फिर भी जन्में नीच गृह, सहे मृत्यु की चोट।

समीक्षक

वाहरे मूढ बुद्धि के अंधे, कैसे रचे भयानक धंधे।
कितना लोगो को डरपाये, कहीं जाल से निकस न जायें।
खण्डन करे न हमरे बैना, मानें झूठ बंद कर नैना।
अन्य मतों से वैर विरोधा, निन्दा चुगली करना क्रोधा।
तुम्हें झूठ का रहे सहारा, इसके बिना न होय गुज़ारा।

निज परयोजन साधना, अपने ही गुण गान।
यह तुमको मीठा लागे, मोहन भोग समान।

प्र०– केवल जैन धर्म है साँचा, शेष पंथ सब मिथ्या काँचा।
ऐसा जान करे विश्वासा, केवर रखे जैन पर आसा।
धर्म़ कर्म कछु करे न चाहे, केवल जिन पर निश्चय लाये।
इतने ही से वह तर जाए, श्रद्धा ही से मुक्ति पाए।

समीक्षक

इससे बड़ा जाल नहीं कोई, इसको पढ़ें फँसे नर सोई।
नहीं पड़ता कछु करना धरना, श्रद्धा ही से होता तरना।
जैन पंथ देखा है जैसा, भोंदू मार्ग नहीं कोई ऐसा।

प्र०– जो मैं नर हूँ तो य़ह पाऊँ, जैन शास्त्र को सुनूँ सुनाऊँ।
अन्य शास्त्र नहीं सुनूँ कदापि, जिन विरोध कर होऊँ न पापी।
जो नर इतनी इच्छा करता, दुख सागर से निश्चय तरता।

समीक्षक

मूर्ख फँसाने के लिए, है यह भी है इक जान।
केवल इच्छा मात्र से, होवे पुरुष निहाल।

इच्छा कर देखो मन माँही, यहाँ के दुःख भी छूटें नाँही।
पूर्व कर्म नहीं भागेहु जब लग, दुःख से छूट सको नहीं तब लग।
यदि नहीं लिखते मिथ्या वचना, करते नही दम्भ की रचना।

पढ़ते वेद शास्त्र सब लोगू, होता नष्ट जैन मत रोगू।
पर इन लोगों ने दृढ़ पकड़ा, दैत्य समान दाँत से जकड़ा।
छूट न पाया कोई बेचारा, जो फँसा डूबा मँझधारा।
छूट न पाय कोई सत्संगी, प्रभु के रंग वृत्ति जिस रंगी।

प्र॰कु॰— जिन अचारजों के कहे, सूत्र निरुक्ति आद।
उनको जो सत मानते, शेष गनहिं बकवाद।
शेष गनहिं बकवाद ग्रन्थ मत देखें अवरे।
उन्हीं के शुभ चरित वही सुख पायें सवरे।
उन ही के व्यवहार भले, भल दुस्सह कारज।
सत्य वचन जो कहे, प्रमाने जैन अचारज।

(कुंडलिया) समीक्षक

चरितवान उनको कहें, जो भूखे मर जाँय।
तो अकाल पीड़ित सभी, मुक्ति पद को पाँयं
मुक्ति पद को पाँय नहीं यह संभव भाई।
बढ़ता पित्त प्रकोप रोग तन मँह लग जाई।
ब्रह्मचर्य सतभाषण प्रीति आदिक नाना।
सद्‌गुण सभी कहाँय चरित शुभ इसे बखाना।।

जैनिन की यह भूख पिपासा, दुर्बल होना कर उपवासा।
यह बातें नहीं धर्म कहावें, प्यास लगे भूखों मर जावें।
जो जैनी सूत्रादिक माने, किंचित सत्य न वे पहचाने।
बहुत झूठ इन सूत्रों मांही, दुख निवृत्ति होवे नाहीं।

प्र॰— परालब्ध उन की भली, जे जिनमत अपनाँय।
नष्ट भाग्य उनके हुए, जिण विरुद्ध जो जाँय।।

कैसी झूठी बात बनाई, भूल रहे यह जैनी भाई।
क्या नहीं अन्यमती बड़भागी, क्या प्रारब्ध इन्हीं को लागीं
'जैनी लड़े परस्पर नाही', पक्षपात क्या नहीं इस माँहीं
क्या औरों से करें लड़ाई, इसमें क्या तुम लखो भलाई।
सज्जन से समुचित है प्रीति, दण्डहि जो जन करे अनीति।
चाहे किसी धर्म को माने, जो सज्जन उसको पहचाने।
विप्र त्रिदण्डी अरू सन्यासी, त्यागी जिनकी वृत्ति आकासीं
सबको अपना शत्रु बतावें, निंदा कर कर क्या फलपावें।
कहां गई अब दया तुम्हारी, शत्रु समझो सृष्टि सारी।
अवलोकहु जैनिन का जलना, मन द्वेषी अरु सदा विकलना
दया क्षमा अब इससे नाशे, वैर भाव जो वृथा प्रकाशे।
जैनी यथा द्वेष की मूरत, मन में वैरभाव परिपूरित।
दूजा लखा न जग में कोई, जो नहीं जैनी शत्रु सोई।

प्र॰कु॰– ऋषभदेव से आदि ले, महावीर पर्यन्त।
उन सब को यदि कोई कहे, झूठे धूर्त एकन्त।।
झूठे धूर्त एकन्त तथागत ज्वर परलापी।
नर्क तुल्य यह पंथ विषैले सगरे पापी।।
इन शब्दों से करे कोई तब गुरु की सेवा।
बुरा लगे वा नहीं निदहिं ऋषभादिक देवा।।

दो॰– ताँते जैनी छोड़ दें, पर निन्दा का काम।
पर निंदा अति पाप है, महाँ नर्क का धाम।।

प्र॰– सभी श्रावकों का गुरु, एको अर्हन देव।
वाकी मूरति पूजिये, वाकी कीजे सेव।।

जिन प्रतिबिंब मूर्ति है देवल, पूजन योग्य वही है केवल।
जिन संपति करिये रखवारी, प्राणहुँ ते जाने वह प्यारी।

परम धर्म जिण धर्महु माने, अवर न काहू को सन्माने।

समीक्षक

देखो मूरति पूजा भाई, जिस से फैली बहुत बुराई।
जैनिन ने ही इसे चलाया, जिसने भारतवर्ष गिराया।
सब पांखड चलाने हारे, जैनी परे नर्क आगारे।
श्राद्ध दिन कृत्य पृष्ठ १ में मूरति पूजा के प्रमाण।

छ०– श्रावक जाए प्रथम द्वार जप कर नवकारा।
जप दूजा नवकार करे तब बारम्बारा।
मन में सिमरे बात कहे मैं हूँ इक श्रावक।
जैन धर्म के परमभक्त जो सबका पावक।।
कितने अणु ब्रतादि हैं, श्रावक मन में सोच ले।
द्वार तीसरे पर खड़ा मन पापों से मोचले।।

छ०– चार वर्ण में मोक्ष मुख्या यह चौथे द्वारे,
उसके कारण ज्ञानादिक सो योगाचारे।।
पंचम मूरति पूजा द्वय कर जोड़ प्रणामा।
षृष्ठः प्रत्याख्यान प्रमुख नवकार सुनामा।।
विधि विधान पुन बहुत से इसी ग्रन्थ में हैं दिये।
इन छः द्वारों को सदा जैनी जन राखें हिये।।

कैसे कैसे लिखे विधाना, तनिक सुने नर बुद्धिमाना।
संध्या समय रसोई काले, तीर्थंकर को शीश झुकाले।
द्वार पूजना झंझट नाना, किस विध से मन्दिर बनवाना।
जो मन्दिर हों गिरे पुराने, किस विधि उन्हें पुनः निर्माने।
जो मन्दिर का करे सुधारा, मुक्ति पाय वह जिन वर प्यारा।
कैसे बैठे मन्दिर माहीं, पूजा करे बैठ किस ठाईं।

'नमो जिनेन्द्रेभ्यः' कहे, पुन असनान कराय।

जल चन्दन धूपादि की गन्धि फेर चढ़ाय।।

मन्दिर का जो होय पुजारी, सन्माने उसको नर नारी।
रोक न सकता उसको कोई, प्रजा होय व राजा होई।

रत्न सार के ग्रन्थ का, पृष्ठ बारहवां जान।
उसमें यह बातें लिखी, पढ़िये धर कर ध्यान।।

समीक्षक

देखे पाते दण्ड पुजारी, नृप शासन नीति नहीं न्यारी।
मन गढ़न्त यह तांते, समझ लियो यह झूठ यहां ते।
जैन पुजारिन राजा रोकें, यह हम नित्य प्रति अवलोकें।

रत्नसार के ग्रन्थ का पढ़िये पन्ना तीन।
कहते मूरति पूजिये, होय रोग से हीन।।

जो मूरति को सीस निवाये, सो नर दोष रहित हो जाये।
पंच कौड़ी का फूल चढ़ाया राज्य अठारह देशहुँ पाया।
नाम कुमार पाल था वाका, गुण गाये यह पुस्तक ताका।
यह बातें झूठे मनहारीं, मूरख नरन प्रलोभनकारी।
पूजा करते आयु गँवाई, एक बिघा भी भूमि न पाई।
रोगी जैनी पूजा करते, रोग ग्रस्त ही देखे मरते।
क्यों नहीं उनकी व्याधी छूटी, है मूरति की पूजा झूठी।

पंच कौड़ी के फूल से, मिलता है यदि राज।
तुर्तं चढ़ाइये फूल अरु बनिये राजा आज।।

सारे जग का राज संभाले, घर से दुख दरिद्र निकालें।
राज दण्ड क्यों भोगो भाई, फूल चढ़ाओ करो कमाई।
मूरति पूजा यदि तुम्हारी, भवसागर से तारणहारी।
तो फिर सम्यक दर्शन ज्ञाना, नाना शुभ चारित्र्य विधाना।
सब छोड़ो इक मूरति पूजो, मूरति सम साधन नहीं दूजो।

स्रवत अँगूठा गौतम जी का, उससे अमृत निकसे नीका।
गौतम सिमरे सब दुख जायें, मन वांछित फल मानव पायें।
रत्नसार की है यह बानी, पृष्ट त्रयोदश लिखी कहानी।
इनमें हो यदि कुछ सच्चाई, अमर होंय सब जैनी भाई।
इन बातन में नहीं कछु सारा, तत्त्व हीन झूठी निस्सारा।
मूरख लोगों को बहकावें, उनका द्रव्य लूट कर खावें।

जल चन्दन चावल कुसुम, धूप दीप नैवेद।
इनसे जिनवर अर्चिये, मिटे दूख और खेद।

एहि कारण हम कहते भाई, जैनिन पूजा मूरति चलाई।
विवेक सार पृष्ट ५१—५२

मूरति पूजक मुक्ति पाए, मानव क़े सब दूख नशाए।
जिण मन्दिर में जो जन जाते, उनके अन्दर सद्‌गुण आते।
जल चन्दन अरु पुष्प चढ़ाए, छूटे नरक सुरग को जाए।

विवेकसार पृष्ठ २१
जिण मन्दिर में मोह न आए, भवसागर से पार लँघाए।

विवेकासार पृष्ठ ५५
प्रतिमा ऋषभ देव आदी की, चारहु फल की दाता नीकी।

जिन की मूरति पूजिये, छूटें जग के क्लेश।
जब लग जीये सुख मिले, रहे न दुख का लेश।

समीक्षक

घोर अविद्या के वचन, महाँ असम्भव बात,
कब जैनिन के हृदय मैं, होगा ज्ञान प्रभात।।

एहि विधि बुरे कर्म यदि छूटें, मोह माया के बन्धन टूटें।
भवसागर से पायें पारा, बहने लगे सु:ख की धारा।

[illegible] सद्गुण आयें, मानुष के सब क्लेश नशाएं।
तो जैनी सब पायं पदारथ, जीवन होवे सुखी सकारथ।
क्यों जैनी पुन दुख को पाते, क्यों दारिद दुख लीन लखाते।

विवेकासार पृष्ठ ३

स्थापण जिन की मूरति, जिन पुरुषों ने कीन।
अपनी अपने कुटुम की, तिनहि जीविका लीन।।

विवेकासार पृष्ट २२५

शिव विष्णु ब्रह्मादि की, प्रतिमा पूजा दोष।
वे नर जायं नरक को, अर्हन करते रोष।।

समीक्षक

मूरति शिव ब्रह्मादि की, पूजे लगता पाप।
अर्हन पूजे पाप नहीं, यह सब झूठ प्रलाप।

अच्छी यदि तुम कहो हमारी, शिव ब्रह्मादिक से हैं न्यारी।
शुभ मुद्रायुत त्यागोपेता, अति विरक्त अरु शान्ति समेता।
तो किमि मानें बात तुम्हारी, कौन बात है तुम में न्यारी।
जहाँ तुम्हारी मूर्ति विराजे, स्वर्ण रजत मंदिर वह साजे।
उन पर चढ़ता केसर चन्दन, धन देते जो करते बन्दन।
कैसे कहें उन्हें पुन त्यागी, धन शालीन सुखी बड़भागी।
शिव आदिक मूरति बिन छाया, जिन पर नाहीं छाजन छाया।
वे प्रतिमाएँ क्यों नहीं त्यागी, वे नहीं स्वर्णरजतअनुरागी।
कहो यदि तुम शान्त हमारी, तो जड़ शान्त अचल है सारी।

मूरति पूजा व्यर्थ है, सब मत की इक सार।
जो प्रतिमा पूजन करे, पड़े नरक आगार।।

प्र.– नग्न हमारी मूरति, वस्त्राभूषण हीन।
शान्तभाव उत्पन्न करे, करे न चित्त मलीन।।

उ॰– नग्न मूरति देख कर, होता चित मलीन।
यह लीला पशुवत बुरी, करते बुद्धि विहीन।।
प्र॰– स्त्री की मूरति देख कर, उत्पन्न हो जिमि काम।
त्यों सन्तन की मूर्ति लख, नर होवे निष्काम।।

कुण्डलिया–उत्तर

पाहन मूरति दरस ते, मानो शुभ परिणाम।
तो दुर्गुण भी आयेंगे, जिनकी मूरति धाम।।
जिनकी मूरति धाम, आँय दुर्गुण जड़तादिक।
जड़ बुद्धि अविवेकी हो, उपजे भ्रम आढ़िक।।
करे तुम्हारा नाश, दुष्ट यह कर्म विदाहन।
कबहुँ संगति छुटे न पूजो मूरति पाहन।।

दो॰–लिखे दोष जो ग्यारहवें, समुल्लास के बीच।
वे सब उसमें व्यापते, जो पूजे मूरति नीच।।
जेहि विधि पूजा मूर्ति में, वृथा बकहिं यह जयन।
तेहि विधि इनके मन्त्र भी, अनृतता के बयन।।

सो॰–यह जैनिन के मन्त्र, लिखा महातम बहु घना,
भाट पुराण रु तन्त्र, पिछड़ गये इनसे सभी।।

श्राद्ध दिन कृत्य पृष्ठ ३

परम मन्त्र यह है अति पावन, परम ध्येय ध्यान हित भावन।
परम तत्त्व तत्त्वन के मांही, इससे बड़ा मन्त्र कोऊ नाहीं
नाव समान मन्त्र नवकारा, भवसागर से करता पारा।
जो नवकार मन्त्र को त्यागे, सब सुख उस मानुष से भागे।
डूब जाय वह भवजल मांही, अन्त काल लौं उबरे नाहीं
अग्नि आदि भय आठ महाना, जो इन मांही सहायक माना
सो नवकार मन्त्र है केवल, भव दुख तरे पुरुष इसके बल।

जग में ज्यों वैडूर्य मणि, ग्रहण करन के जोग।
ग्रहण करे श्रुत केवली, त्यों जनु शास्त्र अमोघ।।
सगरी दादश अंगि का, रहस मन्त्र नवकार।
परम मन्त्र ताँते यही, जपिये बारम्बार।।
अर्थ सुनें इस मन्त्र का, अरु पुन करें विचार।
सब तत्वों का तत्व यह, अरु सारों का सार।।

नमस्कार जिण सिद्धन ताईं, जिणाचार्य पद माथ निवाईं।
उपाध्याय जो जिण मत केरा, नमस्कार उन सबको मेरा।
जैन साधु जग में जो पाऊँ, चरणकमल तेहिं सीस निवाऊँ।
जैन शब्द नहीं मन्तर माहीं, पर अर्थों में संशय नाहीं।
जैन बिना अवरहुँ मत मानें, एहि विधि पुस्तक जैन बखानें।

तत्त्व विवेक पृष्ठ १६६

जो नर पाहन काठ में, रखे भावना देव।
सो शुभ फल प्रापत करे, ताँते मूरति सेव।।

समीक्षक

जो इसको सच मानिये, झरें दरस ते पाप।
क्यों मूरति का दरस कर, लहें न सब सुख आप।।

रत्नसार भाग पृष्ट १०

पार्श्वनाथ की मूर्ति का, दर्शन पाप नशाय।
ताँते दर्शन नित्य कर, रे नर अलस विहाय।।

कल्प भाष्य पृष्ठ २१

सवा लाख टूटे फटे, मन्दिर दिये सुधार।
इस विधि मूरति विषय के, लेखों की भरमार।।

समीक्षक

मूरति पूजा जैन चलाई, रहा न संशय अब सो भाई।
जैन साधु की लीला देखें, उनके ग्रन्थों को पढ़ देखें।

विवेकसार पृष्ठ २२२

कोशा नामक कंचनी, से करके सहवास।
एक साधु त्यागी भया, ताको स्वर्गावास।।

विवेकसार पृष्ट १०

चरित चूक अर्णक मुनि, दत्त सेठ गृह जाय।
बर्सों भोग विलास कर, फेर देव गति पाय।।
सिरी कृष्ण का पुत्र इक, ढंढक जाको नाम।
उसे स्थालिया ले भगा, गया स्वर्ग के धाम।।

विवेकसार पृष्ट १५६

भला होय चाहे बुरा, धरे साधु का भेस।
ऐसे जैनी साधु को, पूजे सगरा देस।।

विवेकसार पृष्ट १७१

भ्रष्टाचारी साधु हो, श्रावक का बह देब।
तन मन से जिण साधु की,सदा कीजिये सेव।।

विवेकसार पृष्ट १६८

सो१—होवे भ्रष्टाचार, जैन मती साधु रहे।
ऊँचा उसे विचार, अन्य मतों के साधु से।।

विवेकसार पृष्ट २१६

पाँच मुट्ठी लुञ्चन किये, चरित गहे इक चोर।
ज्ञान पाय छः मास में, भया सिद्ध सिरमोर।

समीक्षक

देखें इनके साथ गृहस्थी, लक्कड पत्थर भेख परस्थी।
इनके मत का महाँ कुकर्मी, साधु माना जाय सुधर्मी।

दुष्ट कर्म कर सद्गति पाये, भ्रष्टाचारी स्वर्गं सिधाये।
ग्रन्थ विवेक सार पढ़ देखें, पृष्ठ एक छय को अवलेखें।

छठे नर्क मँह गया है, सिरी कृष्ण भगवान।
ऐसे निन्दक जैन यह, पतित पाप की खान।

विवेक सार पृष्ठ ४५

शत पैंतालिस पृष्ठ पर, पुन लिखता यह जैन।
धन्वंतरि नरकहुँ गया, लिखते बैन कुबैन।

अड़तालिस पृष्ठे मति हीना, यूँ लिखता यह ज्ञान विहीना।
जोगी जंगम मुल्ला काजी, हाजी बाजी पाँच नमाजी।
सहें दुःख तप करके भारे, फिर भी सारे नरक सिधारे।

रत्नाकर भाग पृष्ठ १७१

छ०– वासुदेव त्रीपृष्ठ नरक में जाय समाया।
समय ग्यारवें तीर्थंकर कर था जब आया।
वासुदेव द्विपृष्ठ नर्क मँह पायो धामा।
तीर्थं कर द्वादशवाँ आया जब अभिरामा।
पुनः स्वयंभू वासुदेव भी नर्क सिधाये।
तीर्थंकर जिस काल चतुर्दश जग में आये।
पुरुषोत्तम पुन वासुदेव नरक माँहि रोता गया।
तीर्थंकर जब पंद्रहवाँ फिर उत्पन्न होता गया।
सिंह पुरुष पुन वासुदेव, नरकहुँ सिधारा।
अष्टादश तीर्थंकर लीनो जब अवतारा।
पुण्डरीक नर वासुदेव पुन नरक निवासे।
तीर्थंकर विंशतितम जग में सभी प्रकासे।
विंशति द्वा विंशति तमे तीर्थंकर जू जब भये।
दत्त लक्षमण कृष्ण जू वासुदेव नरकहुँ गये।

अश्व ग्रीव प्रति वासुदेव भी नरक सिधाये।
नरपति जिसका नाम गान जिसके बहु गाये।
तारक मोदक मधु विशुम्भ बलि अरु प्रहलादा।
जगसन्धि अरु रावण सब वसुदेव प्रमादा।
महाँ नरक में जा गिरे वासुदेव जितने हुए।
घोर यातना भोगते, जनम जनम फिर फिर मुए।

कल्प भास्य पढ़ देखें इनका, यश गाया है कितना जिनका।
तीर्थंकर चौबीस हमारे, महाबीर ऋषभादिक प्यारे।
पायो सबने मुक्ति धामा, यहाँ सुख शान्ति छयी अभिरामा।

समीक्षक

पर नारी रत वेश्यागामी, चोर उठाई गीरे कामी।
जैन गृहस्थी साधु सारे, भले ही होंय डाकू हत्यारे।
सबहिं पाँय मुक्ति अभिरामा, सगरे जाँय स्वर्ग को धामा।
सिरी कृष्ण आदिक धर्मातम, महाँ पुरुष योगी पुण्यातम।
पड़े सभी वे नरक मझारा, यह जैनिन के दुष्ट विचारा।

जैनी के ढिग बैठना, अरु दर्शन है पाप।
इन मूढ़ों के संग से, मन को हो संताप।

जो इनके ढिग बैठे जाकर, उसको दुष्ट विचार सुना कर।
उसका भी मन करहिं मलीना, मूढ़ जैन यह बुद्धि विहीना।
भला पुरुष जो हो इन माँही उसका संग बुराई नाँही।
भला पुरुष पर रहे न इनमें, कहाँ भलाई है मत जिनमें।

विवेक सार पृष्ठ २५

तीरथ गंगा जमुना कासी, पाप क्षेत्र यह सत्यानाशी।
इनके सेवे नहीं परमारथ, निष्फल यह सब तीर्थ अकारथ।
जैन तीर्थ आबू गिरिनारा, पालीटाणा क्षेत्र हमारा।
इनके दर्शन मुक्ति दाता, धर्म लहे जो वहाँ पर जाता।

समीक्षक

वैष्णव शैव तीर्थं हैं जैसे, जड़ जल थल जैनिन के वैसे।
नहीं अंतर दोनों में कोई, जेहि विध जैन पुरानी सोई।
इक की निन्दा इकहुँ सराहन, व्यर्थ दोऊ जल थल अरु पाहन।

अथ जैन मुक्ति वर्णन

महावीर तीर्थंकर बोलें, रहस मोक्ष गौतम सन खोलें।
ऊर्ध्व लोक में है इक ठाऊँ, सिद्ध सिला है जाको नाऊँ।
लख पैंतालिस योजन लंबी, दूर स्वर्ग से नभ अवलंवी।
जितनी लंबी उतनी पोली, योजन अष्ठ स्थूल अडोली।
धवल वर्ण जिमि मुक्ता हारा, अथवा गौर सुरभि पय धारा।
सिद्ध शिला ज्यों स्वर्ण प्रकाशे, निर्मल फटिक सुदूर आकाशे।
लोक चतुर्दश शिखरहिं राजे जहाँ पर शिवपुर धाम विराजे।
मुक्त पुरुष तहाँ करहि निवासा, जन्ममरण के दोष निवासां
आवागमन चक्र छुट जाये, मुक्त जीव पुन जन्म न पाये।
यही मोक्ष जैनी का भाई, जाकी जैनी करे बड़ाई।

समीक्षक

यथा कल्पना करें पुजारी, स्वर्ग लोक की लीला सारी।
कहीं बैकुण्ठ कहीं कैलासा, काहू का गोलोक निवासा।
मुसल्मान चौथे असमाने, चौदस तबक इसाई माने।
भिन्न भिन्न मुक्ति के स्थाना, सब पंथों ने इस बखाना।
एहि विधि सिद्ध शिला शिवधामा, जानें जैनी अति शुभकामा।
वरु जिसको जिण ऊँचा माने तलवासी तिहिं नीचा जानें।
गोला है भूमण्डल सारा, ऊँच नीच का नहीं पसारा।
हमरे चरण तले अमरीका, ऐसा भाव रखें हम नीका।
पर ऊँचें अमरीका वासी, अपने को समझे आकासी।
सिद्ध शिला हो लख पैंताली, इससे भी हो दुगुन विशाली।

फिर भी हैं सब बंधन माँही, बंधन रहित मुक्त कोउ नाँही।
शिवपुर से बाहर जब जावें, तब ही मुक्त बंधन में आवें।
सदा वहीं रहने में प्रीति, बहिर्गमन में हो अप्रीति।
जहाँ अटकाव प्रीति अप्रीति, वहाँ नहीं मुक्ति की नीति।
समुल्लास नव में जिमि वरणी, यही मुक्ति है सत्य सुवरणी।

जैन पंथ की मुक्ति क्या बंधन एक महान।
मुक्ति विषय में जैन सब, भ्रम में फँसे अजान।
जो जब लग नहीं जानते, वेदों के सत अर्थ।
जान सकें नहिं मुक्ति को, रहे भटकते व्यर्थ।
अनहोनी बातें लिखीं, जैनी ग्रन्थन बीच।
परखें इनको पारखी, जल कण मृग मारीच।

विवेकसार पृष्ठ ७८

एक कोटि सठ लाख घट, जल से भरे महान।
जन्मत ही महावीर को, करवाया असनान।

विवेकसार पृष्ठ १२६

महावीर के दर्शन काजा, गया महार्ण घमण्डी राजा।
उपजा तिसके मन अभिमाना, महावीर ने मन में जाना।
किया तुर्तं अभिमान निवारण, तीर्थंकर ऐसे जग तारण।
सोलह सत सप्तति बहत्तर, इन्दर सोलह सहस वृहत्तर।
इतने इन्द्र वहाँ पर आए, देख छकित राजा रह जाए।
तेरह सैंतिस और बहत्तर, इन्द्राणी पुन आईं पछत्तर।
अस्सी कोटि पुनः इन्द्रानी, लखकर नृप की बुद्धि भुलानी।

समीक्षक

इते इन्द्र इन्द्राणियां, खड़ी कहाँ पर आन। इस भूमण्डल से बड़े, चहियें अनिक जहान।

श्राद्ध दिन कृत्य आत्म निन्दा भावना पृष्ठ ३१

नहीं बनवाएँ बावली, नहीं कूआ नहीं ताल।
जो पापी ऐसा करे, पड़े काल के गाल।

समीक्षक

सब जैनी हो जाँय तो बिन पानी मर जाँय
नहीं पोख्र नहीं बावली, नहीं कुँआ खुदवायँ।।

प्र०— पोखर कूँए ताल खुदाएँ, क्षुद्र जीव उनमें मर जाँये।
महाँ पाप हत्या का लागे, ताँते इन बातों से भागे।
हम जैनी नहीं ऐसा करते, जीवों की हत्या से डरते।

समीक्षक

नष्ट भई क्यों बुद्धि तुम्हारी, प्यासी मारो दुनियाँ सारी।
जो जन ताल कूप खुदवाएँ, प्राणी मात्र को नीर पिलाएँ।
क्षुद्र जन्तु को आप बचावें, गाय भैंस जल बिन मर जावें।
घोड़े बकरी पानी पीयें, नर नारी पानी पर जीयें।
ऐसा किये पुण्य अति लागे, हत्या दोष वहाँ से भागे।

तत्व विवेक १६५

सेठ रहे इक नगरी अन्दर, मणिकार धनपति अति सुन्दर।
नन्द नाम याको जग जानत, इस विधि बाकी कथा बखानत।
वापी उसने इक बनवाई, महा नीच गति उसने पाई।
सोलह रोग भये तिस भारे, रोता रहे कष्ट के मारे।
मर कर दादर योनि पाई, उसी बावड़ी अन्दर भाई।
महावीर का दर्शन पाया पिछला जन्म स्मरण तिस आया।
महावीर कहते वह दादर, चला मोर दर्शन को सादर।
पूर्व जन्म का धर्माचारज, मो कहजान गया वह आरज।
बन्दन हेत जबहुँ वह आया, मम दर्शन जाके मन भाया।

श्रेणिक के घोड़े तले, दब कर निकसे प्रान।
बना महर्धिक देवता, बैठा तुर्त विमान।।

दुर्दरांक नामक वह दादर, देव रूप गह आया सादर।
चरण वंदना करके मोरी, ऋद्धि दिखा कर गया बहोरी।

समीक्षक

विद्या ज्ञान विरुद्ध यह महाँ असंभव बात।
कब समाप्त होगी प्रभो, घोर अविद्या रात।

महावीर की बातें सुनिये, पुन अपने मन भीतर गुनियें।
क्या ऐसा नर है सर्वोत्तम,कह सकते उसको परमोत्तम।।
महाँ झूठ नहीं ऐसा संभव, मन गढ़न्त यह बात असंभव।

श्राद्ध दिन कृत्य पृष्ठ ३६

मुर्दे के जो वस्त्र हों, करे साधु को दान।
जैन साधु को वस्त्र दे, तब होवे कल्यान।।

समीक्षक

महाँ ब्राह्मण का कर्म है, गहे मृतक परिधान।
जैन साधु लेने लगे, अब मुर्दों का दान।।

साधु तो लेवें परिधाना, कौन गहे तुन भूषण नाना।
वे क्यों अपने घर रख लेंवे, वे क्यों नहीं साधु को देवे
क्यों वे नहीं मृतक के भूषण, घर रखने में क्यों नहीं दूषण।

रत्न सार पृष्ठ १०५

कुटना पिसना भूंजना, आदि कर्म सब पाप।
इन कर्मों को जो करे, वाको दुख सन्ताप।

समीक्षक

कूटे पीसे नहीं कोई, क्या प्राणी पुन खाँय।
जैनी भी सब भूख से, तड़प तड़प मर जाँय।।

केशों का लुंचन करे, रखे गाय वत बार।
कल्प सूत्र इस विधि कहे, यह लुंचन व्यापार।।

समीक्षक

कहो जैनियों अब कहाँ, दया धर्म को वास।
क्या यह हिंसा नहीं है, मन को देना त्रास।।

आप करे वा करे अचारज, यह हिंसा का कर्म अनारज।
कोई करे वरु दुख तो होवे, हाय हाय चिल्लावे रोवे।।
हिंसा कहिये कष्ट प्रदाना, महाँ कष्ट कर केश लुचाना।

विवेक सार

संवत सोलह सौ अरु तेती, ढूँडिया मत निकसा जिण सेती।
यह मत श्वेताम्बर की शाखा, ग्रन्थ विवेक सार इमि भाखा।
ढूँढिया से पून तेरह पंथी, एहि विधि उपजे अनिक कुपंथी।
ढूँढिये पाहन मूर्ति न मानें, भला नहीं वे इसको जाने।
पट्टी बाँध सदा मुख ढाँपें, क्षुद्र जीव हिंसा से काँपे।
पट्टी खोल करें असनाना, अथवा हो जब खाना खाना।
जती आदि साधु हैं जेते, पठन समय बाँधे मुख तेते।
अवर काल नहीं राखें पट्टी, पट्टी है धोखे की टट्टी।

प्र०– वायु काय प्राणी मरें, जब लेवे नर श्वास।
ताँते पट्टी बाँधिये, होय न उनका नास।।

उ०– विद्या बुद्धि व्यक्ति अरु प्रत्यक्षादि प्रमान।
इन सबसे विपरीत तब, बात जाँय किमि मान।।

आतम अजर अमर अविनाशी, मरे नहीं यह नित्य प्रकाशी
मुख का वाष्प न इसको मारे, ऐसा ही मानें ग्रन्थ तुम्हारे।

प्र०– मरे नहीं पीड़ित करे, गर्म श्वास की भाप।

ताँते पट्टी बाँधिये, लगे न हिंसा पाप।।

(कुंडलिया) उत्तर

बिना दिये पीड़ा नहीं, हो सकता निर्वाह।
खाना पीना बैठना, उठना चलना राह।।
उठना चलना राह, मनुष का कहाँ गुजारा।
जीव मरें सब ठौर, जगत से करो किनारा।
जल थल नभ में भरे पड़े हैं अगनित कीड़ा।
हो सकता निर्वाह नहीं बिन दीजे पीड़ा।।

प्र०– यथा शक्ति रक्षा करें, यही दया का भाव।
ताँते पट्टी बाँधिये, कुछ तो होय बचाव।।
उ०– पट्टी से रुकता पवन, गर्माते हैं श्वास।
अधिक दुःख उससे मिले, बहु जीवों का नास।।

पट्टी से गर्माएं श्वासा, भर जाये वायु से नासा।
अधिक वेग से उससे निकसे, अगर बगर पट्टी के विकसे।
उससे जीव अधिक दुख पाते, रूद्ध श्वास का धक्का खाते।
सगरे कर दो बन्द किवारा, खुला रखो नहीं एकहु द्वारा।
होगी गर्म कुठरिया सारी, रहे न अंदर शीत बयारी।
खुली रहे तो नहीं गर्माए, गर्मी बन्द किवाड़ बढ़ाए।
मुख से फूँक अगन को मारो, इस प्रकार अगनि को बारो।
फैल जायगी फूँक तुम्हारी, अग्नि जल्द न जाये बारी।
पर फूँको नाली के द्वारा, यथा मारता फूँक सुनारा।
तो अग्नि दहकत जल जाये, नाली उसका वेग बढ़ाए।
बंद होय जब मुख का द्वारा, वायु दौड़े नासा द्वारा।
नासा नलिका वेग बढ़ाए, जीवों को धक्का लग जाए।
इस धक्के की पट्टी कारण, ताँते पट्टी करो निवारण।
मुख की पट्टी अति दुखदायी, पट्टी लाखों जीव नशाई।

जो पट्टी नहीं बाँधते, उनको धर्मी जान।
पट्टी जो बाँधे पुरुष, सभी पाप की खान।।

पट्टी आनन करे प्रवारण, शुद्ध न होवे पद उच्चारण।
जो अंक्षर हों निर अनु नासिक, उनको पढ़ते सानुनासिक।
दोष लगे तुमको अतिभारा, शब्दों का हो अर्थ नियारा।
जिस मुख ऊपर पट्टी बंधी, वहाँ फैल जाये दुर्गन्धि।
मैल भरी यह सगरी देहा, पट्टी दुर्गन्धि की गेहा।
दुर्गन्धित होते प्रश्वासा, उनसे निकसे बुरी कुबासा।
वह पट्टी पर रुक कर फैले, दंत होंय पट्टी से मैले।
बंद द्वारा का जिमि पाखाना, उससे उठे कुबास महाना।
खुला होय दुर्गन्धि न्यूना, मुख पट्टी का यही नमूना।

कु०— मुख पर पट्टी बाँधते, धोते कभी न दंत।
स्नान वस्त्र धोते नहीं, तन पर मैल बेअन्त।
तन पर मैलबेअन्त, जैन दुर्गन्धि फैलाते।
प्राणि मात्र को यह गंदे, पीड़ा पहुँचाते।।
ज्यों आवे बू बास जाय चूढ़ों की ठट्टी।
त्यों दुर्गन्धित कर देती मुख पर की पट्टी।।
फैले यथा विशूचिका, मेले ठेले बीच।
दुर्गन्धि अति फैलती, होय नरों की मीच।।

घंटे रोग यदि घटे कुबासा, हैजे से कम होय विनासा।
त्यों जग है इक मेला ठेला, जैनन रहता यहाँ अकेला।
शेष मनुष तो धोवें न्हाँवे, पर जैनी दुर्गन्धि फैलावें
इसका पाप लगेगा तोको, पट्टी से मुख को मत रोको।

जो पट्टी नहीं बाँधते, करते नित्य स्नान।
वे नर हैं पुण्यात्मा, तुम हो घृणित महान।।

जैसे अन्त्यज का सहवासा, जिनसे आये घृणित कुबासां
उनसे रहना दूर भलाई, आय बुद्धि में निर्मल ताई।
अन्त्यज के ढिग बढ़े न बुद्धि, नहीं होती तन मन की शुद्धि।
तेहि विधि बुद्धि न बढ़े तुम्हारी, निर्बुद्धि हो जिण सहकारी।
जो मनुष्य होता है रोगी, जिसकी बुद्धि थोड़ी होगी।
धरम करम उससे नहींहोते,आयु गँवाए रोते रोते।
वही दशा जैनिन की होगी, धर्म हीन रहते हैं रोगी।
जो कोई बैठे संग तिहारे, वे भी रोगी रहें बेचारे।

प्र॰– जैसे बंद मकान से, बहिर न निकले ज्वाल।
त्यों पट्टी मुख श्वास को, अन्दर रखे सम्हाल।।

रुके श्वास बाह्य नहीं जावें, जीवबहिर के दुख नहीं पावें।
सन्मुख जलताहोय बसंतर, आड़ा हाथ रखे मभ्यन्तर।
अग्नि ताप तब लगता न्यूना, मुख पट्टी का यही नमूना।

उ॰– बाह्यभ्यन्तर वायु का, जहाँ संबंध कट जाय।
छिद्र न हो जहाँ पर कोई, वहाँ नहीं अग्नि दिपाय।।

वहाँ नहीं अग्नि दिपाय लैंप को आप जलायें।
चिमनी कर दें बंद हवा की राह रुकवाएं।
बुझ जायेगा लैंम्प निमिष मातर के अन्तर।
टूटे जब सम्बन्ध वायु का बाह्यभ्यन्तर।
जीव जन्तु सब पवनाधारा, बाह्य पवन का इन्हें सहारा।
बाह्य पवन बिन जले न ज्वाला, पवन बिना नहीं करें उजाला।
इत से रोको उत को धावे, अग्नि वेग बढ़ता ही जावे।
मुख को आड़ा हाथ बचावे, पर कर को तो बहुत तपावे।

प्र॰– छोटा नर जब बड़े के, करे कान में बात।
तब अंचल वा हाथ को, कानहुँ संग लगात।।

थूक न उड़ कर उस पर जाए, दुर्गन्धि नहीं उसको आये।
थूकें उड़ती पढ़ते पोथी, उससे पोथी होती थोथी।
ताँते पट्टी है अनिवारा, पट्टी के बिन नहीं गुजारा।

उ०— उपर्युक्त तब युक्ति का, यह निकसा पुन अर्थ।
जीव दया का भाव इक है ढकोसला व्यर्थ।।

गुप्त बात जब करनी होती, तब रखते पल्ला या धोती
खुली बात हो दोनों माँही, तब कोई पल्ला रखता नाँही।
क्यों पुन सीधी बात न करते, गुप्त बात हित पट्टी रखते।
मूख अरु दाँत न करते धावन, एहि कारण तुम महाँ अपावन।
दुर्गन्धित मुख विवर तुम्हारे, जो तुमरे डिग बसें बेचारें।
वे केवल दुर्गन्धि पाते, जग में तुम दुर्गन्धि फैलाते।
पल्ले के हैं बहुत प्रयोजन, गुप्त बात करते हैं जो जन।
उनकी बात दूर नहीं जाती, उनके शब्द न वायु उड़ाती।
जो नर दोनों होंय अकेले, वहां न कोई अंचल मेले।
तीजा जहां न सुनने हारा, वहां न चंचल का व्यवहारा।

बड़े नरन के मुखन पर, थूक न कहीं गिर जाय।
क्या छोटों पर जा गिरे, इसमें दोष न आय।।

नहीं थूक से बचता कोई, पवन प्रवाह ओर जिस होई।
वायु में त्रसरेणु वन कर, थूक गिरे उनके आनन पर।
इसका दोष गिनें अज्ञानी, इसमें होय नहीं कछु हानि।
मुख की गर्मी जींव न मारे, क्या जाने यह जैन बेचारे।
ज्येष्ठ महीनें गर्मी पड़ती, लू चलती सब सृष्टि सड़ती।
ऐसे तपते चण्ड दिनेशा, मरें जीव कोऊ बचे न शेषा।
पर सृष्टि है जीवित सारी, तांते झूठी युक्ति तुम्हारी।
जैनिन के तीर्थंकर सारे, नहीं थे विद्यावान बेचारे।
यदि होते पण्डित विद्वाना, क्यों कहते इस विधि अज्ञाना।

पीड़ा उनको पहुँचती, जिनके सगरे अंग।
इन्द्रिय साधन जहां नहीं, वहां पर ज्ञान अपंग।।

पञ्चामयव योगासुख संविक्तिः।। सां॰

पंचेन्द्रिय के संग हो, पंच विषय संधान।
तब यह जीवातम करे, सुःख दुःख को भान।।

बहरे को गाली परदाना, अन्धे को दीपक दिखलाना
शून्य जिह्व का खाना माखन, मधुर अम्ल रस वस्तु चाखन।
सभी व्यर्थ वें नहीं कुछ भाखें, देखें सुनें नहीं कुछ चाखें।
एहिविधि सूक्ष्म जीव अवस्था, सुखदुख की नहीं वहां व्यवस्था
उनके तो इन्द्रियही नाहीं, सुख दुख ज्ञान न तिनके मांही।
उनका तनु के भीतर वासा,सूना वरं बहिर का पासा।?
जांते नाहीं दुख सुख भाना,नहीं उनको निज सत्ता ज्ञाना।

मादक द्रव्य सुंघाय के, अंगों को दें चीर।
डाक्टर काटे छुरी से, नर को होय न पीर।।

वायु काय के आतम ऐसे, ज्ञान शून्य मूर्छित हैं जैसे।
इनको नहीं सुख दुख अरु पीड़ा, इन्द्रिय हीन पतंगा कीड़ा।
पीड़ा उनको कबहुँ न होती, उनकी सृष्टि मूर्छित सोती।
उन जीवों को बृथा बचाना, यह सब वृथा जैन अज्ञाना।
उनका दुख प्रत्यक्ष न देखें, किसविध पुन अनुमानहिं लेखें।

प्र॰– जब वे सारे जीव हैं, क्यों सुख दुख पुन नांहि।
जहाँ ज्ञान तहाँ चेतना,अनुभव हो तिन माँहि।।

घनी नींद में जब तुम सोते, पड़े खाट प औंधे होते।
ज्ञान न होय तुम्हें तिहि काले, चहे कोई सब वस्तु चुराले।
तब क्यों नहीं सुख दुखको ज्ञाना, तुमको होय न आतम भाना।
आतम अरु इन्द्रिय संबन्धा, इस संबंध से सुखदुख बंधा

जब सम्बन्ध दोनों का छूटो, तब सुख दुख का अनुभव टूटे।
इसका उत्तर हम दे आये, जैसे डाक्टर छुरी चलाये।
पर रोगी कछु जाने नाहीं, वह इस दुनियां में जनु नाहीं।
दुख सुख साधन नाहीं कोई, बिन साधन अनुभव नहीं होई।

प्र०– नहीं निलोती का करें, हम जैनी व्यवहार।
शाकपात करु कन्द में, जीवों की भर मार।।

जो हम कन्द पात को खावें, अगनित जीवहुँ दुख पहुँचावें।
तांते कंद मूल नहीं खाते, पाप न करते दया दिखाते।

उ०– बात महा अज्ञान की, नहीं जानहु तुम सार।
पहले उत्तर जो दिया, उसको दिया विसार।।

शाक पात में जो हैं कीड़ा, उन कीड़ों को होती पीड़ा।
तुमने इसको कैसे जाना, देखी हो तो हमें दिखाना।
जहां नहीं प्रत्यक्ष प्रमाना, वहाँ नहीं होता अनुमाना।
बिन प्रत्यक्ष ब कोऊ प्रमाना, शब्द नहीं नाहीं उपमाना।
वे सब जीव सुषुप्ति मांही, उनको अपनी सुधि बुधि नाहीं।
सुख दुख प्रापति उन कँह मानी, ताँते तीर्थंकर अज्ञानी।
तुम्हे जिन्होंने यह सिखलाया, अंधकार में तुम्हे भुलाया।
गृह का जब होता हैं अंता, गृहवासी किमि होय अनन्ता।
सगरे सान्त शाक अरु पाता, क्यों जीवों का अन्त न आता।
ताँते महती भूल तुम्हारी ज्ञान शून्य तुम निपट अनारी।

प्र०– गर्म न करते अम्बु को, कच्चा पीते नीर।
घोर पाप तुम कर रहे, जीवहुँ देते पीर।

उत्तर

जब तुम गर्म नीर को करते, जिया जन्त गर्मी से मरते।
उनके तनु का अर्क निकालो, सौंफ अर्क वत तुम पी डालो।

जो जन पीते शीतल नीरा, वे जीवहुँ नहीं देते पीरा।
ठंडा नीर उदर में जाए, पेट की अग्नि उसे तपाए।
तपन पाय उड़ते संग श्वासा, जीवहुँ का पुन होय न नासा।
दुख नहीं पायें जीव परन्तु, वायु कायवत जल के जन्तु।
इसमें पाप न होवे कोई, पाप होय जब हिंसा होई।

प्र॰– उड़ जायें जब जीव सब, आग पेट की पाय।
त्यों उड़ जायें उदक से, जिसको अग्नि तपाय।।

उत्तर

गर्म श्वास जीवहुँ कँह मारें, इस विधि जैनी लोग विचारें
जब अग्नि पर सलिल उबालें, वे मर जायें कौन निकालें।
सब उबले तनु तुम पी जाते, पी पी पानी पाप कमाते।

प्रश्न

नहीं किसी को हम उकसाते, निज कर से नहीं नीर पकाते।
ताँते हमको पाप न लागे, गर्म करें कोई और अभागे।

उत्तर

जो तुम गर्म न पीते पानी, क्यों गृहस्थ यह करते हानि।
तांते तुम्ही पाप के भागी, किमी गृहस्थ तव पद अनुरागी।
जो तुम एकहु आज्ञा देते, उसे से जाय गर्म जल लेते।
तो पुन एकहि जल गर्माता, पाप बहुत थोड़ा हो जाता।
घर घर में अब नीर तपावें, क्या जाने कहाँ साधु आवें।
पापी अधिक तुम्ही इस कारण, अगनित मारहु जीव अकारण
ईंधन बृथा जलाए जाते, कवन समय साधु घर आते।
गर्म नीर के तुम उपदेशक, पीने वाले अरु संदेशक।
तुम ही पुण्य पाप के भागी, तप्त नीर के जो अनुरागी।
जो नर मानें वे भी पापी, बचें पाप से नहीं कदापि।
कीड़ों पर तो दया दिखाओ, पर निन्दा में नहीं शरमाओ।
अन्य मतों की करो बुराई, क्या यह पाप नहीं है भाई।

तीर्थंकर मत होता साचा, तो जग होता क्यों जल राचा।
इतनी नदियाँ वर्षासागर सब सृष्टि है जल की आगर।
क्यों प्रभु ने जल इतना दीना, क्या यह पाप प्रभु ने कीना।
रवि को भी उत्पन्न नहीं करता, जिसके ताप कीट जगजरता
तीर्थंकर थे कहाँ तुम्हारे, वे देखें वह जीवहु जारे।
क्या उनके मन दया न आई, क्यों नहीं सूरज दिया बुझाई।
क्यों नहीं रोके वर्षा बादर, सोते रहे तान कर चादर।
तुम तो उनको ईश्वर मानो, सर्व शक्तिमय उन्हें प्रमानो।
इन्द्रिय बिन नहीं होवे ज्ञाना, बिना अंग नहीं आतम भाना।
ताँते उनको सुखदुख नाहीं, आतम भान नहीं तिनमाहीं।
इस कारण सुख दुख से न्यारे, शाक पात में रहने हारे।

दया क्षमा सब पर करो, यह इक मिथ्या भाव।
इससे तो जग में बढ़े, दुष्टन केर प्रभाव।।

दुष्ट जनों को दण्ड सुधारे, तस्कर पकर प्राण से मारे।
सज्जन का करना सन्माना, दयाभाव याही मत माना।
चोर दस्यु पर दया दिखाना, मानहुँ पापाचार फैलाना।
जैनीं होते बहु व्यापारी, रात दिवस ठगते नर नारी।
पर धन हरते छल बल करते, क्या इसमें प्राणी नहीं मरते।
क्यो उपदेश वहाँ नहीं देते, जिससे उनकी आतम चेते।
सद् शिक्षा दे उन्हें सुधारो, पाप वृत्ति से उन्हें निकारो।
मुख पट्टी आदिक का धोखा, वृथा रचाया स्वाँग अनोखा।
क्यों लोगों के केश लुचाओ, भूखे रख उपवास कराओ।
चेलों को दुख देते भारी, भूखे मरते नर और नारी।
दुख देते अरु दुःख उठाते, निर्दय क्रूर दया नहीं लाते।
पशुओं पर क्यों करो सवारी, कहाँ रही पुन दया तुम्हारी
गज घोड़े ऊँटों पर चढ़ते, मुख से मन्त्र दया का पढ़ते।
अंटसंट सब बातें झूठी, पूरी नहीं हो सकें अनूठी।

नर से मजदूरी करवाते, उनसे सदा बोझ उठवाते।
क्यों नहीं पाप तुम्हें तब लागे, मिथ्या दया मांहि अनुरागे।
जब जाओ तुम कथा सुनाने, मग में मरते जीव अजाने।
क्यों पुन कथा सुनाने जाते, चरणन तले जीव पिस जाते।

यह कीना संक्षेप से, दयाभाव विख्यान।
जड़ मूर्छित को दुख नहीं, हिंसा इसे न जान।।
कछु थोड़ी सी अब लिखें, जैन पंथ की बात।
जिनको सुन कर झूठ भी, मुख ढाँपे शर्मात।।

साढ़े तीनहुँ हाथ भर, होय मनुष का मान।
नर की लंबाई इसी, धनुष मान से जान।।
जानहु संख्या काल की, पूर्व लिखे परमान।
इन को पढ़ कर जैन का, करो झूठ अनुमान।।

रत्नसार भाग १ पृष्ठ १६७—६८

ऋषभदेव का तनु रहा, धनुष पंचशत लंब।
लाख चौरासी वर्ष का, जीवन काल विलंब।।
अजितनाथ की दीर्घ तनु, धनु चतुशत पच्चास।
अब्द बहत्तर भर जिये, पुन भया विनास।।
धनुष चार सौ भर भये, लंबे संभव नाथ।
साठ लाख बरसों जिये, कर गये फेर अनाथ।।
साढेत्रय सौ धनुष भर, अभिनन्दन की देह।
लाख पचासहु तक जिये, मिले अन्त में खेह।।
सुमति नाथ की देह थी, त्रय सौ धनु परिमान।
चालिस लख वर्षों जिये, त्याग दिये पुन प्रान।।
पद्मप्रभ लंबे रहे, धनु छय सौ चालीस।
तीस लाख वर्षों जिये, गये स्वर्ग पुर ईस।।

दो सौ धनु का तनु भया, पार्श्वनाथ का जान।
बीस लाख की आयु में, कीनो स्वर्ग पयान।।
चन्द्रप्रभ का डेढ़ सौ, धनु का तनु परिमान।
एक लाख पूरब बरस, आयु रही प्रमान।।
अर्हन सुविधि नाथ का, इक शत धनुष शरीर।
दो लख वर्षों तक जिये, हरत जगत की पीर।।
नब्बे धनु लंबे रहे, अर्हन शीतलनाथ।
एक लाख बर्सों जिये, करते रहे सनाथ।।
श्री श्रेयासहु नाथ का, अस्सी धनु का डौल।
लाख चौरासी बर्ष में, छोड़ा नर का चौल।।
वासुपूज्य स्वामी रखें, सत्तर धनु की देह।
लाख बहत्तर वर्ष भर, जिये भये पुन खेह।।
विमलनाथ का साठ धनु, लंबा था आकार।
साठ लाख बर्सों जिये, भये मृत्यु आहार।।
अनन्तनाथ की मूरति, लंबी धनुष बचास।
तीस लाख बर्सों जिये, छोड़ दिये पुन श्वास।
पैंतालिस लख धनुष की, धर्मनाथ की डील।
जिये लाख दस वर्ष लौं, लिये काल ने लील।।
शान्ति नाथ की देह थी, लंबी धनु चालीस।
एक लाख बर्सों जिये, दिये काल ने पीस।।
कुन्थुनाथ पैंतीस धनु, रखते लंबी काय।
जी कर अब्द पचानवें, फेर गये बिनसाय।।
अमरनाथ अर्हंत का, तनु लंबा धनु तीस।
आयु भोगी जगत में, लख चौरासि बरीस।।
पच्चिस धनु लम्बे रहे, श्री गुरु मल्ली नाथ।

आयु पचपन सहस की, कर गये फेर अनाथ।।
सुवृत मुनि की बीस धनु, लंबी उँची देह।
सहस तीस बर्सों जिये, तजा देह से नेह।।
नमि नाथ चौदह धुन, लंबे रहे विशाल।
एक सहस की आयु लह, गये काल के गाल।।
नेमि नाथ की दस धनु, काया लंबी जान।
सहस वर्ष की आयु में, त्याग दिये निज प्रान।।

सो॰– लंबे थे नौ हाथ, आयु भई सौ वर्ष की।
अर्हन पार्श्व नाथ अन्त, धूरि में मिल गए।।
दो॰– सात हाथ लंबे रहे, श्री स्वामी महावीर।
आयु बहत्तर वर्ष की, त्यागा फेर सरीर।।

समीक्षक

चौबीस तीर्थंकर जैनिन के, सगरे परमेश्वर हैं इनके।
इनका पंथ चलाने हारे, सिद्ध शिला को सकल पधारे।
इतना लंबा दीर्घ सकाया, नहीं पुरुष देखन में आया।
इतनी लंबी आयु जाकी, खोज न पाई जग में वाकी।
इतने लंबे नर हो जावें, अल्प संख्य जग मांहि समावें।
एहि विधि लिखते गप्प पुरानी, अंट संट मिथ्या मनमानी।
एक लाख दस सहस बरीसा, अमुक जिये ऋषिमुनि अवनीसा।
सीख लई यह जैनिन ही से कौन जिये नर लाख बरीसे
इनकी गप्पें और सुनाएं, गप्पी के गुरु जैन कहाएं।

कल्प भाग पृष्ठ ४

धरी नागकत ने शिला, उंगली के आधार।
लंबा चौड़ा ग्राम भर, जिसका था विस्तार।।

कल्प भाग पृष्ठ २५

महावीर अंगुष्ठ से, पृथिवी दई दबाय।
हलचल सृष्टि में पड़ी शेषनाग कंपाय।।

कल्प भाग पृष्ठ ४६

महावीर अर्हन्त को डसा सर्प ने आय।
रुधिर स्थान पर दूध का दीना स्रोत बहाय।।
डसने हारा सर्प वह, गया आठवें स्वर्ग।
कृपा भई महावीर की, खुला द्वार अपवर्ग।।

कल्प भा. ४०

महावीर के चरण पर, जबहुँ पकाई खीर।
खीर पकी पग नहीं चला, मानहुँ शीतल नीर।।

कल्प भा. पृष्ठ १६

छोटे से इक पात्र में, लीना ऊंट बुलाय।
धन्य धन्य अर्हंत की महिमा जग में छाय।।

रत्नसागर भाग १

तनु को नहीं खुजलाइये, नहीं उतारे मैल।
जो माने आदेश यह, जाय स्वर्ग की गैल।।

विवेकसार भाग १ पृष्ठ १५

जैन साधु दमसार ने, अर्हन का हित पाय।
उद्वेगज सूत्तर पढ़ा दीना नगर जलाय।।

विवेकसार भाग १ पृष्ठ १२७

मानो आज्ञा नृपति की, परम धर्म यह जान।
इससे कभी न चूकिये, जो चाहो सन्मान।।

विवेकसार भाग १ पृष्ठ २२७

कोषा वेश्या लेकर थाली, ढेरी सरसों उसमें डाली।

उस ढेरी में सूई दबाई, ऊंचे उसकी नोंक उठाई।
उस सुई पर फूल बखेरे, नाचन लागी लेत फरेरे।
पग में सूई न गड़ने पाई, सरसों ढेरी नहीं बिथुराई।

तत्त्वविवेक पृष्ठ २२८

कु:— स्थूल मुनि बारह बरस, कोषा संग विलास।
कर के दीक्षा पुन लई, लिया स्वर्ग आवास।।
लिया स्वर्ग आवास, भई कोषा धर्मातम।
जैन धर्म को पाल किया आतम पुण्यातम।।
सद्गति पाकर कोषा होकर धर्म सुमूला।
करके भोग विलास तरा वह मुनि स्थूला।।

विवके भाग १ पृष्ठ १८५

दो॰—प्रतिदिन मोहरें पांच सौ, देत वैश्य को दान।
इक कन्था जिण साधु का, अचरज यही महान।।

विवेकसार भाग १ पृष्ठ २२८

छ॰— बली पुरुष की आज्ञा से कारज रुक जाई।
गुरु देवता मात पिता यदि करें मनाई।।
घोर विपिन में होय कष्ट से यदि गुजारा।
कुलगुरु ज्ञातिय लोग धर्म उपदेशन हारा।।
इन छय के रोके यदि होय न्यूनता धर्म में।
तौ भी जाने हानि नहीं हो सद्धर्म सुकर्म में।।

समीक्षक

देखें कैसे झूठ की, बातें कहे बनाय।
कैसे पत्थर ग्राम कर, उंगली सके उठाय।।

कभी न भूमि दबे दबायें, लाख पुरुष कोई शक्ति लगाये।
भूमि दबाए रहे अंगूठा, यह जैनी का झूठ अनूठा।

शेष नाग ही जग में नाहीं, पुन कम्पन हो किसके माहीं।
दूध निकलते किसने देखा, रुधिर घाव से बहता पेखा।
करते ऐसे खेल मदारी, चले चिकुर से पय पिचकारी।
गया स्वर्ग अहिं दंशनहारा, नर्क गया पर कृष्ण बेचारा।
पक्षपात से जैनी अंधे, किस विधि रचे झूठ के फंदे।
महावीर पग खीर पकाई, पर क्यों जलने त्वचा न पाई।
कैसे ऊंट पात्र में आया, किस विधि उसके बीच समाया।
जो नहीं तनु का मैल उतारे, नहीं खुजलाए जूँ नहीं मारे।
उसके तनु उठती बू बासा, मानहुँ होय नरक का वासा।
जिस साधु ने नगर जलाया, दया भाव तिस कहाँ दिखाया।

नहीं पावन जब हो सका, अर्हन का संग पाय।
तो अर्हन के मरन पर कौन पार हो जाय।।

जनी हैं बहुशः व्यापारी, लूट खसूट करें यह भारी।
ताँते यह राजा से डरते, राजाज्ञा का पालन करते।
सूई नोक पर कोषा नाची, माने बात कौन यह साची।
सूई गड़े नहीं बिखरे ढेरी, छन छन नाचे लहे फरेरी।
महां असंभव ऐसे बैना मानहिं जिनके फूटे नैना।
किस समय भी धर्म न छोड़े, धर्म ताग कबहूँ नहीं तोड़े।
कंथा तो कपड़े का होवे, क्या कोई वहां अशर्फी बोवे।
नित्य पांच सौ मोहरें देता, कौन वैश्य था उससे लेता।
कैसी गप्पें जैन बनाते, झूठ बोलते नहीं शर्माते।
यदि वर्णहिं हमें गप्पें सारी, इक पोथा बन जाये भारी।

कुछ बातें तो सत्य हैं, बाकी मिथ्या जाल।
वेदों के जाने बिना, होता ऐसा हाल।।
जंबु दीप का वर्णिये, इक लख योजन मान।
उसका पहला दोष यह, वाका करहिं बखान।।

दो दो चन्द्र सूर यहाँ दीपहिं, ओर छोर द्वीपहिं पर दीपहिं।
चार चन्द्र अरु आठ दिवाकर, लवणोदधि पर चमकें जाकर
बारह सूरज बारह चन्दर, जगें धातकी खण्डहु अन्दर।

इनको तिगुना कीजिये, होते हैं छतीस।
इस प्रकार लेखा करें, जैन मुनी जैनीस।।

लवणोदधि के चार मिलाएं, जंबु दीप के दोऊ जुटाएं।
कालोदधि में ब्यालिस चन्दा, ब्यालिस चमकें सूर्य अमंदा।
एहिविधि अगले दीपन अन्दर, तिगुने तिगुने सूरज चन्दर।
इक सौ छब्बिस होते सारे, चमकें नभ के न्यारे न्यारे।

बारह धातकि खंड के, लवणोदधि के चार।
जंबु दीप के दोऊ मिले, कीजे फेर विचार।।

शत चौतालिस भये दिवाकर, इतने ही वहां जगें निशाकर।
ऐसा पुष्कर दीपं विराजे, जहां प्रकाश की आभा छाजे।
आधे मनुष क्षेत्र की गिनती, आधे की पुन कीजे मिनती।
जिस आधे में मानुष नाही, अनिक चन्द्र सूरज तिस मांही।
पुष्कर का जो पिछला आधा, वह पंगु है थिर गति बाधा।

उनको तिगुना कीजिये, बनें चार बत्तीस।
अब आगे गणना करें, रवि तारक रजनीस।

जंबु दीप के द्वै रजनीसा, द्वै दिनकर ज्योति को ईसा।
चार चार लवणोदधि भारे, उनमें और मिलाएं सारे।
बारह बारह धातकि खंडल, ब्यालिस कालोदधि रविमंडल।
इन सबका अब जोड़ मिलाएं, जोड़ गगन में कितने आयें
चार बानवे होंय दिवाकर, एते ही पुन होय विभाकर।
यह सब पुष्कर सागर केरे, अस विधि झूठ लिखे बहुतेरे।

श्री जिण भद्र, गणीक्षमा, श्रमण लिखे यह लेख।

संघयणी उसकी बड़ी, पोथी पड़िये देख।।
योति करण्डक पयन्ना, प्रमुख ग्रंथ सिद्धान्त।
चन्द्र सूर पन्नति पढ़ें, बंधी झूठ की ताँत।।

समीक्षक

सुनहु सुनहु भूगोलक ज्ञानी, तुमने भी सब सृष्टि छानी।
चार बानवें सूरज चन्दा, चमकें इस जग माँहि अमन्दा।
अगणित सूरज चंदा तारे, दूजी विधि के चमकें न्यारे।
इस विधि मानहिं पंडित जैनी, देखो इनकी बुद्धि पैनी।

बड़े भाग्य से आपने, वैदिक मत अनुसार।
सत्य सूर्य्य सिद्धान्त से, पाये ग्रंथ अपार।।

जिनसे तुमने ग्रह गति जानी, नहीं तो रहते सब अज्ञानी।
आ जीवन रहते अंधेरे, जो होते जैनिक के चेरे।
जैनिन के मन उपजी शंका, भूमि के सन्मुख रवि रंका।
छोटा दिन कर भूमि विशाला, समरथ नहीं कर सके उजाला
इक सूरज इक चन्दा केरा, जंबु दीप पर रहे अंधेरा।
तीस घड़ी में चन्द्र दिवाकर, लौट न सकें दोबारा आकर।
जो सूरज को छोटा जानें, और बड़ा पृथिवी को मानें।
उनका यही भूल का कारण, झूठ किया इस विधि अवधारण।

पंगति सूरज चन्द्र की, उनका करें बखान।
केहि विधि मानुष लोक पर, करहिं प्रकाश महान।।

द्वै चन्दा द्वै सूरज पंगत, चक्कर कटती रहें दिवंगत।
चार लाख कोशों का अंतर, दोऊ पंगति में रहे निरंतर।
सूर चन्द्र की चार कतारें, इक दूजी के मध्य निहारें।
एक चन्द्र पंगति में चन्दा, होंय छियासठ चन्द्र अमंदा।
सूर्य्य छियासठ की इक पंगद, एहि विधि नित्य चले भुवनंगत।
मेरु की परकम्मा करती, मनुष क्षेत्र मंह रहें विचरतीं।
दक्षिण में इक करत विहारा, इक का उत्तर माँहि पसारा।

लवणोदधि में एहि विधि, दो दो सूरज चन्द।
इक इक दिक में विचरते, करहिं प्रकाश अमंद।।
छय पुन धतकि खण्डकें, कालोदधि इक्कीस।
पुष्करार्ध के पुन गिनें, सूर्य्य चन्द्र छत्तीस।।

सकल छियासठ सूरज सोमा, भ्रमते दक्षिण दिक से व्योमा।
अवर छियासठ उत्तर माँही, क्रम क्रम सेती सतत भ्रमाँही
चन्द सूर दोऊ पंगत केरे इक सौ बत्तिस चार चौफेरे।
मनुष लोक के चारहुँ ओरा, रहे घूमते पल छिन होरा।
चन्द्र चले जब नभ मँह एका, तेहि संग पंगति नखत अनेका।

समीक्षक

इक सौ बत्तिस चन्द्रमा इक सौ बत्तिस सूर।
जैनिन के घर चमकते, नहीं और कहीं दूर।।

यदि तपते तो केहि विधि जीते, जल गये होंगे सब गर्मी ते।
रात्रि समय सर्दी के मारे, ठिठुर मरेंगे जैन बेचारे।
जो नहीं भूगोलक के ज्ञाता, कुछ भी जिन्हें खगोल न आता।
इन बातों में वे फँस जाते, नर होकर नर पशु कहाते।
अति विशाल द्यौमंडल पोलक, जिसमें लटके अगनित गोलक।
सबहुँ प्रकाशे एक दिवाकर, रवि प्रचण्ड ज्योति का आकर।
क्या नगण्य भूगोल बेचारा, अहो तुच्छ इसका विस्तारा।
भ्रमें नहीं यदि पृथिवी भाई, जो सूरज के सम्मुख राई।
पृथिवी के चहुँ ओर दिवाकर, लगे घूमने चण्ड प्रभाकर।
तो कई वर्षों का दिन होवे, रहे उजाला कोऊ न सोवे।
निशा होय कई वर्षों केरी, भानु करे यदि चहुँ दिश फेरी।

हिम गिरि कहें सुमेरु को, अवर नहीं गिरि कोय।
रवि के सम्मुख हिम गिरि, राई के सम सोय।।

तब लग जैनी फँसे अँधेरे, जब लग पड़े पंथ के घेरे।

जो चाहें सतपथ को जाना, त्यागें अर्हन पंथ अजाना।
शुद्ध ज्ञान मय जो जन भ्राजे, सम्यग चरित सरित जो छाजे।
समुद्घात जसु निपट अवस्था, मन आतम हैं जिनके स्वथा
वे नर निज आतम में देखें, भुवन चतुर्दश मन में पेखें।
मन में सगरे लोक निहारें, घूमे विचरें मन विस्तारें।

राज चतुर्दिश मानते, सगरे पण्डित जयन।
इनसे ऊपर राजता, सिद्ध शिला का अयन।।

है विमान सखारथ सिद्धि, भुवन चतुर्दश जसु परिसिद्धि।
सिद्ध शिला तेहि ध्वज पर छाजे, दिव्याकाश नाम से राजे।
शिवपुर भी वाही को नामा, मुक्ता निभनिर्मल अभिरामा।
वहाँ केवली रहते केवल, पावन ज्ञान जिन्हें निष्केवल।

अपने आत्म प्रदेश से, रहते हैं सर्वज्ञ।
शिवपुर मँह जा नहीं सके, कोऊ जीव अल्पज्ञ।।

एक देश में मँह जा को वासा, वाका किमि सर्वत्र निवासा।
जो नहीं विभु वह नहीं सर्वज्ञा, नहीं केवली वह जन अज्ञा।
इक देशी हो आतम जाका, गमनागमन होय है ताका।
वही मुक्त वही होता ज्ञानी, वही बुद्ध अरु वही अज्ञानी।
सर्व वियापी अरु सर्वज्ञा, एहि विधि होव नहीं अल्पज्ञा।
तीर्थंकर जों भये तुम्हारे, जीव रूप अल्पज्ञ बेचारे।
वे सर्वज्ञ न सर्व वियापी, केहि विधि हो नहीं सकें कदापि।
जो परमातम ज्ञान स्वरूपा, आदि अन्त से रहित अनूपा।
जग व्यापी जब जानन हारा, अति पवित्र संसार सहारा।
उसको जैनी लोग न मानें, परम प्रभु को नहीं पहिचाने।
द्विविधि पुरुष हैं या संसारे, गर्भज और अगर्भज सारे।
गर्भज आयुष 'त्रय पल्योपम, द्वै विधि नर मँह यही नरोत्तम
तीन कोस के तन हैं तिनके, कहें गुरु एहि विधि जैनिन के।
त्रय पल्योपम आयुषधारी, तनु हो तीस कोस की भारी।
ऐसे नर भू मण्डल माँही, कबहुँ किसी ने देखे नाँही।

जो होते तो कहाँ समाते, कहीं पर अपने नगर बसाते।
तेहि विधि होती पुन संताना, लंबे लंबे तनु बिताना।
मुंबई अरु कलकत्ता नगरे, तीन चार नर आते सगरे।
लाखों नर इक पुर में रहते, ग्रन्थ जैन के ऐसा कहते।
कहाँ नगर वे लोग बसाएं, जहाँ पर मानुष ऐसे आएं।
एकहु पुर अस विधि जग माँहि, किसी ठौर बस कसता नाँही

सवैय्या (प्रश्न)

जो सरवारथ सिद्धि विमानहु की धुज ऊपर पाथर राजे।
द्वादश योजन सिद्ध शिला धवला जहाँ हेम प्रभा जनु भ्राजे।।
प्राग भरा अथवा कोऊ ईशत नाम पुकारत सिद्धन काजे।
वह सखारथ सिद्धि विमान से बारह योजन अलोक विराजे।।

रखता है श्रुत केवली, यह परमारथ ज्ञान।
जा को पूरण ज्ञान नहीं, उसे न या को भान।।

मध्य भाग से हो विस्तारा, आठहुँ दिग फैली जनु तारा।
पतली पतली होती जाए, ज्यों ज्यों अपना पट फैलाये।
योजन आठ मध्य में मोटी, सिद्ध शिला भूमि नहीं छोटी।

लंबी पोली बाटला, सिद्ध शिला की भूम।
लख पैंतालिस योजना, रही गगन मँह झूम।।
मक्खी के इक पंख का, अंश आठ परिमान।
इतना पतला छोर है, सिद्ध शिला का जान।।

जैसे खुला होय कोई छाता, वाका यह आकार सुहाता।
इक योजन भर उसके ऊपर, है लोकान्त विराजे भूपर।
सिद्ध पुरुष वहाँ करें निवासा, सतत् शान्त सुखमय आवासा।

समीक्षक

सिद्ध शिला पर मानते, मुक्तों का आवास।
बहिर जाँय जब शिला से; होय मुक्ति का नास।।

चाहे जितनी शिला हो लंबी, मुक्त जीव उसमें अवलंबी।
फिर भी उसमें बद्ध कहावें, उसके बहिर न जाने पावें।
जब शिल से बाहर पग धरि हैं, मुक्ति से तब ही अवतरि हैं।
जुंही शिला की धरणी छूटे, सकल विभव मुक्ति का टूटे।
जो कबहुँ नहीं बाहर जावे, वहीं शिला पर समय बितावें
उसको लगने पाय न वायु, पवन बिना दुखमय सब आयु।

यह सब कोरी कल्पना, झूठ असंभव बात।
मछली फाँसन हेत यह, सब धीवर की घात।।

प्र॰— एकेन्द्रिय का तनु विस्तारा, जानहु योजन एक हजारा।
शंखादिक द्वै इन्द्रिय बारा, बारह योजन का विस्तारा।
चतुरेन्द्रिय भ्रमरादिक प्रानी, चार कोस की देह बितानी।
योजन एक सहस्र विशाला, पंचेन्द्रिय का रखने वाला।

समीक्षक

चतुर सहस्र कोस भर लम्बे, प्राणी थे वा नभ के खम्भे।
कुछ सौ जीव जगत भर डालें, केहि विधि उनको पोषें पाले।
खड़ा कोई पथ पर हो जावे, सब ट्रैफिक इक दम रुक जावे।
कहाँ रहें पुन जैन विचारे, चलना होवे कठिन बाजारे।
घर में रख लें लिखने हारे, उन्हें बैठायें अपने द्वारे।
चार सहस्र कोस की देहा, बत्तिस सहस्र कोस को गेहा।
जो ऐसा घर एक बनाये, जैन मात्र का धन चुक जाये।
बन पाये फिर भी नहीं भौना, कहाँ बुज कहाँ जैनी बौना।
कैसे घर की छत्त बनाओ, लम्बे लट्ठ कहाँ से लाओ।
सब गप्पें सब व्यर्थ कहानी, जैनी पन्थ की जगत हसानी।

जैनी

चार कोस का कूआ गहरा, चौरस चारहू कोस जलहरा।
लोमों से उसको भरवाना, यह संख्यात काल परिमाना।

अंगुल सरिस लोम को खंडा, जिनसे भरे कूप को भण्डा।
उन्निस सहस रुलक्ष वियाली, नवशत साठ बहोरे मिलाली
इतने क्रोड़ा क्रोड़ी कीजे, उनसे पुनः कूप भर दीजे।

दो.–अथवा लाख सतानवें, सहस तरेपन संग।
छः सौ क्रोड़ा क्रोड़ि पुन, भरिये कूप उछंग।।

पल्योपम घन योजन बाटल, रोम खंड से पूरे पाटल।
यह संख्यात काल परिमाना, जिसको जैन पन्थ ने माना।
रोम खण्ड जो उपरि बखाना, उसके अगनित खंड कराना।
मनसि कल्पना वाकी कीजे, मन से ही उनको गिन लीजे।
असंख्यात सूक्ष्म रोमाणु, तब बनते अस विधि परमाणु।

समीक्षक

गिनती इनकी देखिये, अंगुल रोम प्रमान।
किसने टुकड़े कर दिये, नहीं गिनना आसान।।

खंड असंख्य कल्पना कीजे, पुन बाकी गणना कर लीजे।
पीछे लगे कल्पना करने, पहले खंड लगे क्यों करने।
यह किस विध हो सकता सम्भव, इतने करने खंड असम्भव।

प्र.– जम्बु दीप का जानिये, लख योजन विस्तार।
अरु अन्दर से खोखला, अद्‌भुत यह संसार।।

सप्त दीप अरु सातहु सागर, जम्बु दीप से दुगुन उजागर।
जम्बु दीप इस पृथिवी ऊपर, और सप्त सागर हैं भूपर।

समीक्षक

छ.– जम्बु दीप से दीप दूसरा दो लाख योजन।
चार लाख पुन तीजा दुगने से परयोजन।।
आठ रु सोलह बत्तिस पुन चौसठ तक जाएं।

दीप सातवाँ चौसठ लख योजन भरवाए।।
सहस पंचदश परिधि के इस छोटे संसार में।
किस विधि द्वीप मा सकें आता नहीं विचार में।।
जैनी—सहस चौरासी बह रहीं, कुरुक्षेत्र के माँहि।
नदियाँ कलकल वाहिनीं, नर के पाप नशाँहि।।

समीक्षक

कुरुक्षेत्र सब जानते, इक छोटा सा देश।
किमि एती नदियाँ बहें, नहीं सत्य का लेश।।

सिद्ध शिला के दाएँ बाएँ, सिंहासन दोउ ओर सुहाएँ।
अति पांडु कँवला शिल दाई, अति रक्त कँवला शिल बाई।
दोरु ओर जो दो सिंहासन, तीर्थंकर के उन पर आसन।

जन्मादिक उत्सव करें, शिल पर देव विराज।
ऐसी ही मुक्ति शिला, रही गगन मँह भ्राज।।

एहि विधि लिख दीं अनिक कहानी, मनगढंत जैसी मनमानी।
वस्त्र पूत करना जल पाना, कुछ जीवों पर दया दिखाना।
रात्रि को भोजन नहीं खायें, तीन बात यह भली कहाएँ।
शेष कथन है झूठा सगरा, गप्प गपोड़ा रगड़ा झगड़ा।
दीना तनिक नमूना इनका, यह दृष्टान्त मात्र है जिनका।
थोड़ा लिखा बहुत तुम जानो, हँडिया में चावल पहिचानो।
सगरी बातें तो लिख डारें, बन जाएँ पुस्तक अम्बारें।
जीवन भर कोई पढ़ता जाए, नहीं समापत होने पाए।
समझ जाँयगे पूरण आशय, बुद्धिमान मति प्रखर महाशय।

आर्य महाकवि जयगोपाल विरचिते सत्यार्थ प्रकाश
कवितामृते द्वादशः समुल्लासः समाप्तः

अनुभूमिका

छ॰– बाइबल को नहीं मानहि केवल लोग ईसाई।
मानहि इनको अनिक यहूदी और मुसाई।।
मुख्य इसाई लोग गौण बाकी सब जानें।
ताँते बाइबल द्वारा सगरे पन्थ बखाने।।
मानहिं मूल अँजील को सारे निज निज पन्थ का।
ताँते परखें तर्क से साँच झूठ इस ग्रन्थ का।।

दो॰–अनिक पादरी जनों ने, जिनकी बड़ मरजाद।
बाइबल पुस्तक के किये, भाषान्तर अनुवाद।।

संस्कृत हिन्दी बाइबल ग्रन्थन, हमने किये बहु अवमन्थन।
पढ़कर उठीं बहुत शंकाएँ, कछुक बात उनकी दर्साएँ।
विषसे झूठ रु सत्य प्रकासे, दिन पर दिन सद्धर्म विकासे।
यही प्रयोजन एक हमारा, केवलन होवे सत्य प्रचारा।
नहीं किसी की करना हानि, नहीं किसी स हम को ग्लानि।
नहीं काहू का चित्त दुखाना, अरु नहीं मिथ्या दोष लगाना।
केवल अपना यही प्रयोजन, बाइबल पढ़ना चाहे जो जन।
उनको पढ़ना सुनना करना, ईसाइयों के बीच विचरना।
सुगम होय अरु सब कुछ जाने, कर्त छाज से उनको छाने।
जो सज्जन इस को पढ़ लेंगे, इससे लाभ बहुत सा लेंगे।
धर्म संबंधी ज्ञान बढ़ाएँ, झूठ त्याग सन्मारग पाएँ।
मन वच कर्म न तजे कुकर्मा, सदा सकारहिं वे सद्धर्मा।

दो॰–पढ़ें ग्रंथ सब पंथ के, उचित यही जग माँय।
समझ सोच सम्मति दएँ, भला बुरा बतराँय।।

ग्रंथ पढ़े पंडित कहलावे, सुनने से बहुश्रुत हो जावे।
अन्यहुँ नहीं समझाये श्रोता, वरं स्वयं तो ज्ञानी होता।

जो नर पक्षपात के पक्षी, वे नर अंधे फूटी अक्षी।
निज पर गुण वे जान न पायें, दोषहु उनको नजर न आएं।
नर का आतम समरथ राखे, झूठ सत्य निर्णय कर भाखे।
जितना पढ़ा सुनाव वा जेता, कर सकता है निश्चय तेता।
जो पर मत को जान न पाए, तो संवाद न करना आए।
इस विधि अज्ञानी फँस जाते, बहुर जाल से निकस न पाते।
चलित विषय ताँते लिख डारे, जो नर मन में इन्हें विचारे।
वह नहीं फँस सकता भ्रम जाले, औरों को भी बहिर निकाले
थोड़ा थोड़ा विषय बखाना, जिमि चावल का हो इक दाना।
शेष पढ़ें उनको पहिचाने, साँच झूठ उनका अनुमाने।
सत्य विषय सब माँझ समाना, सब ने उनको सत्य बखाना।
झूठे विषयों पर हो झगड़ा, तनातनी अरु झगड़ा रगड़ा।
जब हो इक साँचा इक झूठा, तौ भी झगड़ा चले अनूठा।
दोनों वादी अरु प्रतिवादी, पक्षपत तजहीन प्रमादी।
सत निश्चय से करें विचारा। खुल सत्य का निश्चय द्वारा।

समुल्लास दस तीन में, कथहुँ पंथ क्रिस्तान।
सत्यासत्य विचारिये, पढ़िये धर कर ध्यान।।

अथ त्रयोदश समुल्लास

अब वर्णहुँ क्रिस्तान मत, पढ़िये धर कर ध्यान।
जान जाँय गुण दोष सब, पंडित चतुर सुजान।।

बाइबल ईश्वर कृत वा नाँही, क्या बातें लिक्खी इस माँही।
प्रथम कहूँ तौरेत कथानक, पाठक पढ़ कर परखें बानक।

(१)"आरम्भ" में ईश्वर ने आकाश और पृथिवी को सृजा ओर पृथिवी बेडौल और सूनी थी। और गहिराव पर अँधियारा था और ईश्वर का आत्मा जल के ऊपर डोलता था।" पर्व १ आयत १।२।।

सोरठा

समीक्षक – किसे कहो आरम्भ ? ईसाई–पहिली रचना जगत की।
समीक्षक – यही प्रथम प्रारम्भ, इससे पहली नहीं भई?
ईसाई – हम नाँही कुछ जानते, हुई रही या ना रही।
समीक्षक – जो नहीं कुछ पहिचानते, बाइबल मानी किस लिये।

बाइबल मानी क्यों बिन कारण, जो नहीं शंका करे निवारण।
क्यों कीना इसका विश्वास, दुनियाँ का क्यों करहु विनासा
जाल माँहि क्यों लोग फँसाते, शंका में सब को उलझाते।
संदेहों को वेद निवारक, प्रभु कृत पुस्तक शंक विदारक।
क्यों नहीं वैदिक धर्म सकारो, आप तरो औरों को तारो।
प्रभु सृष्टि को जब नहीं जानो, किस विधि पुन प्रभु को पहिचानो।

सोरठा

समीक्षक–मानहु किसे आकाश। ईसाई–ऊपर को अरु पोल को।
समीक्षक–किस विध पोल विकास, किस विध इस की उत्पत्ति।

है अति सूक्ष्म पोल पदारथ, इक सा ऊपर तले यथारथ।
जब आकाश नहीं था सिरजा, तब आकाश पोल कहाँ विरजा
जब नहीं सिरजा था आकाशा कौन ठौर था जीव निवासा।
कहाँ निवास करता था ईश्वर, जो है इस जग का जगदीश्वर
कहाँ बसे था जगका कारण, किमि यह शंका करहु निवारण।
ठहर सके नहीं कोऊ पदारथ, जगका नभ आधार सकारथ
ताँते बाइबल का मत काँचा, पन्थ इसाइयों का नहीं साँचा।

सोरठा

समीक्षक–क्या ईश्वर बेडौल, उसके कर्म बेडौल हैं?
ईसाई–प्रभु है पूर्ण सुडौल। समीक्षक–पृथिवी रची बेडौल क्यों?
दो.–इसाई–ऊँची नीची थी बनी, ताँते कही बेडौल।
समीक्षक–किस ने समतल पुन करी, कैसे बनी सुडौल?

क्या ऊँची नीची अब नाँही, अब समतलता है इस माँही।
नहीं बेडौल प्रभु के कर्मा, चूके नहीं अचूक विशकर्मा।
लिखा बेडौल अँजीलँहुँ माँही, ताँते बाइबल प्रभु कृत नाँही।

समीक्षक – क्या वस्तु है प्रभु का आतम। इसाई–चेतन है ज्ञानी परमातम।
समीक्षक – निराकार वा है साकारा, इक देशी वा व्यापक प्यारा।
ईसाई – निराकार व्यापक प्रभु चेतन, गिरि सनाई विशेष निकेतन।
अथवा है चौथे असमाने, एहि विधि जगत इसाई माने।

समीक्षक

निराकार को किसने घेरा, गिरि पर कैसे भया बसेरा।
व्यापक है पर जल पर डोले, ऐसा झूठ इसाई बोले।
जब आतम डोले जल पाहीं, तब परमेश्वर था किस ठाईं।
और ठौर पर होगी देहा, होगा कोई गिरि कन्दर गेहा।
आतम खण्ड कोई तैराया, बाकी तन में रहा समाया।
ऐसा हो तो विभु नहीं ईश्वर, नहीं सर्वत्र पुनः जगदीश्वर।
व्यापक नहीं तो किमि जग कर्त्ता, नहीं धर्ता हर्ता अरु भर्ता।
कर्म व्यवस्था किस विधि राखें, कौन नियन्ता उसको भाखें
हो स्वरूप इक देशी जाका, गुण कर्महु इक देशी वाका।
जो ऐसा सो ईश्वर नाहीं, प्रभु गुण कर्म नहीं तिस माही।
प्रभु व्यापक राउन को राऊ, प्रभु अनन्त गुण कर्म स्वभाऊ।
शुद्ध बुद्ध नित मुक्त स्वभावा, वाको अन्त न कोऊ पावा।
सत्य चित्त आनन्द स्वरूपा, पारब्रह्म भूपन को भूपा।
ऐसे लक्षण वेद बखाने, सुख पावे जो उसको माने।
जो तुम चाहो निज कल्याना, उसी ब्रह्म का कीजे ध्याना।
यही सत्य सीधा इक मारग, दुखदायी हैं शेष कुमारग।

(२) और ईश्वर ने कहा कि उजियाला होवे और उजियाला हो गया। और ईश्वर में उजियाले को देखा कि अच्छा है।।

पर्व १ अ.३, ४।।

समीक्षक

जड़ उजियाले ने सुनी, कैसे प्रभु की बात।
जो प्रकाश पैदा हुआ, गई अँधेरी रात।।

सूर्य्य दीप अग्नि की ज्वाला, अब क्यों नहीं कोई सुनने वाला।
कुछ भी ज्ञान न रखे उजाला, जड़ पदार्थ नहीं सुनने वाला
जब प्रभु ने परकाश निहारा, तभी लगा उसको वह प्यारा।
पहले उसकी सुन्दरताई, प्रभु के मन में कबहुँ न आई।
जानत रहा प्रभु यदि पहले, ज्योति के शुभ किरण सुनहले।
तो तक कर क्यों अच्छा बोला, भूल गया क्या ईश्वर भोला
जो नहीं पहले उसने जाना, तो क्या ईश्वर था अंजाना।
ताँते बाइबल प्रभु कृत नाहीं, नहीं प्रभुताई ईश्वर माहीं।

(३) "और ईश्वर ने कहा कि पानियों के मध्य में आकाश होवे और पानियों को पानियों से विभाग करे। तब ईश्वर ने आकाश को बनाया और आकाश के नीचे के पानियों को आकाश के ऊपर के पानियो से विभाग किया और ऐसा हो गया। और ईश्वर ने आकाश को स्वर्ग कहा और साँझ और विहान दूसरा दिन हुआ।। पर्व १ आ॰ ६, ७, ८।।"

समीक्षक

क्या जल भी सुनने लगा, सुनने लगा आकाश।
जल तो रह सकता नहीं, जो न होय अवकाश।।

प्रथम आयत में गगन बनाना, पुनः दोबारा वृथा सृजाना।
यदि आकाश को स्वर्ग बतायें, बिन आकाश कोऊ ठौर न पाएं
तो सर्वत्र स्वर्ग को मानो, पुन क्यों ऊपर स्वर्ग प्रमानो।
उत्पन भया सूर्य नहीं भाई, पुन दिन रात कहाँ से आई।
अहो असम्भव मूढ़ विचारा, बाइबल में इनकी भरमारा।

(४) जब ईश्वर ने कहा कि हम आदम को अपने स्वरूप में अपने समान बनावें। तब ईश्वर ने आदम को अपने स्वरूप में उत्पन्न किया उसने उसे ईश्वर के स्वरूप में उत्पन्न किया। उसने उन्हें नर और नारी बनाया। और ईश्वर ने उन्हें आशीष दिया।।

पर्व १ आ॰ २६, २७, २८।।

समीक्षक

आदम सिरजा प्रभु ने, यदि निज रूप समान।
प्रभु समान आदम पुनः, क्यों नहीं गुण की खान।।

ज्ञान स्वरूप प्रभु नित पावन, आनंदमय इक रस हर्षावन।
ईश्वर के यह लक्षण सारे, क्यों नहीं रखते जीव बेचारे।
नहीं लक्षण यदि आतम माहीं, तो निज रूप बनाया नाहीं।
जो प्रभु ने ही उसे बनाया, तो जिन रूप हि जनु जन्माया
नित्य नहीं जो उत्पत्ति वारा, तो अनित्य प्रभु भया तुम्हारा।

ईश्वर ने कहाँ से किया, आदम को उत्पन्न।
कोन ठौर पहले कहो, आदम था प्रच्छन्न।।

ईसाई–मिट्टी की इक मूर्ति बनाई। समीक्षक–केहि विधि मिट्टी प्रभु रचाई।
ईसाई–अपनी समरथ से निर्मानी। समीक्षक–समरथ कैसी नयी पुरानी।
ईसाई–उसकी कुदरत नित्य अनादी। समीक्षक–पुन क्यों भूल गये परमादी।
जग कारण पुन भया सनातन, नित्य अनादी परम पुरातन।

फिर क्यों कहो अभाव से, भया जगत का भाव।
कुदरत उसकी नित्य जब, नित गुण कर्म स्वभाव।

ईसाई

नहीं जल नहीं थल वायु नहीं, नहीं नखत परकाश।
पूर्व सृष्टि से कुछ नहीं, था नहीं था आकाश।।

समीक्षक

केहि विधि बना जगत यह सारा, किस विधि ईश्वर रचे तुम्हारा।
क्या है प्रभु समरथ समझाएँ, गुण है अथवा द्रव्य बताएँ।
द्रव्य कहो यदि समरथ ताँई, वह भी नित हो प्रभु की नाँई।
ईश्वर के संग द्वितीय पदारथ, वर्तमान था नित्य यथारथ।
प्रभु समरथ यदि गुण कहलावे, गुण से द्रव्य न बनने पावे।

यथा रूप नहीं अग्नि बनाता, रस माँही जल का निर्माता।
यदि ईश्वर यह जगत बनाते, तो प्रभु के गुण जग मँह पाते।
कर्म स्वभाव प्रभु के सारे, पाते सगरे जगत मँझारे।
हम पुन देखहिं जो संसारा, वह सब प्रभु के गुण से न्यारा।
ताँते जग प्रभु निर्मित नाँही, प्रभु स्वभाव नाँही जग माँही।
जड़ परमाणु जगत बनावें, मिलहिं परस्पर सृष्टि रचावें।
वेद विहित ताँते तुम मानो, उत्पन भया जगत तिमि जानो।
ईश्वर जड़ परमाणु द्वारा रचना करता यह संसारा।

बाहर मनुष समान है, भीतर जीव स्वरूप।
ऐसा आदम है यदि, तो वह किसका रूप।।

तो पुन एहि विधि आकृतिवारा, क्यों नहीं है वह क्यों है न्यारा।
आदम है जब प्रभु समाना, तो प्रभु वत आदम भगवाना।

(५) "तब परमेश्वर ईश्वर ने भूमि की धूलि से आदम को बनाया और उसके नथुनों में जीवन का श्वास फूँका और आदम जीवता प्राणी हुआ।। और परमेश्वर ईश्वर ने अदन में पूर्व की ओर एक बारी लगाई और उस आदम को जिसे उसने बनाया था उसमें रखा।। और उस बारी के मध्य में जीवन का पेड़ और भले बुरे के ज्ञान का पेड़ भूमि से उगाया"।। पर्व २ आ.७।८।९।।

समीक्षक

आदम रक्खा अदन में, बाड़ी एक बनाय।
क्या प्रभु नहीं था जानता, दूँगा इसे गिराय।।

माटी से आदम निर्माना, मृत निर्मित होगा भगवाना।
ईश्वर ने जब फूँके श्वासा, पकर जीव की कर सों नासा।
क्या था श्वास प्रभु का रूपक, अथवा था कुछ भिन्न विरूपक।
भिन्न नहीं यदि प्रभु समाना, तो आदम सम भगवाना।
नहीं भिन्न तो दोनो एका, जीव प्रभु नहीं रहे अनेका।
इकसे हैं यदि दोऊ समाना, क्यों नहीं आदम सम भगवाना

जीव जन्तु लेता अरु मरता, नाना रूप रंग पुन धरता।
बालक युवक वृद्ध पुन होवे, सुख में हँसे दुःख में रोवे।
यह सब दोष प्रभु मँह आवें, यदि दोनों इक से हो जावें।
किस प्रकार वह हो भगवाना, क्यों वह ईश्वर जाये माना।

(६) "और परमेश्वर ईश्वर ने आदम को बड़ी नींद में डाला और वह सो गया तब उसने उसकी पसलियों में से एक पसली निकाली और उसकी सन्ती मांस भर दिया ओर परमेश्वर ईश्वर ने आदम की उस पसली से एक नारी बनाई और उसे आदम के पास लाया"

।। पर्व २ आ॰ २१।२२।।

समीक्षक

ईश्वर ने जिस धूलि से, आदम दिया सृजाय।
उसी धूलि से क्यों नहीं, नारी लई बनाय।।

हड्डी से यदि नार बनाई, इसमें प्रभु की क्या प्रभुताई।
हड्डी से आदम सिरजाता, उससे प्रभु का क्या घट जाता।
नर से भई नार कहलावे, नारी से भी नर बन जावे।
प्रेम बढ़े दोनों में तैसे, दोनों होंय यदि इक जैसे।
धन्य धन्य प्रभु की प्रभुताई, कैसी जादूगरी दिखाई।
नर की पसली एक निकाली, नार न पुन इक पसली वाली।
नर हों इक पसली घट वाले, पर यहाँ तो सब तंत्र निराले।
जिस वस्तु से सृष्टि रचाई, उससे क्यों नहीं नार बनाई।
क्या समर्थ नहीं थी प्रभु माँही, अथवा उससे बनती नाँही।
सृष्टि क्रम से निपट विरोधी, क्या जाने क्रिस्तान अबोधी।

'अब सर्प भूमि के हर एक पशु से जिसे परमेश्वर ईश्वर ने बनाया था धूर्त था और उसने स्त्री से कहा क्या निश्चय ईश्वर ने कहा है कि इस बारी के हर एक पेड़ से न खाना। और स्त्री ने हर्ष से कहा कि हम तो इस बारी के पेड़ों का फल खाते हैं। परन्तु उस पेड़ का फल जो बारी के बीच में है ईश्वर ने कहा कि तुम उसे न खाना और न छूना, न हो कि मर जाओ। तब सर्प ने स्त्री से कहा कि तुम निश्चय न मरोगे। क्योंकि ईश्वर जानता है कि जिस दिन तुम उसे खाओगे तुम्हारी आँखे खुल जायेंगी और तुम भले बुरे की पहचान में ईश्वर के समान हो जाओगे। और जब स्त्री ने देखा वह पेड़ खाने में

सस्वाद और दृष्टि में सुन्दर और बुद्धि देने के योग्य है तो उसके फल में से लिया और खाया ओर अपने पति को भी दिया ओर उसने खाया तब उन दोनों की आंखे खुल गई और वे जान गए कि हम नंगे हैं जो उन्होंने अंजीर के पत्तो को मिला के सिया और अपने लिये ओड़ना बनाया तब परमेश्वर ईश्वर ने सर्प से कहा कि तूने यह किया है इस कारण तू सारे ढोर और हर एक बनके पशु से अधिक स्रापित होगा तू अपने जीवन भर धूल खाया करेगा। और मैं तुझ में और स्त्री में तेरे वंश में बैर डालूँगा वह तेरे सिर को कुचलेगा और तू उसकी एड़ी को काटेगा। और उसने स्त्री को कहा मैं तेरी पीड़ा और गर्भ धारण को बढ़ाऊँगा तू पीड़ा से बालक जनेगी और तेरी इच्छा तेरे पति पर होगी और वह तुझ पर प्रभुता करेगा।। और उसने आदम से कहा कि तुने जो अपने पत्नी का शब्द माना है और जिस पेड़ से मैंने तुझे खाने को वर्जा था तूने खाया है इस कारण भूमि तेरे लिए स्रापित है अपने जीवन भर तू उससे पीड़ा के साथ खायगा।। और वह काँटे और ऊँट कटारे तेरे लिये उगावेगी ओर तू खेत का साग पात खाएगा"।। तौरेत उत्पति पर्व ३ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ६, ७, १४, १५, १६, १७।।

समीक्षक

जो होता सर्वज्ञ प्रभु, क्यों उपजाता साँप।
लेता उस शैतान की, करतूतों को भाँप।।

उसे प्रभु ने आप बनाया, फिर क्या दोष सर्प पर आया।
दुष्ट न उसको यदि बनाता, दुष्टपना वह क्यों कर पाता।
जब तुम पूर्व जन्म नहीं मानो, क्यों तब सर्पहुँ दुष्ट बखानो।
विन अपराध रचा क्यों पापी, क्यों उस पर यह सृष्टि सरापी
सर्प नहीं था वह था मानव, नर की भाषा बोलत जानव।
झूठ माँहि जो जिसे चलावे, बोले झूठ रु झूठ बुलावे।
हम शैतान उसी को मानें, शैतानी उसकी पहचानें।
यहाँ सतवादी है शयताना, अरु शैतान भये भगवाना।
प्रभु ने नारी को बहकाया, तरु का उससे भेद छिपाया।
पर शैताँ सत बात बतावे, जीवन का फल उसे खिलावे।

आदम हव्वा दोउन से, ईश्वर करे दुराव।
दोनों को वर्जत रहा, या तरु फल मत खाव।।

मरहुँ यदि या को फल खाओ, तौते या के निकट न जाओ।
एहि विधि झूठ प्रभु ने बोला, पर रहस्य शैताँ ने खोला।
क्यों प्रभु उनको फल से बर्जे, किस कारण प्रभु मन मँह लर्जे।
प्रभु जाने फल जीवन दाता, इसे खाय नर बुद्धि पाता।
फिर भी आदम को बहकाया, झूठ बोलते नहीं शरमाया।
फल को यदि आदम नहीं खाये, तो किसके हित तरु उपजाये
यदि अपने हित पेड़ लगाये, किस कारण प्रभु वह फल खाये।
क्या था मरणशील अज्ञानी, आवश्यकता फल की क्या जानी
अन्य पुरुष हित यदि बनाया, तो आदम क्या पाप कमाया।
गया कहाँ अब जीवन शाखी, जड़ भी उसकी प्रभु नहीं राखी
बीज नष्ट वाका कर दीना, महाँ कपट ईश्वर ने कीना।
जो औरो से करता धोखा, ऐसा कपटी प्रभु अनोखा।
ऐसा होवे कबहुँ न ईश्वर, पारब्रह्म साँचा जगदीश्वर।

आदम हव्वा सर्प को, दिया प्रभु ने शाप।
दोष हीन तीनों रहे, किया प्रभु ने पाप।।

एहि विधि ईश्वर अति अन्यायी, दया मया तिस कहाँ गवाई।
प्रभु चाहिये था शापित होना, उसको पड़े पाप को धोना।
नहीं गर्भ पीड़ा बिन धारण है शिशु जन्म वेदना कारण।
यह पीड़ा स्वाभाविक भाई, इसमें नहीं प्रभु की चतुराई।
बिन श्रम क्यों कर होय गुजारा, श्रम बिन जाय न उदर उपारा।
क्या काँटे अरु ऊँट कटारे, पहले नहीं थे इह संसारे।

प्रभु ने पुरुषों को कहा, खाये साग रु पात।
पुन बाइबल में क्यों लिखी, मांसाशन की बात।।

मांसादन तब झूठा जाने, शाक पात भोजन शुभ मानें।
कौन बात दोनों में झूठी, वैसी बाइबल लिखी अनूठी।
आदम तो था सीधा साधा, उस भोले का क्या अपराधा।

क्यों पुन उसकी संतति सारी, अपराधी बन गई बेचारी।

(८) "और परमेश्वर ईश्वर ने कहा कि देखो! आदम भले बुरे के जानने में हम में से एक की नाँई हुआ और अब ऐसा न होवे कि वह अपना हाथ डाले और जीवन के पेड़ में से भी लेकर खावे और अमर हो जाय सो उसने आदम को निकाल दिया और आदम की पारी की पूर्व ओर करोबीम चमकते हुए खंड्ग जो चारों ओर घूमते थे, लिये हुए ठहराए जिनसे जीवन के पेड़ के मार्ग की रखवाली करे।। तौ॰ पर्व ३ आ॰२२, २४।।

समीक्षक

आदम ने फल खा लिया, बढ़ गया उसका ज्ञान।
ईर्षा से प्रभु जल उठा, आदम भया समान।।

प्रभु मन में क्यों ईर्षा आई, इसमें क्या हो गई बुराई।
जगदीश्वर के तुल्य न कोई, इस कारण यह शंका होई।
इस आयत से हो यह सिद्धि, प्रभु संज्ञा जाकी परसिद्धि।
ईश्वर नहीं था नर कोई, जाकी जागी ईर्षा सोई।
बाइबल प्रभु को जहाँ बखाने, वर्णन करती पुरुष समानें
आदम ने विद्या फल खाया, जगदीश्वर का हृदय जलाया।
कहीं अमर फल भी खा जाये, वहाँ पर पहरेदार लगाये।
उनके हाथ नगन तलवारें, निकट आय आदम तो मारें।
क्यों बारी में राखा वाको, धक्का देना पाछे जाको,
क्या सर्वज्ञ नहीं भगवाना, नहीं भविष्य का वाको ज्ञाना।
यह तो मानुष के हैं करमा, चौकीदार रखे जो घर माँ।

(९) "और कितने दिनों के पीछे यों हुआ कि काइन भूमि के फलों में से परमेश्वर के लिए भेंट लाया। और हावील भी अपनी झुण्ड में से पहिलौठी और मोटी भेड़ लाया और परमेश्वर ने हावील और उसकी भेट का आद किया परन्तु काइन अति कुपित हुआ और अपना मुँह फुलाया। तब परमेश्वर ने काइन से कहा कि तू क्यों क्रूद्ध है और तेरा मुँह क्यों फूल गया"।। तौ॰ पर्व ४ आ॰ ३, ४, ५, ६।।

समीक्षक

बाइबल का प्रभु मांसाहारी, तबहुँ तो भेड़ की भेंट सकारी।
हाविल को प्रभु आदर दीना, तिरस्कार काइन का कीना।
उन दोनों में वैर बढ़ाया, प्रभु के हाथ कहो क्या आया।
हाविल अच्छी भेंट चढ़ाई, प्रभु के कारण मृत्यु पाई।
ज्यों नर इक दूसर से बोले, नौकर चाकर के संग डोले।
ऐसे ही ईश्वर बतियाएँ, बागीचें में आयें जायें।
आदम के हित बारा बनाना, नाना विधि के पेड़ लगाना।
मानुष के यह कारज सारे, प्रभु हैं इन कर्मों से न्यारे।
नर की रचना बाइबल ताँते, प्रभु की रचना भई कहाँ तें।

(१०) "जब परमेश्वर ने काइन से कहा तेरा भाई हाविल कहाँ है और वह बोला मैं नहीं जानता क्या मैं अपने भाई का रखवाला हूँ। तब उसने कहा तूने क्या किया तेरे भाई के लोहू का शब्द भूमि से मुझे पुकारता है। और अब तू पृथिवी से स्रापित है।" तौ॰ पर्व ४ आ॰६, १०, ११।।

समीक्षक

दो॰—नहीं जाने हावील का, बिन पूछे सब हाल।
ऐसा प्रभु अल्पज्ञ है, बुद्धि का कंगाल।।

लोहू भी क्या कभी पुकारे, कौन कान हैं सुनने वारे।
मूरखता की बात असारी, भोली दुनियाँ मानन हारी।
नहीं वह ईश्वर नहीं वह ज्ञानी, जो लिखता अस विधि मनमान।

(११) "और हनूक मतूसिलह की उत्पत्ति के पीछे तीन सौ वर्ष लौं ईश्वर के साथ—साथ चलता था।" तौ॰ पर्व ५ आ॰ २२।।

समीक्षक

सो॰—जो नर नहीं भगवान, चलता संग हनूक किमि।
जो चाहो कल्यान, अब भी वैदिक प्रभु गहो।।

(१२) "और उनसे बेटियाँ उत्पन्न हुई। तो ईश्वर के पुत्रों ने आदम की पुत्रियों को देखा कि वे सुन्दरी हैं और उनमें से जिन्हें उन्होंने चाहा उन्होंने ब्याहा। और उन दिनों में पृथिवी पर दानव थे और उसके पीछे भी जब ईश्वर के पुत्र आदम की पुत्रियों से मिले तो उनसे बालक उत्पन्न हुए जो आगे से नामी थे। और ईश्वर ने देखा कि आदम की दुष्टता पृथिवी पर बहुत हुई और उनके मन की चिन्ता और भावना प्रति दिन केवल बुरी होती है। तब आदमी को पृथिवी पर उत्पन्न करने से परमेश्वर पछताया और उसे अति शोक हुआ। तब परमेश्वर ने कहा कि आदमी को जिसे मैंने उत्पन्न किया आदमी से लेके पशुओं और रेंगवैय्यों को और आकाश के पक्षियों को पृथिवी पर से नष्ट करूँगा क्योंकि उन्हें बनाने से मैं पछताता हूँ।"
तौ॰ पर्व ६ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ६, ७,।।

समीक्षक

प्रभु के बेटे कौन हैं, कौन प्रभु की नार।
साले सुसरे सास पुन, कहाँ रहे परिवार।।

आदम की कन्याएँ ब्याहीं, अपने अपने चित की चाहीं।
आदम का समधी जगदीश्वर, धन्य धन्य बाइबल का ईश्वर।
पूतों के पुन पूत पपोते, कुछ हँसते कुछ होंगे रोते।
जान पड़े कुछ जंगलवासी, वृहद मंडली अच्छी खासी।
वाही का यह ग्रंथ बनाया, मूर्ख जनों को बीच फँसाया।
जो भविष्य की बात न जाने, उसको ईश्वर क्या कोई माने।
अल्प बुद्धि जिसके माहीं, जीव भया वह ईश्वर नाहीं।
नहीं था उसको पहले ज्ञाना, ऐसा मूर्ख रहा भगवाना।
पहले मानुष सृष्टि बनाना, पाछे कर मल मल पछताना।
आहें भर भर प्रभु का रोना, मानुष के सदृश दुख होना।
नहीं था योगी नहीं विद्वाना, ईसाइयों ने जो प्रभु माना।

जो होता योगी पुरुष, विज्ञानी विद्वान।
शोक ग्रस्त होता नहीं, रहता एक समान।।

(१३) "उस नाव की लम्बाई तीन सौ हाथ और चौड़ाई पचास हाथ और ऊँचाई तीस हाथ की होवे। तू नाव में जाना तू और तेरे बेटे और तेरी पत्नी और तेरे बेटों की पत्नियाँ तरे साथ और सारे शरीरों में से जीवता जन्तु दो दो अपने साथ नाव में लेना जिससे वे तेरे साथ जीते रहें वे नर और नारी हो। पक्षी में से उसके भाँति भाँति के और ढोर में से उसके भाँति भाँति के और पृथिवी के हर एक रेंगवैय्यों में से भाँति भाँति के हर एक में से दो दो तुझ पास आवें जिससे जीते रहे। और तू अपने लिये खाने को सब सामग्री अपने पास इकट्ठा कर वह तुम्हारे और उनके लिये भोजन होगा। सो ईश्वर की सारी आज्ञा के समान नूह ने किया।" तौ॰ पर्व ६ आ॰ १७, १८, १६, २०, २१, २२।।

समीक्षक

जो अस बातें कहें असम्भव, उसका होना प्रभु न सम्भव।
इतनी सी नौका के माहीं, इतने जन्तु समाएँ नाही।
ऊँट बैल घोड़े अरू हाथी, अनिक चौपाए उनके साथी।
जल चर नभ चर अरू नर नारी, बूटे बेल बनस्पति सारी।
खान पान के सभी पदारथ, जिनसे जीवन होय सकारथ।
इतनी नाव कहाँ से आई, जिसमें सगरी सृष्टि समाई।
मनुष रचित ताँते यह पोथी, जिसमें बात लिखी यह थोथी।

(१४) "ओर नूह ने परमेश्वर के लिए एक वेदी बनाई और सारे पवित्र पशु और हर एक पवित्र पंछियों में से लिये और होम की भेंट उस वेदी पर चढ़ाई और परमेश्वर ने सुगन्ध सूँघा और परमेश्वर ने अपने मन में कहा क़ि आदमी के लिए मैं पृथिवी को फिर कभी स्राप न दूँगा। इस कारण कि आदमी के मन की भावना उसकी लड़काई से बुरी है और जिस रीति से मैंने सारे जीवधारियों को मारा फिर भी कभी न मारूँगा।" तौ॰ पर्व ८ आ॰ २०, २१।।

समीक्षक

वेदी की रचना लिखी, अरु पुन होम विधान।
लिया वेद से इन्होंने, कैसा स्पष्ट प्रमान।।

क्या परमेश्वर की थी नासा, जिससे लीनी उसने बासा।
बातें नर अल्पज्ञ समाना, करता बाइबल का भगवाना।

देवे शाप कभी पछतावे, अरु कामों को हाथ लगावे।
पहले मारे सगरे प्रानी, अब जिय में उपजी फिर ग्लानि।
बाइबिल के प्रभु की लरकाई, बालक की सी खेल बनाई।
अपना वचन न आप निभाए, पहले कर पाछे पछताए।

(१५) और ईश्वर ने नूह को और बेटों को आशीष दिया और उन्हें कहा कि हर एक जीता चलता जन्तु तुम्हारे भोजन के लिये होगा मैंनें हरी तरकारी के समान सारी वस्तु तुम्हें दी केवल मांस उसके जीव अर्थात् उसके लोहू समेत मत खाना।।

तौ॰ पर्व ६ आ॰१, ३, ४।।

कुँडलिया—समीक्षक

ईश्वर के सब पुत्र हैं, नर पशु पक्षि समान।
नर को क्यों आज्ञा दई, सब के काढे प्रान।।
सब के काढे प्रान मांस सब का वह खावे।
निज पुत्रों पर ईश्वर को क्यों दया न आवे।।
हिंसक दिये बनाया सभी कैसा जगदीश्वर।
सब हैं उसके पुत्र और वह सब का ईश्वर।।

(१६) और सारी पृथिवी पर एक ही बोली और एक ही भाषा थी। फिर उन्होंने कहा कि आओ हम एक नगर और एक गुम्मट जिसकी चोटी स्वर्ग लौं पहुँचे अपने लिये बनावें और अपना नाम करें न हो कि हम सारी पृथिवी पर छिन्न भिन्न हो जायें। तब ईश्वर ने उस नगर और उस गुम्मट को जिसे आदम के सन्तान बनाते थे देखने को उतरा। तब परमेश्वर ने कहा कि देखो यह लोग एक ही हैं और उन सब की एक ही बोली है अब वे ऐसा कुछ करने लगे सो वे जिस पर मन लगावें उससे अलग न किये जावेंगे। आओ हम उतरें और वहाँ उनकी भाषा को गड़बड़ावें जिससे एक दूसरे की बोली न समझे। तब परमेश्वर ने उन्हें वहां से सारी पृथिवी पर छिन्न भिन्न किया और वे उस नगर के बनाने से अलग रहे।। तौ॰ पर्व ११ आ॰१, ४,५,६,७,८।।

समीक्षक

इक बोली सब जनों की, जब होगी जग माँहि।
होता होगा सुख घना, नाम दुःख का नाँहि।।

प्रभु ने वरु यह खेल बिगारा, कीना सब को न्यारा न्यारा।
महाँ पाप ईश्वर ने कीना, ऐसा भया बुद्धि को हीना।
ईश्वर नहीं यह है शयताना, अथवा है कोऊ मूर्ख दिवाना।
गिरि सनाई पर रहने वारा, बाइबल का प्रभु कोई मतवारा।
जो नित रहे उतरता चढ़ता, रहे असम्भव बातें करता।
सृष्टि की उन्नति नहीं चाहे, विघ्न डालता उसकी राहे।

(१७) तब उसने अपनी पत्नी सरी से कहा कि देख मैं जानता हूँ तू देखने में सुन्दर स्त्री है। इसलिये यों होगा कि जब मिस्त्री तुझे देखें तब वे कहेंगे कि यह उसकी पत्नी है और मुझे मार डालेंगे परन्तु तुझे जीती रखेंगे। तू कहियों कि मैं उसकी बहन हूँ जिससे तेरे कारण मेरा भला होय और मेरा प्राण तेरे हेतु से जीता रहे।। तौ॰ पर्व १२ आ॰ ११ , १२, १३।।

समीक्षक

मुस्लिम अरु क्रिस्तान के पैगम्बर कहलाँय।
झूठ बोलते भी नहीं, अबरिहाम सकुचाँय।।

(१८) और ईश्वर ने अविरहाम से कहा तू और तेरे पीछे तेरा वंश उनकी पीढ़ियों में मेरे नियम को माने तुम मेरा नियम जो मुझ से और तुझ से और तेरे पीछे तेरे वंश से है जिसे तुम मानोगे सो यह है कि तुम में से हर एक पुरुष का खतनः किया जाय। और तुम अपने शरीर की खलड़ी काटो और मेरे और तुम्हारे मध्य में नियम का चिह्न होगा और तुम्हारी पीढ़ियों में रहे एक आठ दिन के पुरुष का खतनः किया जाय जो घर में उत्पन्न हो और जो तेरे रुपे से मोल लिया गया हो अवश्य उसका खतनः किया जाय और नियम तुम्हारे मांस में सर्वदा नियम के लिये होगा। और अ़खतनः बालक जिसकी खलड़ी का खतनः न हुआ हो सो प्राणी अपने लोग से कट जाय कि उसने तेरा नियम तोड़ा है। तौ॰ पर्व १७ आ॰ ६, १०, ११, १२, १३, १४।।

कुँडलिया—समीक्षक

खतनः ही यदि इष्ट था, काहे लगाया चाम।
चर्म काट कर भेजता, बच जाता इस्लाम।।
बच जाता इस्लाम खुदा को अकल न आई।
अरु अब क्यों नहीं खतना करते लोग इसाई।।
चर्म रखा इसलिये चोट लग जाये मतना।
लगे वस्त्र को मूत्र न तांते करे न खतना।।
अटल हुक्म को क्यों नहीं मानो, क्यों नहीं ईसा को परमानो।
क्यों करते यह बात बुराई, ईसा की पोथी झुठलाई।।

(१६) जब ईश्वर अबिरहाम से बातें कर चुका तो ऊपर गया।। तौ॰ पर्व १७ आ॰ २२।।

समीक्षक

पंछी था या पुरुष प्रभु, चढ़ जाता असमान। जादूगर था या कोई कैसा था भगवान।।

(२०) फिर ईश्वर ने उसे ममरे के बलूतों में दिखाई दिया और वह दिन को घाम के समय अपने तम्बू के द्वार पर बैठा था। और उसने अपनी आँखे उठाईं और क्या देखा कि तीन मनुष्य उसके पास खड़े हैं और उन्हें देख के वह तम्बू के द्वार पर से उनकी भेंट को दौड़ा और भूमि तक दण्डवत की। और कहा है मेरे स्वामी यदि मैंने अब आपकी दृष्टि में अनुग्रह पाया है तो मैं आपकी बिनती करता हूँ अपने दास के पास से चले न जाइये। अच्छा होय तो थोड़ा जल लाया जाय और अपने चरण धोइये और पेड़ तले विश्राम कीजिये और मैं एक कौर रोटी लाऊँ और आप तृप्त हूजिये उसके पीछे आगे बढ़िये क्योंकि आप इसलिये अपने दास के पास आये हैं तब वे बोले कि जैसा तूने कहा वैसा कर और अविरहाम तम्बू में सहरः पास उतावली से गया और उसे कहा फुरति कर और तीन नपुआ चोखा पिसान लेके गूँथ और उसके फुलके पका। और अबिरहाम झुण्ड की ओर दौड़ा गया और एक अच्छा कोमल बछड़ा लेके दास को दिया और उसने भी उसे सिद्ध करने में चटक किया। और उसने मक्खन और दूध और वह बछड़ा जो पकाया था लिया और उनके आगे धरा और आप उनके पास पेड़ तले खड़ा रहा और उन्होंने खाया।। तौ पर्व १७ आ॰ १,२,३,४,५,६,७,८ ।।

समीक्षक

वत्स मांस को सुख से खाये, ऐसा निर्दय प्रभु कहाये। जिनका प्रभु निठुर हो भाई, क्यों नहीं गोधन खाँय ईसाई। ऐसा ईश्वर हम नहीं माने, हिंसक नर होगा कोऊ जानें। कौन रहे दो प्रभु के संगी, होंगे कोई जांगल हुड़दंगी। मान लिया मुखिया को ईश्वर, बाइबल का ऐसा जगदीश्वर।

(२१) और परमेश्वर ने अबिरहाम से कहा कि सरः क्यों यह कह के मुस्कराई कि जो मैं बुढ़िया हूँ सचमुच बालक जनूँगी क्या परमेश्वर के लिये कोई बात असाध्य है? तौ॰ पर्व १८ आ॰ १३, १४।।

समीक्षक

चिढ़ता ताना मारता, ईश्वर बाल समान।
ऐसा ईश्वर मान कर, क्या होगा कल्यान।।

(२२) तब परमेश्वर ने सदूममूरा पर गन्धक और आग परमेश्वर की ओर से वर्षाया। और उन नगरों को और सारे चौगान को और नगरों के सारे निवासियों को और जो कुछ भूमि पर उगा था उलटा दिया।।

तौ॰ उत्प पर्व १६ आ॰ २४, २५।।

समीक्षक

फूँक दिये सब आग से, बाल वृद्ध अरु नार।
निर्दोषों को मारते, बाईबल के कर्तार।।

शिशुओं पर भी दया न आई, दया हीन ईश्वर अन्यायी।
जिनके प्रभु निष्ठुर अलबेले, निष्ठुर क्यों न होवे चेले।

(२३) आओ हम अपने पिता को दाख रस पिलावें और हम उसके साथ शयन करें कि हम अपने पिता से वंश चलावें। तब उन्होंने उस रात अपने पिता को दाख रस पिलाया और पहलौठी गई और अपने पिता के साथ शयन किया। हम उसे आज रात भी दाख का रस पिलावें तू जाके शयन कर। सो लूत की दोनों बेटियाँ अपने पिता से गर्भिणी हुई।। तौ॰ उत्व पर्व १६ आ॰ ३२, ३३, ३४, ३६।।

समीक्षक

बच नहीं सके कुकर्म से, कर के जब मद पान।
भोग किया निज सुता से, धन्य लूत भगवान।।

ऐसे मद को पियें इसाई, तभी तो करते घोर बुराई।
ताँते सज्जन मद को त्यागें, मद की परछाई सों भागें।

(२४) यदि अपने कहने से समान परमेश्वर ने सरः से भेट किया और अपने वचन के समान परमेश्वर ने सरः के विषय में किया। और सरः गर्भिणी हुई।। तौ० उत्प० पर्व २१ आ० १०२।।

सो० सरः संग सम्भोग, कर प्रभु अनुकंपा करी।
कहें इसाई लोग, गर्भ किया किसने उसे।।

(२५) तब अबिरहाम ने बड़े तड़के उठके रोटी और एक पखाल में जल लिया और हाज़िरः के कन्धे पर धर दिया और लड़के को भी उसे सौंप के उसे विदा किया। उसने लड़के को एक झाड़ी के तले डाल दिया। और वह उसके सम्मुख बैठ के चिल्ला चिल्ला रोई। तब ईश्वर ने उस बालक का शब्द सुना।।

तौ० उत्प० पर्व २१ आ० १४, १५, १६, १७।।

समीक्षक

प्रथम सरः का पक्ष कर, हजिरः दई निकार।
रोई पीटी हाजिरः, समझे नहीं कर्तार।।

हजिरा अश्रु हार पिरोए, प्रभु ने समझा बालक रोए।
भरम पड़ा प्रभु क मन माही, उसने शब्द पछाना नाहीं।
क्या तेरा ईश्वर अज्ञानी, जिसने नहीं आवाज़ पछानी।

(२६) और इन बातों के पीछे यों हुआ कि ईश्वर ने अबिरहाम की परीक्षा की और उसे कहा। हे अबिरहाम! तू अपने बेटे को अपने इकलौते इज़हाक को ज़िसे तू प्यार करता है ले। उसे होम की भेंट के लिए चढ़ा और अपने बेटे इज़हाक को बाँध के उसे वेदी में लकड़ियों

पर धरा। और अबिरहाम ने छुरि लेके अपने बेटे को घारत करने के लिए हाथ बढ़ाया। तब परमेश्वर के दूत ने स्वर्ग पर से उसे पुकारा कि अबिरहाम, अबिरहाम अपना हाथ लड़के पर मत बढ़ा उसे कुछ मत कर क्योंकि मैं जानता हूँ कि तू ईश्वर से डरता है।। तौ॰ उत्प॰ पर्व २२ आ॰ १, २, ६, १०, ११, १२।।

समीक्षक

सो॰—सिद्ध भई यह बात, ईश्वर अति अल्पज्ञ था।
करहि पुत्र का घात,तब रोका प्रभु ने उसे।।

(२७) सो आप हमारी समाधिन में से चुन के एक में अपने मृतक को गाड़िये जिससे आप अपने मृतक को गाड़ें।। तौ॰ उत्प पर्व २३ आ॰ ६।।

समीक्षक

जो नर मुर्दे गाड़ते, करें जगत की हान।
लोथ सड़ें बदबू उठे, फैलें रोग महान।।

प्र॰सो॰— जाँकी जिससे प्रीति, कैसे उसे जलाय।
ताँते अच्छी रीति, मृतक सुलाये कब्र में।
उ॰— कैसा अनुचित प्यार, प्रिय को गाड़ो भूमि में।
मनों धूल का भार, उसके ऊपर डालते।।

प्यारे को घर में रख लीजे, डाल कब्र में दुख मत दीजे।
तुम्हें गाड़ के कोई दबाए, क्या तब मनुआ आनंद पाए।
धूल डालना उनके आनन, आँखों अरु मुख नासा कानन।
छाती पर धर देना पाहन, इससे तो कहीं अच्छा दाहन।
यह कैसी है प्रीति तुम्हारी, प्रीति तुम्हारी पर बलिहारी।

मृतक डाल सन्दूक में, भूमि में दो गाड़।
दुर्गन्धि उठने लगे, देती पवन बिगाड़।।

दारुण रोग पवन फैलाए, अति दुर्गन्धि उसमें आए।
एक मृतक हित छः हथ लंबी, चार हाथ चौड़ी अवलम्बी।

इतनी धरा मृतक इक रोके, जो चाहे जाकर अवलोके।
कोटि कोटि मानुष यहाँ मरते, जिन्हें नित्य कबरों मँह धरते
कितनी भूमि निरर्थक जाए, अन्न धान्य उपज़न नहीं पाए।
सब से बुरा गाड़ना ताँते, इतनी पृथिवी आय कहाँ ते।
कुछ अच्छा जल माँझ डुबाना, जल जीवों का बनता खाना।
हाड़ चाम जो कुछ रह जाये, वह सड़ कर दुर्गंधि फैलाए।
जो फैंके मुर्दा बन माहीं, हिंसक जन्तु फाड़ तेहि खाही।
पर हड्डी मज्जा अरु चर्मा, सड़ने लगें होय जब घर्मा।
ताँते उत्तम मृतक जलाना, अरु निकृष्टतम उसे दबाना।
जल कर अणु नभ में उड़ जायें, बदबू से नहीं रोग फैलाएँ।

प्र.सो.– चाहे मृतक जलाँय, बदबू फिर भी फैलती।
ताँते उचित दबाँय, जलता प्रिय नहीं देखिये।।
उ.– जो न जलायें विधि से, तो होती कुछ हान।
वरु हानि होती नहीं, गाड़े मृतक समान।।

लिखा वेद मँह यथा विधाना, उस विधि समुचित मृतक जलाना।
तीन हाथ हो गहरी वेदी, बीता डेढ़ खोद कर भेदी।
लम्बी हाथ पाँच निर्मायें, चौड़ी साढ़े तीन रखाये।
तन के समतुल घृत ले आवे, कस्तुरी उस माँहि मिलावे।
सेर माँहि रत्ती कस्तूरी, इक माशा केसर हो पूरी।
बीस सेर घट से घट चन्दन, अति सुगन्ध दुर्गन्धि निकन्दन।
अगर तगर कर्पूर पलासा, रखिये वेदी माँहि सुवासा।
उसके ऊपर लोथ टिकाएँ, वा पर लकड़ी पुनः धराएँ।
इक इक बीता वेदी ऊपर, चारों ओर लकड़ियाँ भूपर।
देकर घृत आहूति जलाना, जो चाहो नहीं रोग फैलाना।
या विधि नहीं फैले दुर्गन्धि, प्रत्युत उठती रहे सुगन्धि।
यज्ञ यही नर मेध कहावे, अत्येष्टि भी यही सदावे।
पुरुष मेध भी याको कहिये, भले अर्थ जीवों के गहिये।

चाहे होवे नर कंगाला, बीस सेर घृत जाए डाला।
भीख माँग कर चाहे लेवे, चाहे उसको जाति देवे।
चाहे उसको देवे राजा, सकल करे वह दाहन काजा।
जो नहीं मिलें घृतादि पदारथ, लकड़ी ही से करे सकारथ।
गड़ने से फिर भी है अच्छा, फिर भी होय बहुत कुछ रच्छा
इक बिस्वा भर भूमि माहीं, अथवा इक वेदी की ठाहीं।
लक्ष लक्ष मुर्दे जल जायें, अधिक नहीं भूमि बिगराएँ।
कबर देखिये अति डर लागे, दूर कबर से सब कोई भागे।
ताँते अनुचित मृतक गड़ाना, सर्वोत्तम है उसे जलाना।

(२८) परमेश्वर मेरे स्वामी अबिरहाम का ईश्वर धन्य जिसने मेरे स्वामी को अपनी दया और अपनी सच्चाई बिना न छोड़ा, मार्ग में परमेश्वर ने मेरे स्वामी के भाइयों के घर की ओर मेरी अगुआई की।।

तौ॰ उत्प॰ पर्व २३ आ॰२७।।

समीक्षक

अबरिहाम का प्रभु था, क्या औरों का नाहिं।
चपरासी क्या प्रभु था, चलता अड़दल माँहि।।
आज नहीं क्यों मार्ग दिखाता, क्यों नहीं मानुष सँग बतराता।
यह पुस्तक अमृत की रासी, इसका कर्त्ता था बनवासी।।

(२६) इसमअऐल के बेटों के यह नाम हैं, इसमअऐल के बेटे का नाम नवीत और कीदार और अदबीएल और मिवसाम और मिसमाअ और दूमा और मस्सः इदर और तैमा, इतूर, नफ़ीस और किदमः।।

तौ॰ उत्प॰ पर्व २५ आ॰१३,१४,१५।।

समीक्षक

इस्मऐल अबराम का था दासी से पूत।
रही हाज़रा नाम की, उसने जना सपूत।।

(३०) मैं तेरे पिता की रुचि के समान स्वादित भोजन बनाऊँगी और तू अपने पिता के ले जाइयो जिससे वह खाय और अपने मरने से आगे तुझे आशीष देवे। और रिवकः ने अपने घर में से अपने

जेठे बेटे एसौ का अच्छा पहिरावा लिया और बकरी के मेमनों का चमड़ा उसके हाथों और गले की चिकनाई पर लपेटा तब याकूब अपने पिता से बोला कि मैं आप का पहलौठा एसौ हूँ आपके कहने के समान मैंने किया है उठ बैठिये और आहेर के मांस में से खाइये जिससे आप का प्राण मुझे आशीष दे।। तौ॰ उत्व॰ पर्व २७ आ॰ ६, १०, १५, १६, १६

समीक्षक

एहि विधि झूठ रु कपट से, लेते हैं आशीस।
पैगम्बर पाछे बनें, ईसाइयों के ईस।।

(३१) और यअकूब विहान को तड़के उठा और उस पत्थर को जिसे उसने अपना उसीसा किया था खम्भा खड़ा किया और उस पर तेल डाला। और उस स्थान का नाम बैतएल रखा। और यह पत्थर जो मैंने खड़ा किया ईश्वर का घर होगा।। तौ॰ उत्प॰ पर्व २८ आ॰ १८, १६, २२।।

समीक्षक

जंगलियों के देखो कारज, पत्थर पूजें मूढ़ अनारज।
कहें मुकद्दस बैतुल इसको, मुसलमान सब पूजहिं जिसको।
यही पत्थर क्या प्रभु आवासा, इसमें ही प्रभु करे निवासा।
वाहरे बुत्त परस्त इसाई, पत्थर पूजा भली चलाई।

(३२) और ईश्वर ने राखिल को स्मरण किया और ईश्वर ने उसकी और उसकी कोख को खोला और वह गर्भिणी हुई और बेटा जनी और बोली कि ईश्वर मेरी निन्दा दूर की।। तो॰ उत्प॰ पर्व २० आ॰ २२, २३।।

समीक्षक

क्रिस्तानों का प्रभु है, डॉक्टर चतुर प्रवीन।
कोख खोलना नार की, कारज बड़ा महीन।।
किन शस्त्रों से कुक्षि खोली, कौन हाथ छुरिका उत्तोली।
आँख मूँद कर लिख दी बानी, तर्क हेतु सूनी मनमानी।

(३३) परन्तु ईश्वर आरामी लावनक ने स्वप्न में रात को आया और उसे कहा कि चौकस रह तू ईश्वर यअकूब को भला बुरा मत कह, क्योंकि अपने पिता के घर का निपट अभिलाषी है तूने किस लिये मेरे देवों को चुराया है।। तौ॰ उत्प पर्व ३१ आ॰ २४, ३०।।

समीक्षक

स्वप्न माँहि लाखों के आया, बातें कीनी पीया खाया।
मिला जागते सोते ईश्वर, अगवानी करता जगदीश्वर।
चला गया अब कित क्या जाने, किस सोया रख पाँव सिरहाने।
अब नहीं मिलता जागत सोवत, दर्सन हेत इसाई रोवत
रहे जंगली मूर्ति पुजारी, मूरति पूजें न्यारी न्यारी।
ईसाइयों का क्या परमेश्वर, पत्थर को मानें सर्वेश्वर।
तबहि तो कहता देव चुराये, जो पत्थर के रहे बनाये।

(३४) और यअकूब अपने मार्ग चला गया और ईश्वर के दूत उससे आ मिले। और यअकूब ने उन्हें देख के कहा कि यह ईश्वर की सेना है।। तौ॰ उत्प॰ पर्व ३२ आ॰ १, २।।

समीक्षक

नर होने में नहीं रहा, अब कोई सन्देह।
क्रिस्तानों का प्रभु था, कोई पुरुष संदेह।।
रखता सेना और सिपाई, करे चढ़ाई और लड़ाई।
लूट मार सेना का कारज, एहि विधि करता प्रभु अनारज।

(३५) और यअकूब अकेला रह गया और यहाँ पौ फटे लौं एक जन उससे मल्लयुद्ध करता रहा और जब उसने देखा कि वह उस पर प्रबल न हुआ तो उसकी जाँघ को भीतर से छुआ तब यअकूब के जाँघ की नस उसके संग मल्ल युद्ध करने में चढ़ गई। तब वह बोला—कि मुझे जाने दे क्योंकि पौ फटती है और वह बोला मैं तुझे न जाने दूँगा जब लौं तू मुझे आशीष देवे। तब उसने उसे कहा कि तेरा नाम क्या? और वह बोला कि यअकूब। तब उसने कहा कि तेरा नाम आगे को यअकूब न होगा परन्तु इसरायेल क्योंकि तूने ईश्वर के आगे और मनुष्यों के आगे राजा की नाईं मल्लयुद्ध किया और जीता। तब यअकूब ने यह कहि के उसे पूछा कि अपना नाम बताइये और वह बोला कि तू मेरा नाम क्यों पूछता है और उसने उसे वहाँ आशीष दिया। और यअकूब ने उस स्थान का नाम फनूएल रखा क्योंकि मैंने ईश्वर को प्रत्यक्ष देखा और मेरा प्राण बचा है और जब वह फनूएल से पार चला तो सूर्य की ज्योति उस पर पड़ी और वह अपनी जाँघ से लँगड़ाता था। इसलिये इसराएल के वंश उस जाँघ की नस को जो चढ़ गई थी आज लौं नहीं खाते क्योंकि उसने यअकूब के जाँघ की नस को जो चढ़ गई थी छुआ था।।

तौ॰ उत्प॰ पर्व २३ आ॰ २४, २५, २६, २७, २८, २६, ३०, ३१, ३२।।

समीक्षक

मल्ल अखाड़े के भगवाना, तभी तो जानें सुत उपजाना। पुत्र
सरः के हाँ जन्माया, राखिल का भी वंश बढ़ाया।
क्या ईश्वर हो सकता ऐसा, ईसाइयों ने माना जैसा। इक तो
नाम पूछने आवे, दूजा उसको नहीं बतलावे।
नाड़ी तो प्रभु दीन चढ़ाई, निस्सन्देह विजय भी भाई। डाक्टर
ही यदि होता ईश्वर, नाड़ चढ़ा देता जगदीश्वर।
भक्त यकूब पड़ा लँगड़ाए, भक्ति का कैसा फल पाए। अन्य
भक्त भी लँगड़े होंगे, अहो मूर्ख बुद्धि के पोंगे।
ईश्वर से जब कीनी कुश्ती, केशा केशी धींगा मुश्ती। अवस देह
पुन होगी ताकी, कुश्ती देखी तुमने जाकी।
बाल बुद्धि है निपट तुम्हारी, अनपढ़ मूढ़ बुद्धि से न्यारी।

(३६) और यहूदाह का पहिलौठा पर परमेश्वर की दृष्टि में दुष्ट था सो परमेश्वर ने उसे मार डाला। तब यहूदाह ने ओनान को कहा कि अपनी भाई की पत्नी के पास जा और उससे ब्याह कर अपने भाई के लिये वंश चला और ओनान ने जाना कि वह वंश मेरा न होगा और यों हुआ कि जब वह अपनी भाई की पत्नी के पास गया तो वीर्य को भूमि पर गिरा दिया। और उसका वह कार्य परमेश्वर की दृष्टि में बुरा था इसलिये उसने उसे भी मार डाला।। तौ॰ उत्प॰ पर्व ३८ आ॰ ७, ८, ६, १०।।

समीक्षक

ईश्वर के या काम हैं, या मानुष के काम।
उसने किया नियोग तो, पैठाया यम धाम।।
बिगर गई यदि उसकी बुद्धि, क्यों नहीं कर दी उसकी शुद्धि।

सो॰—वेद विधि अनुसार, था नियोग सर्वत्र ही
था सर्वत्र प्रचार, वेदों से सब ने लिया।।

तौरेत यात्रा की पुस्तक

(३७) जब मूसा सयाना हुआ और अपने भाइयों में से एक इबरानी को देखा कि मिस्री उसे मार रहा है। तब उसने इधर उधर दृष्टि की देखा कि कोई नहीं है तब उसने मिस्री को मार डाला और बालू में उसे छिपा दिया। जब वह दूसरे दिन बाहर गया तो देखा दो इबरानी आपस में झगड़ रहे हैं तब उसने उस अँधेरी को कहा कि तू अपने परोसी को क्यों मारता है। तब उसने कहा कि किसने तुझे हम पर अध्यक्ष अथवा न्यायी ठहराया क्या तू चाहता हे कि जिस रीति से तूने मिस्री को मार डाला मुझे भी मार डाले तब मूसा डरा और भाग निकला।।

तौ॰ या॰ पर्व २ आ॰ ११, १२, १३, १४।।

सो॰ बाइबल मत आचार्य, मूसा की लीला लखें।
कैसा चरित अनार्य, मिस्री की हत्या करी।।

क्रोधी भीरु हत्याकारी, डरता जान दण्ड सरकारी।
मूसा बात छिपाने हारा, होगा झूठ बोलने बारा।
उसने भी परमेश्वर पाया, जिसने पंथ यहूद चलाया।
उसको यह पैगम्बर जानें, झूठ सत्य को नहीं पहिचाने।
मूसा आदि पैगम्बर सारे, जब जंगल के रहने हारे।
नहीं था उनमें कोऊ विद्वाना, सभी निरक्षर थे अज्ञाना।

(३८) और फसह मेमना मारो। ओर एक मुट्ठी जूफा लेओ और उसे उस लोह में जो बासन में है बारे के ऊपर की चौखट के और द्वार की दोनों ओर उससे छापो और तुम में से कोई विहान लों अपने घर के द्वार से बाहर न जावे। क्योंकि परमेश्वर मिश्र के मारने के लिये आर पार जायगा और जब वह ऊपर की चौखट पर और द्वार के दोनों ओर लहू को देखे तब परमेश्वर द्वार से बीत जायगा और नाशक तुम्हारे घरों में न जाने देगा कि मारे।। तौ॰ या॰ पर्व १२ आ॰ २१, २२, २३।।

समीक्षक

जादू टोने टोटके, क्या करता भगवान।
रुधिर छाप की जब लगे, तभी करे पहिचान।।

(३९) और यों हुआ कि परमेश्वर आधी रात को मिश्र के देश में सारे पहिलौठे को फिरा उनके पहिलौठे से लेके जो अपने सिंहासन पर बैठता था उस बन्धुओं के पहिलौठे लौं जो बन्दी गृह में था पशून के पहिलौठे समेत नाश किये और रात को फिराऊन उठा वह और उसके सब सेवक और सारे मिस्री उठे और मिस्र में बड़ा विलाप था क्योंकि कोई घर न रहा जिसमें एक न मरा।।

तौ॰ या॰ पर्व १२ आ॰ २९, ३०।।

समीक्षक

हिंसक डाकू चोर सब, प्रभु ने दीने मार।
निर्दय आधी रात को, क्या कीना कर्त्तार।।
मार दिये सब बूढ़े बच्चे, जिया जन्तु आयु के कच्चे।
ईश्वर को कुछ दया न आई, सकल मिसर में मची दुहाई।
दया न करता माँसाहारी, प्रभु की प्रकृति मांस बिगारी

(४०) परमेश्वर तुम्हारे लिये युद्ध करेगा। इसरायेल के सन्तान से कह कि वह आगे बढ़े। परन्तु तू अपनी छड़ी उठा और समुद्र पर अपना हाथ बढ़ा और उससे दो भाग कर और इसरायेल के सन्तान समुद्र के जीवों बीच से सूखी भूमि में होकर चले जाँयेगे। तौ॰ या॰ पर्व १४ आ॰ १४, १५, १६।।

समीक्षक

इस्रएल के वंश संग, डोलत था भगवान।
यथा गड़रिया भेड़ सन, डोलत साँझ विहान।।
चले गये अब कहाँ भगवाना, कहाँ छिपे हो अन्तर्ध्याना।
सागर में रेलें चलवाते, जिससे सब जन लाभ उठाते।
नौकाओं का श्रम मिट जाता, दिग दिगान्त सब कोई जा पाता।
अहो विवशता भारी छाई, ढूढें, प्रभु को नित्य इसाई
एहि विधि लीलाएँ मति हीनी, ईश्वर ने मूसा संग कीनी।
यथा इसाई सेवक सारे, तेहि विधि इनके ईश्वर प्यार।
तेहि विधि प्रभु ने लिख दी पोथी, गली सड़ी झूठी अरु थोथी।

(४१) क्योंकि मैं परमेश्वर तेरा ईश्वर ज्वलित शक्तिमान हूँ पितरों के अपराध का दण्ड उनके पुत्रों को जो मेरा वैर रखता है उनकी तीसरी और चौथी पीढ़ी लौं देवैया हूँ। तौ॰ या॰ पर्व २० आ॰ २५।।

समीक्षक

सो॰—कहो कहाँ का न्याय, क्रिस्तानों के प्रभु का।
पोता पाय सजाय, दादा के अपराध का।।

प्रभु ने पीढ़ी चार सरापी, पंचम पीढ़ी हो यदि पापी।

दें नहीं सके दण्ड प्रभु वाको, दण्ड चार पीढ़ी तक ताको।
देना दण्ड बिना अपराधा, ईश्वर है अथवा कोई व्याधा।

(४२) विश्राम के दिन को उसे पवित्र रखने के लिए स्मरण कर। छः दिन लौं तू परिश्रम कर। और सातवाँ दिन परमेश्वर तेरे ईश्वर का विश्राम है। परमेश्वर ने विश्राम दिन को आशीष दी।।
तौ॰ या॰ पर्व २०, आ॰ ८, ६,।।

समीक्षक

सो॰—पावन इक रविवार, क्या छः दिन अपवित्र हैं।
कहो गये क्या हार, छः दिन श्रम करके प्रभु।।

रवि वासर को आशिष दीनी, शेष दिवसकी क्या गतिकीनी।
क्या उनको प्रभु ने अभिशाप, किया उन्होंने क्या कुछ पापा
क्यों कर यह ईश्वर के धर्मा, नहीं विद्वान करे अस कर्मा।
क्या गुण रवि वासर में देखा, औरों में क्या अवगुण पेखा।
क्यों कर दिया एक दिन पावन, शेष दिवस कर दिये अपावन।

(४३) अपने परोसी पर झूठी साक्षी मत दे। अपने परोसी की स्त्री और उसके दास उसकी दासी और उसके बैल और उसके गदहे और किसी वस्तु का जो तेरी परोसी की है लालच मत कर।।
तौ॰या॰पर्व॰ २० आ॰१६, १७।।

समीक्षक

परदेशी के माल पर, एहि कारण क्रिस्तान।
टूट पड़ें जिमि मांस पर, बाघ बघेले श्वान।।

जेहि विधि स्वारथ पर्क इसाई, तेहि विधि इनके हैं प्रभु राई।
जे नर सबहुँ परोसी मानें, विश्वमात्र को अपना जानें।
वे नर किस पर हाथ उठाएँ, किसके गर्दभ गाय चुरायें।
ताँते वैदिक मत को मानो, विश्वमात्र को अपना जानो।

(४४) सो अब लड़कों में से हर एक अपने बेटे को और हर एक अपनी स्त्री को जो पुरुष से संयुक्त हुई हो प्राण से मारो। परन्तु बेटियाँ जो पुरुष से संयुक्त नहीं हुई है उन्हें अपने लिये जीती रखो।।
तौ॰ गिनती॰ पर्व ३१ आ॰ १७, १८।।

समीक्षक

वाह जी वाह मूसा पैगम्बर, भोग विलासी पहला नम्बर।
अक्षत योनी सब कन्याएँ, अपने स्वारथ हेत बचाएँ।
बाकी नर नारी पशु मारे, ऐसे निष्ठुर थे हत्यारे।

(४५) जो कोई किसी मनुष्य को मारे और वह मर जाय वह निश्चय घात किया जाय। और वह मनुष्य घात में न लगा हो परन्तु ईश्वर ने उसके हाथ में सौंप दिया हो तब मैं तुझे भागने का स्थान बता दूँगा। तौ॰ या॰ पर्व २१ आ॰ १२, १३।।

समीक्षक

मूसा को क्यों नहीं हना, जो यह साँचा न्याय।
उसने मारा मनुष को, दीना भूमि गढ़ाय।।

जो तुम कहा प्रभु ने प्रेरा, ताँते पाप न मूसा केरा।
तो होता है प्रभु पखपाती, बिन अपराध मनुष का घाती।
राज न्याय से क्यों वह भागा। प्रभु मूसा सों क्यों अनुरागा।

(४६) और कुशल का बलिदान बैलों से परमेश्वर के लिये चढ़ाया। और मूसा ने आधा लोहू ले के पात्रों को रखा और आधा लोहू वेदी पर छिड़का। और मूसा ने उस लोहू को लेके लोगों पर छिड़का और कहा कि यह लोहू उस नियम का है जिस परमेश्वर ने इन बातों के कारण तुम्हारे साथ किया है और परमेश्वर ने मूसा से कहा कि पहाड़ पर मुझ पास आ और वहाँ रह और तुझे पत्थर की रोटियाँ और व्यवस्था और आज्ञा जो मैंने लिखी हैं दूँगा। तौरेतया॰ प॰ १४ अ॰ ५, ६, ८, १२

समीक्षक

कु॰ शर्माते नहीं जंगली, अंट संट बकवास।
बैलों की बलि से प्रभु, खाए उनका मास।
खाए उनका मास, ईसाई भी हत्यारे।
गौओं का बध करें, बैल और बछड़े मारें।
करते पशु बलिदान, वेद पर दोष लगाते।
लिख लिख झूठी बात जंगली नहीं शर्माते।।
निश्चय प्रभु था कोई पहाड़ी, बसे बना कर ऊँची माड़ी।

पत्थर पर करता लिखवाई, कागज लेखज नहीं थी स्याही।
बन बैठा परमेश्वर इनमें, विद्या बुद्धि नहीं थी जिनमें।

(४७) और बोला कि तू मेरा रूप नहीं देख सकता क्योंकि मुझे देख के कोई मनुष्य नहीं जियेगा। और परमेश्वर ने कहा कि देख एक स्थान मेरे पास है और तू उस टीले पर खड़ा रह। और यों होगा कि जब मेरा विभवचक्र निकलेगा तो मैं तुझे पहाड़ के दरार में रक्खूँगा और जब लों निकलूँ तुझे अपने हाथ से ढापूँगा। और अपना हाथ उठा लूँगा और तू मेरा पीछा देखेगा परन्तु मेरा रूप दिखाई न देगा।

तौ॰ या॰ प॰ ३३ आ॰ २०, २१, २२, २३।।

समीक्षक

तनु धारी नर की तरह, मुख से क़रता बात।
किस विध मूसा ठग लिये, मुख नहीं उसे दिखात।।
क्यों न उसको मुख दिखलाया, आनन किस विध ढँपने पाया।
जो कर प्रभु मुख पर रख दीने, सो कर तो उसने लखलीने
पुन अदर्शन कैसे भाई, अब तो त्यागो झूठ ईसाई।

लय व्यवस्था की पुस्तक तौरेत।।

और परमेश्वर ने मूसा को बुलाया और मण्डली के तम्बू में से यह वचन उसे कहा कि।। इसरायेल की सन्तान से बोल और उन्हें कह यदि कोई तुम में से परमेश्वर के लिये भेंट लावे तो तुम ठौर में से अर्थात् गाय, बैल, भेड़, बकरी में से अपनी भेंट लाओ।। तौ॰ ल॰ व्य॰ की पुस्तक प॰ १ आ॰ १०२।।

समीक्षक

देखो प्रभु क्रिस्तान का, माँगत है बलिदान।
गाय बैल अज चाहता, जिमि हिंसक हैवान।।
खाता माँस रूधिर को पीता, डाँगर ढोर खय कर जीता।
मायावी प्रभु माँसाहारी, सृष्टि मार छार कर डारी।।

(४६) और वह उस बैल को परमेश्वर के आगे बलि करे और हारून के बेटे याजक लोहू को निकट लावें और लोहू को यज्ञ वेदी के चारों ओर जो मण्डली के तम्बू के द्वार पर है छिड़कें।। तब वह

उस भेंट के बलिदान की खाल निकालें और उसे टुकड़े टुकड़े करें।। और हारून के बेटे याजक यज्ञ वेदी पर आग रखें। और उस पर लकड़ी चुने।। और हारुन के बेटे याजक उसके ठुकड़ों को और शिर और चिकनाई को उन लकड़ियों पर जो यज्ञ वेदी की आग पर हैं विधि से धरें।। जिससे बलिदान की भेंट होवे जो आग से परमेश्वर के सुगन्ध के लिये भेंट किया गया। तौरेत लय व्य॰ प॰ १ आ॰ ५, ६, ७, ८, ६।।

समीक्षक

कु॰—अपने जन के बैल को, परमेश्वर मरवाय।
चहुँ दिश छिढ़के लहू को, अग्नि में डलवाय।।
अग्नि में डलवाय प्रभु पुन लेय सुगन्धी, धिक धिक ईसा मत
अरु धिक धिक भक्ति अन्धी।।
जंगलियों सी लीला करते क्या भगवन्ता।
निर्दय बूचड़ के सम ईश्वर पशु के हन्ता।।

(५०) फिर परमेश्वर मूसा से यह कह के बोला यदि वह अभिषेक किया हुआ याजक लोगों के समान करे तो वह अपने पाप के कारण जो उसने किया है अपने पाप की भेंट के लिये निसखोट एक बछिया परमेश्वर पाप के लिये लावे। और बछिया के सिर पर अपना हाथ रखे और बछिया को परमेश्वर के आगे बलि करें।

तौरेत ल॰ व्य॰ प॰ ४ आ॰ १, ३, ४।।

समीक्षक

प्रायश्चित इनके लखों, कैसे पाप छुड़ांय।
गुणकारी गो आदि पशु, स्वयं प्रभु मरवांय।।
ईश्वर है या कोऊ कसाई, जो मरवावे बछिया गाई।
ऐसी बातें जो करवाता, वह क्यों कर हो जग का त्राता।

(५१) जब कोई अध्यक्ष पाप करे।। तब वह बकरी का निसखोट नर मेम्ना अपनी भेंट के लिये लावें। और उसे परमेश्वर के आगे भेंट करे यह पाप की भेंट है।। तौरेत प॰ ४ आ॰ २२, २३, २४।।

समीक्षक

न्यायी हैं वा वे अन्याई, करें पाप अरु मारें गाई। पाप
करें जितनी हो मरजी, अल्लाह तो बछिया का गरजी।

एहि कारण सब लोग ईसाई, हत्या करते यथा कसाई।
तनिक दया नहीं मन में धारें, जीव जन्तु के प्राण निकारें
जंगलियों की बातें छोड़ो, ईसाई मत से मुँह मोड़ो।
वेद धर्म में अब तो आओ, काहे बिरथा जन्म गवाओ।

(५२) और यदि उसे भेड़ लाने की पूँजी न हो, वह अपने किये हुए अपराध के लिये दो पिंडुकियां और कपोत के दो बच्चे परमेश्वर के लिये लावे।। और उसका सिर उसके गले के पास से मरोड़ डाले परन्तु अलग न करे। उसके किये हुए पाप का प्रायश्चित करे और उसके लिए क्षमा किया जायगा पर यदि उसे दो पिंडुकियां और कपोत के दो बच्चे लाने की पूँजी न हो तों सेर भर चोखा पिसान का हिस्सा पाप की भेंट के लिये लावे उस पर तेल न डाले।। और वह क्षमा किया जायगा।। तौरेत प॰ ५ आ॰ ७ से १३।

समीक्षक

निर्धन हो धनवान वा, क्यों होगा भयभीत।
पाप छुड़ाने की कही कैसी सस्ती रीत।।
छुटे पाप और कष्ट न होवे, रुधिर कपोत पाप सब धोवे।
पाप मिटे अरु आमिष खाये, दोनों हाथों लड्डू पाये।
जब कपोत और कंठ मरोड़े, अरु ग्रीवा की नाड़ी तोड़े।
तड़प तड़प वह होगा मरता, क्यों क्रिस्तान दया नहीं करता।
क्यों कर दया उन्हें तब आवे, हिंसा तो प्रभु आप सिखावे।
हिंसा ही यदि पाप छुड़ावे, क्यों ईमान ईसा पर लावे।
क्यों ईसा की देत दुहाई, क्यों आवश्यकता इसकी भाई।

(५३) सो उसी बलिदान की खाल उसी याजक की होगी जिसने उसे चढ़ाया और समस्त भोजन की भेंट जो तन्दूर में पकाई जावे और सब जो कड़ाही में अथवा तवे पर सो उसी याजक की होगी।।

तौरेत प॰ ७। आ॰८, ६,

समीक्षक

फैली लीला पोप की, भारत देश मझार।
पर ईसाई तो बढ़े, उनसे लाख हजार।।
यहाँ के मन्दिर देवी द्वारे, सकल भोजकी और पुजारे।

पशु पंछिन की भेंट चढ़ावें, अरु देवी को भोग लगावें।
निकले इनसे बड़े ईसाई, बलि चढ़ाएँ भैंसे गाई।
बेचें चाम दाम बहु पायें, मांस खायें और मौज उड़ायें।
है कोऊ ऐसा नर जग मांही, दया सुतों पर राखे नाहीं।
बेटों से बेटे मरवावे, आप खाय और उन्हें खिलावे।
सब सुत प्रभु के जन्तु दुलारे पुन क्यों उनको कोई मारे।
ऐसे कर्म प्रभु के नाहीं, स्वारथ भरा बाईबल माहीं।
नहीं यह बाईबल योग बड़ाई, नहीं पोथी यह प्रभु बनाई।
इस पोथी को माननहारे, नहीं धर्म के जाननहारे।

गिनती की पुस्तक

(५४) सो गदही ने परमेश्वर के दूतको अपने हाथ में तलवार खेंचे हुए मार्ग में खड़ा देखा तब गदही मार्ग से अलग खेत में फिर गई, उसे मार्ग में फिरने के लिए बलआम ने गदही को लाठी से मारा।। तब परमेश्वर ने गदही का मुँह खोला और उसने बलआम से कहा कि मैंने तेरा क्या किया है कि तूने अब तीन बार मारा।। तौरते पा॰ २२, आयत २३—२८

समीक्षक

कु॰—दर्शन देते प्रभु को, पहले प्रभु के दूत।
क्या अब वे सब मर गये, बने कब्र के भूत।।
बने कब्र के भूत, कहो या तुम से रूठे।
रोगी हो वा चले गये, कहीं देस अनूठे।
विशप जनों की आंखों से भी भये अदर्शन।
इनसे अच्छे गधे जिन्हें होते थे दर्सन।।
अपना तो है यह अनुमाना, बाइबल ने सब झूठ विताना।
जो पहले नहीं सो अब नाहीं, भरे गपोड़े बाइबल माँही।

समुएल की दूसरी पुस्तक

(५५) और उसी रात ऐसा हुआ कि परमेश्वर का वचन यह कह के नातन को पहुंचा। कि जा और मेरे सेवक दाऊद से कह कि परमेश्वर यों कहता है मेरे निवास के लिय तू एक घर बनायेगा क्यों जब से इसरएल के सन्तान को मिस्र से निकाल लाया मैंने तो आज के दिन लौं घर में वास न किया परन्तु तम्बु में और डेरे में फिरा किया। तौरेत प॰ आयात ४, ५, ६।।

समीक्षक

पढ कर ऐसी बात को, रहे न कुछ सन्देह।
परमेश्वर क्रिस्तान का, नर सम राखे देह।।
ऐसे ईश्वर का क्या कहना, नर समान जो देत उरहना।
बहु श्रम किया बहुत चिर डोला, रहने को घर बहुत टटोला।
तम्बु में दुःख देती घामा, कहां करे सुख सों विश्रामा।
घर मोको दारूद बनादें, बोझ मेरा अपने सिर लादे।
अरे ईसाई लाज न आई, ऐसी पुस्तक क्यों अपनाई।
यह तुम्हार ईश्वर बन्जारा, घर बिन डोले मारा मारा।
फँस गये अब क्या करें बेचारे, यत्न करें तो हों छुटकारे।

राजाओं की पुस्तक

(५६) और बाबुल के राजा नबूखुदनज़र के राज्य के उन्नीसवें वर्ष के पांचवें मास सातवीं तिथि में बाबुल के राजा का एक सेवक नवूसर अहान जो निज सेना का प्रधान अध्यक्ष था यरुसलम में आया और उसने परमेश्वर का मन्दिर और राजा का भवन और यरूसलम के सारे घर ओर हर एक बड़े घर को जला दिया और कसदियों की सारी सेना ने जो उस निज सेना के अध्यक्ष के साथ थी अरुसलम की भीतों को चारों ओर से ढा दिया।। वहां पर होनी चाहिए।

तौरेत प॰ २५। आ॰ ८, ६, १०।।

समीक्षक

यरूसलम में आ गया, नबूसरा आहान।
सब घर द्वार जला दिये, भाग उठे भगवान।।
करते होंगे प्रभु विश्रामा, आया वीर नबूसर नामा।
उसने मन्दिर सब जलवायें, श्रम से जो दाऊद बनायें,
सकी न कर कुछ प्रभु की सेना, डर से आई मुख में फेना।
बहुत युद्ध पहले प्रभु मारे, अब क्या बूढे भये बेचारे।
बैठे बैठे घर तुड़वाया, क्यों नहीं अपना हाथ उठाया। यह
घटनाएँ हैं यदि साँची, तो पहली सब बातें कांची।
भागे कहां दूत वे सारे, मिसरी बच्चों के हत्यारे।
शूरबीर इक सन्मुख आया, मूषक सम प्रभु बिल में धाया। निन्दा

अपनी प्रभु करवाई, उसको ईश्वर कहें इसाई।
एहि विधि अनिक कहानियाँ, इस बाइबल के माँहि।
महाँ मूढ़ता की भरी, साँच एक भी नाहिं।।

जबूर दूसरा पुस्तक

काल के समाचार की पहली पुस्तक

(५७) सो परमेश्वर मेरे ईश्वर ने इसरएल पर मरी भेजी और इसरएल में से सत्तर सहस्र पुरुष गिर गये।। पहली॰ पर्व॰२१ आ॰१४।।

समीक्षक

इसरएल के वंश के दीने मानुष मार।
सौ दो सौ दस सौ नहीं, सत्तर मरे हजार।।
पहिले जिनको बहु वर दीने, अब क्या पाप उन्होंने कीने।
रात दिवस डोला तिन पाछे, इस्माईली तब थे आछे।
छिन में क्रूद्ध हुए सब मारे, भस्मीभूत छार कर डारे।
जो मानुष छिन माँहि रूठे, पुन दूजे छिन उस पर तूठे।
वह नर बड़ा भयानक जानो, उसके तूठे सुख मत मानो।

ऐयूब की पुस्तक

(५८) और एक दिन ऐसा हुआ कि परमेश्वर के आगे ईश्वर के पुंत्र आ खड़े हुए और शैतान भी उनके मध्य में परमेश्वर के आगे आ खड़ा हुआ। परमेश्वर ने शैतान से कहा कि तूँ कहाँ से आता है तब शैतान ने उत्तर देके परमेश्वर से कहा कि पृथिवी पर घूमते और इधर उधर से फिरते चलता आता हूँ। तब परमेश्वर ने शयतान से पूछा कि तू मेरे पास ऐयूब को जाँचा है कि उसके समान पृथिवी में कोई नहीं है वह सिद्ध और खरा जन ईश्वर से डरता है और पाप से अलग रहता है और अब लौं अपनी सच्चाई को धरा रक्खा है और तूने मुझे उसे अकारण नाश करने का उभारा है। तब शैतान ने उत्तर देते परमेश्वर से कहा कि चाम के लिये चाम हाँ जो मनुष्य का है से अपने प्राण के लिये देगा। परन्तु अब अपना हाथ बढ़ा और उसके हाड़ मांस को छू तब वह निस्संदेह तुझे तेरे समाने त्यागेगा तब परमेश्वर ने शयतान से कहा कि देख यह तेरे हाथ में है केवल उसके प्राण को बचा। तब शयतान परमेश्वर के आगे से चला गया और ऐयूब को शिर से तलवें लों बुरे फोड़ों से मारा।।

जबूर॰ ऐयूब॰ पर्व २ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ६, ७।।

समीक्षक

प्रभु सन्मुख दुख देत हैं, प्रभु भक्तन शैतान।
विवश नहीं कुछ कर सके, बेचारा भगवान।।
नहीं प्रभु अपना भक्त बचाता, नहीं शयतान दण्ड कुछ पाता।
दूत खड़े दीवार सहारे, शयताँ को पुन कौन पछारे।
ईसाइयों का प्रभु अल्पज्ञा, जो होता ईश्वर सर्वज्ञा।
शयताँ से क्यों परख कराता, अपने भक्तहुँ आप बचाता।

उपदेश की पुस्तक

(५६) हाँ मेरे अन्तःकरण ने बुद्धि और ज्ञान बहुत देखा है और मैंने बुद्धि और बौरापन और मूढ़ता जानने को मन लगाया मैंने जान लिया कि यह भी मन का झंझट है। क्योंकि अधिक बुद्धि में बड़ा शोक है और जो ज्ञान में बढ़ता है सो दुख में बढ़ता है।। ज॰ ऊ॰ प॰ १ आ॰ १६, १७, १८।।

समीक्षक

ईसाइयों को समझ न आई, बुद्धि ज्ञान दोऊ पद पर्याई।
अहो इसाई तर्क विलोका, बुद्धि वृद्धि मँह मानहिं शोका।
बाइबल कर्त्ता था अंजाना, नहीं पुरूष था कोऊ विद्वाना।
मती रचित इंजील को, वर्णहुँ चतुर सुजान।
ईसाई मानें जिसे, सब से बड़ा प्रमान।

मती रचित इंजील

(६०) यीशु खीष्ट का जन्म इस रीति से हुआ उसकी माता मरियम की यूसफ से मंगनी हुई थी परउनके इकट्ठा होने से पहिले ही वह देख पड़ी कि पवित्र आत्मा से गर्भवती है देखो परमेश्वर ने एक दूत ने स्वप्न में उसे दर्शन दे कहा, हे दाऊद के सन्तान तू अपनी स्त्री मरियम को यहाँ लाते डर क्योंकि जो गर्भ रहा सो पवित्र आत्मा से है।। इं॰ पर्व १ आयत १८, २०।।

समीक्षक

प्रत्यक्षादि प्रमाण से, हो विरूद्ध जो बात।
किस विधि पण्डित मान लें, दिन को काली रात।
सभ्य न ऐसी बातें मानें, मूर्ख जंगली साँची जानें।

प्रभु का नियम कबहुँ नहीं टूटे, विरथा बकें मूढ़ जन झूटे।
नियम यदि प्रभु निज पलटावे, तो निर्भ्रम कैसे कहलावे।
कौन उसे पुन ईश्वर मानें, यदि भविष्य की बात न जाने।
गर्भवती जो होय कुमारी, कह देगी हौं प्रभु की प्यारी।
ईश्वर ने यह गर्भ धराया, मेरे निकट पुरुष नहीं आया।
दर्शन दिया दूत ने सपने, गर्भ स्थापक हैं प्रभु अपने।
एहि विधि कुन्ती सूर्य कहानी, महाभारत में झूठ बखानी।
अंध अनयन गाँठ के पक्के, फँस जाते अरु खाते धक्के।
किसी पुरुष का होगा आगम, मरियम के संग भया समागम
लज्जा से यह बात उड़ानी, ईश्वर ने मरियम गर्भानी।

(६१) तब आत्मा यीशु को जंगल में ले गया कि शयतान से उसकी परीक्षा की जाय कि वह चालीस दिन और चालीस रात उपवास करके पीछे भूखा हुआ तब परीक्षा करने हारे ने कहा कि जो तू ईश्वर का पुत्र है तो कह दे यह पत्थर रोटियाँ बन जावें। ई॰ पर्व ४ आ॰ १, २ ,३।।

समीक्षक

ईसाइयों का प्रभु जगदीश्वर, नहीं सर्वज्ञ रहा था ईश्वर।
जो होता सब जानन हारा, क्यों लेता शयतान सहारा।
शयताँ द्वारा क्यों परखाता, अपने आप जान सब पाता।
चालीस रात दिवस तक भाई, रहे बुभुक्षित कोई इसाई।
ज्वाल भूख की उसे सतावे, थोड़े दिन में वह मर जावे।

करामात कुछ भी नहीं थी, ईसा के पास।
कर पत्थर क़ी रोटियाँ, क्यों नहीं पूजी आस।।
क्यों रहता ईसा पुन भूखा, क्यों होता पुन काँटा सूखा।
यह सिद्धान्त सदा सच जानो, झूठ साँच मति से पहिचानो।
पत्थर प्रभु ने जिसे रचाया, अथवा लक्कड़ रूप बनाया।
वह बन सकता कंबहुँ न रोटी, यह इक सीधी युक्ति मोटी।
अपना नियम न प्रभु उलटावे, वह अचूक सर्वज्ञ कहावे।

(६२) उसने उनसे कहा कि मेरे पीछे आओ मैं तुम को मनुष्य के मछुए बनाऊँगा वे तुरन्त जालों को छोड़ के उसके पीछे हो लिये।। इं॰ पर्व ४ आ॰ १६, २०, २१।।

समीक्षक

इसी एक अपराध की, ईसा पाय सजाय।
अल्पायु में मर गया, दिया उसे लटकाय।।

कीजे माता पिता की सेवा, सेवा दीरघ आयु देवा।
दश आज्ञाओं में यह ऊँची, यही धर्म की रास समूची।
इसको ईसा ने ठुकराया, तभी तो जीवन थोड़ा पाया।
ईसा साधे निज परयोजन, नर मत्स्यों का करता भोजन।
जेहि विधि पकड़ें व्याधें मच्छी, यही विधि उसने जानी अच्छी।
ईसा था जब ऐसा भाई, क्यों नहीं फाँसे विशप ईसाई।
बड़े बड़े जो मत्स्य फँसावें, वे व्याधे जिमि संपति पावें।
तेहिविधि जो बहु नरन फँसावें, वह जग में धन कीरति पावे
एहि विधि जो नर अनपढ़ भोरे, उन पर विशप डालते डोरे।
वे नर वेद शास्त्र नहीं जानें, जाल न इनका वे पहिचानें

भ्रम में आकर वे फँस जाते, उनसे माता पिता छुड़ाते।
ताँते जागहु ज़ागहु आरज, तोड़ो इनका जाल अनारज।
स्वयं बचो अरु जगत बचाएँ, यह नर मत्स्य किरानी खाएँ।

(६३) तब यीशु सारे गालील देश में उनकी सभाओं में उपदेश करता हुआ फिरा किया। सब रोगियों जो नाना प्रकार के रोगों और पीड़ाओं से दुखी थे और भूत ग्रस्तों और मृगी वाले और अर्धांगियों को उसके पास लाये और उसने चंगा किया।। ई॰ मती॰ प॰ ४ आ॰ २३, २४, २५।

समीक्षक

भारत के भी कोने कोने, भरे पड़े हैं जादू टोने।
कोऊ छुरि से भूत निकारें, मोर पंख से कोऊ निवारें।
कोऊ देत चुटकी भर राखी, अरु बोलें गुरु गोरख साखी।
यदि यह सब कुछ साँचा जानो, बाइबल लेख सत्य तब मानो
जो यह झूठे जानों सारे, तो ईसा भी झूठ तुम्हारे।

मूढ़ जनों में जाल बिछायें, करामात उनको दिखलाएँ।
जो ईसा को साँचा जाने, पोप पुजारिहुँ सांचा मानें।
दोनों कहते एक समाना, दोनों में नहीं भेद पछाना।

(६४) धन्य वे जो मन में दीन हैं क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है। क्योंकि मैं तुम से सच कहता हूँ कि जब लों आकाश और पृथिवी टल न जाये तब लों व्यवस्था से एक मात्रा अथवा एक बिन्दु बिना पूरा हुए नहीं टलेगा इसलिये इन अति छोटी आज्ञाओं में से एक को लोप करे और लोगों को वैसे ही सिखावे वह स्वर्ग के राज्य में सब से छोटा कहावेगा।। इं॰ मती प॰ ५ आ॰ ३, ४,१८,१६।।

समीक्षक

स्वर्ग माँहि जो जाय, वही वहाँ राजा बने,
कौन सिंहासन पाय, अगनित नृप वहाँ बनेंगे।
एक देश में एकहु राजा, सिंहासन पर होय बिराजा।
कौन प्रजा यदि सभी नरेशा, युद्ध रक्त में डूबे देशा।
टूट जायगी राज्य व्यवस्था, ठौर ठौर संग्राम अवस्था।

दो॰—दीन कहो कंगाल को, अथवा निर अभिमान।
उचित न दोनों अर्थ यह, नहीं इनमें कल्यान।।
जो नर मन में दीन है, उनको नहीं सन्तोषं ताँते
उचित न अर्थ यह, इनमें आवे दोष।।

टले गगन अरु पृथिवी सारी, रहे व्यवस्था अवस तुम्हारी।
मानुषकृत यह अनित व्यवस्था, इक समान नहीं रहे अवस्था
नहीं सर्वज्ञ प्रभु की बानी, डरते हैं केवल अज्ञानी।
कितन बड़ा प्रलोभन दीना, दुनिया को कैसे वश कीना।

(६५) हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे। अपने लिये पृथिवी पर धन का संचय मत करो।
ई॰ म॰ प॰ ६ आ॰११, १६।।

समीक्षक

ईसा का जिस देश में, जन्म हुआ जिस काल।
भूखे नंगे लोग थे, रोटी के कंगाल।।

तभी तो प्रभु से माँगे रोटी, दशा रही उनकी अस खोटी।
धन संचय यदि नहीं भलाई, क्यों धन संचय करहिं इसाई
धन संपति निज तुर्त लुटावें, ईसा के सिर फूल चढ़ावे।
माने वचन कवन ईसा के, अब तो भरे खजाने ताके।
दीय होंय अब करें गुजारा, ईसा जो कह रहा तुम्हारा।

(६६) हर एक जो मुझ से है प्रभु कहता है स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा।। इं॰ म॰प॰७आ॰२१।।

समीक्षक

सुनिये विशप साहब क्रिस्तानी, यह तुम्हार ईसा की बानी।
कबहुँ न ईसा को प्रभु कहिये, कह कर प्रभु पाप मत लहिये

(६७) उस दिन में बहुतेते मुझ से कहेंगे तब मैं उनसे खौल कर कहूँगा मैंने तुमको कभी नहीं जाना है कुकर्म करने हारे मुझ से दूर होओ।। इंजील मती प॰ ७ आयत २२, २३।।

समीक्षक

कुछ जंगल के नरों पर, बैठाया विश्वास।
न्यायासन जनु स्वर्ग का, है ईसा के पास।।

(६८) और देखों एक कोढ़ी ने आ उसको प्रणाम कर कहा हे प्रभु। जो आप चाहें तो मुझे शुद्ध कर सकते हैं। यीशु ने हाथ बढ़ा उसे छू कर कहा मैं तो चाहता हूं शुद्ध हो जा और उसका कोढ़ तुरन्त शुद्ध हो गया। इ॰ मती प॰ ८। आ॰ २, ३।।

समीक्षक

भोले लोगों के लिये, भला बनाया जाल।
करामात दिखलाय कर, लूटे उनका माल।।

सृष्टि क्रम से उल्टी झूठी, विद्या के विपरीत अनूठी।
जो यह मानें सत्य ईसाई, अरु ईसा की करें बड़ाई।
जो पुन लिखी पुरानन मांही, उनको क्यों सच मानहु नाहीं।
कश्यप शुक्र और धन्वन्तर, रहे जिवाते मृतक निरन्तर।
मृत दैत्यों का सैन्य जिवाया, चमत्कार अद्भुत दिखलाया।

पुत्र बृहस्पति का कच मारा, ताको खण्ड खण्ड करडारा।
वा का तन मच्छों ने खाया, शुक्र गुरु ने फेर जिलाया।
कच को मारा पुनः दोबारा, वा को किया शुक्र आहारा।
उदर मांहि तेहि जीवन दीना, तुर्त पेट से बाहर कीना।
शुक्र मरा कच उसे जिवावे, चमत्कार अचरज दरसावे।
तक्षक ने इक नर को काटा, वृक्ष सहित नर हो गया आटा।
कश्यप उनको फेर जिवावे, नर समेत वह वृक्ष बचावे।
धन्वन्तरि को कौन न जाने, उनसे बढ़ कर कौन सयाने।
लाखों मुर्दे मनुष जिवाये, सब कुष्ठिन के कुष्ठ गँवाये।
अंधे बहरे लाखों भाई, चक्षु कर्ण दो बारा पाई।
जो अवरन की झूंठी मानें, जिन झूंठी को सांची जाने।
महा हठी ऐसे जन धूरत, झूठे दम्भ मूढ़ की मूरत।

(६६) तब भूत ग्रस्त मनुष्य कब्रस्तान में से निकल उससे आ मिले जो यहाँ लों अति प्रचंड थे कि उस मार्ग से कोई नहीं जा सकता था और देखो उन्होंने चिल्ला कर कहा हे यीशु! ईश्वर के पुत्र आपको हमसे क्या काम क्या आप समय के आगे हमें पीड़ा देने को यहाँ आए हैं सो भूतों ने उससे विनती कर कहा जो आप हमकों निकालते हैं तो सूअरों के झूण्ड में बैठने दीजिये उसने उनसे कहा जाओ और वे निकल के सूअरों के झूण्ड में पैंठे और देखो सूअरों का सारा झूण्ड कड़ाहें पर से समुद्र में दौड़ गया और पानी में डूब मरा।

इं॰म॰प॰८ आ॰ २८, २६, ३०,३१, ३२,३३।।

समीक्षक

मुर्दा निकले कब्र से, बोले, बाहर आय।
निपट असंभव बात यह मूरख के मन भाय।।

सुअरों की हत्या करवाई, दयावान हैं बड़े इसाई।
शूकर वालों की कर हानी, ईसा ने कीनी मनमानी।
उन लोगों का माल डुबाया, ईसा ने यह पाप कमाया।
ईसा पावन यदि तुम्हारा, क्षमा पाप के करने वारा।
क्यों नहीं वह सब भूत उबारे, जो डूबे जा जलधि मझारे।

भर दी उनकी क्यों नहीं हानि, जिनके डूबे सूकर पानी।
क्या पढ़ लिख कर आज इसाई अस विधि मानत लाज न आई।

(७०) देखों लोग अर्धांगी को जो खटोले पर पड़ा था उस पास लाये और यीशु ने उनका विश्वास देख के उस अर्धांगी से कहा हे पुत्र! ढाढस कर तेरे पाप क्षमा किय गये हैं मैं धर्मियों को नहीं परन्तु पापियों को पश्चाताप के लिये बुलाने आया हूँ।। इं॰ म॰ प॰ ६ आ॰ २, १३।।

सो॰—क्षमा न होते पाप, जो करता सोई भरे।
फल नहीं भोगे बाप, किये पुत्र के कर्म का।

सुलफा भंग मद्य जो सेवे, उसका नशा वही नर लेवे।
अन्य पुरुष को नशा न आए, मरे वही जो विष को खाए।
मेरा पाप अन्य को लागे, एहि विधि मानहि मूढ़ अभागे।
यही न्याय ईश्वर का भाई, अब लौं समझ न सके ईसाई।
कर कोई फल पाये कोई, जो ऐसा सृष्टि मँह होई।
न्यायाधीश स्वयं वा लेवे, अन्यायी को दण्ड न देवे।
फल से होवे वंचित कर्ता, औरहि होवे फल का भर्ता।
तो ईश्वर होवे अन्याई, भूल गये यह बात इसाई।
केवल धर्म हेतु कल्याना, ईसा आदिक पुरुष न आना।
धर्मी तो नित धर्म कमावें, ईंसा आवे या नहीं आवे।
किये पाप भी छूटें नाहीं, नहीं समर्थ ईसा के माही।

(७१) यीशु ने अपने १२ शिष्यों को अपने पास बुला के उन्हें अशुद्ध भूतों पर अधिकार दिया कि उन्हें निकालें और हर एक रोग और हर व्याधि को चंगा करे। बोलने हारे तो तुम नहीं हो परन्तु तुम्हारे पिता का आत्मा तुम में बोलता है। मत समझो कि मैं पृथिवी पर मिलाप करवाने को, नहीं परन्तु खड्ग चलवाने को आया हूँ मैं मनुष्य को उसके पिता से और बेटी को उसकी माँ से और पतोहू को उसकी सास से अलग करने आया हूँ। मनुष्य के घर ही के लोग उसके बैरी होंगे।। इ॰म॰प॰१० आ॰ १३, १४, ३५, ३६।।

इन शिष्यन में एंक ने, दिया क्राइस्ट पकराय।
बाकी के सगरे भगे, लिये भेस बदलाय।

कहाँ भूतों का आना जाना, मानहि नहीं इसको विद्वाना।
रोग न मिटते बिना दवाई, कब पायेंगे बुद्धि इसाई।
प्रभु ही उनमें बोलन हारा, क्या करता पुन जीव बेचारा। जो
प्रभु के सब करता धरता, तो प्रभु ही होगा फल भरता।
ईसा फूट कराने आया, घर घर में लोहा बजवाया। आज
तलक जो होय लड़ाई, इसके जिम्मेदार इसाई।
नीच कर्म है फूट कराना, पर यह ईसा के मन भाना।
ईसाइयों का यह गुरमन्तर, यही चलावे शासन तन्तर।
पिता पुत्र का वैर बढ़ाए, पुत्रों को माँ से बिलगाए। ईसाइयों
के एहि विधि कर्मा, फूट कराना समझें धर्मा।

(७२) तब यीशु ने उनसे कहा तुम्हारे पास कितनी रोटियाँ हैं, उन्होंने कहा सात और छोटी मछलियाँ तब उसने लोगों को भूमि पर बैठने की आज्ञा दी तब उसने उन सात रोटियों को और मछलियों को धन्य मान कर तोड़ा और अपने शिष्यों को दिया और शिष्यों ने लोगों को दिया सो सब खा के तृप्त हुए और जो टुकड़े बच गये उनके सात टुकड़े भर उठाये जिन्होंने खाया सो स्त्रियों और बालकों को छोड़ सहस्र पुरुष थे।।

इ॰म॰प॰ १५ आ॰ ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३६।।

समीक्षक

झूठे सिद्ध आज कल जैसे, ईसा भी जानहु तुम तैसे।
इती रोटियाँ कहाँ ते आईं, ईसा के ढिग पकी पकाई।
भूखा रहा भटका ईसा, मारा मारा अनिक बरीसा।
गूलर के फल क्यों थे खाये, कहाँ थे फुलके पके पकाये।
लेकर मिट्टी पत्थर पानी, कर लेता रोटी घृतसानी।
चाहे मोहन भोग बनाता, कहीं बैठ कर मौज उड़ाता।
केते ऐसे साधु वैरागी, नंग धड़गें तपते आगी।
सिद्ध बने बैठे हैं भारे, भोले जायें ठगे बेचारे।
ईसा की यह जगत ठगाई। अब लौं समझ न सके इसाई।

(७३) और तब वह हर एक मनुष्य को उसके कार्य के अनुसार फल देगा।। इं॰म॰ प॰ १६ आ॰ २७।।

मिलता है दुख सुख यदि, कर्मों के अनुसार।
पाप क्षमा उपदेश पुन, कीना व्यर्थ असार।।

यह साँचा अथवा वह साँचा, दोनों माँहि कौन सा काँचा।
क्षमा जोग यदि पावे माफी, यह भी युक्ति नहीं है काफी।
जैसे कर्म होय फल तैसा, न्याय धर्म जग मानत ऐसा।

(७४) हे अविश्वासी और हठीले लोगो! मैं तुम से सत्य कहता हूँ यदि तुम को राई के एक दाने के तुल्य विश्वास हो कि तुम इस पहाड़ से जा कहो कि यहाँ से वहाँ चला जाय वह चला जायगा और कोई काम तुम से असाध्य नहीं होगा। इं॰म॰प॰१७ आ॰ १७, ३०।।

समीक्षक

कहें इसाई लोग, आओ हमारे पन्थ।
छमहिं पाप भय रोग, सब बातें झूठी मर्यी।।

ईसा में यदि होती शक्ति, तो चेलों में होती भक्ति।
उनका तो होता विश्वासा, निज गुरु पर रखते भँरवासा।
उनको तो कर सकता पावन, वे तो सगरे रहे अपावन।
जीवन मँह कछु कर नहीं पाया, नहीं विश्वास किसी को आया
मरे बाद करिहै कल्याना, यह क्यों कर सत जाये माना।
संग संग घूमे जो चेले, ज्यों बकरी के पीछे छेले।
उनहीं ने इंजील बनाई, श्रद्धा रखें न रत्ती राई।
तो औरों को ईसा तारे, समझ परे नहीं बात हमारे।
स्वयं ग्रंथ के लिखने वारे, अविश्वास युत थे यदि सारे।
नीच अधर्मी पतित अपावन, गुरू विरोधमय जिनका हो मन।
उस पर करिहें जो विश्वासा, उनकी पूरे कबहुँ न आसा।
कबहूँ न हो उनका कल्याना, बाइबल ग्रन्थ नहीं परमाना।
जेते दुनियाँ माँहि इसाई, वे विश्वास न रखते राई।
राई भर भी हो विश्वासा, मन में हो श्रद्धा का वासा।

तो गिरी को पथ से हटवाएँ, राई भर विश्वास दिखाएँ।
जो नहीं सके हटाय इसाई, तो जानो श्रद्धा नहीं राई।
गिरी घमण्ड का वाचक मानो, तौ भी इसे सत्य मत जानो।
शेष वचन भी मानहुँ रूपक, उपमा वाचक अर्थ निरूपक
अलस पुरूष को मुर्दा कहिये, अज्ञानी अँधा नर गहिये।
कोढ़ि कहिये विषय विलासी, भूत ग्रस्त है भ्रान्त निरासी।
अर्थभेद यदि इसविध मानहुँ, तौभी इसको उचित न जानहु।
यदि ईसाने दोष निवारे, तो क्यों नहीं निज शिष्य सुधारे
अन होनी सब कहीं कहानी, ताँते ईसा था अज्ञानी

जो रखता ईसा मसी, कुछ थोड़ा सा ज्ञान।
तो कहता क्यों इस तरह, जांगल पुरुष समान।।
जिस जंगल में पेड़ न कोई, रेंडी तरु मुखिया वहाँ होई।
उन मूढ़ों में ईसा लायक, उचित रहा वह उनका नायक।
आज कल्ह ईसा बेचारा, क्या करिहैं कल्याण तुम्हारा।

(७५) मैं तुम्हें सच कहता हूँ जो तुम मन न फिराओ और बालकों के समान न हो जाओ तो स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न करने पाओगे।। इं॰म॰प॰१८ आ॰३।।

समीक्षक

स्वर्ग मिले मन के फिरे, यदि यह सत्य उपाय।
तो ईसा किमि अन्य के, कीने पाप मिटाय।।

सब को ईसा बाल बनावे, स्वार्थ सिद्धि का ढोंग रचावे।
बालहिं बड़ा सहज फुसलाना, बुद्धिमान को कठिन फँसाना
बाल बुद्धि हैं सकल इसाई, शंका तिनके हृदय समाई।
युक्ति बुद्धि से सूने बैना, मानहिं मूढ़ मूँद कर नैना।
बालक सम विद्या से हीना, स्वयं रहा ईसा मति छीना।
सब को अपने तुल्य बनावे, उसको कोई विद्वान न भावे।

(७६) मैं तुम से सच कहता हूँ धनवानों को स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना कठिन होगा फिर भी मैं तुम से कहता हूँ कि ईश्वर के राज्य में धनवान के प्रवेश करने से ऊँट का सूई के नाके में से जाना सहज हैं।।

इं॰म॰प॰१६ आ॰२३, २४।।

समीक्षक

ईसा था कंगाल, धनिक नहीं सत्कारते।
मन में उठे उबाल, श्रीमन्तों को कोसता।।

सगरे धनी नहीं पापातम, सगरे निर्धन नहीं धर्मातम। बुरे भले दोनों में पहिये, सगरे धनिक न पापी कहिये। भला सवही जो करे भलाई, बुरा वही जो करे बुराई। प्रभु का राज्य रहा किस देशे, स्वर्ग रहा कहाँ कौन प्रदेशे। एक ठौर यदि प्रभु विराजे, क्या सर्वत्र नहीं वह छाजे। जो इक देशी सो प्रभु नाहीं, ईश्वर व्यापक अणु अणु माहीं। वृथा कहा पुन आना जाना उसका है सब ठौर टिकाना। कहो धनाढ्य इसाई जेते, नर्क माँहि जाएँगे तेते। अरु कंगाल स्वर्ग मँह जाएँ, क्या इंजील कहे बतलाएँ। करते ईसा तनिक विचारा, पाप पुण्य के धनी सहारा। पुण्य कर्म में संपति देवें, क्यों नहीं सद्गति कीरति लेवें।

(७७) यीशु ने उनसे कहा मैं तुम से सच कहता हूँ कि नई सृष्टि में जब मनुष्य का पुत्र अपने ऐश्वर्य के सिंहासन पर बैठेगा तब तुम भी जो मेरे पीछे हो लिये हो बारह सिंहासनों पर बैठ के इस्रायेल के १२ फूलों का न्याय करोगे जिस किसी ने मेरे नाम के लिये घरों व भाइयों व बहनों व पिता माता व स्त्री व लड़कों व भूमि को त्यागा है सो सौ गुणा पावेगा और अनन्त जीवन का अधिकारी होगा।। इं॰म॰प॰ १६ आ॰ २८, २६।।

समीक्षक

टूट सके नहीं जाल, यह ईसा की भावना।
शतरंजी की चाल, भोले नर नहीं जानते।

जीवित रहूँ, चहे मर जाऊँ, जाल माँहि मैं इन्हें फँसाऊँ।
भोले जन्तु निकल न पाएँ, ऐसा ईसा जाल बिछाएँ।
जिसने लेकर तीस रुपैय्या, दी डुबाया ईसा की नैय्या।
अपना पैगम्बर पकराया, जिसको कुछ विश्वास न आया।
वाको भी मिले है सिंहासन, वह भी वहाँ करेगा शासन।
इस्रयेल के कुल को न्याया, वहाँ न जायेगा दर्साया।
उनके सगरे पाप छमाएँ, इसराईली दण्ड न पाए।
सब के सब वे भये इसाई, माँ जाये वे मानहुँ भाई।
अन्य कुलों का न्याय करेंगे, कोऊ डूबेंगे कोऊ तंरगे।
आज कल्ह भी लोग इसाई, ईसाइयों के होंय सहायी।
काले को कोई गोरा मारे, पाय कचहरी में छुटकारे।
मौज उड़ए गोरी चमड़ी, काले को इक मिले न दमड़ी।
स्वर्ग इसाइयों का भी ऐसा, न्याय लखें भारत में जैसा।

एक सृष्टि के आदि में, मरा अन्त में एक।
इक आशा में सो रहा, कब हो न्याय विवेक।।

न्याय तुरन्त एक ने पाया, इक को समय अनन्त लेटाया।
इसमें दोष बहुत है भाई, इस पर करें विचार इसाई।
नरक माँहि जो मानुष जाए, काल अनन्त वहाँ दुख पाए।
स्वर्ग माँहि जिनका हो वासा, तिनका नित्य वहाँ आवासा।
यह अन्याय नहीं कहीं देखा, क्या ईश्वर जाने नहीं लेखा।
थोड़ा करे तो थोड़ा पाए, अधिक करे तो अधिक भोगाए।
जीवों के नहीं कर्म समाना, पाप पुण्य होते विधि नाना।
इक समान फल क्यों सब पाते, तारतम्य प्रभु को नहीं आते।
स्वर्ग नर्क चाहिये तब नाना, अलग अलग हो ठौर ठिकाना।
इसकी कहीं व्यवस्था नाहीं, ईसाइयों के पुस्तक माहीं।
ईश्वर कृत यह ग्रंथ न ताँते सत का निर्णय होय जहाँ ते।

ईसा भी नहीं प्रभु का बैटा बिरथा प्रभु के संग लपेटा।

कभी किसी के नहीं लखे, सौ जननी सौ बाप।
यह क्या लिखा इंजील में, महाँ दोष बड़ पाप।।

एक पिता सब के इक माता, ऐसा ही दृष्टि में आता।
नार बहत्तर का जो पाना, मुसलमान ने जैसा माना।
लिया कदाचित भाव यहाँ से, विषय भोग लिप्सा में फाँसें

(७८) भोर को जब बहम घर को फिर जाता था तब उसको भूख लगी और मार्ग में एक गूलर का वृक्ष देख के वह उसके पास आया परन्तु उसमें और कुछ न पाया केवल पत्ते ओर उसको कहा तुझ में फिर कभी फल न लगेंगे इस पर गूलर का पेड़ तुरन्त सूख गया।। इं॰ प॰प॰ २१ आ॰ १८, १६।।

समीक्षक– क्रोधादिक दोषन रहित, शान्त क्षमा युक्त धीर,
ईसा को कहते सभी ईसाई निज पीर।।

यहाँ पर उसे दिखाया क्रोधी, ऋतु का ज्ञान न रखे अबोधी।
जंगलियों सा रखे स्वभावा, हृदय शून्य निष्ठुर बर्तावा।
जड़ तरु का अपराध न कोई, गई बुद्धि ईसा की खोई।
उसने शाप दिया वह सूखा, नहीं शाप ते सूखा रूखा।
सिंची कोई दबाई होगी, जिससे सुखी वह तरु होगी।

(७६) उन दिनों क्लेश के पीछे तुरन्त सूर्य अँधियारा हो जायेगा। और चाँद अपनी ज्योति देगा तारे आकाश से गिर पड़ेगे और आकाश की सेना डिग जायेगी। इं॰ म॰ प॰ २४ आ॰ २६।।

समीक्षक–गिर जायें तारे सभी, कैसे लीना जान
क्या विद्या उसने पढ़ी, कैसी सीखा ज्ञान।।

कहिये कौन गगन की सेना, इन आँखों से देख परे ना।
डिग जायेगी कहो कहाँ पर,बैठी छिपी असमाँ पर।
जो ईसा कुछ विद्या रखता, अस विधि अंट संट क्यों
भखता। भूगोलक है सारे तारे, नहीं कभी यह डिगने वारे।
त्रक्षु का बैटा था ईसा, व्योत कतर में चातर बीसा। लहर
उठी उसके मन अन्दर, जंगलियों में बनूँ पैगम्बर।
अस विधि बातें करनें लागा, जलधि पार कर चाहे कागा।

बहुत बुरी कछु अच्छी बातें, कहकर लगे चलाने घातें।
भये मूढ़ कछु अनुचर वाके, ईसा सुत भये परम पिता के।
आज कल्ह यूरूप जिमि उन्नत, यदि होता तिस काल समुन्नत।
तब ईसा की एक न चलती, विद्वानों में दाल न गलती। अब
कुछ पढ़े लिखे हैं भाई, रीति रस्म में फँसे इसाई।
हठ कर झूठा मत नहीं छोड़े, निकसें बहिर न पिंजरा तोड़ें।
यही न्यूनता इनमें बाकी, ताँते बुद्धि न विकसे याकी।
जो वेद मार्ग में आएँ, दुख से छूटें सुख को पाएँ।

(८०) आकाश और पृथिवी टल जायेंगे परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी।। इं॰म॰प॰आ॰ २५।।

समीक्षक– टल कर जायेगा कहाँ, अति मूक्षम असमान।
कौन नैन टलता लखे, है ईसा अंजान।।

(८१) तब वह उनसे जो बाई ओर हैं कहेगा हे स्रापित लोगो! मेरे पास से उस अनन्त आग में जाओ जो शैतान और उसके दूतों के लिये तैयार की गई है।। इं॰म॰प॰ २५ आ॰ ४१।।

समीक्षक– मिले स्वर्ग निज जनां को, पड़े भाढ़ में और।
केहि विधि हैं पखपात के, ईसाइयों के तौर।।

नहीं रहेगा जब आकासा, कहाँ रहे पुन नर्कावासा। कहाँ
अगन की भट्टी होगी, कहाँ जले नरकों के भोगी।
जो नहीं प्रभु शयतान बनाता, दूत नहीं उसके निर्माता। तो
क्यो पड़ता नर्क बनाना, क्यों पड़ता यह कष्ट उठाना।
नहीं भयभीत भया शयताना, पुन कैसे ईश्वर बलवाना।
जन्मत पकड़ सका नहीं वाको, अब पुन क्योंकर दंडहि ताको।
उसका दूत उसी से बागी, उसने प्रभु की भक्ति त्यागी। यह
शयतान बड़ा बलशाली, रुलवाया ईसा दिन चाली।
ईश्वर का सुत यदि था ईसा, दुखी रहा क्यों दिवस चालीसां
ताँते प्रभु सुत ईसा नाहीं, सत्य न बाइबल पुस्तक माहीं।

(८२) तब बारह शिष्यों में से एक यहूदाह इसकरियोती नाम का एक शिष्य प्रधान याजकों के पास गया

और कहा जो मैं यीशु को आपके हाथ पकड़वाऊँ तो आप लोग मुझे क्या देंगे उन्होंने उसे ३० रूपये देने को ठहराया।। इं॰ म॰प॰ २६ आ॰ १४, १५।।

समीक्षक— करामात सब खुल गई, खुला सकल यहाँ पोल।
प्रभु सुत हूँ कहता रहा, निकला शंख ढपोल।।

निकल गई सगरी प्रभुताई, अपनी कीनी आप बड़ाई।
चेला वाका रहा प्रधाना, गुरु विरूद्ध जा चुगली खाना।
उसको भी कर सका न पावन, उसका भी मन रहा अपावन।
क्या अवरन को निर्मल करहै, जो निज चेले हाथों मरिहै।
ईसा पर जिनको विश्वासा, अंध भक्त राखें भरवासा।
उनका केहि विधि हो कल्याना, चेला भी जिसका नहीं माना।
सदा संग वर्ती था चेला, हुआ न पावन शिष्य अकेला।
मरने के बाद कहा किमि तारे, पछतायेंगे भक्त बेचारे।

(८३) जब वे खाते थे तब यीशु ने रोटी लेके धन्यवाद किया और उसे तोड़ के शिष्यों को दिया और कहा लेओ खाओ यह मेरा देह है और उसने कटोरा लेके धन्यवाद माना और उनको देके कहा तुम इसको पीयो क्योंकि यह मेरा लोहू अर्थात् नये नियम का है। इं॰प॰ २६, २७, २८।।

समीक्षक

अपना मांस कहे जनु रोटी, कहे खाओ यह मेरी बोटी।
पेय द्रव्य रक्त बतावे, अपने शिष्यों को पिलवावे।
यही भावना रखें इसाई, गुरु का रक्त पियें मन भाई।
जब यह खाने लगते रोटी, उसको समझें गुरु की बोटी।
गुरु का लहू करें जल पाना, ऐसे जांगल मूढ़ अजाना।
गुरु का रक्त मांस जो तोड़ें, वे औरों का कैसे छोड़ें।

(८४) और यह पिता को और जब दोके दोनों पुत्रों को संग ले गया और शोक करने और बहुत उदास होने लगा तब उसने उनसे कहा कि मेरा मन यहाँ लो अति उदास है कि मैं मरने पर हूँ और थोड़ा आगे बढ़ के वह मुँह के बल गिरा और प्रार्थना की हे मेरे पिता जो हो सके तो यह कटोरा मेरे पास से टल जाय।।

इं॰म॰प॰ ३६ आ॰३७, ३६।।

समीक्षक– प्रभु का सुत होता यदि अरु होता विद्वान।
क्यों करता दुश्चेष्टा, एहि विधि मूढ़ समान।।

जो वह था प्रभु का सुत प्यारा, तीन काल का जानन हारा।
क्यों व्याकुल रोता चिल्लाता, करामात कुछ कर दिखलाता।
झूठ झूठ परपंच रचाया, निज को प्रभु का पुत्र बताया।
अथवा शिष्य रहे जो तिनके, यह परपंच रचे थे जिनके।
ईसा होगा सीधा साँचा, भोला भाला मति का काँचा।
नहीं विद्वान नहीं था योगी, नहीं निरोग करता था रोगी।

(८५) वह बोलता ही था कि देखो यहूदाह जो १२ शिष्यों में से एक था आ पहुँचा और लोगों के प्रधान याजकों और प्राचीनों की ओर से बहुत लोग खंड और लाठियाँ लिये उसके संग यीशु के पकड़ने हारे ने उन्हें यह पता दिया था जिसको मैं चूमूँ उसको पकड़ो और वह तुरन्त यीशु पास आ बोला हे गुरु प्रणाम और उसको चूमा। तब उन्होंने यीशु पर हाथ डाल के उसे पकड़ा तब शिष्य उसे छोड़ कर भागे। अन्त में दो झूठे साक्षी आके बोले इसने कहा कि मैं ईश्वर का मन्दिर ढा सकता हूँ, उसे तीन दिन में फिर बना सकता हूँ। तब महायाजक खड़ा हो यीशु से कहा क्या तू कुछ उत्तर नहीं देता यह लोग तेरे विरूद्ध क्या साक्षी देते हैं। परन्तु यीशु चुप रहा इस पर महायाजक ने उससे कहा मैं तुझे जीवते ईश्वर की क्रिया देता हूँ हम से कह तू ईश्वर का पुत्र खीष्ट है कि नहीं। यीशु उससे बोला तू तो कह चुका तब महायाजक ने अपने वस्त्र फाड़ के कहा यह ईश्वर की निन्दा कर चुका है अब हमें साक्षियों का और क्या प्रयोजन देखो तुमने अभी उसके मुख से ईश्वर की निन्दा सुनी है। अब क्या विचार करते हो तब उन्होंने उत्तर दिया वह बध के योग्य है। तब उन्होंने उसके मुँह पर थूंका और उसे घूँसे मारे औरों ने थपेड़े मार के कहा हे यीशु हम से भविष्यत वाणी बोल कि किसने तुझे मारा। षितरस बाहर आँगन में बैठा था और एक दासी उसके पास आके बोली तू भी यीशु गालीली के संग था उसने सभों के सामने मुकर कर कहा मैं नहीं जानता तू क्या कहती है। जब वह बाहर डेवढ़ी में गया तो दूसरी दासी ने उसे देख के जो लोग वहाँ थे उनसे कहा यह भी यीशु नासरी के संग था। उसने क्रिया खाके फिर मुकरा कि मैं उस मनुष्य को नहीं जानता हूं तब वह धिक्कार देने और क्रिया खाने लगा कि मैं उस मनुष्य को नहीं जानता हूँ।। इं॰म७ प॰ २६ आ॰४७, ४८, ५०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६६, ७०, ७१, ७२, ७४।।

समीक्षक– रखे न इतनी शक्ति भी, लेता शिष्य सुधार।
कुछ पैसों के लोभ से, दिया शिष्य ने मार।।

चेले ने उसको पकड़ाया, केवल तीस रुपैय्या पाया।
चेला भया न दृढ़ विश्वासी, ईसा ने क्या शक्ति प्रकासी।
चेले तुर्त मुकर गये सारे, गुरु से भाग गये हो न्यारे।
केहि विधि झूठी शपथ उठाई, प्रभु सुत की कहाँ गई प्रभुताई।
जिमि तौरेत में शक्ति बखानी, ईसा की इक लिखी कहानी।
लूत भवन में पहुने आये, लोग मारने उसको धाये।
प्रभु के दूत वहाँ दो ठहरे, दोनों मित्र लूत के गहरे।
किया उन्होंने सब को अंधा, यही रहा दोनों का धंधा।
यद्यपि यह भी बात असंभव, ऐसी बात कभी नहीं संभव।
ईसा में इतनी भी नाहीं, जितनी शक्ति लूत के माहीं।
कितना देते आज बढ़ावा, वर्णहि ईसा का परभावा।
यदि वह स्वयं जूझ कर मरता, जिन बलिदान यदि वह करता।
तौ भी जग करता सन्माना, महा कठिन आतम बलिदाना।
विद्या बिन वरु इतनी बुद्धि, क्योंकर होवे आतम शुद्धि।

(८६) मैं अभी अपने पिता से नहीं कहता हूँ और वह मेरे पास स्वर्ग के दूतों की बारह सेनाओं से अधिक पहुँचा न देगा।। इं॰म॰प॰ २६ आ॰५३।।

समीक्षक

अपना अपने पिता का, ले ले नाम डराय।
याजक वरु डरते नहीं, अब ईसा पछताय।।

साक्षी देत रहे जब साखी, तब ईसा ने चुप क्यों राखी।
मौन रहा नहीं करी भलाई, समुचित था कहता सच्चाई।
अति घमण्ड की बातें कहता, जब पूछें तो चुप हो रहता।
झूठ जिन्होंने दोष अरोपा, उन पर प्रभु का बर्से कोपा।
निर्दोषों का बध करवाना, उनसे भी रुठें भगवाना।

एहि विधि दोष नहीं ईसा का, दण्ड दिया ईसा को जाका।
वे भी तो थे जंगलवासी, घोर असभ्य मूढ़ता रासी।
वे मूरख क्या न्याय पछानें, वे क्या न्याय व्यवस्था जानें।
ईसा ने परपंच फैलाया, अपने को प्रभु पुत्र बताया।
प्राण दण्ड वरु उचित न बाको, दें दे कर दुख मारा ताको।
करी उन्होंने बहुत बुराई, दिया क्रूस पर उसे चढ़ाई।

(८७) यीशु अध्यक्ष के आगे खड़ा हुआ और अध्यक्ष ने उससे पूछा क्या तू यहूदियों का राजा है, यीशु ने उससे कहा आप ही तो कहते हैं। जब प्रधान याजक और प्राचीन लोग उस पर दोष लगाते थे तब उसने कुछ उत्तर नहीं दिया तब पिलात ने उससे कहा क्या तू नहीं सुनता कि वे लोग तेरे विरूद्ध कितनी साक्षी देते हैं। परन्तु उसने एक बात का भी उसको उत्तर न दिया यहाँ लों कि अध्यक्ष ने अचम्भा किया पिलात ने उनसे कहा तो मैं यीशु से जो ख्रीष्ट कहावता है क्या करुँ सभों ने उससे कहा वह क्रूश पर चढ़ाया जावे और यीशु को कोड़े मार के क्रूश पर चढ़ा जाने को सौंप दिया। तब अध्यक्ष के योधाओं ने यीश को अध्यक्ष भवन में ले जाके सारी पलटन इकट्ठी की और उन्होंने उसका वस्त्र उतार के उसे लाल बागा पहिराया और काँटों का मुकुट गूँथ के उसके सिर पर रक्खा और उसके दाहिने हाथ पर नकट दिया और उसके आगे घुटने टेक के यह कह के उसे ठठ्ठा किया हे यहूदियों के राजा प्रणाम और उन्होंने उस पर थूका और उस नर्कट को ले उसके सिर पर मारा जब वे उस पर ठठ्ठा कर चुके तब उससे वह बागा उतार के मसी का वस्त्र पहिरा के उसे क्रूश पर चढ़ाने ले गये। जब वे एक स्थान पर जो गल गया था अर्थात् खोपड़ी का स्थान कहाता है पहुँचे तब उन्होंने सिरके में पत्ते मिला के उसे पानी को दिया परन्तु उसने चीख़ के पीना न चाहा तब उन्होंने उसे क्रूश पर चढ़ाया औरं उन्होंने उसका दोष पत्र उसके सिर के ऊपर लगाया तब दो डाकू एक दहिनी ओर और दूसरा बाँई ओर उसके संग क्रूशों पर चढ़ाये गये। जो लोग उधर से आते जाते थे उन्होंने अपने शिर हिला के और यह कह के उसकी निन्दा की हे मन्दिर के ढाहन हारे अपने कों बचा जो तू ईश्वर का पुत्र है तो क्रूश पर से उतर आ। इसी रीति से प्रधान याजकों ने भी अध्यापकों और प्राचीनों के संगियों ने ठठ्ठा कर कहा उसने औरों को बचाया अपने को बचा नहीं सकता है जो वह इस्रएल का राजा है तो क्रूश पर से उतर आवे और हम उसका विश्वास करेंगे। वह ईश्वर पर भरोसा रखता है यदि ईश्वर उसको चाहता है तो उसको अब बचावे क्योंकि उसने कहा मैं ईश्वर का पुत्र हूँ। जो डाकू उसके संग चढ़ाये गये उन्होंने भी इसी रीति से उसकी निन्दा की दो प्रहर से तीसरे प्रहर लौं सारे देश में अन्धकार हो गया तीसरे पहर के निकट यीशु ने बड़े शब्द से पुकार के कहा "एली एलीलामा सवक्तनी" अर्थात् हे, मेरे ईश्वर हे मेरे ईश्वर तूने

क्यों मुझे त्यागा है। जो लोग वहाँ खड़े थे उनमें से कितनों ने वह सुनकर कहा वह एलियाह को बुलाता है उनमें से एक ने तुरन्त दौड़ कर इसपंज लेके सिर्के में भिगोया और नल पर रख के उसे पीने को दिया तब यीशु ने फिर बंड़े बल से पुकार के प्राण त्यागा। इं॰म॰प॰ २७ आ॰ ११, १२ , १३, १४, २२, २३, २४, २६, २७, २८, २६, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३७, ३८, ३६, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४६, ५०।।

समीक्षक– उन दुष्टों ने खीष्ट से, बुरा किया व्यवहार।
ईसा भी तो था बना, प्रभु का दावेदार।।

प्रभु का पुत्र पिता नहीं कोई, शुद्ध बुद्ध परमातम सोई।
सुसर संबंधी नहीं वह साला, जीवन मृत्यु रहित अकाला।
न्यायाधीश जब पूछन लागा, क्यों उत्तर देने से भागा।
सत्य सत्य सब कुछ कह देता, अपने ऊपर दोष न लेता।
करामात अपनी दिखलाता, उतर क्रूश से नीचे आता।
तब सब होते उसके चेरे, चर्चा होती चार चौफेरे।
यदि होता ईश्वर का बेटा, क्यों नहीं प्रभु ने उसे समेटा।
क्यों नहीं ईश्वर दहिने आया क्यों नहीं अपना पुत्र बचाया।
जो वह था त्रिकाल का दरसी, क्यों सिरके की प्याली परसी।
सिरके में है पित्त मिलाया, क्यों वह पहले जान न पाया।
रोय रोय क्यों प्राण तियागे, उसके चमत्कार कहां भागे।
भलेहि करे कितनी चतुराई, छिपी न रह सकती सच्चाई।
झूँठ झूँठ इक दिन हो जाता, चाहे कितना रहे छिपाता।

जंगलियों में उन दिनों, ईसा रहा सुजान। प्रभु
का सुत वह था नहीं, नहीं था कुछ विद्वान।।

(८८) और देखो बड़ा भुईंडोल हुआ कि परमेश्वर का एक दूत उतरा और आके कब्र के द्वार पर से पत्थर लुढ़का कर उस पर बैठा। वह यहां नहीं है जैसे उसने कहा वैसे जी उठा है। जब वे उसके शिष्यों को सन्देश जाती धी देखो यीशु उनसे आ मिला कहा कल्यान हो और उन्होंने निकट आ उसके पांव पकड़ के उसको प्रणाम किया। तब यीशु ने कहा मत डरो जाके मेरे भाइयो से कह दो कि वे गालली को जावें

और वहां वे मुझे देखेंगे। ग्यारह शिष्य गालील को उस पर्वत पर गए जो यीशु ने उन्हें बताया था। और उन्होंने उसे देख के उस को प्रणाम किया पर कितनो को संदेह हुआ। यीशु ने उनके पास आ उनसे कहा स्वर्ग में और पृथिवी पर समस्त अधिकार मुझ को दिया गया है और देखो मैं जगत के अंत लौं सब दिन तुम्हारें संग हूँ।।

इं॰ म॰प॰ २८ आ॰ २, ६, ६, १०, १६, १७, १८, २०।।

समीक्षक– माननीय नहीं बात यह, सृष्टि क्रम विपरीत,
जीते को सूली दई, मरे तो गाए गीत।।

दूत उतारे नीचे ईश्वर, कहो कलक्टर था जगदीश्वर।
स्वर्ग गया क्या वाही तन से, अरु जीया पुन उसी फबन से।
वाही तन पुन ईसा धारें, चरणन पड़ीं तभी तो नारें।
भूमि गर्भ में है अति घर्मा, तीन दिवस में सड़ा सन चर्मा।
निज मुख से बनना अधिकारी, प्रभु ने बख्सी सृष्टि सारी।
यह सब व्यर्थ दम्भ की बातें, जग को भरमाने की घातें।
पुनः कब्र से उसका निर्गम, अरु शिष्यों से भेंट रु संगम।
यह सब बातें झूठ गपोड़े, मृत्यु बाद शिष्यों ने जोड़े।
जो मर जाता सो मर जाता, लौट नहीं कोई देखा आता।
पहले था तो अब भी आवे, स्वर्ग उसी तन से पुन जावे।

मार्क रचित इंजील

(८६) यह क्या बढ़ई नहीं।। इं॰ मा॰ प॰६ आ॰ ३।।

समीक्षक – इसमें कुछ संशय नहीं, ईसा था तरखान।
यूसफ था उसका पिता, जाने सकल जहान।।
काम करे तरखाना ईसा, करत रहा वह अनिक बरीसा।
पुन पैगम्बर बनने धाया, करामात का जाल बिछाया।
फिर बन बैठा प्रभु का बेटा, चढ़ कर क्रूस कब्र में लेटा।
त्रक्षु का बेटा था चातर, काँट छाँट करने का पातर।

लूक रचित इंजील

(६०) यीशु ने उससे कहा तू मुझे उत्तम क्यों कहता है कोई उत्तम नहीं है अर्थात् ईश्वर।।

लू.प. १८,आ. १९

समीक्षक

अद्वितीय यदि एक ही आतम, पारब्रह्म केवल परमातम।
पितापुत्र शुचि आतम मूरति क्यों लिख दी पुन शुचि त्रिमूरति

(६१) तब हेरोद के पास भेजा। हेरोद यीशु को देख के अति आनन्दित हुआ क्योंकि वह उसको बहुत दिनों से देखना चाहता था इसलिये कि उसके विषय में बहुत सी बातें सुनी थी और उसका कुछ आश्चर्य कर्म देखने की उसको आशा हुई। उसने उससे बहुत सी बातें पूछी परन्तु उससे उसे कुछ उत्तर न दिया।।

लूक. प. २६ आ. १९

समीक्षक— मती रचित इंजील में, नहीं लिखी यह बात।
अदल बदल साक्षी भये, यह वदतो व्याघात।।

कहाँ गई उसकी चतुराई, क्यों नहीं करामात दिखलाई।
नहीं था ईसा कछु विद्वाना, इन बातों से हमने जाना।

योहन रचित सुसमाचार

(६२) आदि में वचन था और वचन ईश्वर के संग था और वचन ईश्वर था। वह आदि में ईश्वर के संग था। सब कुछ ईश्वर के द्वारा सृजा गया है। कुछ भी उस बिना नहीं सृजा गया। उसमें जीवन था और वह जीवन मनुष्यों का उजियाला था। प. १ टङ्ग. १, २, ३, ४।।

समीक्षक

सो.—नहीं वक्ता बिन बैन, वचन प्रथम कैसे रहा।
नशे बुद्धि के नैन, इतना भी नहीं जानते।।

प्रथम रहा फिर कैसा संगी, तर्क शून्य यह बात बेढंगी।
'वचनहि ईश्वर था' किमि कहिये, दोनों संग संग जब गहिये।
सृष्टि न होती वचनों द्वारा जब लग कारण हो नहीं न्यारा।
चुप रह कर भी करने हारा, कर निर्माण सके संसारा।

किस में था अरु क्या था, अर्थ रखे क्या इसमें गाथा।

मानहु यदि इस वचन से, कहिये जीव अनाद।
तो आदम की नाक में, भरना श्वास प्रमाद।

जीवन केवल नरन उजाला, कौन उजाला पशुओं वाला।

(६३) और बियारी के समय में जब शयतान शिसोन के पुत्र यिहूदा इस्करियोती के मन में उसे पकड़वाने का मत डाल चुका था।। यो॰ प॰ १३ आ॰ २।।

समीक्षक

शयताँ तो सब को बहकांवे, कौन पुनः उसको भरमावे।
बहक जाय यदि स्वयं शैताना, स्वयं न बहके क्या इनसाना।
यदि उसको बहकाने हारा, मानोगे ईश्वर कर्तारा।
तो शयतान बड़ा जगदीश्वर, जिसे ईसाई मानें ईश्वर।
ईश्वर ने सब को बहकाया, साधन इक शयतान बनाया।
जो पुन इतनी करे बुराई, उसको ईश्वर कहें इसाई।

ईसाइयों का ग्रन्थ यह, अरु ईश्वर का पूत।
स्वयं खुदा इनका सभी, हैं शयताँ के दूत।।

(६४) तुम्हारा मन व्याकुल न होवे, ईश्वर पर विश्वास करो और मुझ पर विश्वास करो मेरे पिता के घर में बहुत से रहने के स्थान हैं नहीं तो मैं तुम से कहता मैं तुम्हारे लिये स्थान तैयार करने जाता हूँ। और जो मैं जाके तुम्हारे लिये स्थान तैय्यार करूँ और आके तुम्हें अपने यहाँ ले जाऊँगा कि जहाँ में रहूँ तहाँ तुम भी रहो। यीशु ने उससे कहा मैं ही मार्ग औ सत्य औ जीवन हूँ। बिना मेरे द्वारा से कोई पिता के पास नहीं पहुँचता है। जो तुम मुझे जानते तो मेरे पिता को भी जानते।। यो॰प॰ १४ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ६, ७।।

समीक्षक

पापों से नहीं घट यह लीला, कहीं जाल नहीं होवे ढीला।
ईसा लेते पिता का ठेका, सागर पिये कूप का भेका।
क्या प्रपंच क्या जाल बिछाया, जिसके अंदर जगत फँसाया।
वशीभूत ईसा के ईश्वर, क्या नहीं रहा जगदीश्वर।
नहीं सिफारिश ईश्वर माने, अन्त्तर्यामी सब कुछ जाने।

मैं जीवन में सत्य सुमारग, सभी चलो तुम मेरे मारग।
अपनी करता आप बड़ाई, वह दंभी क्या करे भलाई।
क्या ईसा से पहले कोई, पुरुष न जग में अस विधि होई।
जिसने प्रभु को प्रापत कीना, जिसको प्रभु ने ज्ञान न दीना।

(६५) मैं तुम से सच सच कहता हूँ जो मुझ पर विश्वास करे जो काम मैं करता हूँ उन्हें वह भी करेगा और इनसे बड़ा काम करेगा।। यो॰प॰आ॰१२।।

समीक्षक– रखते हैं विश्वास सब, ईसा पर क्रिस्तान।
मृत जिवायें आज भी, करामात परमान।।

क्यों नहीं करके आज दिखायें, क्यों नहीं मुर्दे आज जिवायें।
ईसा से बड़ अचरज कीजे, उसका वचन सिद्ध कर दीजे
कर पाते नहीं आज इसाई, पुन क्यों करते वृथा बड़ाई।
ईसा ने भी किये न होंगे, बड़बड़ाय बुद्धि के पोंगे।

(६६) जो अद्वैत सत्य ईश्वर है।। यो॰ प॰१७ आ॰ ३।।

समीक्षक– जो प्रभु इक अद्वैत है, क्यों पुन मानहु तीन।
निज वाणी को आप ही, टारहिं बुद्धि बिहीन।।

योहन प्रकाशित वाक्य

(६७) और अपने अपने सिर पर सोने के मुकुट दिये हुए थे। ओर सात अग्नि दीपक सिंहासन के आगे जलते थे जो ईश्वर के सातों आत्मा हैं। और सिंहासन के आगे काँच का समुद्र है और सिंहासन के आस पास चार प्राणी हैं जो आगे और पीछे नेत्रों से भरे हैं।। यो॰ प्र॰ प॰ ४ अ॰ ४, ५, ६।।

समीक्षक– ईसाइयों का स्वर्ग है, जनु इक नगर समान।
दीप शिखा सम प्रभु है, जलता साँझ विहान।।

स्वर्ण मुकुट आभूषण धारण, चहुँ ओर चक्षु विस्फारन।
चार पशु सिंहादि बिराजें, सिंहासन के चहुँ दिग छाजें।
माने कौन असम्भव वानी, कोरी मिथ्या वृथा कहानी।

(९८) और मैंने सिंहासन पर बैठने हारे के दहिने हाथ में एक पुस्तक देखा भीतर और पीठ पर लिखा हुआ था और सात छापों से उस पर छापत दी हुई थी। यह पुस्तके खोलने और उसकी छापें तोड़ने के कौन योग्य है। और रन स्वर्ग में न पृथिवी पर न पृथिवी के नीचे कोई वह पुस्तक खोलने अथवा उसे देखने सकता था। और मैं बहुत रोने लगा इसलिए कि पुस्तक खोलने और पढ़ने अथवा उसे देखने के योग्य कोई नहीं मिला।।

यो॰ प्र॰ प॰ ५ आ॰ १, २, ३, ४।।

समीक्षक– ईसाइयों के स्वर्ग में, कितना मनुष समाज।
अनिक सिंहासन पर रहे, देव अनेक विराज।।

बंद ग्रंथ जिसके कई छापे, कोई पुरुष नहीं स्वर्ग धरा पे।
जो उस उस बंद ग्रंथ को खोले, जन प्रत्येक उसे लखि डोले
योहन रोता अरु चिल्लाता, पुस्तक नहीं खुलने में आता।
ईसा ने आ पोथी खोली, धन्य धन्य सब जनता बोली।
जिसका ब्याह उसी के गाने, लगे ईसाई ढोल बजाने।
कथन मात्र की बातें सारी, अनपढ़ लोगों में विस्तारी।

(९९) और मैंने दृष्टि की और देखो सिंहासन के और चारों प्राणियों के बीच और प्राचीनों के बीच में एक मेमना जैसा बध किया हुआ खड़ा है। जिसके सात सींग और सात नेत्र हैं जो सारी पृथिवी में भेजे हुए ईश्वर के सातों आत्मा हैं। यो॰ प्र॰ प॰ ५ आ॰ ६।।

समीक्षक– मोहन के उस स्वप्न का, लखिये मनो व्यापार।
सभी इसाई हैं वहाँ, साथ पशु हैं चार।।

ईसा भी है उनके माहीं, अन्य पुरुष वहाँ पर कोऊ नाहीं।
यहाँ थे ईसा के दोउ नैना, बाइबल में वर्णिज यह बैना।
जब वे जाकर स्वर्ग बिराजें, सप्त श्रृंग सत नयना छाजें।
सप्तातम प्रभु के थे जेते, श्रृंग नेत्र बन गए सब तेते।
ऐहि विधि बात इसांई माने, बुद्धि इनकी नहीं ठिकाने।

(१००) और जब उसने पुस्तक लिया तब चारों प्राणी और चौबीसों प्राचीन मेम्ने के आगे गिर पड़े और

हर एक के पास वीणा थी और धूप से भरे हुए सोने के प्याले जो पवित्र लोगों की प्रार्थनाएँ हैं।।

यो॰ प्र॰ प॰ ५ आ॰ ८।।

नहीं स्वर्ग में जब था ईसा, पहले लाख करोड़ बरीसा।
तब यह केहि की आर्ति उतारें, कहाँ पर धूप दीप को बारें।
किसको वे नैवेद्य चढ़ावें, किसके आगे घड़ी बजावें।
यह जो प्रोटैस्टेंट इसाई, बुत पूजा का करें मनाई।
स्वर्ग जाय निज नयनों देखें, बुत पूजा का घर अवलेखें।

(१०१) और जब मेम्ने ने छापों में से एक को खोला तब मैंने दृष्टि की चारों प्राणियों में से एक को जैसे मेघ गर्जने के शब्द को यह कहते सुना कि आ और देख और मैंने दृष्टि की और देखो और श्वेत घोड़ा है और जो उस पर बैठा है उस पास धनुष है और उसे मुकुट दिया गया और वह जप करता हुआ और जप करने को निकला। और जब उसने दूसरी छाप खोली। दूसरा घोड़ा जो लाल था निकला। उसको यह दिया गया कि पृथिवी पर से मेल उठा देवे। और जब उसने तीसरी छाप खोली देखो एक काला घोड़ा है। और जब उसने चौथी छाप खोली देखो एक पीला सा घोड़ा है और जो उस पर बैठा है उसका नाम मृत्यु है।।

यो॰ प्र॰ प॰ ६ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ७, ८।।

समीक्षक– घोड़े निकले ग्रन्थ से, ऊपर चढ़े सवार।
ऐसी गप्पों की बहुत, बाइबल में भरमार।।

महाँ मूर्ख जो इनको मानें, गप्प इसाई सत्य प्रमानें,
सपने में जैसे बरड़ाना, पुस्तक में घोड़े दौड़ाना।

(१०२) और वे बड़े शब्द से पुकारते थे कि हे स्वामी पवित्र और सभ्य कबलों तू न्याय नहीं करता है और पृथिवी के निवासियों से हमारे लोहू का पलटा नहीं लेता है। और हर एक को उजला वस्त्र दिया गया और उनसे कहा गया कि जब लों तुम्हारे संगी दास भी। और तुम्हारे भाई जो तुम्हारी नांई बध किये जाने पर हैं पूरे नहीं तब लों और थोड़ी देर विश्राम करो।। यो॰ प्र॰ प॰ ६ आ॰ १०,११।।

न्याय कराने के लिये, रोयेंगे क्रस्तान।
दौरे चढ़ देखा किये, कब आयें भगवान।।

जो नर वैदिक मत स्वीकारे, न्याय हेत वह नहीं पुकारे।
प्राप्त करे वह तत्क्षण न्याया, उसका प्रभु घट माहिं समाया।
आज काल क्या बंद अदालत, वहाँ नहीं करता कोई वकालत
न्यायधीश क्या बैठे खाली, रहें बजाते लोटा थाली।
इस पर होंगे मौन इसाई, ऐसी छाई मूरखताई।
जाय बहक भी इनका ईश्वर, बदला लेता चट जगदीश्वर।
अहो इसाई बड़े विषैले, मरने पर भी मन में मैले।
वैर भाव मर कर नहीं त्यागें, शान्त भावना में नहीं पागें।
शान्ति यदि सुरग में नाहीं, तो इनको सुख है किस ठाईं।

(१०३) और जैसे बड़ी बयार से हिलाये जाने पर गूलर के वृक्ष से उसके कच्चे गूलर झड़ते हैं तैसे आकाश के तारे पृथिवी पर गिर पड़े। और आकाश पत्र की नाईं जो लपेटा जाता है अलग हो गया।।
यो॰ प्र॰ प॰ ६ आ॰ १३, १४।।

समीक्षक– तारे भूमि पर गिरे, लिपट गया आकास।
कैसे गगन लपेटिये। बुद्धि गई विनास।

(१०४) मैंने उनकी संख्या सुनी, इस्राएल के संतानों के समस्त कुल में से एक लाख चवालीस सहस्र पर छाप दी गई यिहूदा के कुल में से बारह सहस्र पर छाप दी गई। यो॰ प्र॰ प॰ आ॰ ४, ५।।

इसराऐली आदि का, स्वामी है भगवान।
अथवा सगरा जगत ही, उसके लिये समान।

जंगलियों से केवल नाता, तभी तो उन पर छापा लगाता।
योहन की यह झूठ कहानी, मन गढ़ंत सगरी यह बानी।

(१०५) इस कारण वे ईश्वर के सिंहासन के आगे हैं और उसके मन्दिर में रात और दिन उसकी सेवा करते हैं।। यो॰ प्र॰ प॰ ७ आ॰ १५।

समीक्षक– मूरति पूजा क्या नहीं, कहते इसे महान।
प्रभु के मन्दिर में करें, पूजा सांझ विहान।।

इनका ईश्वर है तनुधारी, सिंहासन पर किये सवारी।
रात दिवस प्रभु सोता नाहीं, पूजा होती मंदिर मांही।
रहे उनींदा अति दुख सहता, अरु विक्षिप्त रुग्ण सा रहता।

(१०६) और दूसरा दूत आ वेदी के निकट खड़ा हुआ जिस के पास सोने की धूपदानी थी और उस को बहुत धूप दिया गया और धूप का धूंआ पवित्र लोगों की प्रार्थनाओं के संग दूत के हाथ में से ईश्वर के आगे चढ़ गया। और दूत ने धूपदानी ले के और उसमें वेदी की आग भर के उसे पृथिवी पर डाला और शब्द और गर्जन और बिजलियां और भुईं डोल हुए।। यो॰ प्र॰ प॰ ८ आयत ३, ४, ५।।

समीक्षक

तुरही धूप दीप नैवेदा, विद्युत गर्जन अम्बर भेदा,
स्वर्ग मॉंहि यह होती पूजा, जनु बैरागिन मन्दिर दूजा।

(१०७) पहले दूत ने तुरही फूँकी और लोहू से मिले हुए ओले और आग हुए और वे पृथिवी पर डाले गये और पृथिवी की एक तिहाई जल गई।। यो॰ प्र॰ प्र॰ ८ आयात ७।।

समीक्षक

अहो भविष्यत वक्ता योहन, नभ से अग्नि का अवरोहन।
केहि विधि दूत प्रभु पँह आएँ, ओले बिजली आग गिराएँ
कैसे तुरही नाद बजाते, महाँ प्रलय का खेल रचाते।
बालकपन की बातें कीनी, तर्क ज्ञान बुद्धि से हीनी।

(१०८) और पांचवे दूत ने तुरही फूँकी और मैंने एक तार को देखा जो स्वर्ग में से पृथिवी पर गिरा हुआ था और अथाह कूप के कुंड की कुंजी उसे दी गई और उसने अथाह कुंड का कूप खोला और कूप में से बड़ी भट्टी के धूँए की नाईं धूआँ उठा और उस धूएँ में से टिड्डियाँ पृथिवी पर निकल गई और जैसा पृथिवी के बिच्छुओं का अधिकार होता है तैसा उन्हें अधिकार दिया गया और उनसे कहा गया कि उन मनुष्यों को जिनके माथे पर ईश्वर की छाप नहीं है पाँच मास उन्हें पीड़ा दी जाय। यो॰ प्र॰ ष॰ ६ आयत १, २, ३, ४, ५।।

समीक्षक– गिरा स्वर्ग में जाय, तारा लखा न भूमि पर।
इस प्रकार डरपाय, लोगों को क्रिश्चन करें।

वह टिड्डी दल अरु वह कूपा, ईश्वर ने खन रखा अनूपा।
जब आवे परलय को काला, तभी कूप का खुलता ताला।
टिड्डी दल निकसे अरु मारें, दुनियाँ को दुख दे संहारे।
प्रलय हेत ईश्वर ने पाली, ज्ञानवान बड़ चतुर निराली।
मस्तक के छापे पहचानें, छोड़े जिसे ईसाई जानें,
मूढ़ों के हित जाल फैलाया, टिड्डी दल का भय दिखलाया
डरते होंगे लोग ईसाई, क्या ठगने की युक्ति बनाई।
आर्यवर्त विद्या की खाना, इसमें बिरथा जाल फैलाना।
मूढ़ देश चाहे फंस जाएं। उनमें जाकर ढोंग रचाएँ।

(१०६) और घुड़चढ़ों की सेना की संख्या बीस करोंड़ थी।। यो॰ प्र॰ प॰ ६ आयत १६

समीक्षक— इतने घोड़े स्वर्ग में, करते कहाँ निवास।
कितनीं करते लीद वे, कितना खाते घास।।

कितनी होगी वहाँ दुर्गन्धि, घोड़ों की उस लीद संबंधी।
ऐसा स्वर्ग हमें नहीं चाहिये, दुर्गन्धि में आप रहिये।
ऐसा मत अरु ऐसा ईश्वर, हमें न दिखलाए जगदीश्वर।
आर्यवर्त ने इस को त्यागा। राजहंस बन चहे न कागा।
प्रभु की कृपा पाँय क्रिस्ताना, पंथ छुड़ावे यह भगवाना।

(११०) और मैंने दूसरे पराक्रमी दूत को स्वर्ग से उतरते देखा जो मेघ को ओढ़े था और उसके सिर पर मेघ, धनुष था और उसका मुँह सूर्य की नाईं और उसके पाँओं आग के खंभों के ऐसे थे और उसने अपना दहिना पाँव समुद्र पर और बायाँ पृथिवी पर रखा।। यो॰ प्र॰ प॰ १० आयत १, २, ३,।।

समीक्षक— इनके दूतों की कथा, ऐसे करी बखान।
जैसे पोपों की कथा, कहते भाट पुरान।।

(१११) और लग्गी के समान एक नकट मुझे दिया गया और कहा कि उठ ईश्वर के मन्दिर को और वेदी और उसमें के भजन करने हारों को नाप।। यो॰ प्र॰ प॰ ११ आयत १।।

समीक्षक— ईसाइयों के स्वर्ग में, मन्दिर जाय बनाँय।
मूरति पूजक यह बड़े, ऐसे ढोंग रचाँय।।

जबहुं इसाई खाते पीते, मूर्ख भावना मन मँह लाते।
माँस सरक्त अस्थि ईसा की, खाँय कल्पना कर के ताकि।
गिरजा घर में क्रूस बनाना, मूरति पूजा यही महाना।।

(११२) और स्वर्ग में ईश्वर का मंदिर खोला गया और उसके नियम का संदूक उसके मन्दिर में दिखाई दिया।। यो॰ प्र॰प॰ आयत १६।।

समीक्षक– बन्द रहे बहु दिन तलक, खुलता कभी कबार।
निज मन्दिर में स्वर्ग के, कैद भये कर्तार।।

हो नहीं सकता मंदिर कोई, यदि व्यापक परमेश्वर होई।
ईसाइयों का ईश्वर न्यारा, निस्संदेह रखे आकारा।
तभी तो रहता मन्दिर माँही, विश्व वियापी वह प्रभु नाही।
जेहिविधि यहाँ घड़ियाल बजावें तेहिविधि घंटे वहां हिलावें।
यह संदूक नियम का भाई, कभी कभी पुन लखें ईसाई।
उससे क्या परयोजन साधें, वृथा प्रलोभन कर अपराधें।

(११३) और एक बड़ा आश्चर्य स्वर्ग में दिखाई दिया और एक स्त्री जो सूर्य पहिने है और चाँद उसके पाओं तले है और उसके शिर पर बारह तारों का मुकुट है और वह गर्भवती होके बिलबिलाती है क्योंकि प्रसव की पीड़ा उसे लगी है और वह जनने को पीड़ित है। और दूसरा आश्चर्य स्वर्ग में दिखाई दिया और देखो एक बड़ा लाल अजगर है जिसके सात सिर और दश सींग हैं और उसको सिरों पर सात राजमुकुट हैं और उस की पूछ ने आकाश के तारों की एक तिहाई की खैंच कर उन्हें पृथिवी पर डाला। यो॰ प्र॰प॰१२ आयत १, २, ३, ४।।

समीक्षक

लंबे चौड़े झूठ गपोड़े, उड़ने लगे हवाई घोड़े।
देखो गर्भवती इक नारी, स्वर्ग माँहि चिल्लाय बेचारी।
वाकी करे न कोई सहाया, कोऊ फरिश्ता मदद न आया।
अजगर लूम रही अति लम्बी, तारक मण्डलि संग प्रलंबी
यह तारे भूगोलक सारे; केहि विधि लूम संग लिपटारे।
लघु पृथिवी और तारे भारे, कहाँ पर गिरे समाये सारे।

लिखने वाले के गृह माँहि, सब तारक गिर वहाँ समाँहि।
अजगर भी उसके घर छाजे, जिसकी लंबी लूम बिराजे।

(११४) और स्वर्ग में युद्ध हुआ मीखायेल और उसके दूत अजगर से लड़े और अजगर उसके दूत लड़े। यो॰ प्र॰ प॰ १२ आयत ७।

समीक्षक— ईसाइयों के स्वर्ग मँह, होते हैं संग्राम।
तजहु आस उस स्वर्ग की, करो यही विश्राम।।

(११५) और वह बड़ा अजगर गिराया गया हाँ वह प्राचीन साँप जो दियावल और शयताँ कहावता है जो सारे संसार का भरमावने हारा।। यो॰ प्र॰ प्र॰ १२ आयत ६।।

समीक्षक— क्या नहीं बहकाता रहा, स्वर्ग माँहि शयतान।
नहीं मारा बांधा नहीं, क्यों उसको भगवान।।

क्यों उस को पृथिवी पर डाला, क्यों नहीं करके कैद संभाला।
जग को यदि शयतां बहकावे, शैताँ को पुन कौन भ्रमावे
स्वयं बहक जाये शैताना, अथवा बहकाते भगवाना।
यदि उसको ईश्वर बहकाता, तो प्रभु हीं शयतान कहाता।
अपने आप बहक यदि जाये, जग भी स्वयं भरम में आए।
प्रभु से भी शयताँ बलवाना, निस्संशय यह करहु प्रमाना।
तभी तो वह कुछ दण्ड न पाता, ईश्वर भी उससे भय खाता
शयताँ का है शासन जेता, प्रभु का देख पड़े नहीं तेता।

सहस गुना शैतान का, है सृष्टि में राज।
ईसाइयों के प्रभु का, राज न दीखे आज।।

करता है शयताँ बरजोरी, प्रभु शक्ति मँह है कमजोरी।
तभी तो उसको रोक न पाए, शयताँ निज परताप दिखाए।
आज कल्ह ईसाई राजा, उनका इतना तेज बिराजा।
पकड़ दस्यु फाँसी लटकाए, बिलम न इसमें तनिक लगाए।
इतना भी बल प्रभु नहीं राखे, कौन उसे पुन ईश्वर भाखे।

(११६) हाय पृथिवी और समुद्र के निवासियों ! क्योकि शयताँ तुम पास उतरा है।।

यो॰ प्र॰ मं॰ १२ आ॰ १२।।

समीक्षक— क्या रक्षक इस भूमि का, नहीं है वह कर्तार।
बहकाये शयताँ प्रभु देखो नैनां फार।

इसपृथिवी का यदि प्रभु राजा, तो कहाँ जाकर रहा विराजा।
शयतां कोक्यों नही पछारे, दुष्ट प्रभु की प्रजा विगारे।
देख पड़े यह सृष्टि माँही, परमेश्वर केवल इक नाँही।
इक अच्छा इक करे बुराई, दोनों की जग देत दुहाई।
दुष्ट नीच शयतां बलवाना, प्रबल न जग में प्रभु पहिचाना।

(११७) और बयालीस मास लौं युद्ध करने का उसे अधिकार दिया गया। और उसने प्रभु के विरुद्ध निन्दा करने को अपना मुँह खोला कि उसने नाम की उसके तम्बु की और स्वर्ग में वास करने हारों की निन्दा करें। और उसको कह दिया गया कि पवित्र लोगों से युद्ध करे और उन पर जय करे और हर एक कुल और देश और भाषा पर उसको अधिकार दिया गया।। यो प्र॰ प॰ १३ आयत ५, ६, ७।

समीक्षक— जो भेजे संसार में, पीड़न को शयतान।
वह डाकू है प्रभु नहीं, करे जगत की हान।

(११८) और मैंने दृष्टि की और देखों मेम्ना सियोन पर्वत पर खड़ा है और उसके साथ एक लाख चवालीस सहस्र जन थे जिनके माथे पर उसका नाम और उसके पिता का नाम लिखा है।। यो॰ प्र॰ प॰ १४ आ॰ १।।

स्यून गिरि पर पिता था, स्यून गिरि पर पूत।
सहस चवालिस एक लख, सेनासंग अकूत ।।

क्यों इतने ही भये इसाई, पदवी स्वर्ग जिन्होंने पाई।
कोटि कोटि बिन मोहर बेचारे, नर्क सिधारे सब दइमारे।
सोन गिरि पर जाँय इसाई, ईसा ने जहाँ शिविर लगाई।
अब कहाँ पिता कहाँ पर बेटा, ईसा का दल कहाँ पर लेटा।
जो हम उनको वहां पर पायें, तब यह गाथा सच्ची गायें।

नहीं तो जानहु झूठ कहानी, निपट असंभव अरु मनमानी।
अच्छा इतनी बात बतायें, कहाँ से वे आए समझाएँ।
यदि तुम कहो सुरग से आये, क्या पंछी थे पंख फैलाये।
दल समेत उड़ उड़ कर आते, इत उत रहें उड़ान लगाते।
दौरे पर जिमि न्यायाधीसा, एहि विधि आता जाता ईसा।
न्याय कार्य सरिहै। नहीं ऐसे, सकल जगत में पहुँचे कैसे।
इक दो तीन पुरुष क्या करिहैं, अगनित भूगोलक फिर मरिहैं
एक एक भूगोलक माहीं, इक इक ईश्वर जब लग नाही।
तब लग चले न न्याय व्यवस्था, नातरु बिगरे जगत अवस्था।

(११६) आत्मा कहता है हाँ कि वे अपने परिश्रम से विश्राम करेंगे, परन्तु उनके कार्य उनके संग हो लेते हैं।। यो॰ प्र॰ प॰ १४ आ॰ १३।।

समीक्षक– क्रिस्तानों का प्रभु कहे, कीजे तनिक विचार।
फल पायें गे सभी नर, निज कर्मन अनुसार।।

वरु ईसाई उलट बखानें, प्रभु की बाणी नहीं परमानें।
सब के पाप प्रभु ले लेवे, कहते पाप क्षमा कर देवे।
क्यों पुन ऐसा कहें इसाई, क्यों प्रभु आयसु दीन विहाई।
प्रभु झूठा या यह हैं झूठे, लिख दीने अस बैन अनूठे।

(१२०) और उसे ईश्वर के कोप के बड़े रस के कुण्ड में डाला। और रस के कुण्ड में से घोड़ो की लगाम तक लोहू एक सौ कोस तक बह निकला।। यो॰ प्र॰ प॰ १४ आयत २०।।

समीक्षक– भरे पड़े हैं गप्प के, जेहि विधि सकल पुरान।
उनसे बढ़ कर हाँकते, गप्पे यह क्रिस्तान।।

क्या है कोप प्रभु का पानी, अथवा वस्तु तरल समानी।
जिससे कुण्ड भरे हैं सारे, दुख पायें जहाँ जीव बेचारे।
सौ कोसों तक रुधिर बहाना, क्योंकर यहपुन जायें माना।
सूखे रक्त लगे जब पवना, हो नही सके रुधिर प्रस्रवना।

(१२१) और देखो स्वर्ग में साक्षी के तम्बू का मन्दिर खोला गया।। यो.प्र.प. १५ आ. ५।।

समीक्षक– ईसाइयों का प्रभु यदि, था सर्वज्ञ सुनाम।
तो उसको बतलाइये, साक्षी से क्या काम

ताँते इनका प्रभु अल्पज्ञा, अन्तर्यामी नहीं सर्वज्ञा।
ईश्वरता का धर्म निभाए, यह उससे नहीं होने पाए।
दूत सबंधी कल्पित बानी, लिखीं असंभव अनिक कहानी।
कहाँ लग इनका झूठ बखानें, मूरख सो जो इनको मानें।
भरा पड़ा है सकल प्रकरना, निस दिन बहे झूठ का झरना।

(१२२) और ईश्वर ने उसके कुकर्मो को स्मरण किया है। जैसा तुम्हे उसने दिया है वैसा उसको भर देओ और उसके कर्मों के अनुसार दूना उसे दे देओ ।। यो. प्र. प. १८ आयत ५,६।

समीक्षक– पाप पुण्य जितना करे, उतना भरना न्याय।
अधिक न्यून जो देत है, वह करता अन्याय

क्रिस्तानों का प्रभु अन्यायी, अधिक न्यून फल सुख दुखदायी।
ईश्वर की जब रीति पुरानी, फेर करें क्यों न्याय किरानी।

(१२३) क्योंकि मेम्ने का विवाह आ पहुँचा है और जब रीति पुरानी, फेर करें क्यों न्याय किरानी।

समीक्षक– देखो इनके स्वर्ग में, होने लगे विवाह।
ईसा अब ब्याहने लगे, पड़े विषय की राह।

कोन रहे ईसा के साले, कितने जन्में लड़के बाले।
ब्याह से होवे वीर्य निकासा, बल बुद्धि आयु का हासा।
होगी देह उन्होनें त्यागी, यह संयोगज देह अभागी।
धोखा खाते रहे इसाई, अब तक इनको खबर न आई।
कब तक और खायेंगे धोखा, कब विश्वास टरहि यह खोखा।

(१२४) और उसने अजगर को अर्थात् प्राचीन सांप को जो दियावल और शयतान है पकड़ कर उसे सहस्त्र वर्ष लों बांध रखा और उसको अथाह कुण्ड में डाला और बन्द करके उसे छाप दी जिससे वह

जब लग सहस्त्र वर्ष पूरे न हों तब लग फिर देशों के लोगों को न भरमावे।। यो॰ प्र॰ प॰ २० आ॰ २, ३।

समीक्षक

क्या जाने किस कष्ट से, पकड़ा था शयतान।
क्यों नहीं उसका बध किया, बुरा किया भगवान

बांधा सहस वर्ष लग वाको, बिन मारे क्यों छोड़ा ताको।
जब पुन छूटे तब भरमावे, पुन सृष्टि को दुख पहुँचावे।
नहीं शयतान कोई भी भाई, बृथा भरम में पड़े इसाई।
केवल लोगों को डरपाना, केवल उन पर जाल बिछाना।
यह सब ठक लोगों की माया, ठगने का सब ढोंग बनाया।
जेहि विधि कोई कपटी, धूरत, बन में बने विष्णु की मूरत
चार भुजा धारण कर लेवे, तरू के ओझल दर्सन देवे।
निज आज्ञा से नैन खोलावे, निज आज्ञा से बंद करावे।
पहले ही उसको डरपाए, भली भांति कही देख न पाए।
इस प्रकार उसका धन हरते, एहि विधि ढोंग इसाई करते।
जो इनके मत में नही आया, कहे इसे शयताँ बहकाया।
ऐसे पंथ कपट के मंदर, फंसे न कोऊ इनके अंदर।

(१२५) जिसके सन्मुख से पृथिवी और आकाश भाग गए और उनके लिये जगह न मिली। और मैने क्या छोटे क्या बड़े सब मृतकों को ईश्वर के आगे खड़े देखा और पुस्तक खोले गये और दूसरा पुस्तक अर्थात् जीवन का पुस्तक खोला गया और पुस्तकों में लिखी हुई बातों से मृतकों का विचार उनके कर्मो के अनुसार किया गया।।

त्रो॰ प्र॰ प॰ २० आ॰ ११, १२।।

समीक्षक— बालकपन की बात यह, कैसे भगा आकास।
भग जाये भूमि कहाँ, ठहरे किसके पास।।

जिनके सन्मुख से वे भागे, उनके पावं कहां पर लागे।
सिंहासन किस पृथिवी ऊपर, खड़े रहे सगरे किस भूपर।
प्रभुसम्मुख यदि मुर्दे आये, तो इक देशी प्रभु कहाए।

उसकी कैसी कहाँ अदालत, कौन करे पुन वहाँ वकालत।
सब के खाते उसने देखे, बनिये के सम करता लेखे।
आप लिखे या लिखे मुनीमा, वहाँ कुतवार कर्म के भीमा।

सोरठा– ईश्वर दिया बनाय, उसको जो प्रभु था नही।
प्रभु को दिया भुलाय, इन ईसाई जनों नें।।

(१२६) उनमें से एक मेरे पास आया और मेरे संग बोला कि आ मैं दुलहिन को अर्थात मेम्ने की स्त्री को तुझे दिखाऊँगा।। यो॰ प्र॰ प॰ २१ आयत ६।।

समीक्षक– ईसा ने जब स्वर्ग में, सुन्दर पाई नार।
हुई होगी उसके यहाँ बच्चों की भरमार।

जाते स्वर्ग इसाई जेते, पाते होंगे तिय सब तेते।
होती होगी वहां सन्ताना, रोगी होते होंगे नाना।
मृत्यु भी होगी दुखदाई रक्खों ऐसा स्वर्ग इसाई।
एहि विधि सुरग न हम को चहिए, नमस्कार दूरहूँ से कहिये।

(१२७) और उसने उस नल से नगर को नापा कि साढ़े सात सौ कोस का है उसकी लम्बाई और चौड़ाई और ऊँचाई एक समान है। और उसने उसकी भीत को मनुष्य अर्थात् दूत के नाप से नापा कि एक सौ चवालीस हाथ की है और उसकी भीत की नेवें हर एक बहुमूल्य पत्थर से संवारी हुई थीं। पहली नेव सूर्यकान्त की थी, दूसरी नील मणिकी, तीसरी लालड़ी की, चौथी मरकत की, पाँचवी गोमेदक की, छठवीं माणिक्य की, सातवीं पीतमणि की, आठवीं पेरोज की, नवीं पुखराज की, दसवीं लहसनियें की, ग्यारहवीं धूम्रकान्त की, बारहवीं मर्टीष की और बारह फाटक बारह बारह मोती थे एक एक मोती से एक एक फाटक बना था औश्र नगर की सड़क स्वच्छ कांच के ऐसे निर्मल सोने की थी। यो॰ प्र॰ प॰ २१ आयत १६, १७, १८, १६, २०, २१।

समीक्षक– ईसाइयों के स्वर्ग का, अद्‌भुत किया बखान।
इतनी बढ़िया गप्प तो, मार न सके पुरान।

मरते रहते नित्य इसाई, इनकी होगी कहाँ समाई।
स्वर्ग माहिं सब घुसते जावें, बाहर कोई न आने पावें।

सोना चांदी मोती हीरे, मणि माणिक्य श्वेत अरु पीरे।
अस विधि रत्न लिखे जो नाना, यह इक झूठा जाल बिछाना।
निर्धन अरु सब भोले भाले, फँस जाते पढ़ दृश्य निराले।
हो सकती लंबाई चौड़ाई कैसे संभवपुनः ऊँचाई।
कहाँ से मोती एहि विधि आए, जिनको छेद कपाट बनाए।
मिथ्या जानों यह सब बातें, धन हरने की सगरी घातें।

सो.– मोती रखे सँम्हार, अपने घर इक घड़े में।
रचे स्वर्ग के द्वार, लेखक है मन का धनी।

(१२८) और कोई अपवित्र वस्तु अथवा घृणित कर्म करने हारा अथवा झूठ पर चलने हारा उसमें किसी रीति से प्रवेश न करेगा।। यो. प्र. प. २० आयत २७।।

समीक्षक– अधमहु जावे स्वर्ग मं, यदि होवे क्रिस्तान।
यह बाणी पुन क्यों लिखी, बाइबल में भगवान।

झूठे सपने लिखने हारा, योहन पाय न स्वर्ग बेचारा।
एकहु पापी स्वर्ग न जाए, तो ईसा किमि स्वर्ग सिधाए।
ईसा गयासुरगहूँ नाहीं, सब का पाप लाद सिर माहीं।

(१२६) और अब कोई श्राप न होगा और ईश्वर का और मेम्ने का सिंहासन उसमें होगा और उसके दास उसकी सेवा करेंगे और ईश्वर का मुँह देखेंगे और उसका नाम उसके माथे पर होगा और वहाँ रात न होगी और उन्हें दीपक की अथवा सूर्य की ज्योति का प्रयोजन नहीं क्योंकि परमेश्वर ईश्वर उन्हें ज्योति देगा वे सदा सर्वदा राज्य करेंगे। यो. प्र. प. २२ आ. ३, ४, ५।।

समीक्षक– ईसाईयों का देखिये, कैसा स्वर्गावास।
रहें प्रभु का देखते मुख दासी अरु दास।।

सिंहासन पर प्रभु अरु ईसा, बैठ रहें क्या अनिक बरीसा।
क्या ईश्वर का मुख है काला, हबशी जिमि अफ्रीका वाला।
अथवा यूरुपवासी जैसा, गोरा रंग प्रभु का वैसा।
अन्य देश चीनी जापानी, अथवा मुखड़ा हिन्दोस्तानी।

स्वर्गहुँ है इक बंधन भाई, जिसमें होय छोटाइ बड़ाई।
एकहि पुर में यदि निवासा, अवस होय वहां व्याधि विकासा।
एक देश में रहने वारा, व्यापे विश्व न प्रभु तुम्हारा।

(१३०) देख मैं शीघ्र आता हूँ और मेरा प्रतिफल मेरे साथ है जिसते हर एक को जैसा उसका कार्य ठहरेगा वैसा फल देऊँगा।। यो॰ प्र॰ प॰ २२ आ॰ १२

समीक्षक— निज कर्मन अनुसार, फल पाएँ यदि जीव सब।
तो पुन क्षमा विचार, बाइबल का झूठा भया।

लिखि क्षमा भी बाइबल माहीं, तांते गनहिं दोष यह नाही।
तो आवे बदतो व्याधाता, कौन संत्य यह कहा न जाता।
इसको कहिये हलफ दरोगी, क्या गति ईसा की पुन होगी।
कहाँ तलक हम वर्णन करिहैं, बाइबल वाक्य किते अवतरि हैं

दो॰—कुछ बातों को छोड़ कर, बाकी झूठ प्रसार।
अनृतरंजित सत्य भी, होता झूठ असार।।
माननीय बाइबल नहीं, मान योग्य हैं वेद।
उन्हें करो स्वीकार सब, मिटे ताप दुख खेद।।

आर्य महाकवि जयगोपाल विरचिते सत्यार्थप्रकाश
कवितामृते त्रयोदशः समुल्लासः समाप्तः

अथ चतुर्दश समुल्लासारम्भः

अथ यवनमत समीक्षा

आरम्भ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करने वाला
दयालु।। मंजिल १ सिपारा १ सूरत १

मुसल्मान दावा करें, 'ईश्वर कथित कुरान'।
सूरत पहली क्या कहे, पढ़िये धर कर ध्यान।।

कहे कुरान बनाने हारा, लिखत कोऊ अल्लाह का प्यारा। प्रथम नाम अल्ला को ध्याऊँ, पुन लिखने को हाथ लगाऊं। शुरु करूं उसका ले नामा, जो प्रभु क्षमा दया को धामा। खुद अल्ला यदि होता करता, आदि नाम अल्ला क्यों धरता। प्रभु कहता सुन लो इन्सानो, मोर कथन यह साँचा जानो। मैं आरंभहु यह उपदेशा, मनुष मात्र को कटहिं कलेशा। यदि प्रभु लोगों को सिखलावे, मनुष मात्र से यह कहलावे।

हे नर! ऐसा कहो तुम, यदि यह सत्य विचार।
पापहु प्रभु का नाम ले, शुरू करे संसार।।

यदि वह क्षमा दया को धारे, पशु बध हित क्यों नरन उभारे। मनुष मार जीवों को खाएं, देख देख अल्ला हर्षाएं। अति पीड़ा दे पशु को मारें, खुदा न उनकी ओर निहारें। किया हलाल माँस आहारा, मारा जाये जन्तु बेचारा। मूक जन्तु अपराध न कोई, दया कहाँ अल्ला की सोई। क्या प्रभु उनको नहीं बनाते, पुन क्यों लोग इन्हें है खाते।

शुरू करूँ प्रभु नाम से, शुभ बातें शुभ काज। इस
प्रकार कहना उचित था, सुनिये महाराज।।

भली बात नहीं की उल्लेखा, जिसका दुनियां ने फल देखा।

मुस्लिम सूचर और कसाई, जब मारहिं बकरी व गाई ।
'बिस्मिल्ला' कह छुरि चलावें, निर्दोषी को मारें खावें ।
ताँते करते शुरू बुराई, लेकर नाम खुदा का भाई ।
कहाँ इनका वह खुदा दयालु, पशुओं के हित नहीं कृपालु ।
मुसलमान यदि अर्थ न जानें, व्यर्थ वचन तब कहा खुदा ने
यदि कछु अन्य अर्थ है याको, तो बतलाएं सुन लें वाको ।

(२) सब स्तुति परमेश्वर के वास्ते है जो परवरदिगार अर्थात् पालन करने हारा है सब संसार का क्षमा करने वाला दयालु है। मं॰ सूरतुल्फ़ातिहा आयत १,२

कु॰— ईश्वर यदि कुरान का, सबका पालन हार ।
क्षमा दया सब पर करे, प्रभु जीवन आधार ।
प्रभु जीवन आधार, दया क्यों रखे न मन में ।
कहां दया का वास, जीव अरु जन्तु हनन में ।।
कतल करो काफिर को, कहता है जगदीश्वर ।
धन्य दयालु है कुरान वालो का ईश्वर ।।

पैगम्बर को जो नहीं माने, जो कुरान को सत्य न जाने ।
वे नर हैं काफिर कहलाते, मारो इन्हें खुदा फरमाते ।
ऐसा ग्रन्थ न प्रभु बनाये, मारे और दयालु कहाए ।।

(३) मालिक दिन न्याय का। तुम ही को हम भक्ति करते हैं और तुम ही से सहारा चाहते हैं दिखा हम को सीधा रास्ता।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ १ आ॰ ३, ४, ५।।

न्याय दिवस का तू है मालिक, तुम्हे भजहिं हम केवल खालिक ।
सूधा मारग हमें दिखाओं, उन्मारग से प्रभु बचाओ ।
केवल तेरी चाहें सहाया, न्याय दिवस पर करते न्याया ।
हम पूछें इक बात बतायें, युक्ति सहित इसको समझाएँ ।
क्या प्रभु सदा न्याय नहीं करता, इकदिन न्याय दंड को धरता ।
फिर तो फैले अत्याचारा, सूरज चढ़े होय अंधियारा ।
समुचित वाकी करना भक्ति उचित उसी से याचन शक्ति ।

पर यदि तुम कोई करो बुराई, उसमें भी हो प्रभु सहाई।
यदि ऐसा प्रभु करने लागे, तब तो भाग्य दुष्ट के जागे।
मुस्लिम मारग एक सुमारग शेष मार्ग क्या सभी कुमारग।
भला मार्ग है एक भलाई, वह तो सब सृष्टि ने पाई।
क्या विशेषता मुसलिम राखे, पक्षपात की बात क्यों भाखे।

क्या कोई पथ दुष्कर्म का, देखन की है चाह।
अथवा उल्टे मार्ग को, मानो सीधी राह।।

(४) उन लोगों का रास्ता कि जिन पर तूने निआमत की और उनका मार्ग मत दिखा कि जिनके ऊपर तूमने गजब अर्थात अत्यन्त क्रोध की दृष्टि की और न गमराहों का मार्ग हमको दिखा।

मं॰ १ सि॰ १ सू॰ १ आ॰ ६, ७।।

पुण्य पाप पूरब जनम, माने नहीं इसलाम।
देत अकारण प्रभु क्यों, दुख सुख कष्ट आराम।।

पुण्य कर्म बिन देत नियामत, पाप किये बिन ढाय कयामत।
अल्ला के घर यह अन्याया, पक्षपात क्यों उसको भाया।
सृष्टि नियम के है प्रतिकूला, प्रभु स्वभाव के नहीं अनुकूला।
जब लग पुण्य पाप नहीं संचित दया क्रोध से तबलग वंचित।
जब नर कर्म करे फल पाये, यह तो बात समझ मे आवे।।

मुस॰– यह सूरत अल्ला मियाँ, नर मुख से कहलांय।
'कहा करो ऐसे सदा' यह ईश्वर फरमांय।

उत्तर

आयत नर से खुदा पढ़ावे, अल्लिफ बे भी खुद समझावे।
यदि तुम कहो कण्ठ करवाए, स्वयं कहे नर से कहलाए।
क्यों अल्ला की अरबी भाषा, जो नहीं अरब उन्हें क्या आशा।
पक्षपात अल्ला क्यों कीना, क्यों कुरान अरबी में दीना।
तनिक देखिये वैदिक बानी, संस्कृत भाषाओं की रानी।

हर बोली में इसके लक्षण, फिर भी सबसे रही विलक्षण।
उत्तर दक्षिण पच्छिम पूरब सब देशों के लिये अपूरब।
इक सम यत्न करें तब आवे बिना यत्न कोऊ सीख न पावे।
वेद वाणी ईश्वर परगासी। लहें ज्ञान पढ़ सब जग वासी।

(५) यह पुस्तक कि जिसमें संदेह नहीं परहेजगारों को मार्ग दिखाती है, जो ईमान लाते है साथ रौब (परोक्ष) के नमाज पढ़ते और उस वस्तु से जो हमने दी खर्च करते हैं।। और वे लोग उस किताब पर ईमान लाते हैं जो रखते हैं तेरी ओर व तुझ से पहिले उतारी गई और विश्वास कयामत पर रखते हैं। ये लोग अपने मालिक की शिक्षा पर हैं और ये ही छुटकारा पाने वाला है। निश्चय जो काफिर हुए और उन पर तेरा डराना न डराना समान है वे ईमान न लाँएगे।। अल्ला ने उनके दिलों पर मोहर कर दी और उनकी आंखों पर पर्दा है और उनके वास्ते बड़ा अजाब है।। मं॰ १ सि॰ सू॰ २ आ॰ १, २, ३, ४, ५, ६।।

निज पुस्तक की आप ही, करते स्तुति बखान।
अपनी पीठ पर आप ही, थपकी दें भगवान।।

जो परहेजगार है प्रानी, वे तो स्वयं सुपथ के ज्ञानी
उनको दर्शन मार्ग अकारथ, वे तो जानहिं मार्ग यथारथ।
जे नर नित्य कुमारग गामी, मार्ग दर्से नही ग्रन्थ इल्हामी।
तब किस आवे काम कुराना, जो नहीं पापिन चहे बचाना।
बिना कर्म जब ईश्वर दाता, कर्म करे पुन क्यों कोई भ्राता।
बिना कर्म जब देवे दानी, जगमें उद्यम की हो हानि।
बैठो रखे हाथ पर हाथा, आपहि देंगे जग को नाथा।

बाइबल आदिक ग्रन्थ पर, समुचित यदि विश्वास।
तौ कहिये सब मुसल्मां क्यों न करें भँरवास

बाईबल पर यदि है ईमाना तौ क्यों ईश्वर रचा कुराना।
यदि तुम कहो कुरान प्रधाना, अधिक धर्म इस माँहि बखाना।
तब क्या भूल गया था अल्ला, लिखा न पहिले अर्श मुअल्ला।
यदि नहीं भूला भगवाना, तब तो व्यर्थ कुरान बनाना।

दोऊ ग्रन्थ हमने लखे, बाइबल और कुरान।
कुछ कुछ बातें छोड़ कर, दोनों एक समान।।

क्यों नहीं ईश्वर वेद बनाया, जिसमें सारा ज्ञान समाया।
केवल ऐसी एक कयामत, अल्ला ने दी तुम्हें नियामत।
जिस पर सब राखें बिसवासा, अन्य किसी की रखें न आसा।
मुसलमान अरु लोग ईसाई, क्या इन हीं में है सच्चाई।
क्या इनमें नहीं कोई पापी, दुर्व्यसनी अरु नीच सुरापी।
सभी कुरानी और किरानी, करें धर्म की चाहे हानी।
दुख से पाएँगे छुटकारा, दुखी रहे बाकी संसारा।
अन्य धर्म के माननहारे, चाहे ईश्वर के हों प्यारे।
उनकी होंगी कभी न मुक्ति, क्या हेतु क्या इसमें युक्ति।
यह तो महा घोर अन्याया, क्यों ईश्वर के हृदय समाया।
जो जन मत इसलाम न माने, क्या उन सबको काफिर जाने।
चित्त वृत्ति इतनी क्यों बिगरी, क्यों देदी यक तरफाडिगरी।
अपने हाथों प्रभु ने भाई, जिनके कानों मोहर लगाई।
जिनके मन मुद्रित कर दीने, आपहि जब नर पापी कीने।
तब उनको क्यों दोषी मानो, यह तो दोष खुदा का जानो।
नर निर्दोष दण्ड क्यों पावे, जब उनसे प्रभु पाप करावे।

(६) उनके दिलों में रोग है अल्लाह ने उनका रोग बढ़ा दिया।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ १ आयत ६

ईश्वर ने अपराध बिन, दीन्हा रोग बढ़ाय।
क्यों निष्ठुर इतना हुआ, किया हाय अन्याय।।

नहीं प्रभु के काम शयतानी, बिना दोष इतनी की हानी।
काहू के मन मोहर लगाना, अरु काहू का रोग बढ़ाना।
ऐसे कर्म प्रभु के नाहीं, तनिक विचार करें मन माही।
रोग व्याधि पापहु परिनामा करे पुण्य पावे सुखधामा।

(७) जिसने तुम्हारे वास्ते पृथिवी बिछौना और असमान की छत को बनाया।।

क्या हंसी की बात है, अरु कितना अज्ञान।
भला कभी छत हो सके, यह फुकला असमान।।

खुला व्योम मंडल है ऊपर, नहीं छत पड़ी हुई है भू पर।
जो आकाश सी है कोई भूमि तो जानत हैं शामी रूमी।

(८) जो तुम उस वस्तु से सन्देह में हो जो हमने अपने पैगम्बर के ऊपर उतारी तो उस कैसी एक सूरत ले आओ और अपने साक्षी लोगों को पुकारो अल्लाह के बिना तुम सच्चे हो जो तुम। और कभी न करोगे तो उस आग से डरो कि जिसके ईंधन मनुष्य हैं और काफिरों के वासते पत्थर तय्यार किये गये हैं।

मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ २२, २३।।

उसके सदृश किसी से, सूरत रची न जाय।
किस प्रकार की बात यह, इनको कौन बताय।।

नुकते बिन जिस रचा कुराना, कवि फैजी इक हुआ महाना।
कौन आग दोजख की कहिये, जिस अग्नि से डरते रहिये
यह अग्नि भी सभी जलावे, ईंधन सम सबकुछ भसमावे।
यदि इससे नहीं समुचित डरना, तनिक हाथ अग्नि पर धरना।
लिखा कुरान बीच है जैसे, विहित पुराणों में भी वैसे।
पत्थर काफिर के हित राखे, यह कुरान में अल्ला भखे।
नरक म्लेच्छन हेत बनाया, यह पुराण में प्रभु फरमाया।
सत्य बात पुन किसकी मानें, ईश्वर की ईश्वर ही जाने।
निजको कहते स्वर्ग पुजारी, औरन कहैं नरक अधिकारी।
दोनों मिथ्या रार बढ़ावें जैसा करें सो वैसा पावें।

(६) और आनन्द का संदेसा दे उन लोगों को कि ईमान लाए और काम किये अच्छे यह कि उनके वासते बिहिश्ते हैं जिनके नीचे से चलती हैं नहरें जब उसमें से मेवों के भोजन दिये जावेंगे तब कहेंगे कि वह

वो वस्तु है जो हम पहिले इससे दिये गये और उनके लिये पवित्र बीबियां सदैव वहां रहने वाली हैं।।

मं॰ १ सि॰ सू॰ २ आ॰ २४।।

कहो तुम्हार बहिश्त में क्या है बात विशेष।
यह सब वस्तु प्राप्त हैं, हर मुल्कों हर देश।।

नहीं बहिश्त कछु देत निराला, फल मेवे अरु मद्य पियाला।
जो कछु यहां वहां भी वोही, कौन वस्तु अनहोनी होई।
एक बात है अवस निरालीं, जो बहिश्ते न स्वयं संभाली।
मिलती वहाँ बहिश्ती हूरें, मन की मनोकामना पूरें।
जग में मानस आते जाते, स्वर्ग जाय पुन लौट न पाते।
थिर नहीं रहती जग की नारी, जनमें अरु पुन मरे विचारी।
अवर बीबियां स्वर्ग निवासिन, सुंदर सुखद सुरग सुहासिन,
उनके दुख का कौन ठिकाना, इंतजार में ज़गे जमाना।
जब लग नहीं कयामत आवे, हूर अकेली अति दुख पावे।
शायद अल्ला होय दयालु, हूरो पर वे बड़े कृपालु।
कटते हो दिन खुदा सहारे, अल्ला सबके कष्ट निवारे।

मुसलमान का स्वर्ग यह, है गोलोक समान।
गोकुलिये गोसाई जंह, रखें नार का मान।।

खुदा करे बीबी का आदर, पुरुषों का वहां होत निरादर।
बहुत प्रेम उनका नारिन से, अचल अटल और कबहुं न बिनसे।
बीबियां रहें बहिश्तों माहीं, नर को वहाँ ठिकाना नाहीं।
बिन मर्जी प्रभु की अबलाएँ, क्यों कर बास वहाँ पर पाएँ
जो कबहुँ हो ऐसी बाता, खुदा होय नारी रँग राता।

(१०) आदम को सारे नाम सिखाये फिर फरिश्तों को सामने करके कहा जो तुम सच्चे हो मुझे उनके नाम बताओ। कहा हे आदम ! उनको उनके नाम बता दे तब उसने बता दिये तो खुदा ने फरिश्तों से कहा कि क्या मैंने तुमसे नहीं कहा था कि निश्चय मैं पृथिवी और आसमान की छिपी वस्तुओं को और

प्रकट छिपे कर्मों को जानता हूँ।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आयत २६-३१

गुप्त रूप से प्रभु ने, आदम दिया सिखाय।
पढ़ पट्टी इन्सान ने, दीन्हे नाम बताय।।

कपट फ़रिशतों के संग कीना, नाम ज्ञान आदम को दीना।
धोखा देकर लेत बड़ाई, कहो ख़ुदा की यही ख़ुदाई।
माने कौन व्यर्थ की बातें, कपट दम्भ अरु छल की घातें।
जहाँ जंगली जन हों बसते, वहाँ चलें यह छल के रसते।
यह पाखंड सभ्य नहीं मानें, पढ़े लिखे नर सबकुछ जानें।

(११) जब हमने फरिश्तों से कहा कि बाबा आदम को दण्डवत करो देखा सभों ने दण्डवत किया परन्तु शयतान ने न माना और अभिमान किया क्योंकि वह भी एक काफिर था।।

मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आयत ३२।।

उ॰– आदम के सन्मुख झुको, हुकम देत भगवान।
झुक सलाम सब ने करी, माने नहीं शयतान।।

अल्ला ने शयतान बनाया, उत्पन करके अब पछताया।
क्या सर्वज्ञ नहीं भगवाना, उचित न था शयतान बनाना।
कहां खुदा ने तेज गँवाया, शयताँ ने उसको ठुकराया।
कुछ कर सका न उसका अल्ला, बगलें झाँकत अर्श मुअल्ला
इक काफिर ने यह कर दीना, रोब दाब अल्ला का छीना।
अब तो काफिर कोटी कोटी, हा अल्ला की किस्मत खोटी।
इक शयताँ ने बात बिगारी, अब तो काफिर सेना भारी।
अब अल्ला की कुछ न चलती, मुसलमान की दाल न गलती।
खुदा किसी का रोग बढ़ावे, काहू को उन्मार्ग दिखावे।
यह शिक्षा शयताँ से पाई, अथवा दोनों हैं गुरभाई।

शयताँ तो शागिर्द है, अरु अल्ला उस्ताद।
यथा गुरु चेला तथा, यही न्याय को वाद।।

(१२) हमने कहा कि जो आदम तू और तेरी जोरू बहिश्त में रह कर आनन्द में जहाँ जहाँ चाहो खाओ परन्तु मत समीप जाओ उस बृक्ष के कि पापी हो जाओगे। शयतान ने उनको डिगाया और उनको बहिश्त के आनन्द से खो दिया तब हमने कहा कि उतरो तुम्हारे में कोई परस्पर शत्रु है, तुम्हारा ठिकाना पृथिवी है और एक समय तक लाभ है। आदम अपने मालिक की कुल बाते सीख कर पृथिवी पर आ गया।

मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आयत ३५,३६,३७ ।।

ईश्वर की अल्पज्ञता, कितना थोडा ज्ञान।
अभी तो अन्हें आशीस दी, अभी निकाले जान।।

पहले आदम का वर पाना, देना उसको स्वर्ग ठिकाना।
पुन बहिश्त से तुर्त निकाला, निकल गया क्या अकल दिवाला।
शयताँ ने आदम बहकाया, उसने तो कोई दंड न पाया।
शक्ति नहीं शयताँ को दंडे, भगत जनों को मारे डंडे।
किसके हित वह तरु उपजाया, जिसका फल आदम ने खाया।
क्या अपने हित पैदा कीना, और बरज आदम को दीना।
जो दूसरे हित पेड़ लगाया, क्या बिगड़ा जो आदम खाया।
ऐसी बातें करे न ईश्वर, सर्व शक्तिमय वह जगदीश्वर।
नहीं प्रभु लिखित ग्रंथ कोई ऐसा, लिखा वचन वहां ऐसा वैसा।

आदम ने अल्लाह से, कितनो सीखी बात।
कैसे उतरा धरा पर, कितने दिन और रात।।

क्या बहिश्त है पर्वत ऊपर, आसमान पर पर्वत भू पर।
पक्षी सों वे उड़ते आये, पत्थर सम व तले गिराये।
माटी के तनु वाला आदम, हुआ स्वंर्ग फल खाकर नादम।
सभी फरिश्ते स्वर्ग निवासी, सब माटी के भोग विलासी।
माटी का सब इन्द्रिय ग्रामा, माटी रचित स्वर्ग को धामा।
माटी के पुद्गल मर जाएँ, मर कर बहुरि किधर वे जाएँ
जो मर जाएँ तो पुन जनमें, अटल नियम टुक सोचो मनमें।
त ते यह जो लिखा खुदा ने, पढ़ा लिखा कोउ सत्य न माने।

बीबियाँ नित्य बहिश्त म, रहतीं कहे कुरान।

नित्य बना क्यों कर रहे, माटी का इन्सान।।

(१३) उस दिन से डरों कि जब कोई जीव किसी जीव से भरोसा न रक्खेगा न उसकी सिफारिश स्वीकार की जावेगी न उससे बदला लिया जावेगा और न वे सहाय पाएँगे।। म॰ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ४८।।

उत्तर

आज काल्ह क्या उचितनडरना, केवल डर उस दिनका करना।
सब दिन डरो न करो बुराई, जीव जन्तु से करो भलाई "पैगम्बर
जब देत गवाई, स्वर्ग मिले तब नर को भाई"। वचन दिया
यह प्रथम खुदाने, अब क्यों उसको लगा भुलाने स्वर्गीयों का खुदा
सहायक, क्या नरकीयों का नहीं नायक।
पक्षपात ईश्वर का भारा, दुनियां जिसका लेत सहारा।

(१४) हमने मूसा को किताब और मोजिज़े दिये। हमने उनको कहा कि तुम निंदित बन्दर हो. जाओ, यह एक भय दिया जो उनके सामने और पीछे थे उनको और शिक्षा ईमानदारों को म॰ १ सि॰१ सू॰२ आ॰५३, ६५, ६६।।

उत्तर

प्रथम ग्रंथ यदि मूसा पाया, पुन कुरान क्यों व्यर्थ बनाया।
अचरज शक्ति उसको दीनी, यह बाणी बाइबल से लीनी।
माननीय नहीं बातें ऐसी, आज कल्ह क्यों होत न वैसी।
चमत्कार यदि आज असम्भव, तौ पहले भी नहीं था संभव।

कुँ॰– मूरख जन के सामने, आज कल्ह भी लोग।
करामात कर लूटते, यही पुराना रोग।।
यही पुराना रोग स्वार्थ है इसका कारन।
किया होय उस काल कपट उसने भी धारन।।
विद्यमान हैं अब सेवक उस भगवन के।
चमत्कार को गुने ? सिवा उस मूरख जन के।।

दी पुस्तक मूसा को दाना, आवश्यक क्यों हुआ कुराना।
दुष्कृत तज समुचित अपनाना, सब ग्रन्थों में एक समाना।
भिन्न भिन्न क्यों ग्रन्थ बनाये, यह पुनरुक्त दोष पुन आये।
मूसा ने इक ग्रन्थ संभाला, भूल गये क्या अल्ला ताला।
'बंदर बनो' खुदा फरमाया, इससे सबको भय दिखलाया।
मिथ्या कह कर जगत डराए, कपट करे पुन प्रभु कहलाये।
इस पुस्तक का रचना कारक, हो सकता नहीं जग का तारक

(१५) इस तरह खुदा मुर्दों को जिलाता है और तुम को अपनी निशानियाँ दिखलाता है कि तुम समझो।। म॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ७३।।

उत्तर

पहले यदि जिवाय था, अब क्यों नहीं जिवाय।
पड़े रहें क्या कब्र में, कबहुँ कयामत आय।।

जब तक रात क़यामत आवे, कब्र पड़ा मुर्दा घबरावे।
गया आज कहीं दौरा करने ! कब आवेगा मृतक उभरने ?
क्या उसकी हैं यहीं निशानी, जो है सब सुःखों का दानी।
सूरज चन्द्र नखत अरु तारे, चिन्ह नहीं क्या उसके सारे।

(१६) वे सदैव काल बहिश्त अर्थात् बैकुण्ठ में वास करने वाला है।। मं॰१ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ८२।।

उ॰— नहीं समरथ कोउ जीव की, कारज करे अनंत।
ताँते नरक रु स्वर्ग के, होत भोग का अंत।।

सान्त कर्म के भोग अनन्ता, क्यों अन्याय करे भगवन्ता।
नहीं मूरख वह नहीं अज्ञानी, थोड़ा किये बहुत दे दानी।
रात कयामत जब आवेगी, तब सब दुनियाँ फल पावेगी।
दोनों धर्मी और अधर्मी, पापाचारी अरु दुष्कर्मी।
एक ही रात न्याय यदि पाएँ, कबरों से उठ उठ कर धाएँ।
पाप पुण्य का क्या पुन अंतर, गड़े रहें दोउ काल समंतर।
सात सहस वर्षों से सृष्टि, रची खुदाने भई सुदृष्टि।

इससे पहले अल्ला खाली, बैठ रहा दुनियां का वाली।
रात कयामत जब लग बीते, बैठ रहेंगे अल्ला रीते !

सार नहीं इस बात में, बालक बुद्धि समान।
अमरचक्र चलता रहे, चालक श्री भगवान।।

(१७) जब हमने प्रतिज्ञा कराई न बहाना लोहू अपने आपस के और किसी अपने आपस को घरों से निकलना फिर प्रतिज्ञा की तुमने तुल्य ही साक्षी हो। फिर तुम वे लोग हो कि आपस को मार डालते हो एक फिरके को आप में से घरों उनके से निकाल देते हो। मं॰ १ सि॰ १ सूरत २ आ॰ ७७, ७८ ।।

क्या ईश्वर अल्पज्ञ है, परतिज्ञा करवाय।
वह त्रिकालदर्शी प्रभु, घट घट रहा समाय।।

आपस का मत लहू बहाओ, क्या औरों के खून नहाओ ?
अपनों को नहीं बाहर निकारें, क्यों पर गृह में पाँव पसारे।
नहीं इसमें कोई बात भलाई, अपनी राखों खाओं पराई।
यह सब पक्षपात की बातें, परधन प्राण हरण की घातें।
क्या प्रभु को नहीं इतना ज्ञाना, दुष्कर इनसे वचन निभाना।
देंगे तोड़ प्रतिज्ञा कीनी, क्यों उनसे परतिज्ञा लीनी।
मुसल्मान अरु मजहब ईसाई, दोनों की है एक खुदाई।
दोनों के प्रभु एक समाना, नहीं कछु अन्तर इनमें जाना।
नहीं कुरान कोउ ग्रन्थ स्वतन्तर, प्रायः सब कुछ बाइबल अन्तर।

(१८) यह वे लोग हैं कि जिन्होंने आखरत के बदले जिन्दगी यहाँ की मोल ली उनसे पाप कभी हल्का न किया जायगा और न उनको सहायतादी जायगी।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ८६।।

उत्तर

जिनकी अल्ला करे सहाया जिनका उसने बोझ घटाया।
उनसे क्या अल्ला का नाता, किस कारण वह भार घटाता।
बिना दण्ड यदि पाप घटाये, तब तो प्रभु अन्याय कमावे।
यदि परयोजन धर्मीजन से, जो नहीं पाप करे तन मन से।

तो उनका क्या करना हलका, क्या धोना वस्तर निर्मल का।
बिन विद्या की बातें काँची, कौन पुरुष माने यह साँची।
जैसा करे भरे सोइ प्रानी, यही बात सब जगत प्रमानी।

(१६) निश्चय हमसे मूसा को किताब दी और उसके पीछे हम पैराम्बर को लाये और मर्यम के पुत्र ईसा को मो ज़ज़े अर्थात् दैवीशक्ति और सामर्थ्य दिये उसके साथ रूहुल्कुदस के जब तुम्हारे पास उस वस्तु सहित पैगम्बर आया कि जिसको तुम्हारा जी चाहता नहीं फिर तुमने अभिमान किया। एक मत को झुटलाया और एक को मार डालते हो।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ५७।।

मूसा को पुस्तक दई, साखी स्वयं कुरान।
मुसल्मान नहीं मानते, क्यों नहीं करते मान।।

एक ग्रन्थ ईश्वर कृत मानें, अरु दूसरे को मिथ्या जानें।
उसको भी तुम अबस सकारो, दोषहुवाके सब अनुहारो।
चमत्कार की बातें जेती, बहकाने की घातें तेती।
भोले जन हित जाल बिछायें, लूटें और चरण पुजवायें।
करामात अब क्यों नहीं होती, क्यों बुझ गई वह पहली ज्योति।
पहले थी तो अब भी होगी, क्या वे रमते हो गए जोगी?

(२०) और इससे पहले काफिरों पर विजय चाहते थे जो कुछ पहिचाना था जब उनके पास आया झट काफिर हो गये काफिरों पर लानत है अल्लाह की।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ८६।।

तू जिसको काफ़िर कहे म्लेच्छ कहे वह तोय।
सत्य झूठ निर्णय करे, कौन कहो किमी होय।।

तेरा रब उनको फटकारे, उनका प्रभु तुम को धिक्कारें।
दोनों मन में करहु विचारा, कहाँ झूठ नहीं पाँव पसारा।
सभी मतों में सत्य समाना, जिसने ढूँढा उस पहिचाना।
यह सब झगड़े व्यर्थ लड़ाई, त्यागो यह है मूरखताई।

(२१) आनन्द का सन्देश ईमानदारों को अल्लाह, फरिश्तों पैगम्बरों जिबरईल और मीकाईल का जो शत्रु है अल्लाह भी ऐसे काफिरों का शत्रु है।। मं॰ १ सि॰ १ सू॰ २ आ॰ ७, ६८।।

उ०— मुसलमान दावा करें, अल्ला लाशरीक।
किस कारण यह फौज संग, जिबराईल रफीक।।

औरों के रिपु रिपु अल्ला के, सब शरीक रब की सेना के।
प्रेम रूप ईश्वर है भाई, वह नहीं करता वैर लड़ाई।

(२२) और कि क्षमा माँगते हैं, हम क्षमा करेंगे तुम्हारे पाप और अधिक भलाई करने वालों के।।
मं०१ सि० १ सू०२ आ० ५८।।

उ०— अल्ला का उपदेश यह, पाप बढ़ावन हार।
पाप क्षमा होने लगे, होंगे पाप अपार।।

मिल जाये जब क्षमा सहारा, कौन पाप से डरने हारा।
ईश्वर कहे न ऐसी बानी, जिससे होवे जग की हानि।
वह पुस्तक ईश्वर कृत नाहीं, पाप क्षमा हों जिसके माहीं।
प्रभु न्यायी अन्याय न करते, जो जैसा करते सो भरते।।

(२३) जब मूसा ने अपनी कौम के लिये पानी माँगा, हमने कहा कि अपना असा (दण्ड) पत्थर पर मार, उसमें से बारह चश्में फूट निकले।। मं० १ सि० १ सू० २ आ० ६०।।

कौन कहें दूसरे कोई, अनहोनी यह बात।
बारह चश्मे बह गये, डण्डे का आघात।।

मूसा सिल पर डण्डा मारे, फूट पड़े बारह फव्वारे।
बात असंभव हो नहीं पावे, बुद्धि न माने समझ न आवे।
नीर भरा पत्थर हो पोला, छिद्र फटा डण्डे ने खोला।
जो ऐसा हो तब तो संभव, नहीं तो सारी बात असंभव।

(२४) अल्लाह खास करता है जिसको चाहता है साथ दया अपनी के।। मं०१ सि०१ सू०२ आ०१०५।।

उ०— खास दया उस पर करे, जिसे चहे भगवान।
दया पात्र यद्यपि नहीं, फिर भी हो कल्यान।।

अँधी नगरी चौपट राजा, फल मिलता बिन कीने काजा।
कौन तजे नर पुन दुष्कर्मा, किस विधि करे लोक सत्कर्मा।
कर्मों पर निर्भर कछु नाहीं, होय वही जो प्रभु मन माहीं।
कर्म वृक्ष इससे मुरझावे, आश्रय हीन जगत मर जावे।

(२५) ऐसा न हो कि काफिर लोग ईर्ष्या करके तुम को ईमान से फेर देवें क्योंकि उनमें ईमानदारों के बहुत से दोस्त हैं।। मं० १ सि० २ सू० २ आ० १०६ ।।

जो लाये ईमान को, खुदा उन्हें चेताय।
सावधान रहना कहीं, काफिर देय डिगाय।

यदि सर्वज्ञ नहीं है ईश्वर, पुन काहे का है जगदीश्वर।
बार बार ऐसा चेतावे, काफिर से ऐसा घबरावे।

(२६) तुम जिधर मुँह करो उधर ही मुँह अल्लाह का है।। मं० १ सि०१ सू० २ आ० १०७।।

उ०– जौन दिशा में मुख करो, उसी ओर अल्लाह।
क्यों मक्के की ओर पुन, मानो किबला गाह।।

दिग दिगन्त में प्रभु समाये ओर छोर अल्लाह हैं छाये।
जिधर चहो तुम पढ़ों निमाजा, व्यापक सर्व गरीब निवाजा।
जो तुम कहो हुकम है ऐसा जैसा कहा सकारा वैसा।
तो क्या हुक्म दूसरा झूठा, यह अल्ला का ढंग अनूठा।
यदि अल्ला सचमुच मुख राखे, अरु उस मुख से बोले भाखे।
एक बदन चहुँदिश किमि छाये, यंत्र साथ क्या उसे घुमाये
ताँते वचन नहीं यह संगत, 'व्यापक का मुख' बात असंगत।

(२७) "जो आसमान और भूमि का उत्पन्न करने वाला है, जब कि कुछ करना चाहता है यह नहीं कि उसको करना पड़ता है, किन्तु उसे कहता है कि हो जा, बस हो जाता है"।। मं० १ सि० १ सू० २ अ० ११७।।

उ०सो०– दीना हुकम खुदा, अय जहान होजा।
किसने हुकम सुना, जब दुनियां ही नहीं बनी।।

किसको प्रभु ने हुकम सुनाया, किस कारण यह जगत बनाया।
किसने सुना हुकम अल्ला का नहीं बजूद जब रहा खुदा का।।
बना न था जब यह संसारा, केवल एकहि था कर्तारा।
तो यह जगत कहाँ से आया, सारा चूना कहँ से पाया।
बिन कारण कोई कार्य्य न संभव, रचा जगत यह बात असंभव।
निज इच्छा से सृष्टि बनाई, यदि तुम यह कहते हो भाई।
कर अजमाओ, इक मक्खी की टांग बनाओ।

मु०– सब ताकत रखता खुदा, जो चाहे करता।
वह खुद ही खुद है प्रभु, ताँते नाम खुदा।।

उ०– सर्व शक्ति मय यदि प्रभु, सब कुछ करने जोग।
क्या वह मूरख बन सके, क्या तिस लागे रोग।।

अपने जैसा दूजा अल्ला, बना सके क्या अर्श मुअल्ला।
क्या मर सके यदि वह चाहे, हो सकता नहीं ऐसा चाहे।
ताँते निज पर गुण प्रतिकूला, कर न सके प्रभु सृष्टि मूला।
जाके जो गुण कर्म सुभाऊ, नहीं विरुद्ध कर सकता राऊ।

घड़ा बनाने में यथा, तीन वस्तु दरकार।
इक माटी अरु चक्र पुन, तीसर वस्तु कुम्हार।।

घट से पूरब तीन पदारथ, होवें तो घट बने यथारथ।
कारण जगत प्रभु था भाई, उससे प्रभु ने सृष्टि रचाई।
प्रकृति के गुण कर्म स्वभावा, वह अनादि तस अंत न आवा।

(२८) "जब हमने लोगों के लिये काबे को पवित्र स्थान सुख देने वाला बनाया तुम नमाज के लिये इब्राहीम के स्थान को पकड़ो।" मं० १ सि० १ सू० २ आ० १२५

उ०– क्या काबे से पूर्व कोई, रचा न पावन थान।
जो था रचा तो किस लिये, काबे का निर्मान।

जो पहले नहीं कोई बनाया, तौ प्रभु ने कीन अन्याया।
पूर्वज लोग रहे सब वंचित, शुभ स्थान प्रभु रचा न कंचित।
क्या अल्ला इस बात को भूला, अथवा उनके था प्रतिकूला।

(२६) "वह कौन मनुष्य है जो इब्राहीम के दीन से फिर जावे परन्तु जिसने अपनी जान मूर्ख बनाया और निश्चय हमने दुनियां में उसी को पसन्द किया और निश्चय आखरत में वहीं नेक है।"

मं॰ १ सि॰१ सू॰ २ आ॰ १३०।।

मूरख जन माने नहीं, इब्राहीम का दीन।
क्या अल्ला की बात यह, नहीं हेतु से हीन।।

इब्राहीम पर भये दयालु, अन्य किसी पर नहीं कृपालु।
यदि हैं इब्रहीम धरमातम, भे प्रसन्न ताँते परमातम।
हो सकते हैं सुजन अनेका, जिनके मन में बसे विवेका।
बिन कारण यदि मिले प्रसादा, इसमें अल्ला को अपवादा।

(३०) 'निश्चय हम तेरे मुख को फेरते हैं आसमान में अवश्य हम तुझे उस किबले को फेरेंगे कि पसन्द करें उसको बस अपना मुख भी मस्जिदुल हराम की ओर फेर जहां कहीं तुम हो अपना मुख उसकी ओर फेर लो।'

मं॰ १ सि॰२ सू॰ २ आ॰ १३५।।

मूरति पूजा यह बड़ी, इसमें नहीं विवाद।
क्यों पथराओ और को, रहकर काँच प्रसाद।।

कुण्डलियाँ (मुसलमान)

हम नहीं मूरति पूजते, हम बुत तोड़न दार।
अगनित मूरति तोड़ दी, जाने सब संसार।।
जाने सब संसार मुसलमां मूरति भंजहिं।
इक अल्ला पुजवाँय खुदा के मन को रंजहि।।
किबले को हम खुदा न माने यह है सूरत।
नहीं किबला अल्लाह नहीं अल्लाह की मूरत।।

उत्तर

बुत परस्त यावत संसारा, मूरति से प्रभु पूजन हारा।
वे भी प्रभु पाहन नहीं मानें, पाहन केवल साधन जानें।
तुममें उनमें अन्तर नाहीं, ईश भावना दोनों माँही।
इक किबला इक पूजहिं सूरत, इक समान दोनों की सूरत।

मुसल्मान—मुख किबले की ओर कर, दीना हुक्म कुरान।
मुसलमान का फर्ज है, रखे फर्ज का ध्यान।

ताँते हम नहीं मूर्त पुजारी, दुनियां के जाने नर नारी।
हमें खुदा ने आज्ञा दीनी, उसकी आज्ञा सिर धर लीनी।
जो नहीं प्रभु का हुकम बजायें, तो हम सब काफिर कहलाएँ।

उत्तर—कुण्डलिया

हुक्म दिया अल्लाह ने, जैसे बीच कुरान।
व्यास देत आज्ञा उन्हें, तिस विधि बीच पुरान।
तिस विध बीच पुरान, व्यास ईश्वर अवतारा।
मानत उनकी आज्ञा, सब हिन्दु संसारा।
तुम दोनों बुत पूजक, दोनों पूजहिं मूरत इत
पहाड़ सी मस्जिद, उत छोटी सी सूरत।

वे छोटे तुम बड़े पुजारी, ऊँट घुसा घर गई बिलारी।
हम वैदिक इक वेद प्रमानें, निराकार ईश्वर को मानें।
बुत नहीं पूजें ब्रह्म उपासक, प्रभु को माने जग का शासक।
तुम भी वैदिक मत में आओ, पुन सब दोषों से बच जाओ।
जब लों निज को नहीं सम्हालो, बड़ बुत पूजा नहीं निकालो।
खण्डन करहु न छोटी सूरत, पहले घर की तोड़ो मूरत।

(३१) "जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाते हैं उनके लिये यह मत कहो कि ये मृतक हैं किन्तु वे जीवित हैं। मं॰ १ सि॰ २ सू॰ २ आ॰ २ १५४"

मारण मरण प्रभु के मग में, क्यों आवश्यक है इस जग में।
स्वारथ के सब जाल बिछाये, दुनियां को लालच लड़वाये।
पुण्य प्रभु के मग में मरना, मारो मरो फेर क्या डरना।
लूटें मारें संपति पावें, भोगहिं भोग सुरग मँह जावें।
भोले भालों को भड़काना, स्वयं गुरु बन लाभ उठाना।
चतुर करें ऐसी चतुराई, मूरख दुनियां करत लड़ाई।

(३२) और यह कि अल्लाह कठोर दुख देने वाला है, शयतान के पीछे मत चलो निश्चय वह तुम्हारा प्रत्यक्ष शत्रु है, उसके बिना और कुछनहीं कि बुराई और निर्लज्जता की आज्ञा दे और यह कि तुम कहो अल्लाह पर जो नहीं जानते। मं॰ १ सि॰१ क २ आ॰ १६५, १६८, १६६।।

उ॰– प्रभु दुखदाता दयामय, किस पर हुआ दयाल।
किसको देता घोरदुख, किस पर होत निहाल।

क्या मुस्लिम पर होय निहाला, औरों पर नहीं होय दयाला।
पक्षपात युत नाँही ईश्वर, वह तो सब जग का जगदीश्वर।
पक्ष नहीं यदि उसके मनमें, प्रेम करे हर में हर जन में।
फिर हर मानस जो सत धर्मी, दया पाय प्रभु की सत्कर्मी।
जो कोई पापी पाप कमावे, ईश कोप से अति दुख पावे।

पुन पैगम्बर मानना, व्यर्थ निरर्थक जान।
आवश्यकता भी नहीं, माने कोई कुरान।

शयतां ने दुनियां बहकाई, सबका शत्रु करे बुराई।
क्यों वह पैदा किया खुदा ने, अल्ला की अल्ला ही जाने।
भावी बात न जाने ईश्वर, है अल्पज्ञ बड़ा जगदीश्वर।
मन की जाने वह सर्वज्ञा, परख करे नहीं वह अल्पज्ञा।
सबको बहकावे शयताना, किससे सीखा यह बहकाना।
बहक जाय यदि स्वयं बेचारा, बहके स्वयं सभी संसारा।
यदि शयतां को खुद बहकावे, तो उसका गुरु खुदा कहावे।
सत्य बात तो यह है भाई, जग में घनी अविद्या छाई।

(३३) तुम पर मुर्दार लोहू ओर गोश्त सूअर का हराम है और अल्लाह के बिना जिस पर कुछ पुकारा जावे।। मं॰ सि॰ २ सू॰ आयत १७३

उत्तर

स्वयं मरे या मारा जावे, मुर्दा मुर्दा ही कहलावे।
यद्यपि कुछ थोड़ा सा अन्तर, मृतक रहे पर मृतक निरन्तर।
अनुचित केवल शूकर खाना, क्या अवगुण उसमें प्रहचाना।
शेष जन्तु मानुष पर्यन्ता, मुसलमान सब प्राणि निहन्ता।
अति दुःख देकर प्राण निकारें, मुख से बिस्मिल्लाह पुकारे।
प्रभु का नाम कलंकित कीना, कैसा हुक्म खुदा ने दीना।

प्राण किसी निर्दोष के, तन से लिये निकार।
धन्य दया अल्लाह की, धन्य बड़ी सर्कार।।

क्यों प्रभु उन पर दया न धारे, वे भी उसके पुत्र विचारे।
गौ आदिक जन्तु उपकारी, जिन पर पलती सृष्टि सारी।
उनकी हत्या खुदा कराये, तनिक दया उसको नहीं आये।
क्या वह हिंसक अत्याचारी, सृष्टि की हानि कर डारी।

(३४) रोजे की बात तुम्हारे लिये हलाल कर दी गई, कि तुम्हारे लिये मदनोत्सव करना अपनी बिबियोंसे वे तुम्हारे वासते पर्दा हैं और तुम उनके लिये पर्दा हो। अल्लाह ने जाना कि तुम चोरी करते हो अर्थात् व्यभिचार बस फिर अल्लाह ने क्षमा किया तुम को बस उसे मिलो और ढूँढों जो अल्ला ने तुम्हारे लिये लिख दिया है अर्थात् सन्तान। खाओ पियों यहाँ तक कि प्रकट हो तुम्हारे लिये काले तागे से सुपेद तागा वा रात से जब दिन निकले।। मं॰ सि॰ २ सू॰ आयत १८७

उत्तर

शुरु हुआ जब पंथ कुरानी, पूछा जाकर कोई पुरानी।
एक मास व्रत विधि बतलाएँ, क्या फल उसका सब समझाएँ
पंडित जी ने विधि बताई, चन्द्रायण व्रत महिमा गाई।
ज्यों ज्यों चन्द्र कला घट जाए, त्यों त्यों भोजन ग्रास घटाए।

भव्य दिवस महँ भोजन खाना व्रत का सारा कहा विधाना।
वाको तो वे समझ न पाएँ, चन्द्र दरस कर भोजन खाएँ
रात्रि खाएं खाएं प्राता, फिर भी रोजा समझा जाता।
कैसा व्रत यह कैसा रोजा, खाएँ निरन्तर रोज़बरोजा।
दिन को त्याग रात को खाएँ, यह तो तन में रोग लगाएँ।
दें उपदेश निगम अरु आगम व्रत में करो न नार समागम
मुसलमान इसको नहीं त्यागे, भली बात से कोसों भागे।

(३५) अल्लाह के मार्ग में लड़ो उनसे जो तुमसे लड़ते हैं मार डालो तुम उन को जहां पाओ, कतल से कुफ्र बुरा है। यहां तक उनसे लड़ों कि कुफर न रहे और होवे दीन अल्लाह का। उन्होंने जितनी जियादती करी तुम पर उतनी ही तुम उनके साथ करो। मं. १ सि. २ सू. २ आयत १९०, १९१, १९३, १९४

उत्तर– यदि कुरान लिखता नहीं, ऐसी ऐसी बात।
क्यों होता अपराध बिन, घोर रक्त का पात।'

अन्य मतों के मानन हारे, अगनित मारे गये विचारे।
निर्दोषों की हत्या कीनी, यह कुरान ने शिक्षा दीनी।
जो नर मानत नहीं कुरआना, उस मानुष को काफिर माना।
काफिर का वध कहें भलाई, काफिर से नित करो लड़ाई।
काफिर को लूटो अरु मारो, काफिर जनके प्राण निकारो।
मुसलमान के यही आचारा, यही आचार यही व्यौहारा।
मुख से दीन ही दीन पुकारें, सदियों तक चमकीं तलवारें।
क्या फल मिला तुम्हें रे भाई, क्या मिट गई प्रभुकी प्रभुताई।
तुमने अपना राज्य गवाया, इन बातों का यह फल पाया।
ताँते यह तुब ग्रन्थ कुराना, ईश्वर कृत नहीं जावे माना।
यह बातें कहते अज्ञानी, स्वारथ की वह सभी कहानी।

(३६) अल्लाह झगड़े को मित्र नहीं रखता, ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हों इसलाम में प्रवेश करे।।
मं. १ सि.१ सू. २ आ. २०५, २०८ ।।

उत्तर— झगड़ा प्रभु चाहे न हीं, झगड़े को उकसाय।

मुसलमान के हाथ से, काफिर को मरवाय।।

सुनों सुनो हे मुस्लिम भाई, अल्लाह तो नहीं चहे लड़ाई।
पुन क्यों दीन नाम पर लड़ते, लड़ते मरते और झगड़ते।
अल्ला का सुन लिया संदेसा, वृक ने धरा भेड़ को भेसा।
प्रथम कहे काफिर को मारो, अब झगड़े को दूर निवारो।
जो कोई मुसल्मान बन जाये, वह अल्ला के मन को भाये।
पक्षपात क्यों रबके मन में, क्या ईश्वर नहीं उने तन में।

(३७) खुदा जिसको चाहे अनन्त रिज़क देवें। मं॰ १ सि॰ २। सू॰ २। आ॰ २१२

उत्तर— कर्म किये बिन देत है, यदि रब रिजक अपार।
कर्म हेत क्यों रात दिन, कष्ट करे संसार।।

बिना पुण्य कोई दौलत पाए, जग से पुण्य कर्म मिट जाए।
सुख दुख यदि अल्ला की मरजी, तब तो दीन धरम सब फरजी
यही बात मुस्लिम मन भानी, धर्म त्याग करते मनमानी।
उनमें भी कुछ जन हैं ऐसे, कथन न मानत ऐसे वैसे।
धर्म भाव वे रखते मन में, सत्य झलकता उनके तन में।

(३८) प्रश्न करते हैं तुझसे रजस्वला को कह अपवित्र है पृथक रहो। ऋतु समय में इनके समीप मत जा सो जब तक कि वे पवित्र न हो जब नहा लेवें उनके पास उस स्थान से जाओ खुदा ने आज्ञा दी। तुम्हारी बीबियाँ तुम्हारे लिये खेतियां हैं वहाँ जाओ जिस तरह चाहो अपने खेत में तुमको अल्लाह लगव (बेकार) शपथ में नहीं पकड़ता। मं॰ १ सि॰२ सू॰ २ आ॰ २२२/२२३/२२४।।

उत्तर— रजस्वला के संग से, लगे पुरुष को रोग।
साँची कही कुरान ने, वर्ज दिया संभोग।।

नार कही जो खेती घर की, यह है बात बड़ी बेपर की।
जैसे चाहो वैसे जाओ, मलो दलो तोड़ो या खाओ।
अनुचित ऐसे कथन विचारा, इन से होवे विषय पसारा।

(३९) व कौन मनुष्य है जो अल्ला को उधार देवे अच्छा बस अच्छा द्विगुण करे उसके वास्ते।
मं १सि २ सू २ आ.२४५

उत्तर– अल्लाह को घाटा पड़ा लेने लगा उधार।
या कोई सट्टा हर गया, कैसा किया व्यापार।

क्या उसने दे दिया दिवाला, उसके लगा बैंक को ताला।
वह तो जग का मालिक भाई, वह क्यों माँगे पैसा पाई।
धन संपति सब कोष खजाने, दुनियां को दे दिये खुदा ने।
क्यों ईश्वर को लज्जित करते, उसके नाम स्वयं घर भरते।

(४०) उसमें से कोई ईमान न लाया कोई काफिर हुआ जो अल्लाह चाहता न लड़ते जो चाहता है अल्ला करता है। मं १ सि २ सू २ आ० २५३।।

उत्तर– होती सभी लड़ाइयाँ, प्रभु इच्छा के संग।
तो केवल अल्लाह ही, करे शान्ति का भंग।।

(४१) जो कुछ आसमान और पृथिवी पर है सब उसी के लिये है चाहे उसकी कुरसी ने आसमान और पृथिवी को समा लिया है। मं १ सि ३ सू २ आ० २५५

उत्तर

जीव जन्तु हित जगत बनाया, कुछनहीं अपने लिये रचाया।
रचने हारा प्रभु है स्वामी, स्वयं ब्रह्म है पूरनकामी।
कुरसी पर बैठे यदि ईश्वर, तौ कैसे व्यापक जगदीश्वर।
इक देशी सर्वत्र न व्यापे, कँह कुर्सी वह बैठा जापे

(४२) अल्लाह सूर्य्य को पूर्व से लाता है बस तू पश्चिम से ले आ बस जो काफिर हैरान हुआ निश्चय अल्लाह पापियों को मार्ग नहीं दिखलाता। मं १ सि ३ सू २ आ० २५८

देखें तनिक कुरान के, अल्लाह का अज्ञान।
भ्रमण करत सूरज नहीं, इतना भी नहीं ज्ञान।

पूरब पच्छम सूर्य न जावे, निज परिधि में चक्कर खावे।

निश्चय जिसने रचा कुराना, ग्रह गति को नहीं उसने जाना।
पापिन को पथ नहीं दरसावें, ऐसा खुदा काम किस आवे।
भले न चलते कभी कुमारग, उनको क्या दिखलाना मारग।
भूलों को रस्ता दिखलाना, सन्मारग पर उनको लाना।
निज कर्त्तव्य न अल्ला पाले, हाय बुद्धि पर लग गये ताले।

(४३) कहा चार जानवरों से ले उनकी सूरत पहचान रख। फिर हर पहाड़ पर उनमें से एक एक टुकड़ा रख दे फिर उनको बुला दौड़ते तेरे पास चले आवेंगे।। मं॰ १ सि॰ ३ सू.२ आ॰ २४२।।

अल्लाह है या कोई मदारी, करामात है कितनी भारी।
सोचो समझो मन में भाई, इन बातों में नहीं खुदाई।
ऐसा खुदा न मानें ज्ञानी, इससे तो प्रभु की हो हानि।
ताँते सत्य मार्ग परआओ, स्वयं फँसे मत और फँसाओं।

(४४) जिसको चाहे नीति देता है।। मं॰ १ सि.१ सू॰ २ आ॰ २५१।।

जिसको चाहे नीति दे, देवे चहे अनीत।
पक्षपात की बात यह, नहीं अल्ला की रीत।।

ईश्वर की नहीं ऐसी रीति, प्राणी मात्र सों प्रभु की प्रीति।
वह सब को सन्मार्ग दिखावें, उल्टी नीति नहीं दरसावे।

(४५) वह कि जिसको चाहेगा, क्षमा करेगा जिसको चाहे दण्ड देगा क्योंकि वह सब वस्तु पर बलवान है।। मं॰ १ सि.१ सू॰ २ आ॰ २६६।।

क्षमा योग्य को क्षमा न देना, दण्डनीय को गोदी लेना।
गवर्गण्ड राजा की नांई, बात करे दुनियाँ का सांई।
जिसको चाहे पापी कर दे, चाहे जिसे पुण्य से भर दे।
सभी कर्म जब ईश्वर करता, फेर जीव क्यों फल को भरता।
जैसा रब ने उसे बनाया, वैसा ही बन जग में आया।
पुन क्यों दुख सुख जीव उठावे, रब क्यों नहीं उसका फल पावे।
हुक्म पाय वध करत सिपाई आज्ञा नरपति केरि निभाई ।

यदि सिपाई को देवें फाँसी, उस राजा की होवें हाँसी।
प्रभु मानुष से कर्म करावे, क्यों उसका मानुष फल पावे।

(४६) कह इससे अच्छी और क्या परहेजगारों को खबर दूं कि अल्लाह की ओर से बहिश्ते हैं जिनमें नहरें चलती है उन्ही में सदैव रहने वाली बीबियाँ हैं, अल्लाह की प्रसन्नता से अल्लाह उनको देखने वाला साथ बन्दो के।। ....

उत्तर– यह अल्ला का स्वर्ग है या चकला बाजार।
ईश्वर जनखों की तरह, कहे पुकार पुकार

वहाँ बीबियाँ कँह से आई, कँह से अल्ला ने मँगवाई।
उत्पन हुई स्वर्ग में सारी, अथवा यहाँ से वहाँ सिधारीं
मर कर गई यदि इस जग से, कैसे गई गई किस मग से।
वे तो पड़ी कबर में जाकर, क्या अल्ला ले गया उठाकर।
रात कयामत अभी न आई, अल्ला ले गये संग लिवाई।
यह तो काम किये नहीं आछे, छोड़ गये पतियों को पाछे।
रात कयामत हो गई सपना, तोड़ा नियम खुदा ने अपना।
यदि वे उत्पन हुई वहां पर, अल्ला रहते आप जहाँ पर।
कैसे काटत दिवस बेचारीं, यौवन भरी अकेली नारी।
बहुत दूर है रात कयामत, कब पाएँगी पुरुष नियामत।
आज काल्ह भी यदि नर पातीं, अरु उनसे हैं मौज उड़ाती।
तौ वे रोजे रखने वारे, पंजनमाजी रब के प्यारे।
जब जायेंगे बीच बहिश्तों, भेंट करेंगे संग फरिश्तों।
उनके लिये कहाँ से अल्ला, लायें बीबियाँ अर्श मुअल्ला।

उत्पन की जिस बीबियाँ, खुदा बहिश्तों माँहि।
पुरुषों को उत्पन किया, क्यों अल्ला ने नाँहि

(४७) निश्चय अल्ला की ओर से दीन इसलाम है।। मं॰ १ सि॰ ३ आ॰ १६।।

उत्तर– क्या अल्ला का दीन है, केवल इक इसलाम।
शेष जगत बेदीन है, वाह मौला के काम।

तेरह सौ बरस के पहले, जो युग हुए व्यतीत सुनहले।
उन्हें दीन नहीं था कोउ चहिये, रब की बुद्धि को क्या कहिये।
यह कुरान जिस पुरुष बनाया, पक्षपात उसके मन भाया।

(४८) प्रत्येक जीव को पूरा दिया जायगा जो कुछ उसने कमाया और वे न अन्याय किये जायेंगे। कह या अल्ला तू ही मुलक का मालिक है जिसको चाहे देता है जिसको चाहे छीनता है जिसको चाहे प्रतिष्ठा देता है जिसको चाहे अप्रतिष्ठा देता है सब कुछ तेरे ही हाथ में है प्रत्येक वस्तु पर तुही बलवान है रात को दिन में और दिन को रात में बैठाता है और मृतक को जीवित में जीवित में जीवित को मृतक से निकालता है और जिसको चाहे अनन्त अन्न देता है। मुसलमानों को उचित है कि काफिरों को मित्र न बनावें सिवाय मुसलमानों के जो कोई यह करे बस यह अल्लाह की ओर से नहीं। यह जो तुम चाहते हो अल्लाह को तो पक्ष करो मेरा अल्लाह चाहेगा तुमको और तुम्हारे पाप को क्षमा करेगा निश्चय करूणामय है।। मं॰ १ सि॰ ३ आ॰ २१, २२, २३, २४, २७।।

सब जीवों को पूर्ण फल देत यदि प्रभु दान।
तब तो क्षमा न कर सके, काहू को भगवान।।

क्षमा करे यदि वह जगदीश्वर, न्यायवान पुन रहे न ईश्वर।
बिन सत्कर्म बना दे राजा, यह तो प्रभु को निपट अकाजा।
निपट असंभव मृतक जिवाना, चमत्कार का नहीं जमाना।
ईश्वर का कानून न टूटे, उसके नियम न होते झूटे।
पक्षपात प्रभु ह्रदय समाया, काफिर सब जग को ठहराया।
केवल मुसलमान है प्यारा, अल्ला की आँखों का तारा।
काफिर चाहे करे भलाई, उससे उचित न करे मिताई।
मुसलमान को मित्र बनावे, चाहे कितने पाप कमावे।
मुसल्मान अरु खुदा कुराना, सब पखपाती यह हम जाना।
इन सब में है भरी अविद्या, छुई तनिक नहीं इनको विद्या।

मोहम्मद साहेब की, लील्हा लखें अपार।
कहते मेरा पख करो, अल्लाह करे तुम्हार।।

मुसल्मान को प्रभु अपनाये, क्षमा करे जो पाप कमाये।

नहीं आत्मा निर्मल बाकी, मुस्लिम गाते महिमा जाकी।
स्वारथ हित यह रचा कुराना, स्वारथ केवल स्वारथ ठाना।

(४६) जिस समय कहा फरिश्तों ने कि ऐ मर्यम तुझको अल्लाह ने पसंद किया और पवित्र किया ऊपर जगत की स्त्रियों के। मं॰ १ सि॰ ३ सू॰ ३ आ॰ ३५।।

खुदा फरिश्ते खुदा के, आज काल्ह नहीं आँय।
नहीं बोले नहीं दरस दें, नहीं बातें बतराँय।

आज काल्ह वे क्यों नहीं आते, क्यों नही कोई बातें बतलाते।
सुनहु सत्य हौं तुम्हें बताऊँ, यह लील्हा इनकी दरसाऊँ।
जँह यह पंथ चला जिस काला, नहीं था वँह कोई विद्या वाला।
अपढ़ असभ्य बुद्धिके भोरे, ज्ञानहीन जनु कागद कोरे।
फैल गया तब मजहब अँधेरा, रात गई अब हुआ सवेरा।
अब नहीं चलें मजहब यह पोंगे, मानत इन्हें अकल के घोंघे।

(५०) उसका कहता है कि 'हो' बस हो जाता है। काफिरों ने धोका दिया ईश्वर बहुत मकर करने वाला है।।

मं॰ १ सि॰ ४ सू॰ ३ आ॰ ३ ४६ए ५३।।

उत्तर— बिन अल्ला के और कुछ, वस्तु नहीं जग माँहि।
मुसल्मान यह मानते, इसमें संशय नांहि।।

'हो जा' किसको कहा खुदा ने कौन हुआ यह अल्ला जाने।
मुसल्मान क्या देंगे उत्तर, सात जन्म तक रहें निरुत्तर।
उत्पादन कारणबिन भाई, वस्तु न जाये कोई बनाई।
बिन कारणके कार्य असंभव, पितु के बिना पुत्र नहीं संभव।
रब खाता अरु देता धोखा, मुसल्मान काखुदा अनोखा।
भला पुरुष भी छल से डरता, पर इत अल्ला धोखा करता।

(५१) क्या तुमको यह बहुत न होगा कि अल्लाह तुम को तीन हजार फरिश्तों के साथ सहाय देवे।।

मं॰१सि॰४ सू॰ ३ आ॰ ११०।।

रब के तीन हजार फरिश्ते, क्या जाने क्या उससे रिश्ते।
मुसल्मान के सभी सहायक, हर मोमन के विघ्न विनायक।
पर इस समय कहां है अल्ला, क्यों बैठा है निपट निठल्ला।
मुस्लिम थे दुनियाँ के राजा, गया राज हो गये मौहताजा।
खुदा सहायक क्यों नही आते, क्यों नही संग फरिश्ते लाते।
मुसलमान पढ़ रहे निमाजा, आज अल्ला आजा आजा।

पंछी को जब पकड़ते, देते जाल बिछाय।
लालच में मूरख फँसे, लालच बुरी बलाय।।

(५२) और कफिरों पर हमको सहायकर, अल्लाह तुम्हारा उत्तम सहायक और कारसाज है जो तुम अल्लाह के मार्ग में मारे जाओ व मर जाओ अल्लाह की दया बहुत अच्छी है।।

मं॰ १ सि॰ ४ सू॰ ३ आ॰ १३०, १३३, १४०।

उत्तर– अन्य मतों के नरों को, मुस्लिम मारन हेत।
विनती अल्ला से करें, और मदद को लेत।।

मदद हेत फैलावा झोला, ईश्वर नहीं वरू इतना भोला।
वह तो प्राणि मात्र का प्यारा, सकल सृष्टि का वही सहारा।
वह क्यों मदद करेगा इनकी, चित्त वृत्ति हिंसा में जिनकी।
कारसाज वह यदि तुम्हारा, राजपाट क्यों मुसलिम हारा।
कार्य नष्ट क्यों तुम्हरे होते, रात दिवस क्यों मुस्लिम रोते।
मुसलिमका प्रभु क्यों पखपाती, क्या उसके घर खाय चपाती

(५३) और अल्लाह तुम को परोक्षज्ञ नहीं करता परन्तु अपने पैगम्बरों से जिसको चाहे पसन्द करे बस अल्लाह और उसके रसूल के साथ ईमान लाओ।। मं॰ १ सि॰ ४ सू॰ ३ आ॰ १५६।।

उत्तर– मुसलमान जब मानते, लाशरीक अल्लाह।
पुन पैगम्बर शर्क से, करते बड़ा गुनाह।।

इक अल्ला पर रखे ईमाना, नहीं अल्ला के कोऊ समाना।
क्यों पुन शामिल किया पैगम्बर, जो झगड़े का वृथा अडंबर

पैगम्बर मोहम्मद साहब, इनको गुनों खुदा के नाइब।
क्या पैगम्बर यदिनहीं आवे, अल्ला काम चला नहीं पावे।
वह तो सब ताकत का मालिक, सब का दाता सब का खालिक।

(५४) ऐ ईमान वालों! सन्तोष करो परस्पर थामे रखो और लड़ाई में लगे रहो अल्लाह से डरो कि तुम छुटकारा पाओ।। मं॰ १ सि॰ ४सू॰ ३ आ॰ १७८।।

रैन दिवस यह चहें लड़ाई, शान्ति गई बदअमनी छाई।
प्रभु से नाम मात्र का डरना, मार काट जो चाहे करना।
तौ भी मिल जाये छुटकारा, धन्य प्रभु मुस्लिम का प्यारा।

(५५) यह अल्ला की हद्दें है जो अल्लाह और उसके रसूल का कहा मानेगा वह बहिश्त में पहुंचेगा जिनमें नहरें चलती हैं और यही बड़ा प्रयोजन है। जो अल्लाह की और उसके रसूल की आज्ञा भंग करेगा और उसकी हद्दों से बाहर जाएगा वह सदैव रहने वाली आग में जलाया जायगा और उसके लिये खराब करने वाला दुख है।।

मं॰ १ सि॰४ सू॰ ४ आ॰ १३, १४।।

स्वयं खदाने ले लिया, पैगम्बर को साथ।
कर शरीक सब काम में, वाग दई उस हाथ।।

दोनों की पक्की भई यारी, स्वर्ग लोक में भागीदारी।
काम स्वतंत्र न प्रभु कर पाए, बिन रसूल कुछ किया न जाए।

(५६) "और एक त्रसरेणु के बराबर भी अल्लाह अन्याय नहीं करता और जो भलाई होवे उसका द्विगुण करेगा उसको।"

उत्तर– त्रसरेणु भर भी यदि, करे नहीं अन्याय।
तौ दुगुना फल देत क्यों, क्यों नही पाप घटाय।।

मुसलमान का पख क्यों करता, क्योंकाफिरी का गला पकरता।
अधिक न्यून जो फल का दाता, वह कैसे न्यायी कहलाता।

(५७) "जब मेरे पास से बाहिर निकलते हैं तो तेरे कहने के सिवाय (विपरीत) सोचते हैं अल्लाह उनकी

सलाह को लिखता है। अल्लाह ने उनकी कमाई वस्तु के कारण से उनको उलटा किया। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह के गुमराह किये हुए को मार्ग पर लाओ बस जिसको अल्लाह गुमराह करे उसको कदापि मार्ग न पावेगा।"

उत्तर– वही खाते प्रभु रखे क्या, बात न रहती याद।
स्मरण शक्ति अल्लाह की कैसे भई बरबाद।।

सब बातें जो लिखता जाए, वह कैसे सर्वज्ञ कहाए।
यह शयतान जगत बहकाता इस कारण वह दुष्ट कहाता।
अल्ला मारग और भुलावें, हम उसके पुन गुन क्यों गावें।
भेद रहा क्या इन दोउन में, दोनों एक बराबर गुन में।
बड़ शयतान खुदा को मानों, यह दोनों में अंतर जानो।

(५८) "और अपने हाथों को न रोके तो उन्हेंपकड़ लो और जहाँ पाओ मार डालो। मुसलमान को मुसलमान का मारना योग्य नहीं जो कोई अनजान से मार डाले बस एक गर्दन मुसलमान का छोडना है और खून बहा उन लोगो की ओर से हुई जो उस कौम से होवे और तुम्हारे लिये जो दान कर देवे जो दुश्मनकी कौम से है और जो कोई मुसलमान को जान कर मार डाले वह सदैव काल दोजख में रहेगा उस पर अल्लाह का क्रोध और लानत है।" मं॰ १ सि॰ ५ सू ४ आ॰ ६०–६१–६२

उत्तर

टुक देखें अल्ला का धंधा, पक्षपात में हो रहा अंधा।
जो नहीं मुसलमान हो जावें, मारें उन्हें जहां कहीं पावे।
मुसलमान को कभी न मारो, सुनहु अल्ला के प्यारो।
भुलहि से मुस्लिम मर जावे, अल्लाह प्रायश्चित करावे।
अन्य मतालम्बी को मारें, उनके बधे बहिश्त सिधारें।
पड़े कूप में अस उपदेसा जिससे बढ़े जगत में क्लेसा।
ऐसे ग्रंथ खुदा पैगम्बर, कैसे सहन करे यह अंबर।
निर्दोषों के घातक मारक, सकल सृष्टि के हानि कारक।
फैली जब से हुए बुराई इनके मन में नही भलाई।
रे नर वैदिक मत में आओ, सत्य सदन में रह सुख पाओ।

सुनो अन्य मत के क्या कहते, वे भी उसी स्वप्न में रहते।
पुण्य कर्म मुस्लिम को मारे, मुस्लिम मारे स्वर्ग सिधारे।
दोनों ही का निश्चय झूठा, दोनों ही से ईश्वर रूठा।
केवल सत्य वेद भगवाना, जिसमें सब संसार समाना।
आर्य मार्ग सों कर अनुरागा, दस्यु मार्ग को समुचित त्यागा।

(५६) शिक्षा प्रगट होने के पीछे जिसने रसूल से विरोध किया और मुसलमानों से विरुद्ध पक्ष किया अवश्य हम उनको दोज़खमें भेजेंगे।" मं॰ १ सि॰सू॰ ४ आ॰ ११३।।

उत्तर– क्या कहते हैं देखिये, अल्ला और रसूल।
निज स्वारथ को साधते, यह मतलब के मूल।।

अपना मजहब बढ़ावन कारण नाम खुदा का करते धारण।
मोहम्मद साहब यह जानत, अल्ला बिन कोउ बात न मानत।
मजहब बढ़ेगा नाम बढ़ेगा, भेंट चढ़ावा बहुत चढ़ेगा।
स्वारथ पुञ्ज गाँठ के पक्के, क्यों दुनियां खाती है धक्के।
यह जन पर का काज बिगारें, केवल अपना आप सुधारें।
आप्त नहीं थे नहीं विद्वाना, इनके वचन नहीं परमाना।

(६०) जो अल्लाह फरिश्तों किताबों, रसूल और कयामत के साथ कुफ्र करे निश्चय वह गुमराह है। निश्चय जो लोग ईमान लाये फिर काफ़िर हुए फिर फिर ईमान लाये पुनः फिर गये और कुफ्र में अधिक बढ़े अल्लाह उनको कभी क्षमा न करेगा और न मार्ग दिखलायेगा। मं॰ १ सि॰५ सू॰ ४ आ॰ १३४–१३५।।

उत्तर– ला शरीक कहते रहो, करते जाओ शरीक।
ग्रंथ रसुलादिक सभी उसके यार रफीक।।

तीनबार प्रभु करे मुआफी, क्यो इतनी ही माफी काफी।
बार बार जो मार्ग दिखावे, फिर तो आपहि कुफ्र बढ़ावे।

(६१) "निश्चय अल्ला बुरे लोगों और काफिरों को जमा करेगा दोजख में। निश्चय बुरे लोग धोखा देते हैं। ऐ ईमान वालो ! मुसलमानों को छोड़ काफिरों को मित्र मत बनाओ।"

मं॰ १ सि॰ ५ सू॰४ आ॰ १३५, १४१, १४३

मुसलमान को स्वर्ग दिलाये, अन्य लोग दोजख पहुंचाये।
क्याप्रमाण हम यह सच माने, मन घड़न्त यह झूठ फसाने।
खाये धोखा देवे धोखा, मुसलमान का खुदा अनोखा।
ऐसा अल्ला हमें न भाये, जाये हमें न मुख दिखलाये।
धोखे बाजों के सँग बोले, वँह पर निज करतूतें घोले।
"याहशी शीतला देवी ताहशो खरवाहनः।

उत्तर— जैसे को तैसा मिले, यही जगत की रीत।
ओछे से ओछा मिले, सुजन सुजन की प्रीत।

धोखा करे स्वयं जबअल्ला, तब क्यों बैठे भगत निठल्ला।
खुदा रची धोखे की मंडी, चेले चलें उसी पगडंडी।
दुष्ट मुसलमान होवे चाहे, तौ भी अल्ला उसे सराहे।
संग उसी के मैत्री जोड़ो, अन्य भले का भी सिर फोड़ो।
कैसे घृणित जघन्य विचारा, महाँ दुखित इनसे संसारा।

(६२) ऐ लोगों ! निश्चय तुम्हारे पास सत्य के साथ खुदा की ओर से पैगम्बर आया बस तुम उन पर ईमान लाओ अल्लाह माबूद अकेला है। मं॰ १ सि॰६ सू॰४ आ॰ १६७—१६८॥

उत्तर— पैगम्बर हैं खुदा के, उन पर रखो ईमान।
ला शरीक कैसे रहा, पारब्रह्म भगवान॥

खुदा पैगम्बर हैं व्यापारी दोनों की है भागीदारी।
क्या अल्ला का ठौर ठिकाना, कहँ का वासी कौन मकाना।
पैगम्बर जहँ आते जाते, अल्ला उनको कहाँ बुलाते।
अल्लाह व्यापक नहीं तुम्हारा, एक देश में रहने बारा।
कहीं तो उसका व्यापक लिखते, एक देश में कहीं है दिखते।
इक नर ने नहीं रचा कुराना, बहुतों ने इसको निर्माना।
एक बात लिखता है एका, भिन्न भिन्न मत लिखें अनेका।

(६३) तुम पर हराम किया मुर्दार, लोहु सुअर का माँस, जिस पर अल्लाह के बिना कुछ और पढ़ा जावे, गला घोटे लाठी मारे ऊपर से गिर पड़े सींग मारे औरदरद का खाया हुआ।"

 म॰ २ सि॰ ६ सू॰ ५आ॰ ३।।

उत्तर– यदि इतने ही जीव हैं, अल्लाह किये हराम।
च्यूंटी टिड्डी आदि पुन, त्यागन का क्या काम।

"और अल्लाह को अच्छा उधार दो अवश्य मैं तुम्हारी बुराई दूर करूंगा और तुम्हे बहिश्तों में भेजूंगा।" अल्लाह के चुक गए खजाने, सबसे लगा उधार उठाने। जो कोई चहे सुरग में जाना, उसके हां धन जमा कराना।

ले करके अल्ला का साया स्वारथ का इक जाल बिछाया

(६५) जिसको चाहता है क्षमा करता है, जिसको चाहता दुख देता है, जो कुछकिसी को भी न दिया वह तुम्हें दिया।" म॰ २ सि॰ ३ सू॰ ५ आ॰ १६–१८।

उत्तर– कर देता पापी जिसे, चाहे वह शयतान।
सभी काम वैसे करे मुस्लिम का भगवान

अल्ला जब सब काम करावे, तो अल्ला दोजख में जावे।
पाप पुण्य कर्मों का कर्ता, अल्ला कर्ता अल्ला भर्ता।
पराधीन नर के बस नाँही, सब ईश्वर की इच्छा माँही।
पाप पुण्य क्यों नर को लागेक्यों नर भोगे नरक अभागे।
आज्ञा दे सेना का नायक, सैनिक मारे तीछन सायक।
सैनिक को कछु दोष न लागे, वह तो बँधा हुकम के तागे।

(६६) आज्ञा मानो अल्लाह की और आज्ञा मानों रसूल की।" मं॰ २सि॰ ७ सू॰ ५ आ॰ ८६

उत्तर– मानो हुकम खुदाय का, मानो हुकम रसूल।
ला शरीक अल्लाह को, कहना कभी न भूल

(६७) "अल्लाह ने माफ किया जो हो चुका और जो कोई फिर करेगा अल्ला उसको बदला देगा।"
मं॰ २ सि॰७ सू॰ ५ आ॰ ६२।।

क्षमा करें जो पाप को, वह तो पाप बढ़ाय।
पापी डरे न पाप से, यदि क्षमा मिल जाय।।

क्षमा दान में नहीं भलाई, क्षमा पसारे बहुत बुराई। क्षमा दान है
जिसके माँही, वह पुस्तक ईश्वर कृत नाँही।
पाप त्याग हित विनती करना, पुण्य कर्म अरु नाम सिमरना।
यह तो है शुभ फल का दायक दुष्कृत का नहीं प्रभु सहायक।

(६८) और उस मनुष्य से अधिक पापी कौन है और जो अल्लाह पर झूठ बाँध लेता है और कहता है कि मेरी ओर वही की गई परन्तु वही उसकी ओर नहीं की गई और जो कहता है कि मैं भी उतारूँगा जैसे अल्लाह उतारता है।

मं॰ २ सि.७ सू॰ ६ आ॰ ९४।।

उत्तर– पैगम्बर के समय में, उठा कोई नर आन।
वह भी कहता था मुझे वही देत भगवान।।

पैगम्बर जब देखा तिसको, मन में बहुत बढ़ाया रिसको।
उस नर को झूठा बतलावें, कहते हमीं वही को पावे।

(६९) अवश्य हमने तुमको पैदा किया फिर तुम्हारी सूरतें बनाई फिर हमने फरिश्तों से कहा आदम को सिजदा करो बस उन्होंने सिजदा किया परन्तु शयतान सिजदा करने वालों में से न हुआ। कहा जब मैंने तुझे आज्ञा दी फिर किसने रोका कि तूने सिजदा न किया, कहा मैं उससे अच्छा हूं तूने मुझको आग से और उसको मिट्टी से उत्पन्न किया। कहा बस उसमें से उत्तर यह तेरे योग्य नहीं है कि तू उसमें अभिमान करे। कहा उस दिन तक ढील दे कि कबरों में से उठाये जावें। कहा निश्चय तू ढील दिये गयों में से है। कहा बस इसकी कसम है कि तूने मुझको गुमराह किया अवश्य मैं उनके लिये तेरे सीधे मार्ग पर बैठूंगा।। और प्रायः तू उनको धन्यवाद करने वाला न पायेगा। कहा उससे दुर्दशा के साथ निकल अवश्य जो कोई उनमें से तेरा पक्ष करेगा तुम सब से दोजख को भरूंगा।

मंत्र २ सि ८ सू ७ आ॰ १०, १२, १३, १४, १५, १६

उत्तर– अब देखो लड़ने लगे, अल्ला और शयतान।
कौन भला माने इन्हें, बुद्धिमान इन्सान।

एक फरिश्ता सुने न रब की, होने लागी अब की तब की।
प्रभु उसका मन कर दे पावन, निर्मल अन्तः करण सुहावन।

निर्बल रब से बन नहीं पावे, एक फरिश्ते को समझावे।
पापी उसको स्वयं बनाया, जो कीना सोई फल पाया।
वह शयतान भया विद्रोही, हुआ खुदा का पूरन द्रोही।
ऐसे पापी को तज दीना, यह कारज अच्छा नहीं कीना।
उसके प्राण यदि हर लेता, आज उसे वह क्यों दुख देता।
बड़ी भूल में अल्ला, भूला, छोड़ दिया शत्रु प्रतिकूला।
सब जग को शयताँ बहकावे, अल्ला शयतां को भरमावे।
ताँते अल्ला बड़ो शैताना, उससे बड़ा और नहीं आना।
स्पष्ट कहा शयताँ ने रब को, तूने मार्ग दिखाया सब को।
मार्ग भ्रष्ट मुझ को ही कीना, यह अनथ मुझ पर क्यों कीना।
सब पापों की जड़ है अल्ला, बन बैठा है अर्श मुअल्ला।
ज्ञानी ऐसा खुदा न मानें, मुस्लिम की मुस्लिम ही जाने।
पुरुष समान खुदावन्द बोले, साथ फरिश्ते ले कर डोले।
ऐसा देहधारी अल्पज्ञा, न्याय शून्य अज्ञानी अज्ञा।
मुसलमान समान खुदाबन्द बोले, साथ फरिश्ते ले कर डोले।
ऐसा देहधारी अल्पज्ञा, न्याय शून्य अज्ञानी अज्ञा।
मुसलमान का अल्ला पाया, विद्वानों के मन नहीं भाया।

(७०) निश्चय तुम्हारा मालिक अल्ला है जिसने आसमानों और पृथिवी को छः दिन में उत्पन्न किया फिर करार पकड़ा अर्श पर। दीनता से अपने मालिक को पुकारो।

उत्तर— छः दिन में इस जगत को, कर दीना निर्मान।
फिर जा बैठे तखत पर, प्रभु ऊँचे असमान।

फिर व्यापक प्रभु कैसे तेरा, आसमान पर जिसका डेरा।
सर्व शक्ति वाला भी नाहीं, जगत रचा जिस छः दिन माँही।
क्या बहरा है खुदा तुम्हारा, जो वह ऊँची सुनत पुकारा।
दुनियां रच कर थका बेचारा, सिंहासन का मिला सहारा।
अब अल्ला सोवे या जागे, किसको बात सत्य यह लागे।
यदि जागत वह अर्श मुअल्ला, काम करे या रहे निठल्ला।

अथवा करता सैर सपाटे, हाय अकल के पड़ गए घाटे।

(७१) मत फिरो पृथिवी पर झगड़ा करते।। मं॰ २ सि॰८ सू॰ ७ आयत ७३

उत्तर– भली बात यह तो कहीं, झगड़ा बहुत बुरा।
पर अपनी पहली कही भूला बात खुदा।।

पहले कहा मरो अरु मारो, काफिर जन के प्राण निकारो।
करो जहाद नष्ट कर डारो, जो आगे आये संहारो।
अब झगड़े को कहें बुराई, आपहि अपनी कही मिटाई।
जान पड़े मोहम्मद साहब, थे बलिष्ठ जब रबके नाइब।
तब सम्मति झगड़े की देते, जान माल लोगों की लेते।
जब देखा आई कमजोरी, अब नहीं चलती सीनाजोरी।
शान्त शान्त की देत दुहाई, तुर्त नीति अपनी बदलाई।

(७२) बस एक ही बार अपना असा डाल दिया औंर वह अजगर था प्रत्यक्ष।।
मं २ सि ६ सू ७ आ॰ १०५

उत्तर– खुदा पैगम्बर जानिये दोनों एक समान।
ऐसी झूठी बात को को माने विद्वान।।

बातें इन्द्र जाल की सारीं, अनहोनी दुनियां से न्यारी।
समय लखो अब आँखे खोलो, पहले परखो फिर कुछ बोलो।

(७३) बस हमने उस पर मेंह का तूफान भेजा, टीढी, चिचड़ी और मेंडक और लोहू। बस उससे हमने बदला लिया और उसको डूबो दिया दरियाव में और हमने नबी इसराईल को दरिया से पार उतार दिया। निश्चय वह दीन झूठा है जिसमें है और उसका कार्य भी झूठा है। मंत्र २ सि ६ सू ७ आ॰ १३०–१३३–१३७–१३८।।

पाखण्डी जैसे कोई, लोगों को डरपाय।
ऐसे ही अल्ला मियाँ; बोलत गाल बजाय।।

यह दुनियाँ धोखे की मंडी, उसमें रहते बहुत पाखण्डी।

भय दिखला कर लूटें संपत, लूट पाट कर हो जाँय चँपत
बिच्छु साँप आदि बतलावें, डर दे कर दौलत हथियावें।
ऐसी ही अल्ला की बातें, टिड्डी चिचड़ी आदिक घातें।
एक कौम को पार लगावे, दूजी को मँझधार डुबावे।
क्यों अल्ला इतना पखपाती, बिना दोष कौमों का घाती।
महां नीच अल्ला कहलावे, इस को तारे उसे डुबावे।
अगनित जन का मत है काँचा, केवल मुसलमान का साँचा
यकतर्फा डिगरी का दाता, महा मूर्ख अरु धूर्त कहाता।
भले बुरे सब ठौर बिराजें, सब मजलिस और सभा समाजें।
क्या तौरेत जबूर ईसाई, झूठी थी तब सकल खुदाई।
या कोई और दीन था झूठा, यह कुरान का तर्क अनूठा।

(७४) बस तुझको अलबत्ता देख सकेगा जब प्रकाश किया उसके मालिक ने पहाड़ को और उस को परमाणु २ किया फिर पड़ा मूसा बेहोश।। मं॰ २ सि॰ ६ सू॰ ७ आयत १४२

जाको दर्सन हो सके, नख सिख दीखे रूप।
वह व्यापक किमि हो सके सब भूपन को भूप।।

करामात अब कहाँ भुलाई, दरसत नहीं पहले की नाई।
त्यागो यह सब झूठ गपोड़े, सुख पाओगे इनको छोड़े।

(७५) और अपने मालिक को दीनता से डर से याद कर धीमी आवाज से सुबह को और शाम को।
मं सि ६ सू ७ आ॰ १०४।।

उत्तर– कहते कहीं कुरान में, ऊँचे ऊँचें बोल।
धीमे बोलो कहीं लिखा, यह पुस्तक अनमोल।

कैसे प्रभु का नाम पुकारें, कैसे अपना जन्म सुधारें।
ऊँचे बोले होय बुराई, धीरे पर भी करत मनाई।
आपहि जो निज को झुठलावे, सो नर मत्त गीत सम गावे।

(७६) प्रश्न करतें है तुझ को लूटों से, कह लूटें वासते अल्लाह के और रसूल के और उसे अल्लाह से।
मं २ सि ६ सू ८ आ॰ १

डाका चोरी लूट लें, मारें बिना गुनाह।
फिर भी है परमात्मा, पैगम्बर अल्लाह।।

भय भी अल्ला का बतलाना, लूट मार भी करते जाना।
फिर भी उत्तम दीन हमारा, थकें न कहते बारम्बारा।
रे निर्लज्ज लाज नहीं आती, लज्जा भी तुझसे शर्माती।
तज हठ वेद मार्ग अपनाओ, झूठ त्याग सत्पथ पर आओ।

(७७) और काटो जड़ काफिरों की, मैं तुम को सहाय दूंगा साथ सहस्र फरिश्तों के पीछे पीछे आने वाले। अवश्य मैं काफिरों के दिलों में भय डालूँगा, बस मारो ऊपर गर्दनों के मारो उनमें से प्रत्येक पोरी पर।।

मंत्र २ सि ६ सू ८.आ. ७–६–१२

उत्तर– वाहवा क्या पैगम्बरी, कैसा भला खुदा।
मुसलमान जो नर नहीं, उनको दे मरवा।।

दोनों निठुर दया से खाली, दोनों दीन दुखी के वाली।
करना चहें समूल विनासा, हा हा कितनी रक्त पिपासा।
काफिर की गर्दन मरवावें, पोरी पोरी अंग कटावें।
नाहीं ऐसे वाक्य खुदा के, सब कुरान के हैं कर्ता के।
यदि अल्ला की है यह वानीं, जो करती निज जगकी हानी।
ऐसा अल्ला हमें न भावें, भागे भागे निकट न आवे।

(७८) अल्लाह मुसलमानों के साथ है, ऐ लोगो जो ईमान लाये हो पुकारना स्वीकार कर वासते अल्लाह के और वासते रसूल के। ऐ लोगों जो ईमान लाये हो मत चोरी करो अल्ला की रसूल की और मत चोरी करो अमानत अपनी की।। और मकर करता था अल्लाह और अल्लाह भला मकर करने वालों का है।।

मंत्र २ सि ६ सू ८ आ. १६–२४–२७–३०

उत्तर– मुसलमान का है प्रभु और दूसर का नाहिं।
फिर तो प्रभु ही फंस गया, पक्ष पंक के माँहि।।

पक्षपात इक पाप महाना, क्या वह पापी है भगवाना।
उसका तो है, सब संसारा, जीवमात्र का वह रखवारा।

क्या नहीं सुनते बिना पुकारे, क्या बहरे हैं खुदा तुम्हारे।
क्यों रसूल को साथ मिलाते, ला शरीक जब प्रभु कहाते।
अल्ला का है कहां खजाना, जिसका वर्जित किया चुराना।
चोरी करे न निजी अमानत, पर संपति में करे खयानत।
रब रसूल की करे न चोरी, पर की चोरी करे बहोरी।
यह शिक्षा पापी जना करते, जो नहीं पाप कर्म से डरते।
मकर करें मक्कार कुसंगी, वाहबा अल्ला है बहुरंगी।
कपटी छलिया खुदा बनाया, धोखा दिया जगत बहकाया।
यह कुरान ईश्वर कृत नाहीं, ऐसी बातें जिसके मांही।

(७९) और लड़ो उनसे यहां तक कि न रहे फितना अर्थात् बल काफिरों का और होवे दीन तमाम वासते अल्लाह के। और जानो तुम यह कि जो कुछ तुम लूटो किसी वस्तु से निश्चय वासते अल्लाह के है पांचवां हिस्सा उसको और वस्तु रसूल के।। मं॰ २ सि॰ ९ सू॰ ८ आयत ३९—४१

उत्तर— मार काट में रम रहा, करे शान्ति का भंग।
यह अल्ला इसलाम का रँगा रक्त के रंग।।

लूटो रब रसूल के हेतु, केवल यही स्वर्ग का सेतु।
अल्ला डाकू चोर लुटेरा, फैलाता है पाप अंधेरा।
पंचम भाग लूट का मारे, रब रसूल के बारे न्यारे।
प्रभु पर घोर कलंक लगाया, अपना भागीदार बनाया।
कँह से आया अल्ला डाकू, भवसागर का भीषण नाकू।
ऐसे मजहब न जग में आते, तब सब प्राणी मात्र सुख पाते।

(८०) और कभी देखे जब काफिरों को फरिश्ते कब्ज़ करते है मुख उनके और पीठें उनकी और कहते चखों अजाब चलने का।। हमने उनके पाप से उनको मारा और हमने फिरओन की कौम को डुबो दिया। और तय्यारी करो बासते उनके जो तुम कर सको।। मं २ सि ९ सू ८ आ॰ ५०—५४—५६

उत्तर— रूस और इंगलैंड से, रूम मिश्र गये हार।
दलित गलित अब जी रहे, अल्लाह कहाँ तुम्हार।।

भाग गया कहाँ खुदा तुम्हारा मुसलिम करते हाहाकारा।
क्यों नही उनको आन बचाया, क्यों नहीं अपना वचन निभाया।
क्या सो रहे फरिश्ते सारे, देख रहे क्या बैठ किनारे।
कौम सहित फरओन डुबाया, मुसलमान को आज भुलाया।
त्यागो यह सब झूठ कहानी, मन गढ़न्त घुन खाई पुरानी।
देखो अल्ला क्या फरमाते, मनमें तनिक नहीं शरमाते।
अन्य पुरुष को जँह कहीं पाओ, जितना चाहो उसे सताओ।
दया कहां कहां उसका न्याया, कैसे प्रभु दयाल कहाया।

(८१) ऐ नबी! किफायत है तुझ को खुदा और उनको जिन्होंने मुसलमानों ने तेरा पक्ष किया।। ऐ नबी! रगबत अर्थात् चाह चस्का दे मुसलमानों को ऊपर चढ़ाई के जो हो तुम में से बीस आदमी संतोष करने वाले जो पराजय करे दो सौ को।। बस खाओ उस वस्तु से कि लूटा है तुमने हलाल पवित्र और डरो अल्लाह सें वह क्षमा करने वाला दयालु है।। मंत्र २ सि १० सू ८ आ॰ ६३, ६४, ६६

उत्तर— पुण्य कर्म यह कौन से अरू यह कैसा न्याय।
पक्ष करे इस्लाम का, उसका प्रभु सहाय।।

मुसलिम चाहे करे बुराई, अल्ला उसकी करे भलाई।
लड़े खुदा खुद और लड़ावे लूटा माल हलाल बतावे।
फिरभी अल्ला दीन दयालु, क्षमा करे वह बड़ा कृपालु।
ऐसी बातें लिखता अल्ला, अल्ला है या मूरख झल्ला।

(८२) सदा रहेंगे बीच उसके अल्लाह समीप उसके है पुण्य बड़ा। ऐ लोगों जो ईमान लाये हो। मत पकड़ों बापों अपने को भाईयों अपने को मित्र जो दोस्त रखे कुफर को ईमान के फिर उतारी अल्लाह नें तसल्ली अपनी ऊपर मूसा अपने के और ऊपर मुसलमानों के और उतारे लशकर नहीं देखा तुमने उनको और अजीब किया उन लोगों को और यही सजा है काफिरों को। फिर आवेगा अल्लाह पीछे उनके ऊपर।। और लड़ाई करो उन लोगों से जो ईमान नहीं लाते।। मं॰ २ सि १० सू ६ आयत २१, २२, २५, २६, २८

उत्तर— स्वर्ग वासियों के निकट, रब यदि करे निवास।
क्यों कर पुन उसका रहा, सकल जगत में वास

यदि वह नहीं सब ठौर निवासी तो पुन कैसे सृष्टि प्रकासी।
एक देश का रहने वाला, कैसे जग का न्याय संभाला।
निज पितु भ्रात मित्र सब छोड़ो, मुस्लिम नहीं तो नाते तोड़ो।
इससे बढ़कर पाप न कोई कहाँ तुम्हारी बुद्धि खोई।
यदि वे बुरे कर्म को प्रेरे, किसी पाप पंक में गेरें।
उचित यही उनकी मत मानो पर फिर भी उनको सन्मानो
परम धर्म है उनकी सेवा, इससे बढ़कर नहीं कोई मेवा।
प्रथम तसल्ली यदि उतारी, बिगड़ गया क्यो अब की बारी।
अब क्यों नहीं वह होत सहाई, बिगड़ गई क्यों बनी बनाई।
अब क्यों लश्कर नहीं उतारे, क्या वे भये समापत सारे।
पहले था काफिर मरवाता, अब भागे निज प्राण बचाता।
सबको मुस्लिम चहे बनाना, व्यर्थ रूधिर क्यों फेर बहाना।
हृदयों में ईमान बैठावे, यूं ही निरर्थक पड़ा लडावे।
ऐसा अल्ला यदि तुम्हारा, दूरहि ते परनाम हमारा।

(८३) और हम बाट देखने वाले है वास्ते तुम्हारे यह कि पहुँचावे तुमको अल्लाह अजीब अपने पास से वा हमारे हाथों से। मं॰ २ सि १० सू ६ आ ५२

उत्तर– मुसलमान क्या बन गए, अल्ला की पोलीस।
भेजा इनको जगत में, दे वरन्ट जगदीश

अन्य धर्म के जो अनुयायी, वे सब अल्ला को दुखदायी।
केवल मुसल्मान हैं प्यारे लाड़ लड़ाए राज दुलारे।
अंधा राजा अंधी नगरी, गवर्गण्ड राजा की सगरी।
हम को तो अचरज है भारी, कैसी धूली आँख में डारी।
मुस्लिम मत में जो नर ज्ञानी, बात उन्होंने कैसे मानी।

(८४) प्रतिज्ञा की है अल्लाह ने ईमान वालों से और ईमान वालियों से बहिश्तें, चलती हैं नीचे उनके से नहरें सदैव रहने वाली 'बीच उसके' और घर पवित्र बीच बहिश्तों आदम के और प्रसन्नता अल्लाह की और बड़ी है और यह कि वह है मुराद पाना बड़ा। बस ठट्ठा करते हैं उनसे अल्लाह या अल्लाह ने उनसे। मंत्र २ सि १० सू ६ आ॰ ७२।८०।।

उत्तर— दिया प्रलोभन जगत को, ले अल्ला का नाम।
पैगम्बर यूं साधते, अपने मन का काम।

ठट्ठा करें पुरुष अरु नारी, बकना झकना गुफता नारी।
खुदा लगे अब ठट्ठा करने, बाकी घाटा पूरा करने।
यह कुरान है खेल तमासा, जँह अल्ला का हास प्रहासा।

(८५) परन्तु रसूल और जो लोग कि साथ धन अपने के तथा जान अपनी के और इन्हीं लोगों के लिये भलाई है। और मोहर रखी अल्ला ने ऊपर दिलों उनके बस वे नहीं जानते। मं २ सि १० सू ६ आ. ८६, ६२।।

जिन पुरुषों के दिलो पर आए लगाई छाप।
वे तो निष्पापी भये, किया खुंदा ने पाप।

जिनके मन पर मोहर लगाई, वे क्या जाने वस्तु भलाई।
अक्षर हैं या विष के बिन्दु क्या लिखते मतलब के सिंधु
जो ईमान मुझ पर नहीं लाएं वे सब सज्जन भले कहाएं।
बुरे पुरुष ईमान न लाते वे पापी काफिर कहलाते।
कितनी पक्षपात की ज्वाला, कितना भीषण जहर निकाला।

(८६) जो माल उनके से खैरात कि पवित्र करे तू उनको अर्थात् बाहरी और शुद्ध कर तू उनके साथ उसे गुप में निश्चय अल्लाह ने मोल ली है मुसलमानों से जाने उनकी और माल उनके बदले कि वास्ते उनके बहिश्त हैं। लड़ेंगे बीच मार्ग अल्लाह के बस मारेंगे और मर जावेंगे। मं. २ सि ११ सू ६ आ १०२—११०

गोकुलिये गोसाँई का, धरा तुम ही ने भेस।
धनसंपत सब हर लिया, दिया स्वर्ग का देस।।

धन्य धन्य तुम भये खुदाया, क्या बढ़िया व्यौपार जमाया।
मुस्लिम से सबको मरवाओ, उन निठुरन को स्वर्ग दिलाओ
निर्दय हत्या करें करावें इससे स्वर्ग प्राप्ति फल पावें।
दया न्याय से अल्ला कोरा, अज्ञानी बुद्धि का भोरा।

घृणा करें ज्ञानी जन सारे, ऐसे रब को रब ही मारे।

(८७) हे लोगो । जो ईमान लाये हो लड़ो उन लोगो से कि पास तुम्हारे है काफिरों से और चाहिये कि पावें बीच तुम्हारें दृढता क्या नहीं देखते यह कि वे बलाओं में डाले जाते हैं हर वर्ष के एक बार वा दो बार फिर वे नहीं तोबा : करते और न वे शिक्षा पकड़ते हैं।

महा पाप विश्वास दे, करे किसी का घात।
मुसल्मान को वरु खुदा, सिखलाते यह बात।।

हाँ ! कैसा यह नीच सिखावन, निंदनीय अति कर्म अपावन।
पास पड़ोसी बसने हारा, क्या जाने निर्दोष बेचारा।
मुसलमान को जान परोसी, मारा जाय हाय निर्दोषी।
इस कुरान ने क्या करवाया, अगनित जन को यूं मरवाया।
अब तो सुनलो मुस्लिम भाइयों, तज कुमार्ग सन्मारग आइयो।

(८८) निश्चय परवरदिगार तुम्हारा अल्लाह है जिसने पैदा किया आसमानों और पृथिवी को बीच छः दिन के फिर करार पकड़ा ऊपर अर्श के तदबीर करता है काम की। मं ३ सि ११ स १० आ ३।।

उत्तर– एक अनादि एक रस, स्वयं सिद्ध आकास।
इसे बनाया जो कहा, समझ बुद्धि हा हास

नभ का जिसने लिखा बनाना, उसको नहीं पदारथ ज्ञाना।
छः दिन लग गये जगत बनाते, अब क्या धूनी पड़े रमाते।
पहले तो यह वचन उचारा, हो जा बस हो गया संसारा।
अब कहते हैं छः दिन लागे न जाने क्या लिख दें आगे।
जान पड़े प्रभु व्यापक नाँही, ठहरा तभी अर्श के पाँही।
मानुष वत करता तदबीरें खाके लिखता खेंच लकीरें।
यह कुरान जिस पुरुष रचाया, गीत गँवारू उसने गाया।
जंगल का था रहने वाला, वह क्या जाने अल्ला ताला।

(८९) शिक्षा और दया वास्ते मुसलमानों के । मं ३ सि ११ सू १० आ॰ ५५।।

उत्तर— मुसलमान का है खुदा, और किसी का नाहि।
दया मया इनके लिये सब कुछ इन्हें सिखाहि।

यदि धर्मी को मुस्लिम कहते, धर्मी तो हर मत में रहते।
धर्मी को उपदेश निरर्थक, वह तो पहले हि पुण्य समर्थक।
जो नहीं अन्य कोऊ सिखलाना, तब तो व्यर्थ कुरान बनाना।

(६०) परीक्षा लेवे तुम को कौन तुममे से अच्छा है कर्मों में जो कहे तू अवश्य उठाये जाओगे तुम पीछे मृत्यु के। मं ३ सि ११ सू ११ आ॰ ७।।

यदि कर्मों को परखता, पाप पुण्य ले छान।
तो सर्वज्ञ न प्रभु रहा, रखता थोड़ा ज्ञान।।

यदि मृत्यु के बाद उठावे, क्या दौरे पर आवे जावे।
कहा खुदा ने बारंबारा मरे हुए नहीं जिये दोबारा।
स्वयं लगा अब मृतक उठाने, उसकी बातें वह ही जाने।
अपना नियम आप ही तोड़े, करता रहता तोड़ मरोड़े।

(६१) और कहा ऐ पृथिवी अपना पानी निगल जा और ऐ आसमान बस कर और पानी सूख गया। और ऐ कौम यह है निशानी ऊटनी अल्लाह की वास्ते तुम्हारे बस छोड़ दो उसको बीच पृथिवी अल्लाह के खाती फिरे। मं ३ सि ११ सू ११ आ॰ ४३—६३।।

क्या बच्चों की बात, अरु बच्चों के खेल।
ऊँठ निशानी रब्ब की या है बंबे मेल।।

क्या पृथिवी जग सुनते बातें, कहने से मिट गई बरसातें।
भूमि निगल गई निज पानी, क्या बेढंगी रची कहानी।
ऊँटनि है यदि पास खुदा के अवस ऊँट होगा पुन वाके।
घोड़े गदभ खच्चर हाथी, सब होंगे अल्ला के साथी।
ऊँटनि के मुँह खेत खिलाना, क्या अल्ला हो गया दिवाना।
क्या करता है ऊँट सवारी, वाह मौला तेरे बलिहारी।

(६२) और सदैव रहनेवाले बीच उसके जब तक कि रहे आसमान और पृथिवी और जो लोग सुभागी

हुए उस बहिश्त को सदा रहने वाले हैं जब तक रहें आसमान और पृथिवी। मं ३ सि १२ सू ११ आ॰ १०५–१०६

हुई कयामत मिट गये, भूमि अरु असमान।
स्वर्ग नर्क मुर्दे गये, कहते स्वयं कुरान।।

नष्ट भये जब भूमि अकासा, पुन यह कैसा दिया दिलासा।
जब लग रहें भूमि असमाना, स्वर्ग माँझ तुम झुलें निसाना
बिना भूमि कँह स्वर्ग रचाया, यह तब तर्क समझ नहीं आया।
बिन अकास किम लेते स्वासा, भानुमती का रचा तमासा।
मूरखता के सभी विचारा, किम माने ज्ञानी संसारा।

(६३) जब यूसफ ने अपने आप से कहा कि ऐ मेरे बाप मैंने एक स्वप्न देखा।
मं ३ सि १२ आ॰ ४ से ५६ तक।

वर्णित सकल प्रकरण में, पिता पुत्र संवाद।
ईश्वर क्यों लिखने लगा, मानुष वाद विवाद।।

किसी पुरुष की लिखी कहानी, ईश्वर कथित कहें अज्ञानी।
यह कुरान अल्ला का नाँही, कथा कहानी जिसके माँही।

(६४) अल्लाह वह है कि जिसने खड़ा किया आसमान को बिना खम्भे के देखते हो तुम उनको फिर ठहरा ऊपर अर्श के आज्ञा वर्तने वाला किया सूरज और चाँद को और वही है जिसने बिछाया पृथिवी को। उतारा आसमान से पानी बस बहे नाले साथ अंदाज अपने के। अल्लाह खोलता है भोजन को वास्ते जिसके चाहे और तंग करता है। मं ३ सि १३ सू १३ आ॰ २, ३, १७, २६।।

मुस्लिम अल्लाह को नहीं, तनिक पदारथ ज्ञान।
इतना भी नहीं जानता, नहीं बोझल असमान।।

जो गुरु वस्तु चहो उठाना, वह खम्भों से जाये ताना।
खुला खोखला नित्य अकासा, जँह तारक मंडल को वासा।
अर्श स्थान पर यदि रब रहते, व्यापक उसको पुनकिम कहते।
सर्व शक्ति का रखने हारा, नहीं रहता पुन खुदा तुम्हारा।

वर्षा का भी उसे न ज्ञाना, नभ से जल उतरा जो माना।
पृथिवी से जल प्रथम अरोहे, द्यौ मंडल से पुन अवरोहे।
अन्न देत जिसको वह चाहे, भूखा चाहे जिसे बैठाए।
क्या प्रभु ऐसा है अन्यायी कहीं सहायी कहीं दुखदायी।
भोजन भट्ट निरक्षर अल्ला, वाहवा तेरा अर्श मुअल्ला।

(९५) कह निश्चय अल्लाह गुमराह करता है जिसको चाहता है और मार्ग दिखलाता है तर्फ अपनी उस मनुष्य को रजू करता है। म ३ सि १३ सू १३ आ॰ २१।।

एक ओर शयतान है, वह करता गुमराह।
गुमराह करने अब लगा, देखो खुद अल्लाह।।

दोनों में क्या रह गया अंतर, मार्ग भुलाएँ दोऊ निरंतर।
करता पाप खुदा बहकाता, क्यों नहीं वह दोजख में जाता।

(९६) इसी प्रकार उतारा हमने इस कुरान को अर्बी में जो पक्ष करेगा तू इनकी इच्छा का पीछे इसके कि आई तेरे पास विद्या से। बस सिवाय इसके नहीं कि ऊपर तेरे पैगाम पहुँचाना है और ऊपर हमारे है हिसाब लेना। मं ३ सि १३ आ॰ ३७, ४०।।

कहाँ किधर किस मार्ग से, दिया कुरान उतार।
क्या ऊपर बैठा खुदा, कुर्सी के आधार।।

एक देश में यदि बसेरा, तौ पुन व्यापक नहीं रब तेरा।
ले पैगाम जाये हरकारा, मूर्तिमान क्या प्रभु तुम्हारा।
पोथी पत्रा अरु बहि खाते, रोज हिसाब लिखाते जाते।
लेना देना नकद उधारा, यह तो उन के हैं व्यौहारा।
प्रभु सर्वज्ञ सभी कुछ जाने, वह व्यापक सब ठौर ठिकाने।
ताँते जिसने लिखा कुराना, था अल्पज्ञ कोई हम जाना।

(९७) और किया चन्द्र सूरज को सदैव फिरने वाले निश्चय आदमी अवश्य अन्याय और पाप करने वाला है। मं ३ सि १३, १४ आ॰ ३३, ३४।।

क्या पृथिवी नहीं घूमती, भ्रमत चन्द्र अरु सूर।

ऐसी बुद्धि पर पड़े चौराहे की धूर।।

यदि पृथिवी चक्कर न हीं खावें, बर्सों का इक दिन हो जावे।
बर्सों की हो रात अँधेरी, जो कहीं भूमि फिरे न फेरी।
जो नर स्वाभाविक अन्यायी, पापी नीच और दुखदायी।
पुन कुरान किस हेतु उतारा, है उपदेश व्यर्थ पुन सारा।
बदल सके नहीं कभी स्वभावा, नभ सिंचित नहीं हो सरसावा।
जग में दोनों पापी धर्मों, पुरुष सुकर्मी और कुकर्मी।

(६८) बस ठीक करूं मै उसको और फूँक दूँ बीच उसके रुह अपनी से बस गिर पड़ो वास्ते उसके जियादा करते हुए। कहा ऐ रब मेरे इस कारण कि गुमराह किया। तूने मुझको अवश्य जीनत दूंगा मैं वास्तु उनके बीच पृथिवी के और गुमराह करूंगा। मं २ सि १४ सू १५ आ॰ ३६ से ४६ तक।

सो॰– निज रुह फूँकी रब्ब ने, आदम लिया जिवाय।
हुक्म फरिश्तों को दिया, करो दण्डवत आन।

आदम ताँही करो प्रणामा, सुभग अंग सुंदर अभिरामा।
यदि रब्ब ने फूँका आतम, तब तो आदम है परमातम।
यदि आदम परमातम नाँहि, क्यों प्रणाम उसके पद माँही।
लाशरीक अल्ला परवीना, क्यों शरीक सिजदे में कीना।
अल्ला शयताँ को बहकावे, अल्ला खुद शयतान कहावे।
मुसलमान मत में यूँ माना, जो बहकावे वह शयताना।
मैं बहकाऊँ मैं बहकाऊँ, खुद डूबा हूँ जगत डुबाऊँ।
शयताँ ने ऐसा ललकारा, अल्ला बैठा सुने बेचारा।
क्यों नहीं उसे ततक्षण मारा, क्या अल्ला डर गया बेचारा।

(६९) और निश्चय भेजे हमने बीच हर उम्मत के पैगम्बर। जब चाहते हैं हम उसको यह कहते है हम उसको 'ही' बस हो जाती है। मं॰ ३ सि १४ सू ६ आ॰ ३५, ३६।।

प्रभु पैगम्बर भेजता, हर उम्मत इक सार।
सब ही कौमें चलत निज, पैगम्बर अनुसार।।

पुन वे सारे काफिर कैसे पैगम्बर हैं सब इक जैसे।

क्या बाकी पैगम्बर झूठे, एक मुहम्मद रहे अनूठे।

क्या वे माननीय नहीं सारे, माननीय हैं सिर्फ तुम्हारे।
रब्ब कहता है पृथिवी होज़ा, अच्छा गुप्त भेद यह खोजा।
क्या भूमि को लागे काना, किसका सुनना किसे सुनाना।
अन्य पदारथ है कोउ नाहीं, अल्ला ही अल्ला जग माँही।
मुसलमान जब ऐसा माने, किसे रब्ब पुन लगे सुनाने।
हुआ कौन अब यह फरमाएं, जब पदार्थ कैसे सुन पाएं।

(१००) और नियत करते हैं वास्तु अल्लाह के बेटियां पवित्रता है उसको और वास्ते उनके है जो कुछ चाहें। कसम अल्लाह की अल्ला भेजे हमने पैगम्बर। मं ३ सि १४ सू १६ आ॰ ५६, ६२।।

बेटी को रब क्या करे, बेटी है नर हेत।
नियत न बेटे क्यों किये, क्या इसमें संकेत।।

बहुधा झूठे कसमें खातें, कसमों से एतबार जमाते।
अल्लाह पाक कसम क्यों खावें, क्या कोई भोला जन बहकावे।

(१०१) ये लोग वे हैं कि मोहर रक्खी अल्लाह ने ऊपर दिलों उनके और कानों उनके और आँखों उनकी ओर वे लोग वे हैं बेखबर। और पूरा दिया जावेगा हर जीव को जो कुछ किया है और वे अन्याय न किये जावेंगे। मं ३ सि १४ सू १६ आ॰ ११५, ११८।।

मारे गये निर्दोष वे, कीना जुल्म खुदा।
आँख कान अरु दिलों पर, दीनी मोहर लगा।।

बिना दोष के मोहर लगाई फिर कहते हैं अल्ला नमाजी।
किये कर्म का फल वह देगा जितनी देगा उतना लेगा।
सभी पाप रब आप कराते तो उसका फल क्यों नहीं पाते।
रब ने पापी स्वयं बनाया दण्ड देते क्यों नहीं शर्माया।
यह गड़बड़ उसके घर नाहीं होता पागल खाने माहीं।
दण्ड देत तो क्षमा असंभव क्षमा दण्ड इक साथ असंभव।

(१०२) और किया हमने दोजख को वास्ते काफिरों के घेरने वाला स्थान। और हर आदमी का लगा

दिया हमने उसको अमल नामा उसका बीच गर्दन उसकी के और निकालेंगे हम वास्ते उनके दिन कयामत के एक किताब कि देखेगा उसको खुला हुआ और बहुत मारे हमने कुरनून से पीछे नूह के।

मं ४ सि १५ सू १७ आ॰ ७, १२, १६।।

क्या काफिर वे लोग हैं, जिन्हें न जँचे कुरान।
रोज़े और नमाज़ पर कभी न देवे ध्यान।।

ऐसे नर यदि नर कहुँ जाते, न्याय शून्य तौ रब कहलाते।
मत मतान्तर सब हमने छाना, भले बुरे सर्वत्र समाना।
भले न देखें मुस्लिम सारे, बुरे न सभी अन्य मतवारे।
बांधे कण्ठ करम की पोथी, कैसी बात निरर्थक थोथी।
हमने तो कहीं देखी नाहीं, पुस्तक लटकी हो गल मांही।
कर्म फलों से यदि प्रयोजन, कर्म करे फल पावे सो जन।
यह पुन रब का मोहर लगाना, दण्डदान अरुक्षमा कराना।
क्या बच्चों का खेल रचाया, कभी लिखा अरु कभी मिटाया।
रात कयामत पुस्तक खोले, अब साँई धर राखी झोले।
साहुकार वत लिखता खाता, आप लिखे या है लिखवाता।
जब तक पूर्व जन्म नहीं मानो, कर्मों की गति क्या पहिचानो।

जीव कर्म नहीं कर सके, पूर्व जन्म यदि नाँहि।
कर्म रेख कैसे लिखे, अल्ला पुस्तक माँहि।।

बिना किये यदि लिखता लेखा, अच्छी बुरी भाग्य की रेखा।
तब तो अल्ला है अन्यायी, फरजी पोथी एक बनाई।
जो तुम कहो खुदा की मरजी, असल लिखे लिख डाले फरजी।
न्याय शून्य तब अल्ला अंधा जिसका सकल झूँठ का धन्धा।
क्या पोथी निज मुख से बाचे असली फरजी झूठे सांचे।
अन्य किसी से या पढ़वावे बिना कान किमि सुनता जावे।

पारब्रह्म अरु जीव का, दीर्घ काल सम्बन्ध।
बिना दोष मारा जिसे खुदा अकल का अंध।।

(१०३) और दिया हमने समूद्र को ऊँटनी प्रमाण। और बहका जिसको बहकास के । जिस दिन बुलावेंगे हम सब लोगों को साथ पेशवाओं उनके के बस जो कोई दिया गया अमलनामा उसका बीच दाहिने हाथ उसके के।

मं ४ सि १५ सू १७ आ.५७, ६२, ६६।।

अल्लाह के अस्तित्व में, जग में जिते निशान।
अव्वल निकली ऊँटनी, सबसे ऊंची शान।।

बहकावे यदि रब शयताना, तब तो रब शयताँ का नाना।
शयताँ का रब है गुरभाई,सब पापों का उत्तरदायी।
रात कयामत जब आवेगी, सृष्टि बुलायी तब जावेगी।
सब मुर्दो के साथ पैगम्बर, हाजिर होंगे निज निज नंबर।
तब तक अल्ला बैठा खाली, रहे बजाता लोटा थाली।
दौरे रहें फरिश्ते बाकी देखते रहें सुरग की झाकी।
मन मांही टुक करें विचारा रोता है इंसाफ बेचारा।
जब तक आय न रात कयामत तब तक मृत जीवों की शामत।
एक पुरुष जो आज मरा है, उसे गोर में आज धरा है।
सौ बर्सों से कोई गड़ा है, सहस वर्ष से कोई पड़ा है।
प्रलय रात्रि तक होय इकट्ठे, बांध बांध मुर्दों के गट्ठे।
रब के सन्मुख होंगे हाजिर, होंगे क्लर्क कचहरी नाजिर।
यह है रब का न्याय नमूना, न्याय नीति बुद्धि से सुना।
सब की टिकट कटाता जाये लारी चलने में नहीं आये।
यौत्री बैठ बैठ उकतावे, अभी तलक ड्राइवर न आवे।
जब पूरी हो जाँय सवारी, तभी चले अल्ला की लारीं।
यह इंसाफ खुदा का देखा, यह अल्ला के घर का लेखा।
चोर साथ जेलों में डाले, एक ही रात खुलेंगे ताले।
इक दिन सब का न्याय करेंगे, कोई डूबेंगे कोई तरेंगे।
यह तो न्याय नहीं है भाई, जँह पैगम्बर देत गवाई।
क्या सर्वज्ञ न अल्ला ताला, वह तो सब कुछ जानन वाला।

सच्चा न्याय मनु ने माना, सत्य न्याय का वेद खजाना।
तत्क्षण न्याय जँह पर होता, रहे न मुर्दा वर्सों सोता।
निज निज कर्मों के अनुसारा फल होता है तुर्त नितारा।

(१०४) ये लोग वास्ते उनके हैं बाग हमेशा रहने के, चलती हैं नीचे उनके से नहरें गहिना पहराये जायेंगे बीच उसके कंगन सोने के से पोशाक पहिनेंगे वस्त्र हरित लाही की से ओर ताफत की से तकिये किये हुए बीच उसके ऊपर तखतों के अच्छा है बहिश्त लाभ उठाने की। मं ४ सि १५ सू १८ आ॰३०।।

देखा स्वर्ग कुरान का, सुख साधन भरपूर।
बाग बगीचे को, असन वसन अर हूर।।

तोशक तकिये कपड़े गहने, ठाठ अमीरी रहने सहने।
सब पदार्थ यह मिलें यहां पर, क्या विशेष सुख मिले वहां पर।
केवल इक विशेष अन्याया, जो बहिश्त में हमने पाया।
कर्मसान्त अरु भोग अनन्ता, यह अन्याय करे भगवन्ता।
मधुर मधुर नित मिलते भोजन नहीं लवण से वहां प्रयोजन।
नित का मीठा विंष सम लागे, तड़पे निमक हेतु दुर्भागे
मुक्ति हेतु कर यत्न नरोत्तम मुक्ति का सुख सुख सर्वोत्तम।
महा कल्प लग मुक्ति पावे, बहुरि जीव दुनियां में आवे।

(१०५) और यह बस्तियां है कि हमने उनको जब अन्याय किया उन्होंने और हमने उनको मारने की प्रतिज्ञा स्थापना की।। मं॰ ४ सि॰ १५ सू॰ १८ आ॰ ५७।।

सारी बस्ती पाप की, धर्मी रहे न कोय।
महा असम्भव बात यह, कबहुँ न ऐसा होय।

पाप देख प्रतिज्ञा कीनी, पहले बात जान नहीं लीनी।
दया शून्य सर्वज्ञ न ईश्वर, मुसलमान का यह जगदीश्वर।

(१०६) और वह जो लड़का बस थे माँ बाप उसके ईमान वाले बस, डरे हम यह कि पकड़ उनको सरकशी में और कुफ्र में। यहाँ तक कि पहुंचा जगह डूबने सूर्य की पाया उसको डूबता था बीच चश्मे

कीचड़ के। कहा उसने ऐ जुल कुरनैन निश्चय याजूज माजूज फिसाद करने वाले हैं बीच पृथिवी के।।

म॰ ४ सि॰ १६ सू॰ १८ आ॰ ७८, ८४, ९२।।

लड़के के माँ बाप को, मत कोई बहकाय।
शंका उपजी हृदय में, डरने लगे खुदाय।

ईश्वर को नहीं होती शंका, मुस्लिम भये बुद्धि के रंका।
इस पोथी का रचने वाला, निकल गया तस बुद्धि दिवाला।
कहता सूर्य झील में बूड़े, भरे पड़े जँह कीच रु कूड़े।
उसी झील से भोरहि निकसे, गगन माँझ चमके अरु विगसे।
सूर्य बड़ा अरु पृथिवी छोटी, लघु में वस्तु समाय न मोटी।
गागर में सागर किमि आए, नहीं झील में सूर्य समाए।
क्यों याजूज माजूज बनाये, रब कर उन्हें फिसाद कराए।
ऐसा माने मूर्ख बेचारे, थे जंगल के रहने बारे।

(१०७) और याद करो बीच किताब के मर्यम को जब जा पड़ी लोगों अपने से मकान पूर्वी में। बस पड़ा उनसे इधर पर्दा बस भेजा हमने रूह अपनी को अर्थात् फरिश्ता बस सूरत पकड़ी वास्ते उसके आदमी पुष्ट की। कहने लगी निश्चय मैं शरण पकड़ती हूं रहमान की तुझ से जो तू है परहेजगार। कहने लगा सिवाय इसके नहीं कि मैं भेजा हुआ हूं मालिक तेरे कैसे जो कि दे जाऊँ मैं तुझ को लड़का पवित्र। कहा कैसे होगा वासते मेरे लड़का नहीं हाथ लगाया मुझको आदमी ने नहीं मैं बुरा काम करने वाली। गर्भित हो गई साथ उसके और जा पड़ी साथ उसके मकान दूर अर्थात् जंगल में। मं ४ सि॰ १६ सू॰ १६ आ॰ १५, १६ १७, १८, १६, २१।।

बुद्धिमान जन तनिक विचारें।, इन बातों पर दृष्टि डारें।
रब की रूहें यदि फरिश्ते, रब ही रब सब और न रिश्ते।
अल्लाह नहीं कोई अलग पदारथ रूप खुदा के सभी यथारथ।
मर्यम रही पवित्र कँवारी, नर संगम नहीं चहे बेचारी।
गर्भवती उसको कर दीना, घोर पाप अल्ला ने कीना।
पुत्र भया कीना अन्याया, ऐसे निर्लज भये खुदाया।
ऐसी गन्दी रची कहानी, कहें तो होती मन को ग्लानि।

(१०८) क्या नहीं देखा तूने यह कि भेजा हमने शयतानों को ऊपर काफिरों के बहकते हैं उनको बहकाने कर।। मं. ४ सि. १६ सू. १६ आ. ५१।।

रब भेजे शयतान को, जग बहकावन हेत।
सब को बहकाता फिरे अल्ला है या प्रेत।।

बहक गया यह पुरुष बेचारा, अल्लाह नेसब काम बिगारा।
दण्ड पाय तो अल्ला पाये, अल्ला ही दोजख में जाये।
जो अल्ला दोजख नहीं जाता, न्यायवान पुन क्यों कहलाता।
क्या जाने नर भोला सादा अल्ला है शयताँ का दादा।

(१०९) और निश्चय क्षमा करने वाला हूं वास्ते उस मनुष्य के तोबा : की और ईमान लाया कर्म किये अच्छे फिर मार्ग पाया।। मं. ४ सि. १६ सू. २० आ. ७८।।

सो.— सकल पाप तोबाः किये, क्षमा करे अल्लाह।
पाप करो जितने चहो, कर लेना तोबाः।।

पाप करो हिम्मत नहीं हारो, तौबा का हथियार सम्हारो।
साहस तौबा खूब बढ़ाती, पाप कर्म जग में फैलाती।

(११०) और किये हमने बीच पृथिवी के पहाड़ ऐसा न हो कि हिल जावे।
मं. ४ सि. १७ सू. २१ आ. ३०।।

धरा भ्रमण नहीं जानता, जिसने लिखा कुरान।
सारे ग्रह भ्रमते फिरे, क्या जाने अनजान।।

गिरि माला ने भूमि दबाई, तौ भूमि ने थिरता पाई।
अब भी उतने खड़े पहारा, भू कोपे डोले संसारा।
अनिक नगर भूकम्प उजारे ; व्यर्थ भये गिरिमाल सहारे।
नहीं विज्ञान ज्ञान कुछ जाना, ऐसा मुस्लिम का भगवाना।

(१११) और शिक्षा दी हमने उस औरत को और रक्षा की उसने अपने गुह्य अंगों की। बस फूँक दिया हमने बीच उसके रूह अपनी को।। मं. सि. १७ सू. २१ आ. ८८।।

ईश्वर निर्मित ग्रन्थ हो, बातें हो अश्लील।

मेरा मन माने नही, माने नहीं दलील।।

भला पुरुष भी लिखे न ऐसे, वचन लिखे अल्ला ने जैसे।
बुरी बात पुस्तक की दूषण, भली बात पुस्तक की भूषण।
यथा वेद की सुन्दर बानी, सभी सृष्टि ने अच्छी मानी।
ताँते शरण वेद की आओ, साँचे आतम सुख को पाओ।

(११२) क्या नहीं देखा तूने कि अल्लाह को सजदा करते हैं जो कोई बीच आसमानों और पृथिवी के हैं सूर्य और चन्द्र तारे और पहाड़ वृक्ष और जानवर। पहिनाये जायेंगे बीच उसके कंगन सोने से और मोती और पहिनावा उनका बीच उसके रेशमी है। और पवित्र रख घर मेरे को वास्ते गिर्द फिरने वालों के और खड़े रहने वालों के। फिर चाहिये कि दूर करें मैल अपने और पूरी करे भेटें अपनी और चारों ओर फिरें घर कदीम के। तो कि नाम अल्लाह का याद करें। मं॰ ४ सि॰ १७ सू॰ २२ आ॰ १६, २३, २५, २८, ३३।।

रवि शशि तारक जड़ सभी, नहीं रखते कुछ ज्ञान।
कैसे सिजदा नित करें, भजन करें भगवान

यह हैं सकल असंभव वचना, किसी भ्रांत मानव की रचना।
टुक बहिश्तका लखें नजारा, जनु कोऊ नरपति भुवन सँवारा।
सोना मुक्ता रेशम पहरें, नहरों की लेते हैं लहरें।
यदि यहीं रहते हैं अल्ला, मूरति मान भये तब बल्ला।
कहिये यह नहीं बुत कीपूजा, बुतपरस्त तुमसा नहीं दूजा।
क्यों औरों का करते खंडन, खुद करते जब मूरति मंडन।

(११३) फिर निश्चय तुम दिन कयामत के उठाये जाओगे।। मं॰ ४ सि॰ १८ सू॰ २३ आ॰ १६।।

मृतक रहेंगे कब्र में, दुर्गन्धि की खान।
सड़े मांस कीड़े पड़े रहेंन कुछ पहचान।

दुख पायेंगे मृतक बेचारे, व्याकुल दुर्गन्धि के मारे।
पापी पुण्यवान इक सारा, करें दुख से हा हा कारा।

बुरी बास बहु रोग फैलाये, इसका दण्ड खुदा ही पाये।

रब मुस्लिम दोनों दुखदायक, अन्यायी अन्याय सहायक।

(११४) उस दिन की गवाही देवेंगे ऊपर उनके जबानें उनकी और हाथ उनके और पांव उनके साथ उस वस्तु के कि थे करते। अल्लाह नूर है। आसमानों का और पृथिवी का नूर उसके कि मानिन्द ताक की है बीच उसके दीप हो और दीप बीच कंदील शीशों के है वह कंदील मानों कि तारा है चमकता रोशन किया जाता है दीपक वृक्ष मुबारिक जैतून के से न पूर्व की ओर है न पश्चिम के समीप है तेल उसका रोशन हो जावे जो न लगे ऊपर रोशनी के मार्ग दिखाता है अल्लाह नूर अपने के जिसे चाहता है।। मं॰ ४ सि॰ १८ सू॰ २४ आ॰ २३, २४ ।।

हाथ पाँव जड़ वस्तु है, कैसे बने गवाह।
सृष्टि क्रम विपरीत सब, बात करे अल्लाह।।

प्रभु नहीं बिजली आग समाना, निराकार व्यापक भगवाना।
जँह कोऊ मूरत होय पदारथ, तँह ऐसे दृष्टान्त सकारथ।

(११५) और अल्लाह ने उत्पन्न किया हर जानवर को पानी से बस कोई उनमें से वह है कि जो चलता है पेठ अपने के। और जो कोई आज्ञा पालन करे अल्लाह की रसूल उसके की। कह आज्ञा पालन कर खुदा की रसूल उसके की। और आज्ञा पालन करो रसूल की ताकि दया किये जाओ।।

मं॰ ४ सि॰ १८ सू॰ २४ आ॰ ४४, ५१, ५३, ५५।।

पंचभूत के देखते, सब जीवों के गात।
पुन कैसे अल्ला कहे, सभी जन्तु जलजात।।

अल्लाह की आज्ञा भी मानें, पैगम्बर को भी सम्माने।
फिर भी लाशरीक है अल्ला लाशरीक क्यों रहे इकल्ला।

(११६) और जिस दिन कि फट जावेगा आसमान साथ बदली के और उतारे जावेंगे फरिश्ते। बस मत कहा मान काफिरों का और झगड़ा कर उससे साथ झगड़ा बड़ा। और बदल डालता है अल्लाह बुराइयों उनकी को भलाइयों से। और जो कोई तोबा : करे अच्छे बस निश्चय आता है तर्फ अल्लाह की।।

म॰ ४ सि॰ १६ सू॰ २५ आ॰ २४,४६, ६७, ६८ ।।

यहाँ असम्भव मेघ संग, फट जावे आकास।
मूर्त वस्तु तो नभ नहीं, कैसे हो विश्वास।।

झगड़े सदा कुरान करावे, शान्ति भंग अरु गदर मचावे।
ताँते माने नहीं विद्वाना, माने कोऊ मूरख अंजाना।
पुण्य पाप के बदले पाना, उड़दों से तिल का बदलाना।
तोबाः किये पाप सब छूटे, घर घर लगे पाप के बूटे।

(११७) बही की हमने तर्फ मूसा की यह कि ले चल रात को बन्दों मेरे को निश्चय तुम पीछा किये जाओगे। बस भेजे लोग फिरोन ने बीच नगरों के जमा करने वाले। और वह पुरुष कि जिसने पैदा किया मुझ को। और वह पुरुष कि आशा रखता हूं मैं यह कि क्षमा करे वास्ते मेरे अपराध मेरा दिन कयामत के।।

मं॰ ५ सि॰ १६ सू॰ १६ आ॰ ५०, ५१, ७६, ७७, ८०।।

रब ने मूसा को यदि, भेजी एक किताब।
औरों को क्यो भेज दीं, पहली समझ खराब।।

इक किताब मूसा ने पाई, इक दाऊद पास भिजवाई।
इक पोथी ईसा को दीनी, पुन मोहम्मद साहब लीनी।
क्या कुछ भूल गया था ईश्वर, फिर तो ईश्वर हुआ अनीश्वर।
तीन काल की जानन हारा, जिसका सारा जगत पसारा।
यदि तीनों थी पुस्तक साँची, तो कुरान की पोथी काँची।
हम विरोध चारों में पावें, इक दूजी को सब झूटलावें।
रब यदि जीव मात्र जनमाएँ, तो सब जीव अवस मर जाएँ।
जो जनमें सो मरने हारे, अटल नियम ईश्वर के प्यारे।
पुन अभाव जीवों का होगा, रहे भोग्य नहीं भोगी भोगा।
सब को रब यदि स्वयं खिलावें, खान पान खुद ही करवावे।
क्यों नहीं बाँट एक समाना, सब को सम कर क्यों नही जाना।
इक को राजा रब्ब बनाता, इक भर पेट अन्न नहीं पाता।
वही खिलावे वही पिलावे, खुद ही अल्ला पथ्य करावे।

फिर क्यों लगे किसी को रोगा, यदि अल्ला भुगवावे भोगा।
मुसलमान रोगी क्यों होते, रोगों से जीवन क्यों खोते।
अल्ला ही यदि रोग हटाता, क्यों मुस्लिम रोगी मर जाता।
नहीं वैद्य अल्ला क्या पूरा, उस का हिकमत ज्ञान अधूरा।
वह मारे यदि वही जिलावे, तो अल्ला खुद ही फल पावे।
पूरब जन्मों के अनुसारा, यदि फल देता प्रभु तुम्हारा।
फिर निर्दोष दोष नहीं ताका, उतना देता जितना जाका।
न्याय करें यदि रात कयामत, फिर तो समझों आ गई शामत।
लख कर दूर न्याय की रात्रि, पाप करेंगे जग के यात्री।
माफी का भी उन्हें भरोसा, क्षमा करेंगे अल्ला दोसा।
तोबा मिली क्षमा की बूटी, फेर बनेगी किसमत फूटी।
माफी का भी उन्हें भरोसा, क्षमा करेंगे अल्ला दोसा।
तोबा: मिली क्षमा की बूटी, फेर बनेगी किसमत फूटी।
यदि वह देत क्षमा नहीं दाना, तब हो जाये झूठ कुराना।

(११८) नहीं तू आदमी मानिन्द हमारी बस ले आ कुछ निशानी जो है तू सच्चों से। कहो यह ऊँटनी है वासते उनके पानी पीना है एक बार।। मं॰ ५ सि॰ १६ सू॰ २६ आयत १५०–१५१

करामात से उग उठा, इक पत्थर से ऊँट।
ऐसी सच्ची बात को, कौन कहेगा झूँठ।।

(११६) ऐ मूसा बात यह है कि निश्चय मैं अल्लाह हूं गालिब। और डाल दे असा अपना बस जब कि देखा उसको हिलता था मानों कि सांप है। ऐ मूसा मत डर निश्चय नहीं डरते समीप मेरे पैगम्बर। अल्लाह नहीं कोई माबूद परन्तु वह मा लग अर्श बड़े का। यह कि मत सरकशी करो ऊपर मेरे और चले आओ मेरे पास मुसलमान होकर।। मं॰ ५ सि॰ १६ सू॰ २६ आयत ६, १०, २६, ३१

अपने मुँह मियां मिट्ठू, बनते अल्ला पाक।
कौन करे तारीफ जो, करे न अपने आप।।

भद्र ने अपनी महिमा गाएँ पर रब गाते नहीं शरमाएँ।
ऐसे झूठे दे कर चकमें, रहे ऐंठते गहरी रकमें।

बन बैठे जंगल के राजा, फँसे न इसमें पठित समाजा।
जो रब बड़े अर्श का स्वामी व्यापक नहीं फिर अन्तर्यामी।
महा पाप यदि सरकश होना, तो क्यों रोना इतना रोना।
रब ने कीनी निज परशंसा पैगम्बर भी साथ न संशा।
दोनों इक सम आत्म शलाघी, दोनों सरकश दोनों बाघी।
बहु नर हते मुहम्मद साहिब, सरकश है अल्ला का नाइब
बहु पुनरुक्त दोष पोथी में, इस कुरान पोथी थोथी में।

(१२०) और देखेगा तू पहाड़ों को अनुमान करता है तू उनको जमे हुए और वह चले जाते हैं मानिन्द चलने बादलों की कारीगरी अल्लाह कि जिसने दृढ किया हर वस्तु को निश्चय वह खबरदार है उस वस्तु के कि करते हो।। मं॰ ५ सि॰ २० सू॰ २७ आयत २८

सुनिये पर्वत चलत हैं, भू पर मेघ समान।
चलते होंगे अरब में जंह पर बना कुरान।।

कहीं न पर्वत देखे चलते, कभी न करवट लखें बदलते।
खबरदार तो इतने अल्ला, पकड़ सके शयतान न बल्ला।
उसको खुदा दण्ड क्या देते, डरते उसका नाम न लेते।
इसके बढ़ गफलत क्या होवे, शयताँ के डर से नहीं सोवे।

(१२१) बस दुष्ट मारा उसको मूसा ने बस पूरी की आयु उसकी। कहा ऐ रब मेरे निश्चय मैंने अन्याय किया जान अपनी को बस क्षमा कर मुझ को सब क्षमा कर दिया उसको निश्चय वह क्षमा करने वाला दयालु है और मालिक तेरा उत्पन्न करता है जो कुछ चाहता है और पसन्द करता है।।
मं॰ ५ सि॰ २० सू॰ २८ आ॰ १४, १५, ६६

मोहम्मद ईसा मसीह, अरु तीजे अल्लाह।
मूसा नर हत्या करे, देते बख्श गुनाह।।

क्या यह दोनों नहीं अन्यायी, जिनके मन नहीं दया समाई।
प्रभु निज मन की करे कराए, जिसको जैसा चहे बनाए
इक को उसने नृपति बनाया द्वार द्वार इक से मंगवाया।

इक मूरख दूजा विद्वाना, कानी बाँट खुदा भी काना।
ऐसा पुस्तक होय न साँचा, जिसका खुदा जुलम रंग राँचा।

(१२२) और आज्ञा दी हमने मनुष्य को साथ मां बाप के भलाई करना और जो झगड़ा करें तुझसे दोनों यह कि शरीक लावे तू साथ मेरे उस वस्तु को कि नहीं वासते तेरे साथ उसके ज्ञान बस मत कहा मान उन दोनों का तरफ मेरी है और अवश्य भेजा हमने नूह को तरफ कौम उसके कि बस रहा बीच उनके हजार वर्ष परन्तु पचास वर्ष कम।। मं ५ सि० २०–२१ सू० २६ आयत ७–१३

सेवा माता पिता की यह कर्तव्य महान।
कष्ट सहें रातों जगे तब पाले सन्तान।।

यदि वे रब सन करें शराकत, समझो करते बड़ी हमाकत।
शर्क भरा कोई कथन न माने, सबसे ऊँचा ईश्वर जाने।
यदि वे चोरी आदि सिखाएं, बुरे कर्म में तुम्हें लगाएं।
ऐसी आज्ञा कभी न मानें पर उनको फिर भी सन्मानें।
नूह आदिक पैगम्बर जेते, अल्ला ने भेजे सब तेते।
किसने प्राणी भेजे बाकी, बिन इच्छा क्या आये खुदा की।
जो उसने ही सब भिजवाए, तब तो सब पैगम्बर आए।
सहस वर्ष पहले थी आयु अब नर क्यों नही होय चिरायु।
ताँते यह नहीं सत्य कुराना, जिसमें मिथ्या बातें नाना।

(१२३) अल्लाह पहली बार करता है उत्पत्ति फिर दूसरी बार करेगा उसको फिर उसी की ओर फेर जाओगे। और जिस दिन वर्षा अर्थात् खड़ी होगी कयामत निराश होंगे पापी। बस जो लोग कि ईमान लाये और काम किये अच्छे बस वे बीच बाग के सिंगार किये जावेंगे। और जो भेज दे हम एक बाब बस देखे उस खेती को पीली हुई। इसी प्रकार मोहर रखता है अल्लाह ऊपर दिलों उन लोगों के कि नहीं जानते।

मं, ५ सि २१ सू ३० आयत ११, १२, १५, ५१, ५६

दोउ बार उत्पत्ति करे, करे न तीजी बार।
फिर खाली बैठी रहे वाह ऊँची सर्कार।।

बैठे बैठे अल्ला खाली, होय निकम्मा जग का वाली।
समरथ वाकी होवे नाशा, नहीं अब दुनियां की कोई आशा।
न्याय रात्रि को रोवे पापी, यह तो अच्छी बात खुदा की।
पापी को समुचित है रोना, उचित न उसको सुख से सोना।
पर पापी का अर्थ बताएँ, बात खोल सारी समझाएँ।
पाप करे जो पापी सोई, तब तो उठती शंक न कोई।
पर यदि पापी वही विचारा, जो मुसलिम के मत से न्यारा।
अनिक थलों पर यथा कुराना, अन्य मती को पापी माना।
ऐसा है तो रब अन्यायी, पक्षपात ने बुद्धि गवायी।

रख कर अन्दर बाग के करते हैं श्रृगार,
गहने पहने स्वर्ण के, यही बहिश्त बहार।।

स्वर्ग सर्वथा जगत समाना जँह पर बाग बगीचे नाना।
वहाँ सुनार और होंगे माली, करते बागों की रखवाली।
या अल्ला खुद घड़ता गहने, स्वयं तोड़ता सूखे टहने।
यदि कोई थोड़ा गहना पावे, अन्य पुरूष का स्वर्ण चुरावे।
वह चोरी का फल पायेगा, दोजख में भेजा जायगा।
जो दोजख में जाये ऐसे, नित्य स्वर्ग मिलता पुन कैसे।
झूठी होय कुरां की बानी, मुसलमान की होगी हानी।
रब ने सीखी कहाँ किसानी, जो सगरी खेती पियरानी।
यदि कहो निज मन से सीखी, अल्ला की बुद्धि है तीखी।
तब तो रब का उन्हें डराना, यह गरूर से है इतराना।
अल्ला दिल पर मोहर लगावे, तो नर क्यों पापी कहलावे।
अल्ला है खुद पाप कराता, क्यों नहीं अल्ला दोजख जाता।
आज्ञा देता ज्यों सेनानी, सैनिक मारे अगनित प्राणी।
सैनिक कबहुँ दंड न पावे, वह तो केवल हुक्म बजावे।

(१२४) ये आयतें है किताब हिकमत वाले की। उत्पन्न किया आसमानों को बिना स्तून अर्थात् खम्भे के देखते हो तुम उसको और डालते बीच पृथिवी के पहाड़ ऐसा न हो कि हिल जावे। क्यों नहीं देखा

तूने यह कि अल्लाह प्रवेश कराता है रात को बीच दिन के और प्रवेश कराता है कि दिन को बीच रात के। क्या नहीं देखा कि किशतियां चलती है बीच दरिया के साथ नियामतों अल्लाह के तो को दिखलावें तुमको निशानियां अपनी। मं॰ ५ सि॰ २१ सू॰ ३१ आयत २–१०–२६–३१

धन्य धन्य अल्लाह की हिकमत भरी किताब।
उत्पन्न किया आकाश को, देखा तर्क जनाब।।

क्या उत्पन होता आकासा, कँह ते उसको खैंच निकासा।
विनसतून के ऊपर छाया है आकाश की मानो काया।
जो नहीं पर्वत रब्ब बनाता, भू मण्डल सारा हिल जाता।
तनिक ज्ञान भी अल्ला राखे बुद्धि हीन सम बात न भाखे।
रात्रि काली दिवस उजाला, जोड़ दिया ज्यों निमक मसाला।
वाह हकीम हिकमत लासानी, माखन काढ़े मथमथ पानी।
बिन मानस के नाव चलावे, नहीं डांड पतवार लगावे।
पाथर नैया जल में डारो, एक बार उसको भी तारो।
डूबे रब की तुर्त निशानी, नीचे नौका ऊपर पानी।

(१२५) तदबीर करता है काम की आसमान से तरफ पृथिवी की फिर चढ़ जाता है तर्फ उसकी बीच एक दिन के कि है अवधि उसकी सहस्र वर्ष उन वर्षों से कि गिनते हो तुम। यह है जानने वाला गैब का और प्रत्यक्ष का गालिब दयालु। फिर पुष्ट किया उसको और फूँका उसके रूह अपनी से। वह कब्ज करेगा तुमको फरिश्ता मौत का वह जो नियत किया गया है साथ तुम्हारे। और जो चाहते तुम अवश्य देते हम हर एक जीव को शिक्षा उसकी परंतु सिद्ध हुई बात मेरी ओर से कि अवश्य भरूंगा दोजख को जिन्नों से और आदमियों से इकट्ठे।। मं॰५ सि॰ २१ सू॰ ३२ आयत ५, ६, ६, ११, १३

जो चढ़ता अरू उतरता, अरू बैठे इक ठाम।
व्यापक वह कैस रहा, जो रहता निज धाम।।

आसमान पर अल्ला लटका, जँह तँह फिरे फरिश्ता भटका।
यदि फरिश्ते रिश्वत खाएं, अथवा छोड़मृतक कोई आएं।
कैसे जान सके वह साँई, एक ठाँव बैठा नर नाईं।
व्यापक नहीं नहीं सर्वज्ञा, बिन देखे जाने किम अज्ञा।

ठौर ठौर पर लेत परीक्षा बात बात में कर निरीक्षा।
सहस वर्ष में आवे जावे, यात्रा का पाबंद करावे।
सर्वशक्ति मय रहा न ईश्वर, ऐसा निर्बल है जगदीश्वर।
यदि फरिश्ता है कोई मारक प्राणि मात्र का जो संहारक।
उसे कौन पुन मारन वाला, किसने लखा काल को क़ाला।

यदि फरिश्ता मौत का, अमर नित्य कहलाय।
तब दोनों सम हो गये, फरिश्ता और खुदाय।

एक फरिशता एक ही काले सब जीवों को तुर्त सिखाले।
वह चाहता है दोजख भरना, सब जीवों का चाहे मरना।
सब प्राणी सीखे छिन माँही, ऐसा करना संभव नांही।
यदि वह बिना पाप के मारे, निज इच्छा से दोजख डारे।
उनके दुख का लखे तमाशा, नाहीं न्याय की उससे आशा।
दया हीन निष्ठुर अन्यायी, जीव मात्र को रब दुखदायी।

(१२६) कहा कि कभी न लाभ देगा भागना तुझ को जो भागों तुम मृत्यु व कतल से । ऐ बीबियों नबी की जो कोई आवे तुम में से निर्लज्जता प्रत्यक्ष के दुगुना किया जावेगा वास्ते उसके अजीब और है वह ऊपर अल्लाह के सहल। मंत्र ५ सि॰ २१ सू॰ ३३ आ॰ १३, ३०,।

लिखी मुहम्मद साहब ने, इस कारण यह बात। भागे न कोई युद्ध से, मरे करे या घात

जय होवे रण माँहि हमारी लूटें रिपू की संपति सारी।
दीन हमारा उन्नति पावे रोब दाब जग में छा जावे।

(१२७) और अटकी रहो बीच घरों अपने के आज्ञा पालन करो अल्लाह औश्र रसूल की सिवाय इसके नहीं। बस जब अदा कर ली जैद ने हाजित उससे ब्याह दिया हमने तुझ से उसको ताकि न होवें ऊपर ईमानवालों के तंगी बीच बीबियों से लेपालकों उनके के जब अदा कर लें उनसे हाजित और है आज्ञा खुदा की की गई। नहीं है ऊपर नबी के कुछ तंगी बीच वस्तु के। नहीं है मुहम्मद बाप किसी मर्दो का। और हलाल को स्त्री ईमान वाली जो देवे बिना मिहर के जान अपनी वास्ते नबी के। ढील देवे तू जिसको

चाहे उनमें से और जगह देवे तर्फ अपनी जिसको चाहे नहीं पाप ऊपर तेरे। ऐ लोगों ! जो ईमान लाये हो मत प्रवेश करो घरो में पैगम्बर के। म॰ ५ सि॰ २२ सू॰ ३३ आ॰ ३७, ३८, ४०, ५०, ५५, ५३।

दर दरवाजे बन्द कर, बैठे घर में नार।
पुरुष खुले फिरते रहें हाट बाट बाजार।।

प्राण नहीं है क्या नारी में, देखे नहीं खिड़की बारी में।
शुद्ध पवन निर्मल आकाशा, देह स्वास्थ्य कर सूर्य प्रकाशा।
सुन्दर दृश्य प्रकृति के नाना शस्य खेत सरसों अरुधाना।
किसका चित देखा नहीं चाहे, किसका मन नहीं दृश्य लुभाए।
यह अनर्थ नारी पर घोरा, रब ने दीना दण्ड कठोरा।
मुसलमान लौंडे एहि कारण, विषयी होते सर्वसाधारण।
रब रसूल के हुकुम समाना है अथवा दोनों के नाना।
एकहिं आज्ञादे यदि दोऊ, जो रसूल की रब की सोऊ।
दोनों का तुम हुकुम बचाओं, क्यों ऐसा पुन लिखा बताओं।
भिन्न भिन्न यदि आज्ञा तिनकी दोनों में से साँची किनकी।
जिसकी साँची वह भगवाना, जाकी मिथ्या वह शयताना।
निज हित साधे पर हित नाशे, ऐसी लीला रचे प्रकाशे।
तो पालक बेटे की नारी, ब्याह लीनी निज स्नुषा बेचारी।
इस कुकर्म को रब अपनाता, सुसर पतोहु का क्या नाता।
जे नर जांगल कछु नहीं जानें, वे भी इसको पातमक मानें।
नबी होय अस करे अकाजा, अंधी नगरी अंधा राजा।
पिता नहीं यदि नबी किसी का, किसका पुत्र जैद था नीका।
जो काहू को पुत्र बनाये, पुत्र वधु कैसे अपनाये।
धर्म ओट ले करे कुकर्मा निन्दनीय यह पाप अधर्मा।

जिस नारी को जब चहे, देवे त्याग रसूल।
नारी तज सकती नहीं, वह रसूल की भूल।।

पति बंधन नारी पर लागे, नबी नार जब चाहे त्यागे।

प्रविशे कोऊ नबी गृह माहीं, प्रविशे नबी सभी गृह माँही।
नबी साहिब को खुली इजाजत घर घर होवे उनका स्वागत।
जो रसूल के घर कोई झाँके, रूठ जाँय पैगम्बर बाँके।
को नर सत कुरान को माने, जिसमें ऐसे लिखे फसाने।

(१२८) नहीं योग्य वास्ते तुम्हारे यह कि दुख दो रसूल को यह कि निकाह करो बीबियों उसकी को पीछे उसके कभी निश्चय यह है समीप अल्लाह के बड़ा पाप। निश्चय जो लोग कि दुख देते हैं अल्लाह को और रसूल उसके को लानत की है उसको अल्लाह ने। और वे लोग कि दुख देते हैं मुसलमानों को और मुसलमान औरतों को बिना इसके पूरा किया है उन्होंने बस निश्चय उठाया जिन्होंने बहितान अर्थात् झूठ और प्रत्यक्ष पाप। लानत मारे जहां पाये जावें पकड़े जावें कतल किये जावें खूब मारा जाना। ऐ रब हमारे दे उनको द्विगुण अजाब से और लानत से बड़ी लानत कर। मं॰ ५सि॰ २२सू॰ ३३ आ॰ ५३, ५७, ५८, ६१, ६८।

देना कष्ट रसूल को, यदि माना है पाप।
तौ रसूल भी अन्य को, कष्ट न देवे आप।

कष्ट यदि लख कर काहू के, आँसू निकले अल्लाहू के।
वह अल्ला अल्ला किमि होवे, सुख में हँसे कष्ट में रोवे।
रब रसूल को दुख नहीं देना, वाकी कसर और से लेना।
मुसलमान अरू मुस्लिम नारी, जैसे दुख से होंय दुखारी।
वैसे दुखी होत जन सारे, क्यों मारें उनको हत्यारे।
सब का हृदय एक सम जानो, पक्षपात मत मन में ठानो।
रब रसूल यह दोउ निराले, जग में ग़दर मचाने वाले।
दया हीन यह जैसे दोऊ, नहीं देखे इनके सम कोऊ।
कहते अन्य जनों को मारों, पकड़ों बाँधो नष्ट कर डारो।
कहें अन्य यदि सब मतवाले, मुसलमान हैं मन के काले।
मारो काटो जँह पर पाओ, दारूण दुख दे इन्हें सताओ।
क्या इसको तुम भला कहोगे, कभी नहीं यह बात सहोगे।
देखें तनिक पैगम्बर अपने, ऐसे हिंसक लखे न सपने।
रब से बिनति करें या खालिक, मुस्लमान के प्यारे मालिक।

मुसलमान जो नहीं बने, ऐ मेरे गफ्फार।
उनको दुख दे दो गुना, कर कैफे किरदार।।

कछुक मुसल्मान जोशीले, इसी वचन को करके हीले।
पुण्य अन्य के बध को माने, कितने खून किये ना जाने।
पुरुष अशिक्षित पशु समाना, पाशव धर्म धर्म जिन जाना।
पापमयी यह शिक्षा भारी, भली न जाने सृष्टि सारी।

(१२६) और अल्लाह वह पुरुष है कि भेजता है हवाओं को बस उठाती हैं बादलों को बस हाँक लेते हैं तर्फ शहर मुर्दो की बस जीवित किया हमने साथ उसके पृथिवी को पीछे मृत्यु उसकी के इसी प्रकार कबरों मे से निकलता है।। जिसने उतारा बीच घर सदा रहने के दया अपनी से नहीं लगती हमको बीच उसके मेहनत और नहीं लगती बीच उसके माँदगी। मं॰ १ सि॰ २२ सू॰ ३६ आ॰ २–३–४–५।

वाह फिलासफी रब्ब की, देता भेज हवा।
हांके बादल उन्हीं से, पृथ्वी लेत जिवा।

यह कारज ईश्वर के नाँही, ईश्वर रहे एक रस माँही।
घर नहीं नते बिना बनावट है शरीर तो अबस थकावट।
अविनाशी नहीं हो तनुधारी या को जाने सृष्टि सारी।
तनुधारी यदि हो श्रम हीना, दुखदायी हो उसको जीना।
तनु को रोग अवस ही लागे, चहे रोग से कितना भागे।
एक नारि सेवी हो रोगी, दुर्गत हो बहु नारी भोगी।
सुख मय नहीं सुरग को वासा, जिन सुरगों में भोग विलासा।

(१३०) कसम हैं कुरान दृढ की, निश्चय तू भेजे हुओं से है। उस पर मार्ग सीधे के, उतारा है गालिब दयावान ने। मं॰ ५ सि॰ २३ सू॰ ३६ आ॰ २, ३, ४, ५।।

अल्ला का होता रचा, यदि यह ग्रन्थ कुरान।
तो कुरान की कसम क्यों, खाता खुद भगवान।

नबी खेदा का भेजा होता, पुत्र बधू पर दिल क्यों खोता।
सत्पथ पर हैं सभी कुरानी, यह बानी है झूठ कहानी।।

सत्य बोलना अरु सत कहना, सदा न्याय मारग पर रहना।
पक्षपात बिन न्यायाचारा, यही सत्य मारग निर्धारा।
इनसे उल्टा कुपथ कहावे, उल्टे पथ पर कभी न जावे।
पैग़म्बर अरु खुदा कुराना, साँचा पथ इन ने नहीं जाना।
सत्य भाव तीनों नहीं राखें, पक्षपात की वाणी भाखें ।
नहीं रसूल सब पर बलवाना, सब से अधिक न वह गुणवाना।
उससे बहु ज्ञानी गुण वारे, भरे पड़े हैं, इह संसारे।
ज्यों कुंजड़ी निज बेर सराने, इह विधि बात कुरान बखाने।

(१३१) और फूँका जायेगा बीच सूर के बस नागहाँ वह कबरों में से मालिक अपने की दौड़ेंगे। और गवाही देंगे पाँव उनके साथउस वस्तु के कमाते थे। सिवाय इसके नहीं कि आशा उसकी जब चाहे उत्पन्न करना किसी वस्तु का यह कि कहता वास्तु उनके कि होजा बस हो जाता है। मं॰ ५ सि॰ २३ सू॰ ३६ आ॰ ५१—६५—८२।

सुनिये टुक अल्लाह की बातें ऊट पटाँग।
मद मतवाले कह रहे, अथवा छानी भाँग।।

पाँव न देते कभी गवाही, क्या पैरों की बोले स्याही।
"होजा" कहा हुए झट सारे, फूट पड़े जनु नीर फुहारे।
रब के बिना नथा जब कोई, किस को कहा कौन पुन होई।
यदि कोई द्रव्य न था तत्काला, झूठ कहा पुन अल्ला ताला
यदि पहले था कोई पदारथ, विद्यमान का जन्म अकारथ।
सब कुछ अल्ला पाक बनाया, यह पुन झूठ खुदा फरमाया।

(१३२) फिराया जावेगा उसके ऊपर पियाला शराब शुद्ध का। सपेद मजा देने वाली वास्ते पीने वालों के। समीप उनके बैठी होंगी नीचे आंख रखने वालियां सुंदर आंखों वालियां। मानो कि वे अण्डे हैं छिपाये हुए। क्या बस हम नहीं मरेंगे। और अवश्य लूत निश्चय पैगम्बर से था। जब कि मुक्ति दी हमने उसको और लोगों उसके को सब को। परन्तु एक बुढ़िया पीछे रहने वालों में है। फिर मारा हमने औरों को। मं॰ ६ सि॰ २३ सू॰ ३७ आ॰ ४५—४६—४८—४६—५८—१३३—१३४—१३५—१३६।।

इस दुनियां में मुसल्मां, कहते मद्य हराम।

पर बहिश्त में मद्य के, भर भर पीवें जाम।

वँह तो बहते हैं परनाले, उड़ते हैं प्याले पर प्याले।
बहुत यहाँ से वहाँ खराबी जँह पर रहते सभी शराबी।
नैन बैन हूरों के अचंल, सदा करें उनके चित चंचल।
वहां विलासी भोगी पानक, होते होंगे रोग भयानक।
यदि सुरग में हैं तनुधारी, अवस मरें पुन बारी बारी।
यदि शरीर उनके पुन नाँही, जाना व्यर्थ सुरग के मांही।
जो तुम लूत पैगम्बर ज़ानो, उसकी कथा सत्य पुन मानो।
पुत्री सन तिस कीना संगम, ऐसे हजरत रहे विहंगम।
दो लड़के उनसे उपजाये, फिर भी पैगम्बर कहलाये,
उसको रब ने मुक्ति दीनी, अच्छी सेवा उसने कीनी।
जैसा अल्ला वैसे लूता, रब शरीफ के भये सुपूता।
ऐसा अल्ला हम नहीं मानें, मुस्लिम के घर करें ठिकाने।

(१३३) बहिश्ते हैं सदारहने की खुले हुए हैं पर उनके वास्ते उनके। तकिये किये हुए बीच उनके मँगावेंगे बीच इसके मेवे और पीने की वस्तु और समीप होगी नीचे रखने वालियां दृष्टि और दूसरों से समायु। बस सिजदा किया फरिश्तों ने सब ने। परंतु शयतान ने न माना। अभियान किया और था काफ़िरों से। ऐ शैतान किस वस्तु ने रोका तुम को यह कि सिजदा करे वास्ते उसवस्तु के कि बनाया मैंने साथ दोनों हाथ अपने के क्या अभिमान किया तू ने वा था बड़े अधिकार वालों से। कहा कि मैं अच्छा हूं उस वस्तु से उत्पन्न किया तूने मुझ को आग से उसको मिट्टी से। कहा बस निकल इन आसमानों में से बस निश्चय तू चलाया गया है। निश्चय ऊपर तेरे लाजन है मेरी दी जजा तक। कहा ऐ मालिक मेरे ढील दे उस दिन तक कि उठाये जावेंगे मुर्दे।। कहा कि बस निश्चय तू ढील दिये गयों से है। उस दिन समय ज्ञात तक। कहा ऐ मालिक मेरे ढील दे उस दिन तक उठाये जावेंगे मुर्दे।। कहा कि बस निश्चय तू ढील दिये गयोंसे है। उस दिन समय ज्ञात तक। कहा कि बस कसम है प्रतिष्ठा तेरी की अवश्य गुमराह करूंगा। उनको मैं इकट्ठे। मं॰ ६ सि॰ २३ सू॰ ३८ आ॰ ५०–५१–५२–७३–७४–७५–७६–७७–७८–७६–८०–८१।

बाग बगीचे आदि से, भरा स्वर्ग भण्डार।
मद के प्याले ले खड़ीं, निम्न नयनियां नार।।

फल फुलवारी अरु घर द्वारा, इन से बना बहिश्त तुम्हारा।
नाशवान यह सकल पदारथ तांते जाना स्वर्ग अकारथ।
यह तो सारे द्रव्य संयोगी, समय पाय हो जांय वियोगी।
अलग होंय सब मिलने वारे, मिलने वारे होंगे न्यारे।
स्वर्ग तुम्हारा अंत विनासी, कहाँ नित्य पुन स्वर्ग निवासी।
जब रसूल यह पंथ चलाया, अर्ब रहा निर्धन बिन माया।
पैगम्बर ने जाल बिछाया, निर्धन लोगों को फुसलाया।
उन्हें दिखा कर स्वर्ग नजारा, धन वैभव संपति भंडारा।
तकिये तोशक सुन्दर नारी, फल मेवे अरु मद की झारी।

जहाँ रहेंगी नारियां, वह कैसे सुख धाम।
जहाँ नैन के वाण से, उद्दीपित हो काम।

कौन देशसे हूरें आई, कँह से अल्ला ने मंगवाई।
जो वे सब बाहर से आवें, अवस एक दिन बाहर जावें।
यदि वे सभी स्वर्ग की जाई, तो पुन जन्म धार पछताई,
क्या करती थी पूर्व कयामत, कँह पाती थी मर्द नियामत।
अल्ला का टुक तेज निहारें, पुन अपने मन माँहि विचारें।
सब ने रब का हुकम बजाया, आदम के पग सीस झुकाया।
जब शैतान नहीं उसकी मानें, तब उसको यह कहा खुदा ने।

आदम को दोउ हाथ से, मैं कीना निर्मान।
क्यों करता सिजदा नहीं, अरें दुष्ट शैतान।

दो हाथों वाला था, अल्ला। पुरुष भये पुन माशा अल्ला।
पुरुष होय नहीं सर्व वियापी, जिसने सारी सृष्टि थापी।
सर्व शक्ति वाला भी नाहीं, रहता एक देश के पांही।
कही बात शैताँ ने सांची, कँह अग्नि कँह मिट्टी काँची।
है अल्ला का घर आकासा, क्या नाँही पृथिवी पर वासा,
पुन काबा क्यों घर बतलाया, गलत ठिकाना क्यों लिखवाया।
निज से अरु बाहर निज जग से, काढ़ दिया कैसे किस मग से,

जो होवे दुनियां में होवे, खुदा सुता में सुख से सोवे
दुनियां की नहीं जुम्मेदारी, सिर्फ स्वर्ग की ठेकेदारी।

कैद किया शैतान को, अरु कीनी फटकार।
गिड़गिड़ाय शैतान ने, रब से करी पुकार।।

या रब तेरी बड़ी करामत, बख्शों जब तक आय कयामत।
सुन शैतान की ठकुर सुहाती, पिघल गई अल्ला की छाती।
छूट गया पुन जब शैताना, तब उसने भ्रुकुटि को ताना।
बोला ऐ रब बहकाऊँगा, दुनियां को मैं फुसलाऊँगा।
खून बहाँऊ गदर मचाऊं, तब मौला शैतान कहाऊं,
दांत पीस कर अल्ला बोले, क्यो इतना इतराता डोले।
जिस जिस को तू बहकायेगा, दोजख में डाला जायेगा।
तुझ को भी दोजख मेंडालूं सारी कसरें वहां निकालूं।
हे सज्जन गण तनिक विचारें,न्याय नैन से इसे निहारे।
रब ने खुद शैतान बहकाया, या वह स्वयं फेर में आया।
यदि अल्ला ने खुद बहकाया, तौ उसने इक पाप कमाया।
शैतां के अल्ला भये नाना, जिससे शयताँ हुआ जमाना।
खुद बहका यदि ऐसा मानो, जीव ऐसा हि पुन जानो।
अपने आप बहकते प्रानी, शयतां की पुन बृथा कहानी।
खुला छोड़ शयतां को दीना, यह भी पाप खुदा ने कीना।
अल्ला शयतां दोनों पापी, इन दोनों ने सृष्टि सरापी।
आपहि प्रथम कराये चोरी, आपहि दण्ड देत बरजोरी।
तांते रब्ब बड़ा अन्यायी, झूठ कुरां में कथा बनाई।

(१३४) अल्ला क्षमा करता है पाप सारे निश्चय वह है। क्षमा करने वाला दयालु और पृथिवी सारी मूठी में है उसकी किन कयामत के और आसमान लपेटें हुए हैं बीच दाहिने हाथ उसके कै और चमक जावेगी पृथिवी साथ प्रकाश मालिक अपने के और रक्खे जावेंगे कर्म पत्र और लाया जावेगा। पैगम्बर को और गवाहों को और फ़ैसला किया जायेगा। मं॰ ३ सि॰ १४ सू. ३६ आ॰ ५३—६७—६६।

क्षमा करे रब पाप को, जानो पाप बढ़ाय।
बुरा भरोसा क्षमा का, जग पापी हो जाय।

जो पापी नर दण्ड न पावें, फिर तो जिसको चहें सतावें।
नहीं रब अग्नि वत परगासे, वर्ण हीन का वर्ण न भासे।
कर्म पद कँह संग्रह करता कौन मुनीम बही में भरता।
पहले साक्षी देत गवाही, पुन पैगम्बर देत सफाई।
न्याय करे पुन अल्ला ताला, अहो न्याय का ढंग निराला।
क्या अल्ला नहीं अन्तर्य्यामी, वह सर्वज्ञ सृष्टि का स्वामी।
वह क्यों मांगे भला गवाई, वह सब जाने पर्वत राई।
न्याय करे कर्मन अनुसारा, कर्म श्रृंखला अमित अपारा।
जीवजन्म न होंय अकारण, जन्में पूर्व जन्म के कारण।
पुनः दिलों पर मोहर लगाना, शयतां का जग को बहकाना।
इत्यादि जो गड़ी कहानी, निष्फल इतनी मथी मथानी।

(१३५) उतारना किताब का अल्लाह गालिब जानने वाले की ओर से है। क्षमा करने वाला पापों का स्वीकार करने वाला तोबाः था। मं॰ ६ सि॰ २३४ सू॰ ४० आ॰ २—३।

देख खुदा के नाम को, भोला फँसे जहान।
पैगम्बर की बात अरु, माने सत्य कुरान।।

सर्व सत्य नहीं ग्रंथ कुराना, तनिक सांच अरु झूठ महाना।
मिथ्या मिश्रित सत्य मलीना, साँचहु विकृत आभा कीना।
अल्ला अरु पैगम्बर जेते, अरु उसके अनुयायी तेते।
सब हैं पाप बढ़ाने वारे, पापहु करें कराने हारे।
पाप बढ़ावे जग में माफी, तांते मुस्लिम पापी काफी।

(१३६) "बस नियत किया उसको सात आसमान बीच दो दिन के और डाल दिया हमने बीच उसके काम उसका यहां तक कि जब जावेंगे उसके पास साक्षी देंगे ऊपर उनके कान उनके और आंख उनकी और चमड़े उनके कर्म से और कहेंगे वास्ते चमड़े अपने के क्यों साक्षी दी तुमने ऊपर हमारे कहेंगे कि बुलाया है हमको अल्लाह ने जिसने बुलाया हर वस्तु को अवश्य जिलाने वाला है मुर्दों को" मं॰ ६ सि॰

दो दिवसों में रच सका, खुदा सात असमान।
यदि होवे सब शक्तिमय, छिन में रचे जहान।

जड़ है आखं नाक अरु काना, वे क्या जानें बात बताना।
जब चमड़े ने दई गवाई, उनसे लेने लगे लड़ाई।
चमड़ा बोले मैं क्या करता, मैं तो हुकम खुदा से डरता।
जड़ वस्तु की साक्षी लेना बंध्या सुत का दर्शन देना।
यदि मुर्दो को फेर जिलाये, पहले ही क्यों मृतक बनाए।
कहो रब्ब क्या मुर्दा होवे, सुख से बीच कबर के सोवे।
न्याय रात्रि तक मुर्दे सारे, किस मुस्लिम घर रहें बेचारे।

(१३७) "वास्ते उसके कूंजियां है आसमानों की और पृथिवी को खोलता है भोजन जिसके वास्ते चाहता है और तंग करता है" उत्पन्न करता है जो कुछ चाहता है और देता है जिसको चाहे बेटियां और देता है जिसको चाहे बेटे। वा मिला देता है उनके बेटे और बेटियां और कर देता है जिसको चाहे बांझ। और नहीं है शक्ति किसी आदमी को कि बात करे उससे अल्लाह परन्तु जी में डालने कर वा पीछे परदे के से वा भेजे फरिश्ते पैगाम लाने वाला। मं. सि. २५ सू. ४२ आ. १२—४६—५०—५१।।

लाखों होंगी कुञ्जियां और उनके भण्डार।
लाखों पड़ते खोलने, अल्ला को पट द्वार।

पुण्य किये बिन देवे दाता, यह तो न्याय कहा नहीं जाता।
दुख सुख देवे उसकी मरजी, क्या अल्लाह अल्ला अलगरजी
जिसको चाहे उत्पन्न करदे, बेटी झोली भर दे।
क्या रच सकता दूजा अल्ला अपने जैसा अर्श मुअल्ला।
नहीं रच सकता तौ बतलाएं, सर्व शक्तिमय क्यों कहलायें।
मानुषको दे बेटी बेटे, अरु जब चाहे उन्हें समेटे।
मुर्गे मच्छी शूकर श्वाना, कौन देत उनको सन्ताना।
नर नारी बिन भये समागम, क्यों नही होय पुत्र को आगम।
बाँझ रखे जिसको हो मरजी, ऐसे भये खुदा अलगरजी।

उसके सन्मुख नहीं कोई बोले, अल्ला भये बंब के गोले।
बात करे तो पर्दा डांला, अल्ला है या युवती बाला।
जो कुछ बोले इनको बोले, अन्य पुरुष सों मुख नहीं खोले।
बात करे पैगम्बर द्वारा, यथा डाक का हो हरकारा।
क्या सर्वज्ञ नहीं वह स्वामी, घट घट वासी अन्तर्यामी।
यह है चतुर पुरुष की घातें, जो पर्दे से करता बातें।

अल्ला ने भेजा मसीह, दे प्रत्यक्ष प्रमान।
पुन उसके विपरीत क्यों, भेजा रब्ब कुरान।

हैं इंजील के विरुध कुराना, दोनों के नहीं लेख प्रमाना।
उनका इक निर्माता नाहीं, भाव विरोधी दोनों मांही।

(१३६) "पकड़ो उसको बस घसीटों उसको बीचों बीच दोजख के इसी प्रकार रहेंगे और ब्याह देंगे उनको साथ गोरियों अच्छी आंख वालियों के। मं॰ ६ सि॰ २५ सू॰ ४४ आ॰ ४७—५४ ।।

पकड़ें और घसीट लें, वाह न्यायी भगवान।
जैसा खुदा कुरान का, वैसे मुसलमान।।

काम खुदा ने खूब संभाला, हलुआ पूड़ी खाने वाला।
वही सभी के ब्याह करावे, दान दच्छिना गहरी पावे।
मुसलमान का रब्ब पुरोहित ब्याह निकाह पर रहता मोहित।

(१४०) बस जब तुम मिलो उन लोगों से कि काफिर हुए बस मारो गर्दन उनकी यहां तक कि जब चूर कर दो उनको बस दृढ करो कैद करना। और बहुत बस्तियां हैं कि वे बहुत कठिन थी शक्ति में बस्ती तेरी से जिससे निकाल दिया तुझ को मारा हमने उसको बस न कोई हुआ सहाय देने वाला उनका। तारीफ उस बहिश्त की कि प्रतिज्ञा किये गये हैं परहेजगार बीच उसके नहरे हैं बिन बिगाड़े पानी और नहरें हैं दूध की कि नहीं बदला मजा उनका और नहरें हैं शराब की मजा देने वाली वास्ते पीने वालों के और शहद साफ किये गये की और वास्ते उनके बीच उसके मेवे हैं प्रत्येक प्रकार से भान मालिक उनके से।

मं॰ ६ सि॰ २६ सू॰ ४७ आ॰ ४—१३—१५।।

मुसलमान बहुधा सभी, अल्ला और कुरान।
निर्दय कातिल स्वारथी, सारे एक समान।।

यदि कोई दूजे मतवाला, लिखदे ऐसा गपड़ घोटाला।
मुसलमान को पकड़ो मारो, बांधों चूर चूर कर डारो।
क्या तुम उसको भला कहोगे, ऐसा अत्याचार सहोगे।
मधु मद दूध यहां भी पावें, वृथा स्वर्ग हित कष्ट उठावें।
नदी दूध की कैसे संभव, महां असंभव महाँ असंभव।

(१४१) जब कि हिलाई जावेगी पृथिवी हिलाये जाने पर। और उड़ाये जायेंगे पहाड़ उड़ाये जाने पर। बस हो जावेंगे भुनगे टुकडे टुकडे। बस साहब दाहनी ओर वाले क्या हैं सांहब दाहनी ओर के। और बांई ओर वाले क्या हैं बांई ओर के। ऊपर पलंग सोने के तारों से बुने हुए हैं। न कि ये हुए हैं ऊपर उनके आमने सामने और फिरेंगे ऊपर उनके लड़के सदा रहने वाले। साथ आबखोरों के और प्यालों के शराब से। नहीं माथा दुखाये जावेंगे उससे और न विरुद्ध बोलेंगे। और मेवे उस किस्म से कि पसंद करे। और गोश्त जानवर पक्षियों के उस किस्म से कि पसंद करें। और वास्तु उनके औरतें है अच्छी आखों वाली। मानिन्द मोतियों छिपाये हुओं की और बिछौने बड़े। निश्चय हमने उत्पन्न किया है। औरतों को एक प्रकार का उत्पन्न करना है। बस किया है हमने उनको कुमारी। सुहाग वालियां बराबर अवस्था वालिंयां बस भरने वाले हो उससे पेटों को। बस कसम खाता हूं मैं साथ गिरने तारों के। मं॰ ७ सि॰ २७ सू ५६ आ॰ ४, ५, ६, ८, ८, १५, १६,१७, १८, १६, २०, २१, २२, २३, २४, ३५, ३६, ३७, ५३, ७५।

सदा भूमि हिलती रहे, छिन भी खड़ी न होय।
जो इसको थिर जानता, पढ़ा लिखा नहीं सोय।

जाने थिर कुरान निर्माता, नहीं उसको कछु आता जाता।
कैसे पर्वत खुदा उड़ायें, फरफराय पंछी सम जायें।
टूट फूट भुंगे हो जावें, तौ भी सूक्ष्म तनु कहलावें।
पुनर्जन्म उनका किमि नांही, बड़ा छोड़ छोटा तनु पाँही।
कुछ दाएँ कुछ बाएँ होंगे, बैठे बीच खुदाई घोंघे।
सुन्दर पलंग सुनहरी तारें, तकिये तोशक स्वर्ग बहारें।
सुरग मांहि पुन होंय सुनारा धुनियें अरु तरखान लोहारा।

खटमल होंगे उन्हें सताते, मुश्किल उन पर सोने पाते।
क्या तकियों पर रहें पधारे दिन भर बैठे रहें नकारे।
होता हेगा उन्हें अजीरण, फूले तोंद बढ़ाय समीरण।
पीड़ित हों रोगों के मारे मरते होंगे शीघ्र बेचारे।
काम काज यदि होंगे करते, पुन उदर निज होंगे भरते।
जग बहिश्त का क्या पुन अंतर, जहां परिश्रम करें निरंतर।
जो नित बैठे रहते बालक, वहीं मातु पितु उनके पालक।
जिनके पुत्र दामाद जहाँ पर सास सुसुर भी रहें वहां पर।
होगा नगर बसा इक भारा, ओर छोर नहीं पारावारा।
मल मूतर का अंत न होगा, दुर्गन्धि अरु होंगे रोगा।
मेवे खायें पीवें पानी, गटकें मद्य रंग की धानी।
मांस पशु पच्छिन का खावें, हाड़ पहाड़ वहां लग जावें।
रहते होंगे वहां कसाई, आह रुधिर की नदी बहाई।
पशु पंछिन की करुण पुकारा, इसको काटा उसको मारा।
पी शराब अरु मांस डकारे, होते होंगे वे मतवारे।
लौंडों हूरों की पून बारी, लिखते आती लज्जा भारी।
लौंडे हूरें बहुत जरूरी खिदमत करते उनकी पूरी।
नहीं तो गरमी सिर चढ़ जाये, पागल खाना स्वर्ग बनाये।
एक पलंग बहु सोने वाले, वे भी सब के सब मतवाले।
ताँते कीने बड़े बिछौने, लेट रहेंगे औने पौने।
स्वर्ग मांह नित रहें कुमारी, अरु लौंडों की संख्या भारी।
जो उम्मेद वार वँह जाएँ, कन्याओं को उनसे ब्याहें।
क्यों नही उन लड़कों से ब्याहीं, क्या वे उनके लायक नाहीं।
या ये लौंडे भी हूर समाना, स्वर्गीयों को करें प्रदाना।
सम वयस्क यदि है नर नारी, तब तो दोष भया अति भारी।
नर की चहिये दुगुन अवस्था, तब रहती है ठीक व्यंवस्था।
मुसलमान की स्वर्ग कहानी, गली सड़ी अब भईपुरानी।
अब देखें दोजख की झाँकी क्या दुर्गत करते इंसाँ की।

थुहर खा कर उदर भरें गे, पी पी पानी गरम अरें गे।
मिथ्या वादी कस्में खाते, सदा झूठ को सत्य बताते।
अल्ला ताला कसम उठावे, शायद कोई पछी फँस जावे।

(१४२) निश्चय अल्ला मित्र रखता है उन लोगों को कि लड़ते है बीच मार्ग उसके के।
मं॰ ७ सि॰ २८ सू॰ ६१ आ॰ ४।

आपस में लड़ने लगे, लाखों मरे जवान।
ऐसी शिक्षा ने किया, दुखिया सकल जहान।।

ऐसी शिक्षा सत्यानसी, जब से पाई अर्ब निवासी।
सभी परस्पर लड़ने लागे, मर गए लाखों बृथा अभागे।
मजहबी झण्डा हाथ उठाया, देश देश में गदर मचाया।
क्या अल्ला ने कलह जगाई, सारी दुनिया को दुखदायी।

(१४३) ऐ नबी ! क्यों हराम करता है उस वस्तु को कि हलाल किया है खुदा ने तेरे लिये चाहता है। तु प्रसन्नता बीबियों अपनी की और अल्लाह क्षमा करने वाला दयालु है। जल्दी है मालिक उसका जो वह तुमको छोड़ दे तो, यह कि उसको तुम से अच्छी मुसलमान और ईमान वालियाँ बीबियाँ बदला दे सेवा करने वालियां तोबा : करने वालियां रोंजा रखने वालियाँ देखी हुई और बिन देखी हुई। मं॰ ७ सि॰ २८ सू ३६ आ॰ १, ५।

मोहम्मद का दास है या है अल्ला पाक।
झट घर में आ उतरता, जब कहीं पड़ें निफाक।।

मीयां बीबी लड़े लड़ाई, रब्ब कराए तुर्त सफाई।
लिखी गई जो आयत पहली, उस पर है द्वै कथा सुनहली।
पैगम्बर नित सांझ सकारे, मधु का शर्बत पीने वारे।
बहुत बीबियां उनके घर थी, चातुर सुंदर और सुघर थीं।
इक दिन इक की बारी आई, शर्बत में उस देर लगाई।
क्रुद्ध भयीं तब बाकी नारें, अपनी अपनी ओर पुकारें।
हजरत लौडी तुर्त बुलाई, कर पवित्र वहं रैन रमाई समाचार
जब बीबी पाया, रूठ गई हजरत समझाया।

कसम मुझे फिर करूं न ऐसे, अब तो मानो जैसे कैसे।
कहा किसी को मत बतलाना, तब बीबी ने कहना माना।
दूजी बीबी से जा बोले, अपना भेद आप ही खोले।
तुर्त उतारी आयत अल्ला, क्या कहते हैं माशा अल्ला।

तु म पर जिस पदार्थ को, हमने किया हलाल।
मत हराम समझो उसे, बोले जुल्ल जलाल।

टुक सोचें सब सज्जन ज्ञानी, कैसी है यह व्यर्थ कहानी।
घर के झगड़े रब्ब मिटाये, अल्ला पर बलिहारी जाये।
प्रगट मुंहम्मद चरित तुम्हारे, अनेक बीबियां रखने हारे।

पैगम्बर अरु बीबियां, लड़त करत परपंच।
अल्ला निबटारा करे, बन बैठा सरपंच।।

दूजी आयत में बतलाते, अल्ला बीबी को समझाते।
रूठ गई हजरत से नारी, आयत रब ने तुर्त उतारी।
यदि रूठेगी तू रसूल से, समझ न लेना कहीं भूल से।
यदि पैगम्बर तुम को छोड़ें, हम उसका पुन नाता जोड़ें।
तुम से अच्छी देंगे नारी, सुघर सजीली शुद्ध कँवारी।
आपहि हजरत अयत उतारें, जब जैसा वह समय निहारें।
खुदा पाक का भला रवैय्या, बीवियां करता रहे मुहैय्या।
अरे मूर्ख ! बछिया को ताऊ अल्ला है या है कोई नाऊ।

(१४४) हे नबी झगड़ा कर काफिरों और गुप्त शत्रुओं से और सख्ती कर ऊपर उनके।
मं॰ ७ सि॰ २८ सू॰ ६६ आ॰ ६।

दाओ पेच अल्लाह के, देखें घर के ध्यान।
दुनियां भड़काने लगे, उठने लगा तुफान।

पैगम्बर को हैं उकसाते, मुसलमान का हृदय बढ़ाते।
कहते मारो काफिर मारो, गर्दन उसकी तुर्त उतारो।
मुसलमान यह पढ़कर बानी, करते हैं दुनियां की हानी।

दया करें प्रभु इनके ऊपर, मित्र समान रहें मित्र भू पर।

(१४५) फट जावेगा आसमान बस वह उस दिन सुस्त होगा। और फरिश्ते होंगे ऊपर किनारों उनके के और उठावेंगे तख्त मालिक तेरे का ऊपर अपने उस दिन आठ जन। उस दिन सामने लाए जाओगे तुम न छुपी रहेगी कोई बात छुपी हुई। बस जो कोई दिया गया कर्म पत्र अपना बीच दाहिने हाथ अपने के बस कहेगा लो पढ़ों कर्म पत्र मेरा। और जो कोई दिया गया कर्म पत्र बीच बायें हाथ अपने के बस कहेगा हाथ न दिया गया होता मैं कर्म पत्र अपना। मं॰ ७ सि २६ सू॰ ६६ आ॰ १६, १७, १८, १६, २५।

क्या लड्डे का है बना, फट जाये असमान।
धन्य तेरी अल्ला अकल, वाहवा रचा कुरान।।

अल्ला का सिंहासन न्यारा, ज़िसे उठावें चार कहारा।
हाड़ मांस की उसकी देहा, इसमें तनिक नहीं संदेहा।
तखत विराजा हूरों छाजा, ऐसा रब्ब गरीब निवाजा।
तनुधारी होता अल्पज्ञा, पुन अल्लाह कैसे सर्वज्ञा।
जो रब सिंहासन पर सोवे, जगत मांहि व्यापक किम होवे।
जीव कर्म करते पुन जेते, इक देशी किम जाने तेते।
दहिने हाथ खड़े पुण्यातम, बायें कर रोवे पापातम।
कर्म पत्र उनसे पढ़वावे, सब कुछ सुन कर हुक्म सुनावे।
कछुक स्वर्ग कछु नर्क पठावे, तौ भी वह सर्वज्ञ कहावे।

(१४६) चढ़ते हैं फरिश्ते और रूह तर्फ उनकी वह अजीब होगा बीच उस दिन के कि है परिमाण उसका पचास हजार वर्ष। जब कि निकलेंगे कबरों में से दौड़ते हुए मानों कि वह बुतों के स्थानों की ओर दौड़ते हैं।

मं, ७ सि॰ २६ सू॰ ७० आयत ४–४३।।

खड़े रहें यदि जीव सब, वर्ष सहस्र पचास।
कर्म पत्र कर में लिये, तब तो सत्यानास।।

खड़े खड़े ही मर जायेंगे, कर्म पत्र भी जर जायेंगे।
निकल निकल कबरों से प्राणी, खाली करके साहब मियानी।
भागे जिधर कचहरी रब की, पक्की सड़क बनाई कब की।

कौन जायेंगे उन्हें बुलाने, सम्मन पर दसखत करवाने।
पापी पुण्यातम इक सारा, लाखों वर्ष कवर में डारा।
बन्द आज कल रहे कचहरी, अल्ला सोये तान मसहरी।
आज कल्ह क्या करें फरिश्ते, क्या हूरों से गांठे रिश्ते।
यह अंधेर कहीं नहीं देखा, इसको कहें इलाही लेखा।

(१४७) निश्चय उत्पन्न किया तुम को कई प्रकार से। क्या नही देखा तुमने कैसे उत्पन्न किया अल्लाह ने सात आसमानों को ऊपर तले और किया चांद को बीच उसके प्रकाशक और किया सूर्य को दीपक।।

मं॰ ७ सि॰ २६ सू॰ ७१ आयत १४—१५—१६

जीव को उत्पन करे, अल्ला बड़ा दयाल।
फिर तो थिर नहीं रह सकें, जायें काल की गाल।।

जो उपजे सो वस्तु विनाशी, संयोगज किम हो अविनाशी।
ऊपर तले आकाश बिछाये, बात असंभव समझ न आए।
दरी गलीचे नहीं असमाना, उनका संभव नहीं बिछाना।
व्यापक निराकार आकासा, जहां नखत सब करें निवासा।
ऊपर तले आकाश बनाएं, सूर चन्द्र मध में नही आएं।
यदि मध्य में उनको राखें सात तबक चमकें मत भाखें।
इक ऊपर इक नीचे चमकें, ऊपर से ऊपर किम दमके।
पांच आसमां रहें अँधियारे, बेचारे किसमत के मारे।

(१४८) यह कि मसजिदें वासते अल्लाह के हैं बस मत पुकारो साथ अल्लाह के किसी को।

मं॰ ७ सि॰ २६ सू॰७२ आयत १८

अल्लाह का घर मसजिदें, यदि यह बात प्रमान।
बुतपरस्त तब तो भये सारे मुसलमान।।

ठाकुर का घर ठाकुर द्वारा, मसजिद में है अल्ला प्यारा।
क्या अन्तर है दोनों माहीं, फिर तुम बुत परस्त क्यों नाहीं।
औरहिं रब के साथ पुकारे, उसको कहते काफिर सारे।
पर तुम अपनी ओर निहारो, रब के साथ रसूल पुकारो।

"ला इलाहः इल्लिल्लाहः, मुहम्मद अल रसूलिल्लाहः"।
यह कुरान से उलटा कलमा, जिसको रटते तुम पल पलमां।
तुम सांचे तो झूठ कुराना, किसका वचन जाय पुन माना।

(१४६) इकट्ठा किया जायगा सूरज और चांद ।। मं॰ ७ सि २६ सू॰ ७५ आ॰ ६।।

बेसमझी की बात है, बेसमझी की बात।
रवि शशि एकट्ठे किये, जोड़े दिन अरु रात।।

जोड़ दिये किस काज अकारन, क्या सृष्टि को लागे टारन।
शेष नखत क्यों नही समेटे, क्या अल्ला थक कर पुन लेटे।

(१५०) और फिरेंगे ऊपर लड़के उनके सदा वाले जब देखेगा तू उनको अनुमान करेगा तू उनको बिखरे हुए मोती और पहनाये जायेंगे कंगन चांदी के ओर पिलावेगा उनको रब उनको शराब पवित्र।।
मं॰ ७ सि॰ २६ सू॰ ७६।।

किस कारण रक्खे वहाँ मुक्ता वर्ण कुमार,
शायद यहीं से चलपड़ा, लड़को से व्यभिचार।।

क्या कुकर्म की लिखदी बानी, इस कुकर्म का अल्ला बानी।
स्वर्ग मांहि इक होवे स्वामी, इक सेवक आज्ञाऽनुगामी।
इक सुख पाता हुकम चलाकर, इक दुख पाता हुकम बजाकर।
पक्षपात जंह होवे ऐसा, स्वर्ग न सुखद रहा इक जैसा।
रब जब आपहि मद्य पिलावे, क्यों नहीं रब सेवक कहलावे।
अल्ला की क्या रही बड़ाई, क्यों अल्ला की शान मिटाई।
नर नारी संगम के कारण, करतीं नार गर्भ को धारण।
होते होंगे लड़के वाले पैदा करें बहिश्तों वाले।
व्यर्थ भोग, यदि उपजें नाहीं, निष्फल बीज भूमि गल जाई।
यदि सन्तान वहां पर जनमें, क्यों जनमें सोचें टुक मन में
स्वर्ग उन्होंने कैसे पाया, बिन सेवा के मेवा खाया।
नहीं भक्ति अल्ला की कीनी, मुफ्त बहिश्त उन्होनें लीनी।
हज रोजा नहीं पढ़ी नमाजा, बने स्वर्ग के बाँके राजा।

यह तो भया घोर अन्याया, अल्ला ने अंधेर मचाया।

(१५१) बदला दिये जावेंगे कर्मानुसार। और प्यालें हैं भरे हुए। जिस दिन खड़े होंगे रूह और फरिश्ते सफ बांध कर।। मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ७८ आयत २६, ३४, ३८।

यदि अल्ला फल देत है, किये कर्म अनुसार।
क्यों हूरें नित स्वर्ग में, लूटे मौज बहार।।

नित्य स्वर्ग में रहने वाली, हूरें जिनकी छवि निराली।
मोती सदृश सुंदर लड़के, हूरों के मन जिनमें अटके।
नित्य बहिश्त उन्होनें पाया, न जाने क्या कर्म कमाया।
मद पीयेंगे भर भर प्याले, लड़ेंगे भिड़ेंगे हो मतवाले।
रूह के साथ फरिश्ते सारे, पंक्तिबद्ध हो खड़े किनारे।
यह पलटन किस लिये सजाई, क्या प्रबन्ध करने को आई।
क्या फौजी इस कारण आये, उनसे सब को दण्ड दिलाये।
खड़ा रहे अल्ला तत्काले, अथवा कुर्सी बैठ सम्हाले।
जो इतनी पलटन का नेता, क्यों शैतान को पकड़ न लेता।
निकल जाय शयताँ का कंटक, अल्ला राज्य करें निष्कंटक

(१५२) जब कि सूर्य लपेटा जावे और जब कि तारे गदले हो जावें । जब कि पहाड़ चलाये जावें। और जब आसमान की खाल उतारी जावे।। मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ८१ आ॰ १, २, ३, ११।।

कौन लपेटे सूर्य को, सूरज का गोलाकार।
सून कर ऐसी बात को, क्यों न हँसे संसार।।

किस विधि चलिहै अचल पहारा, कैसे होंगे गदले तारा।
गगन नहीं कोई पशु विचारो, कैसे इसकी खाल उतारो।
अहो अविद्या तेरी माया, कितना अँधकार है छाया।
ईश्वर इन को मार्ग दिखाये, यह तो नहीं समझें समझाये।

(१५३) और जब कि आसमान फट जाये। और जब तारे झड़ जावें और जब दरिया चीरे जावें और जब कबरे जिला कर उठाई जावें।। मं॰ सि॰ ३० सू॰ ८२ आ॰ २, ३, ४।।

कितना बड़ा फिलासफर, जिसने रचा कुरान।
'फट जावे' क्या है बना, कपड़े का असमान।

कैसे झाड़ सकोगे तारे, बेर नहीं डण्डे से झारे।
कैसे दरिया जाये चीरा, लकड़ी तो नहीं यह है नीरा।
कवरें कैसे जॉय जिलाई, नही कब्रें मुर्दों की नाई।
कैसी बातें बालकपन की अब तो घुण्डी खोले मन की।

(१५४) कसम है आसमान बुर्जो वाले की। किन्तु वह कुरान है बड़ा बीच लौह महफूज (रक्षा) के।।
मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ८५ आ॰ १, २१।।

ज्ञान न सृष्टि का उसे, जिसने रचा कुरान।
बारह खम्भे गाड़ कर खड़ा किया असमान।

वह खगोल भूगोल न जाने आसमान बुर्जों पर ताने।
आसमान क्या किला हवाई, बूरजों पर कोई छत है छाई।
द्वादश राशि बुर्ज यदि जाने, अन्य बुर्ज पुन क्यों नहीं माने।
बुर्ज नहीं यह राशि बारा, यह तारक मण्डल है सारा।
क्या है रब के पास कुराना, जिसमें ऐसा वचन बखाना।
अल्ला ही यदि इसे रचाता तौ अल्ला को कुछ नहीं आता।

(१५५) निश्चय वे मकर करते हैं एक मकर। और मैं भी मकर करता हूं एक मकर।।
मं॰ सि॰ ३० सू॰ ८६ आ॰ १५, १६।।

ठग विद्या अल्ला करे, क्या वह है मक्कार।
जैसे को तैसी मिले, अल्ला की सर्कार।।

चोर भले का माल चुरावे, उसकी सम्पति भला उड़ावे।
झूठ कहे तो झूठ सुनावें, अल्ला की बलिहारी जावें।

(१५६) और जब आवेगा मालिक तेरा और फरिश्ते पंक्ति बांध के और लाया जावेगा उस दिन दोजख को। मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ८९ आ॰ २१–२२।

पोलिस का दल संग ले, फिरता ज्यों कुतवार।
त्यों रब सेना साथ ले, घुमे सुरग दुआर।

क्या दोजख है घड़े समाना, इधर रखा और उधर उठाना।
यदि दोजख है इतना छोटा, फिरो उठाये जैसे सोटा।

(१५७) बस कहा था वास्ते उनके पैगम्बर खुदा के ने रक्षा करो ऊंटनी खुदा की को और पानी पिलाना उसके को। बस झुठलाया उसको बस पाँव को उसके बस मरी डाली ऊपर उनेक रब उनके ने।

मं ७ सि॰ ३० सू॰ ३६ आ॰ १३–१४।

वाह अल्ला की ऊँटनी वाह अल्ला असवार।
सैर करे आकाश की, लूटे मौजं बहार।

ऊँटनि पर रब करे सवारी, ठुमक ठुमक डोले गति न्यारी।
उन पर डारी मरी बीमारी, क्यों रब ने निज बात बिसारी।
न्याय रात्रि जब तक नहीं आवे, तब तक दण्ड न कोई पावे।
मरी डाल क्यों पहले मारा, रब से जोश न गया सम्हारा।
लेखक अर्ब देश का वासी, जिनकी केवल ऊँटनि राशि।
वहां न होती और सवारी, ऊँ टनि पर अल्ला बलिहारी।

(१५८) यों जो न रूकेगा अवश्य घसीटेंगे हम उनको हम उनको हम साथ वालों के। यह माथा कि झूठा है और अपराधी। हम बुलावेंगे फरिश्ते दोजख के को। मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ३६ आ॰ १४–१६–१८।

चपरासी के काम भी, करने लगे खुदा।
पकर पकर के केश सों, घिसरेंगे अल्ला।

(१५६) निश्चय उतारा हमने कुरान को बीच रात कदर के और क्या जाने तू क्या है रात कदर। उतरते हैं फ़रिश्ते और पवित्रात्मा बीच उसके साथ आज्ञा मालिक अपने के वास्ते हर काम है।

मं॰ ७ सि॰ ३० सू॰ ६७ आ॰ १–२—४

इक आयत में इस तरह, अल्ला किया बखान।
धीरे धीरे भूमि पर, दिया उतार कुरान।

सभी फरिश्ते रब के चाकर, अल्ला की आज्ञा को पाकर।
कदर रात्रि को जग में आते, इंतजाम करके पुन जाते।
क्या इक देशी खुदा तुम्हारा, व्यापक नहीं उससे संसारा।
सभी फरिश्ते यँह भिजवाये, आप सुरग में हुकम चलाये।
रब्ब पैग़म्बर और फरिश्ता रूह से हुआ नया अब रिश्ता।
पिता, पुत्र शुद्धात्म ईसाई, तीनों की मानें प्रभुताई।
रूह चौथा इन और बढ़ाया, उनसे बढ़ कर कदम उठाया।
"हम तीनों को रब्ब न मानें", मुसल्मान यदि ऐसा जानें।
चौथ रूह को क्या पुन कहिये, लाजवाब हो या चुप रहिये।
क्या तीनों शुद्धातम नाँही, क्या मालिन्य रहा उन माँहि।
यदि तीनों शुद्धातम जानो, शुद्ध रूह केवल क्यों जानो।
क्यों अल्ला है कसमें खाता, क्या उस पर विश्वास न आता।
अश्वादिक की शपथ उठावे, रात दिवस की कसमें खावे।

विद्वज्जन अब जान लें कैसा ग्रंथ कुरान।
ईश्वर कैसे रच सके, यह कोरा अज्ञान।

सत्य बात मैं तुम्हें बताऊं, अपनी सम्मति तुम्हें सुनाऊं।
यह विद्या की पुस्तक नाँही, गप्पे हाँकी इसके माँही।
ज्ञानी नहीं कोई लिखने वारा, निपट अपढ़ था कोई बेचारा।
थोड़े से यह दोष दिखाये, मत कोई धोखे में आए।
सत्य बात जो इसमें दीनी, वे सब वेद शास्त्र से लीनी।
हम भी उनको गनहिं प्रमानिक वे वेदों के मुक्ता मानिक।
कहीं रखें हो वे चमकेंगे, विमल ज्योति से वे दमकेंगे।
सब निष्पक्ष पुरूष अस मानें, सत्य बात को झूठ न जानें।
शेष भरा इसमें अज्ञाना, पढ़ कर नर हो पशु समाना।
शांति भंग करवाय लड़ाई, जग के लिये बहुत दुखदायी।
मार धाड़ झगड़े फैलाये, इक दूसर का सिर फड़वाये।
है पुनरुक्त दोष भण्डारा बात एक है बारम्बारा।

दया करो परमात्मन्, हम सब मेल बढ़ाँय।
सुख संपति सब की बढ़े, मन से वैर मिटाँय।।

हौ निष्पक्ष भाव से प्यारे, दोष निकालूं जैसे सारे।
वैसे मिल कर सब मत वाले, निज अरु पर के दोष निकाले।
तौ सब कलह क्लेश मिट जावें, सब सृष्टि के नर सुख पावें।
मंथन करें मतों का सागर, 'सत्यामृत' पुन होय उजागर।

तिल तंडुल के न्याय से, लिख दीजे कछु दोष।
अभिप्राय सब जान के, करें न मन में रोष।
कछुक मुसल्माँ इस तरह, करने लगे बखान।
देखों अल्ला उपनिषद् थर्वन वेद प्रमान।।

अथ अल्लोपनिषद्

अस्माल्लां इल्ले मित्रा वरुणा दिव्यानि धत्ते। इल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्ददुः। हयामित्रो इल्लां इल्लल्ले इल्लां वरुणो मित्रस्तेजस्कामः ।।१।। होतारमिन्द्रो होतारमिन्द्र महासुरिन्द्राः। अल्लो ज्येष्ठं श्रेष्ठं परमं पूर्ण ब्रह्माणं अल्लाम्।।१।। अल्लो रसूल महामदरकवरस्य अल्लो अल्लाम्।।३।। आदल्ला बूकमेककम्। अल्ला बूकनिखातकम् ।।४।। अल्लो यज्ञेन हुतहुत्वा। अल्ला सूर्य चन्द्र सर्व नक्षत्राः ।।५।। अल्ला ऋषिणां सर्व दिव्याः इन्द्राय पूर्वं माया परमन्तरिक्षाः।।५।। अल्लाः पृथिव्या अन्तरिक्षं विश्वरूपम् ।।७।। इल्लाँ कबर इल्लाँ कबर इल्लाँ इल्लल्लेति इल्लल्ला अनादि स्वरूपाय अथर्वणा
श्यामाहुँ ह्रीं जनान पशून सिद्धान् जल चरान् अदृष्ट कुरु कुरु फट।।६।। असुर संहारिणीहुं ह्रीं अल्लो रसूल महमद रकबरस्य अल्लो अल्लाम् इल्लल्लेति इल्लाल्लाः।।१०।।

वेद अथर्व न आँखों देखा, बिन देखे हो करते लेखा।
चिन्ह नहीं कही हमने पाया, शायद तुम्हें कोई सुपना आया
थर्वन वेद हमें दिखलाओ, कहाँ लिखा यह पाठ बताओ।
मंत्र संहिता विंशति काण्डा, राखे पण्डित अनिक प्रकाण्डा।
उनके हाँ तुम देखों जाकर, करो तसल्ली उसमें पाकर।
पैगम्बर का नाम तुम्हारे, नहीं लिखा कहीं वेद मँझारे।
गोपथ ब्राह्मण थर्वण वेदा, या उनकी कोई शाखा भेदा।
मिले न इसका नाम निशाना, व्यर्थ तुम्हारा गाल बजाना।

अकबर शाह के समय की, रचना है अनुमान।

संस्कृतज्ञ लेखक रहा, जो था अर्वाचीन।।

अरबी संस्कृत शब्द मिलाये, मिल मिलाय कछु वाक्य बनाए।
रचना इसकी निपट अनूठी, अर्थ हीन कृत्रिम अरु झूठी
नहीं व्याकरण नियम अनुकूला, बेसिर पैर नहीं जड़ मूला।
इस पोथी सी लिखी अनेका, चाव रहा पहले लिखने का।
स्वर उपनिषद् राम तापनी, राम नाम सप्रेम जापनी।
नरसिंह रू गोपाल तापनी, अनिक मतों ने लिखी आपनी।

प्र॰— आज तलक तो किसी ने, कही न ऐसी बात।
कैसे तुमको मान लें, दिन को कहते रात।।

उ॰— मानो मत मानो चहें, इसकी नहीं परवा।
सच्चे होते यदि तुम, देते वेद दिखा।

हम तो तुमको स्पष्ट बतावें, युक्ति पूर्वक सब समझावें।
यदि थर्वन है पास तुम्हारे, गोपथ आदि भाष्य विस्तारे।
हस्त लिखित वा छपे छपाये, भोज पत्र पर लिखे लिखाये।
अभी उन्हें हमको दिखलाओं, तब तो तुम साँचे कहलाओ।

प्र॰— देखो कैसा भला है, दीन मजहम इसलाम।
जब तक जीवें सुख मिले, मरे स्वर्ग को धाम।।

उत्तर

बुरे सभी केवल हम अच्छे, यह सब हैं बाणी के लच्छे।
सुनो सुनो हे मुस्लिम भाई, सब में कुछ कुछ रहे सचाई।
जिसमें झूठ न हिंसा चोरी, दया मया भक्ति रस बोरी।
हम तो सत्य उसी को मानें, उसी मार्ग को सत्य प्रमाने।
ईर्षा द्वेष रू वाद विवादा, मिथ्या भाषण दुर्मर्यादा।
यह बातें जिनके मत माँही, ऐसे मत हम माने नाँही।
सत्य ग्रहण यदि तुमने करना, आन गहो वेदों की शरना

आर्य महाकवि जयगोपाल विरचिते सत्यर्थप्रकाश कवितामृते चतुर्दशः समुल्लासः समाप्तः

स्व मन्तव्यामन्तव्य प्रकाश

मान रहे मानत रहे, मानेगा संसार। आदिहुँ से जिस धर्म को, वही धर्म का सार।।
वही धर्म है नित्य सनातन, सर्व तंत्र सिद्धान्त पुरातन। कोई विरोधी होय न जाको, सार्वजनिक सत कहिये ताको।
किसी पंथ का कोई भरमाया, जानबूझ कर मार्ग भुलाया। अथवा मूरखता के कारण कोऊ नर करे विरोध अकारण।
उल्टा जाने उल्टा माने, सत्य धर्म को नहीं सन्माने। बुद्धिमान नहीं उसे सकारें, वाकी ओर न कभी निहारें।
आप्त पुरुष हैं जो सतवादी, सत्य पुजारी ऋषि ब्रह्मादी। वे निष्पक्ष चले जेहि मारग, वही मार्ग सद्धर्म सुमारग।
उस मारग को सब जन मानें, अवर न काहू को परमानें।

ब्रह्मा से जैमिनि तलक, ऋषि मुनि कथित पदार्थ। जिनको मैं भी मानता, वर्णहुँ तिन्हें यथार्थ।
मैंने वह मन्तव्य प्रमाना, जो त्रिकाल मँह होय समाना। हौं नहीं पंथ नवीन चलाऊँ, निज कल्पित नहीं बात बताऊँ।
सत मानूँ अरु सत मनवाऊँ, झूठ तजूँ अरु झूठ छुड़ाऊँ। केवल यही प्रयोजन मेरा, करूँ प्रकाश नशाय अँधेरा।
यदि होता मैं भी पखपाती, स्वारथ का साधक उत्पाती। तो भारत में जो मत फैले, सत्य विरोधी ऐले गैले।
उनमें से इक को अपनाता, सांसारिक बहु लाभ उठाता। मेरी तो केवल यह आशा, होय जगत से पाप विनाशा।
भारत से बाहर अरु भीतर, जेते पाप बसें अवनीतर। उन सब के विपरीत पुकारूँ, बिगड़ी सृष्टि फेर सुधारूँ।
धर्म युक्त बातें हैं जिनकी कबहुँ न त्यागूँ गति मति तिनकी। सत्य वचन उनके क्यों त्यागूँ, मानुषता से दूर न भागूँ।
हौं तो सदा सत्य अनुरागी, जो सतवादी सो बड़भागी।

मनुष वही जो अन्य को, जाने आत्म समान। सबको समझे आत्मवत, सुख दुख लाभ रु हान
अन्यायी से भय नहीं मानें, धर्मी निबलहुँ को सन्माने। चाहे निर्बल हो गुण हीना, संपति रहित दरिद्र अति दीना।
धर्मी जन की रक्षा कीजे, प्राण तलक उसके हित दीजे। पापी हो चाहे बलवाना, चक्रवर्ती नृप बहु गुणवाना।
ताको कीजे सदा विनाशा, धूर मिलाये वाकी आशा। वाकी अवनति और बुराई, कीजे भर सक शक्ति लगाई।
अन्यायी की कीजे हानि, देह चहे पड़ जाय गँवानी। न्यायवान के बल की उन्नति, कीजे उसकी सदा समुन्नति।
धर्मी की रक्षा करे, अरु पापी को घात। मानवता का लक्ष यह, पूरहि दिन अरु रात।।
भर्तृहरि इस विषय पर कहते हैं महाराज। धर्मी की रक्षा करें, नाशहि पाप समाज।।
निन्दतु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा, न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ।।१।। भर्तृहरिः।
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखेत्वनित्ये, जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः।।२।। महाभारते।
एक एवं सुहृद्धर्मो निधनेप्यनुयाति यः। शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ।।३।। मनुः।
सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः। येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।४
नहि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पापकं परम्। नहि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात् सत्यं समाचरेत् ।।५।। उ. नि.

कु.—नीति निपुण निन्दा करें, शंसहि वा परवीन। गृह में आये लच्छमी, या होवहि धनहीन।।
या होवे धन हीन, भलेहि निकसें प्राना। पूजा हो जग मांहि, होय अथवा अपमाना।
नहीं न्याय से टरहिं, धीर के पद अरविन्दा। करें प्रशंसा नीत निपुण वा ताँकी निन्दा।।
कु—लोभ मोह वा काम से ,धर्म न कीजे त्याग। प्राण मोह तज़ धर्म से, सदा करे अनुराग।।
सदा करे अनुराग दुःख सुख आते जाते। स्थिर है केवल धर्म धर्म को रहो निभाते।।
जरे मरे नहीं गरे जीव अविनाशी नामा। तांते धर्म न तजहु तजहु तुम लोभ रु कामा।।
दो.—इस नश्वर संसार में, एक धर्म ही मीत। संग चले मृत्यु समय, करहु धर्म से प्रीत।।
विजय सत्य की हो सदा, सदा झूठ की हार। ऋषि मुनि सत्पथ पर गये, सत्य स्वर्ग का द्वार
अब पदार्थ वर्णन करूं, मानहुँ जिन्हें प्रमान। लिखता हूँ संक्षेप से, सुनिये धर कर ध्यान।।

१ ईश्वर

ईश्वर को अब प्रथम बखानें, परमातम वाको जग जानें। ब्रह्मादिक जसु नाना नामा, सतचित आनन्दमय अभिरामा।
जाके गुण अरु कर्म स्वभावा, पावन परम पुनीत सुहावा। निराकार सब जाननहारा, व्यापक अणु अणु माँहि पसारा।
वाको नहीं आदि अरु अन्ता, सर्व शक्तिमय प्रभु अजन्ता। सो प्रभु कबहुँ जन्म नहीं धारे, बाकी महिमा वेद पुकारे।
न्याय करे वह परम दयालु, सब पर करता कृपा कृपालु। सब सृष्टि का कर्ता धर्ता, छिन मँह प्रलय करे जग हर्ता।
कर्म करे जो जैसे जैसे, न्याय पूर्व फल देता तैसे। इत्यादिक लक्षण युक्त ईश्वर, हौ मानहुँ वाको जगदीश्वर।

२ वेद

मानहुँ चारो वेद पुन, प्रभु कृत स्वतः प्रमान। धर्म युक्त विद्या सहित, सकल ज्ञान को खान।।
मात्र भाग संहिता प्रमाना, चतुर्वेद प्रभु कृत निर्माना। स्वतः प्रमाणं भ्रान्ति से हीना, प्रभु ने ज्ञान सृष्टि को दीना।
यथा सूर्य निज रूप प्रकासे, सकल जगत को भी आभासे। दीप यथा निज रूप दिखावे, अन्य पदारथ भी दरसावे।
तेहि विधि चारहुँ वेद प्रमानूँ, स्वतः प्रमाण इन्हें हौं मानूँ। चतुर वेद के ब्राह्मण चारों इनको भी परमाण सकारों।
वेदों के पुन हैं छः अंगा, छहों प्रमानूँ संग उपंगा। चारहु तिनके हैं उपवेदा, संग सकारहुँ शाखा भेदा।
ग्यारह सौ सत्ताइस शाखा, है विख्यात वेद के भाखा। ब्रह्मा आदिक ऋषि मुनि भाई, प्रभु की कीरति इनमें गाई।
वेद संहिता भाग को, मानहुँ स्वतः प्रमान। शेष ग्रन्थ जेते कहे, सब परतः परमान।।
जो अनुकूल वेद के जानूँ, वाकों हौं प्रामाणिक मानूँ। जो जो वचन वेद प्रतिकूले, तिन्हें प्रमाण न मानहुँ भूले।

३ धर्माधर्म

पक्षपात से रहित जो, न्यायाचरण समेत। आज्ञा वेदाविरुद्ध पुन, वही धर्म अभिप्रेत।।
पक्षपात अन्यायाचारा, मिथ्या भाषण आदि व्यौहारा। प्रभु की आज्ञा का पुन भंजन, वेद विरुद्ध अधर्म कुरंजन।
अस विधि आज्ञा धर्म न मानूँ, सो 'अधर्म' मैं पाप पछानूँ।

४ जीव

सुख दुख इच्छा द्वेष युत, नित्य मानिहौ 'जीव'। अल्पज्ञ वह वा को ज्ञान ससीव।।
५—जीव रु ईश्वर भिन्न हैं भिन्न धर्म अरु रूप। हैं अभिन्न साधर्म्य से, व्यापक व्याप्य स्वरूप।
जिमि आकाश से मूरतिमाना, द्रव्य पृथक नहीं जाए माना। कभी अलग हो सकता नाहीं, जुड़ा रहे नित नभके माहीं।
तौ भी एक न दोनों होते वे निज निज अस्तित्व न खोते। एहि विधि जानहु प्रभु अरु जीवा प्रभु असीव अरु जीव ससीवा।
व्यापक व्याप्य उपास्य पिता पुत्र शासित अनुशासक। एहिविध जीवरु ईश्वर मानूँ, द्वै को एक कभी न जानूँ।
६—गनहुँ अनादी तीन पदारथ, प्रकृति ईश्वर जीव यथारथ। नित के नित गुण कर्म स्वभावा, कबहु नाश न होने पावा।
द्रव्य और गुण कर्म को, उपजाये संयोग। यह तीनहु पुन नशत हैं, होवहि जबहुं वियोग।।
हो संयोग प्रथम वरु जाते, वह सामर्थ्य नशहि नहीं ताते। वह शक्ति उन मांही अनादी, तांते बनना मिटना आदी।
चलता रहे अनादि प्रवाहा, प्रभु की लीला अगम अथाहा।
८—ज्ञान युक्ति से मेल कर, नाना द्रव्य अनूप। जो बनते सो सृष्टि का, पाते नाम सरूप।।
९—सृष्टि रचना के लिये, प्रभु राखें सामर्थ। एहि कारण सृष्टि रची, नहीं सामर्थ विअर्थ।।
प्रभु के गुण अरु कर्म स्वभावा, रचकर सृष्टि सफलता पावा। एहि कारण यह सृष्टि रचाई, निज सामर्थ्य सफलता पाई।
जेहिविधि नेत्र दरस के कारण, दर्शन नहीं तो नैन अकारण। जीवहुं को पुन भोग भुगाना, निजनिज कर्मन के फलदाना।
यह भी सृष्टि करण का हेतु, सृष्टि कर्म नदी का सेतु।
१०—अहै 'सकर्तृक सृष्टि' यह, स्वयं न हो निर्माण। यथा योग्य वस्तु बने, रखे न ऐसा ज्ञान
११—अपने आप न 'बन्ध' हो, हो निमित्त के साथ। प्रभु से भिन्न पदार्थ को, यथा झुकाना माथ
प्रभु से इतर वस्तु की पूजा इससे बढ़ कर पाप न दूजा। इसमें महां अविद्या कारण इस प्रकार के दोष साधारण।
यह सब दोष दुःख के दाता; है निमित्त बन्धन के भ्राता।
१२—सब दुःखों से छूट कर बन्ध रहित गतिवान। विचरे प्रभु अरू जगत में, यही मुक्ति कल्याण।
नियत समय तक भोगे मुक्ति, पुन मुक्ति से हाये वियुक्ति। लौट मुक्ति से जग में आवे, मानुष जन्म मुक्त पुन पावे।
१३ सो॰—नित धर्मानुष्ठान, साधन जानो मुक्ति का। अरु भक्ति भगवान, विद्या योगाभ्यास पुन।
जो ज्ञानी धर्मी विद्वाना, उनके ढिग जा लाभ उठाना। ब्रह्मचर्य अरु साधु विचारा, उद्यम यह सब मुक्ति द्वारा।
१४—प्राप्त करें जो धर्म से, वही जानिये अर्थ। पाप कमाई जो करें, वाको नाम अनर्थ।।
१५—धर्म अर्थ से प्राप्त जो, वाकी संज्ञा काम। वही काम सुख देत है, यश दायक अभिराम।।
१६—वर्णाश्रम समुचित कहूं, गुण कर्मन अनुसार। चर्म नहीं गुण कर्म ही, पूजे सब संसार।।
१७—शुभ गुण कर्म स्वभाव से, जो नित करे प्रकाश। वाको राजा मानिये, वही प्रजा की आश।।
जो नृप न्याय धर्म का रक्षक, जो नृप नहीं प्रजा का भक्षक। पितु समान परजा से बरते, पक्षपात राजा नहीं करते।
पुत्र समान प्रजा को पाले, उसकी उन्नति करे सम्हाले। दिन दिन उसका सुख बढ़ाये, वह 'नरपति' आदर्श कहाये।
१८ कु॰—शुभ गुण कर्म स्वभावयुक्त, पक्षपात से हीन। न्याय धर्म सेवन करे, राज भक्ति नहीं क्षीन।।

राज भक्ति नहीं क्षीण, पिता राजा को माने। राजद्रोह नहीं करे सदा नरपति सन्माने।।
नृपति प्रजा दोनों की उन्नति कर मनभावा। वही प्रजा कहलाय शुभ्र गुण कर्म स्वभावा।।
१९कु.—जो नर त्यागे झूठ को, करके सदा विचार। अन्यायी को त्रास दे, न्यायी को सहकार।
न्यायी को सहकार गुनहि सब आत्म समाना। न्यायी बाको नाम करे वाको सन्माना।।
पक्षपात से रहित दम्भ से कोसों भागे। वही न्याय की मूर्ति झूठ को जो नर त्यागे।।
२० दोहा—अविद्वान सब असुर हैं, देव सभी विद्वान। दुष्टाचरण पिशाच हैं, राक्षस पापी जान।।
२१ कु.—मात पिता आचार्यवर, अरु सगरे विद्वान। न्याय मूर्ति नृप, सुजन नर, ज्ञानवान मेहमान
ज्ञानवान मेहमान पतिव्रतशीला नारी। नारी व्रत पुन पुरुष नहीं जो हो व्यभिचारी।।
यही देव पूजा है, यह हैं देव सुआरज। मृणमय देव न पूज्य पूज्य पितु मात अचारज।।
२२ दोहा—विद्या सत धर्मात्मता, अपर जितेन्द्रिय भाव। यह सब बढते जांय है, यह सब केर प्रभाव।
बढ़े सभ्यता अरु सदभावा, नशहि अविद्या अरू दुर्भावा। शिक्षा ही मानुष को भूषण, शिक्षा नर के नाशहि दूषंण।
२३—ब्रह्मादिक ऋषि रचित हैं, शतपथ आदि पुरान। भागवत आदि पुराण जो, मानहुँ नहीं प्रमान
नाराशंसी तथा पुराना, गाथा कल्प नाम तिज नाना। तिनहूँ को कहिये इतिहासा, तिनही पर करिहैं विश्वासा।
२४—सत भाषण विद्या पुरुषारथ, इन से जीवन होय सकारथ। सत्संगति यम योगाभ्यासा, इन ते होवहि दूख बिनासा।
भवसागर ते यही तराएँ, एहि कारण यह तीर्थ कहाएँ। जल स्थल आदिक तीरथ नाहीं, जो तारें सो तीर्थ कहाहीं।
२५—पुरुषारथ प्रारब्ध से, मानहु सदा महान। मानुष के संचित किये, होंय भाग्य निर्मान।।
पुरुषारथ ही भाग्य सुधारे, पुरुषारथ ही भाग्य बिगारे। पुरुषारथ ही भाग्य यथारथ, पुरुषारथ ही होय सकारथ।
२६—सुख दुख हानि लाभ में, बर्ते आत्म समान। उसको मानुष जानिये, याही में कल्यान।।
२७—तन मन को उत्तम करें, यह सोलह संस्कार। आर्य्य करें इनको सदा, यह आर्य्यत्वाधार।
२८—गर्भाधान आदि संस्कारा, इन से उत्तम होंय विचारा। मरणोपान्त दाह जब दीजे, पुन संस्कार नहीं कोऊ कीजे।
२८—विद्वज्जन का यज्ञ से, होता है सत्कार। यज्ञों से होता रहे, शिल्प ज्ञान विस्तार।।
विद्यादिक शुभ गुण हों ज्ञाना, यज्ञों से हो लाभ महाना। यज्ञों से हो निर्मल वायु, रोग नशहिं दीरघ हो आयु।
जल वृष्टि औषध हों पावन, जीव जन्तु सुख कर हर्षावन। ताँते यज्ञ करें नित आरज, यज्ञ सँवारे सगरे कारज।
२९—श्रेष्ठ पुरुष सब आर्य्य हैं, दस्यु दुष्ट कहाँय। भूमि भार दस्यु सभी, दुष्टाचार फैलाय।।
३०—आदि सृष्टि से यही पर, करते आर्य्य निवास। (आर्य्यवर्त) ताँते कहे, आर्य्यन का आवास
इसके उत्तर माँहि हिमाचल, दक्षिण में ठाड़े विंध्याचल। (अटक) नदी पश्चिम परवाहे, ब्रह्मपुत्र पूरब अबगाहे।
इन चारहुँ के भीतर भीतर, यावत देश बसहिं अवनीतर। (आर्य्यावर्त) वह देश कहावे, अन्न फूल फल बहु उपजावे।
आदि काल से यहाँ के वासी, आर्य्य कहावें सद्गुण रासी।
३१—वेदों की विद्या सकल, सांगोपांग पढ़ाय। सत्य गहावे झूठ तज, सो आचार्य्य कहाय।।

३२—प्रिय कारी आचार्य्य का, सत शिक्षा के योग। विद्या प्रेमी धर्म प्रिय, सोई शिष्य सुयोग।
३३—मात पिता गुरु होत हैं, अरु जो सत्य गहाँय। सदा छुड़ाये झूठ से, सो नर गुरु कहाँय।
३४—हितकारी यजमान का, देवे सत उपदेश। वही पुरोहित जानिये, जा को सत संदेश।
३५—वेदों का इक देश वा, कोऊ अंग पढाय। वह मानुष धर्मात्मा, उपाध्याय कहलाय।
३६—विद्योपार्जन जो करे, ब्रह्मचर्य को धार। सत्य गहे अनृत तजे, सो जनु शिष्टाचार।
शिष्ट कहायें वे नर नारी, जो जग में है शिष्टाचारी। नर अशिष्ट को सब अपमानें, शिष्ट पुरुष को सब सन्मानें।
३७—प्रत्यक्षादि आठ हैं, मानें शास्त्र प्रमान। इनके द्वारा वस्तु का, होय यथावत ज्ञान।।
३८—सतवादी धर्मात्मा, राखे सब का ध्यान। बुरा न काहू का करे, सो नर 'आप्त' सुजान।।
३६—पंच विधि की होय 'परीक्षा' करती सत्यासत्य समीक्षा। प्रभु प्रभु के गुण कर्म स्वभावा, वैदिक विद्या के मत भावा।
प्रथम परीक्षा या को कहिये, प्रभु की आज्ञा प्रथम हिं गहिये। द्वितीया प्रत्यक्षादि प्रमाना, आठों से हो वस्तु ज्ञाना।
सृष्टि क्रम पुन आप्त व्योहारा, पंचम आतम शोधन हारा, इन पाँचहुँ से निर्णय कीजे, मिथ्या त्याग सत्य गह लीजे।
४०—छूटें दुष्टाचार, भले कर्म अरु सुख बढ़े। यह हैं पर उपकार तन मन से इसको करे।।
४१—करने में सब कर्म के, जानहु जीव स्वतंत्र। फल पड़ता है भोगना, उसमें है परतंत्र।।
सदाचार आदिक जे कर्मा, स्वाभाविक ईश्वर के धर्मा। एहि विधि करता कर्म स्वतंतर, प्रभु नहीं काहू के परतंतर।
४२—सामग्री सुख की मिले, अरु सुख मिले विशेष। स्वर्ग नाम है इसी का, पृथक नहीं कोई देश।
४३—दुख की सामग्री जुटे, भोगे दुःख विशेष। नरक नाम है इसी का, नहीं नरक कोई देश।
४४— पूरब पर और मध्य यह, जन्महु तीन प्रकार। प्रगट होय जीवात्मा, कर शरीर को धार।
४५—(जन्म) नाम या को कहें, तनु का हो संयोग। (मृत्यु) कहिये इसी को, तनु का होय वियोग।
४६—ख्याति से अरु नियम से, अरु अपनी मन चाह। पत्नी का पाणि गहे, या को नाम (विवाह)।
४७—पुंशक्ति से हीन हो, अथवा पति मर जाय। अथवा दीर्घ वियोग हो, कहीं पता नहीं पाय।
कहीं पता नहीं पाय, पति हो क्षय का रोगी। अथवा पति को जाने नारी, भोग अजोगी।
सुत हित उत्तम वर्ण पुरुष सन जो अनुरक्ति। सो 'नियोग' कहलाय पति मँह नहीं पुम शक्ति।
४८—गुण कीर्तन अरु श्रवण पुन, होना उसका ज्ञान। 'स्तुति' संज्ञा या की कही, भक्ति में भगवान
४६—समरथ के उपरन्त जो, ईश्वर से संबंध। अरु प्रभु से विज्ञान हित, गाना गीत प्रबंध।
गाना गीत प्रबंध, याचना उससे करनी। इसे 'प्रार्थना' कहें, प्रार्थना मन मल हरनी।।
दूर होय अभिमान, पुरुष प्रभु निकट वसंता। करे प्रार्थना नर, निज समरथ उपरन्ता।
५०—प्रभु के गुणअरुकर्म स्वभावा, मन हर परम पुनीत लुभावा। निज मन माँहि तिनहिं करधारण होवे मन का मैल निवारण
हौं हूँ व्याप्य प्रभु हैं व्यापक, सकल विश्व का प्रभु निर्मापक। मैं उसके ढिग वह ढिग मेरे, रैन दिवस नित साँझ सवेरे।

एहि विधि करे योग अभ्यासा, साक्षात प्रभु माँहि निवासा।

याको कहें उपासना, प्रभु के संग निवास। ज्ञान बढ़े इस विधि से, यह मेरो विश्वास॥

५१–निर्गुण सगुण उपासना, स्तुति प्रार्थना भाव। नाना विधि प्रभु ध्याइये, होवे दुःख अभाव॥

पारब्रह्म गुण जो जो राखे, तिन्हीं गुणों से तिसको भाखे। जो गुण नाँही ईश्वर माँही तिनकी चर्चा कीजे नाहीं।
जान प्रभु को तिनसे न्यारा, वाको गान करे विस्तारा। सगुण स्तुति या को कहिये, उपाय भाव से उसको गहिये।
शुभ गुण ग्रहण किया जो चाहे, चाहे दुर्गुण सकल विहाये। प्रभु सहायता के हित याचे, विनती करे प्रभु रंग राचे।

निगुण सगुण यह प्रार्थना, ईश्वर करे सहाय। कीजे भाव अनन्य से मन चीता फल पाय।
स्व सिद्धान्त दिखा दिये, करके बहु संक्षेप। या सत्यार्थ प्रकाश मँह, दूर किये आक्षेप।।
ऋग्वेदादि भूमिका, भाष्य माँहि व्याख्यान। इन मन्तव्यों का किया, जान लेहिं विद्वान्।।

सब जग जाको साँचा जाने, हमहूं वा कौ सत्य प्रमाने। यथा सत्य सब के ढिग प्यारा, कहें बुरा सब मिथ्याचारा।
अस विधि हौं सिद्धान्त सकारूँ सार्वभौम सिद्धान्त प्रचारूँ। मत मतान्त विपरीत विवादा, जिनसे उपजे वैर विषादा।
सो नहीं रूचिकर मो को भाई, भली परस्पर नहीं लड़ाई। भेदभाव मतवाले डालें, अपने अपने साँचे ढालें।
यथा व्याध मछली फंसाएँ तिमि मतवाले स्वार्थ सिधाएँ। या ते उपजे शत्रुताई, लोग परस्पर करें लड़ाई।
मत मतान्त के झगड़े त्यागूँ, केवल शुद्ध सत्य अनुरागूँ। सकल जगत मँह ऐक्य फैलाऊँ द्वेष छुड़ाऊँ प्रीति बढ़ाऊँ।
करें प्रेम आपस में सारे, चलें न मारग न्यारे न्यारे। सब हों सुखी यतन यह मेरा, जगे ज्योति अरु मिटे अंधेरा।
नहीं कोऊ अवर प्रयोजन भाई, मनुष्य मात्र की होय भलाई।

आर्यजनों के योग से, अरु प्रभु होंय सहाय। सत्य प्रसारूँ जगत में प्राण रहे वा जाय।।
सो॰ धर्म अर्थ अरु काम, सज्जन जन प्रापत करें। लहें मुक्ति को धाम, अभिप्राय मेरो यही।।

ओं शन्नो मित्रः शं वरुणः। शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः। शन्नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षंब्रह्मासि। त्वामेवप्रत्यक्षंब्रह्मावादिषम्। ऋतमवादिषम्। सत्यमवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारमावीत्। आवीन्माम्। आवीद्वक्तारम्।

। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

आर्य महाकवि जयगोपाल विरचित सत्यार्थप्रकाश कवितामृतान्तर्गतः स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाशः समाप्तः।

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पदाधिकारी एवं न्यासीगण

वेद प्रचार मण्डल, उदयपुर

संरक्षक सदस्य (रु. 5,000/– वार्षिक)

1. श्री श्यामसुन्दर जी आर्य, दिल्ली
2. श्री ओमप्रकाश जगदीश प्रसाद वैदिक सेवा न्यास, इन्दौर
3. स्व. श्री रामसिंह जी राठौड़, उदयपुर
4. श्री पूर्णचन्द्र आर्य, आगरा
5. श्री बाबूलाल जी मित्तल, गंगापुर सिटी
6. श्री रामभज जी मदान, नई दिल्ली
7. श्री प्राचार्य सदाविजय जी आर्य, उद्गीर–लातूर
8. श्री विजय कुमार जी शर्मा, भीलवाड़ा
9. श्री प्रेमप्रकाश जी आर्य, बंगलोर / राँची
10. श्री गोपीलाल जी एरन, उदयपुर
11. श्री सुरेन्द्रपाल सिंह जी चौधरी (सरोदा), डूँगरपुर
12. श्री बी.एल. अग्रवाल, जयपुर
13. श्री चौधरी मित्रसेन जी आर्य, रोहतक
14. श्री दीनदयाल गुप्त, कलकत्ता
15. श्री पन्नालाल जी आर्य 'आर्यरत्न', मुजफ्फरपुर
16. श्री ओमप्रकाश जी मस्करा, कलकत्ता
17. श्री धनश्याम प्रसाद जी अग्रवाल, जलगाँव
18. श्रीमती यशवती गुप्ता, दिल्ली
19. श्री झाऊलाल जी शर्मा, मुम्बई
20. श्री रघुनाथ जी मित्तल, भीलवाड़ा

प्रतिष्ठित सदस्य

(रु. 1,000 प्रतिवर्ष)

1. श्री जेठमल जी आर्य, आबूरोड
2. श्री सुशील जी बांठिया, उदयपुर
3. श्री स्वामी डॉ. ओमआनन्द जी सरस्वती, चित्तौड़गढ़
4. श्री नित्यानंद जी जिन्दल, चित्तौड़गढ़
5. श्री जगदीश प्रसाद जी जांगिड़, खामगांव
6. श्रीमती डॉ. आभारानी जी, उदयपुर
7. सुश्री कृष्णा जी कपूर, झाँसी
8. श्री गणेशलाल जी जैन, उदयपुर
9. श्रीमती सुशीला जी गुप्ता, रांची
10. श्रीमती शारदा जी गुप्ता, उदयपुर
11. श्री महेश जी मित्तल, उदयपुर
12. श्री प्रधान जी, आर्य समाज, फतहनगर
13. श्री सुरेश चन्द्र जी मित्तल, फतहनगर
14. श्रीमती तारामणि जी आर्य, कलकत्ता
15. श्री विनोद एवं मधु जी सूद, उदयपुर
16. श्री दिनेश जी खन्ना, पूना
17. श्री भवानीदास जी आर्य, उदयपुर
18. श्री डॉ. अमृतलाल जी तापड़िया, उदयपुर
19. श्री छोटूसिंह जी आर्य, एडवोकेट, अलवर
20. श्री के. देवरत्न जी आर्य, मुम्बई
21. श्री शुद्धबोध जी शर्मा, श्री गंगानगर
22. श्री निहालसिंह जी आर्य 'परमार्थी', रोहतक
23. श्री धर्मवीरजी खन्ना, जामनगर
24. श्री विरेन्द्र जी चौधरी, उदयपुर
25. श्री गणेश विश्वकर्मा, सुमेरपुर
26. श्रीमती कैलाशकुमारी खन्ना, जामनगर
27. श्री ब्रह्मदत्त जी शर्मा, उदयपुर
28. श्री विजयबिहारी लाल जी, माथुर जयपुर

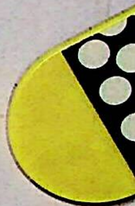
29. श्री संगम जी मिश्रा, उदयपुर
30. श्री भगवानदास जी अग्रवाल, तिनसुकिया
31. मै. सुरेश कुमार रामचन्द्र, उदयपुर
32. डॉ. श्री हंसराज जी बाहेती, लातूर
33. श्रीमती रामप्यारी देवी आर्या, हिलसा
34. श्री सोप्रकाश ज़ी आर्य, यमुनानगर
35. डॉ. श्रीमती राज आनन्द, मेरठ
36. श्री अत्तरसिंह जी त्यागी, "आर्य", खेकड़ा
37. श्री राम किशुन सिंह जी, पटना
38. श्री श्यामलाल शिक्षण संस्था, उद्गीर
39. श्री ब्रह्मानन्द जी गुप्ता, अहमदाबाद
40. श्री राजपाल रामपाल जी तोषनीवाल, किलाधारूर
41. श्री मुरलीधर जी सारड़ा, सोलापुर
42. आर्य समाज गोरेगाँव, मुम्बई
43. श्री डॉ. कृष्णलाल, दिल्ली
44. श्रीमती निर्मला कुलश्रेष्ठ, अलीगढ़
45. श्री भद्रसेन जी छाबड़ा आर्य, मुम्बई
46. श्रीमती सावित्री देवी छाबड़ा आर्या, मुम्बई
47. श्री जगदीश लाल जी खत्री, लखनऊ
48. श्रीमती विमला सिंह, अलीगढ़
49. श्री डॉ. योगेन्द्र कुमार जी गुप्ता, उदयपुर
50. श्री डॉ. भँवरलाल जी पोरवाल, उदयपुर
51. श्री भँवरलाल जी आर्य (सोनी), भावी
52. श्री प्रीतम सिंह त्यागी, उदयपुर
53. श्री सुभाष चन्द्र जी गुप्ता, दिल्ली
54. श्री रामनाथ जी अग्रवाल, आगरा
55. मै. इकोनोमिक ट्रांसपोर्ट आर्गेनाइजेशन, मुम्बई
56. आर्य समाज सांताक्रूज, मुम्बई
57. श्री जगनारायण प्रसाद आर्य, खुसरूपुर
58. श्री धर्मपाल जी विद्यार्थी, आगरा
59. श्री नवरतनमल जी गुप्ता, मुम्बई
60. श्रीमती शशिकला गुप्ता, दिल्ली
61. श्रीमती कौशल्या वैद, दिल्ली
62. श्रीमती आशा मेहता, दिल्ली
63. श्री श्यामलाल जी कुमावत, उदयपुर
64. श्री वासुदेव सेठ विसनदास आर्य, सैजपुर बोधा
65. श्री मेघराज जी दलवाणी आर्य, अहमदाबाद
66. श्रीदयाल दास सखावत राय नागपाल, सैजपुर बोधा
67. श्री रघुनाथ धर, यू.एस.ए.
68. श्री खिमजी देवजी भानुशाली, जलगाँव
69. श्री एस.सी. गुप्ता, मुम्बई
70. श्री सूरज प्रकाश नागपाल, देवलाली कैंप
71. श्री सुखदेव चाण्डक, नासिक
72. श्री उग्रसेन राठौड़, परली बैजनाथ
73. श्री डॉ. माहेश्वरी जी, आकोला
74. श्री के.एम. ओझा, ओधव
75. श्रीमती भगवान देवी, अलीगढ़
76. श्री महात्मा प्रेमप्रकाश वानप्रस्थी, धूरी
77. श्री स्वामी संकल्पानंद सरस्वती, उदयपुर
78. आर्य समाज मन्दिर, अहमदगढ़
79. आर्य समाज मन्दिर, संगरूर
80. आर्य समाज मन्दिर, सामाना
81. श्री बृजभूषण मंगला, कालका
82. श्री वासदेव आर्य, धूरी
83. श्री स्वर्ण कुमार बंसल, लुधियाना
84. आर्य समाज मन्दिर, धूरी
85. श्री श्याम आर्य, पानीपत
86. आर्य समाज रामपुरा, आजीवन प्रतिष्ठित सदस्य, कोटा
87. श्री ज्वाला प्रकाश जी आर्य (आजीवन प्रतिष्ठित सदस्य), पानीपत
88. श्री गुरुदासमल छोगाराम आर्य परिवार ट्रस्ट (आजीवन प्रतिष्ठित सदस्य), सैजपुर बोधा

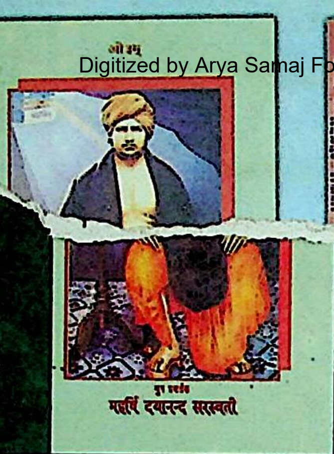
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के प्रकाशन

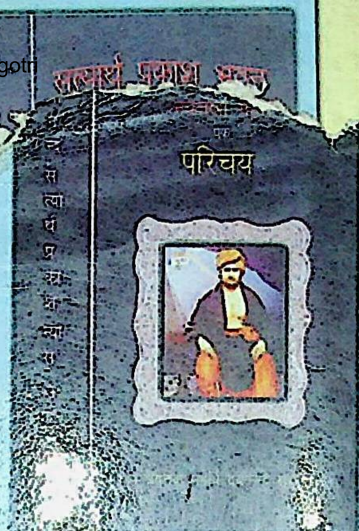
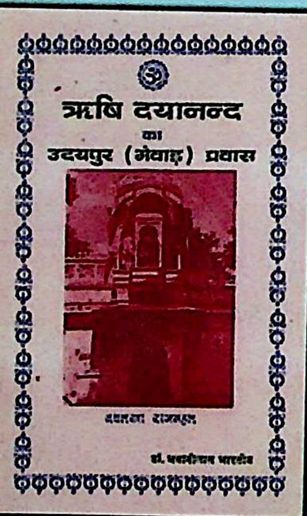
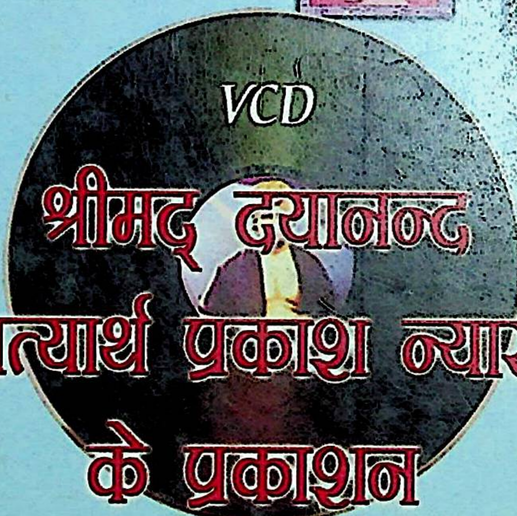
1. वैदिक धर्म एक परिचय		प्रचारार्थ
2. यज्ञ संदेश		प्रचारार्थ
3. महर्षि दयानन्द का उदयपुर (मेवाड़) प्रवास		10/-
4. दयानन्द दर्शन (महर्षिजी का सचित्र जीवन चरित्र)		250/-
5. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (प्रथम भाग)		10/-
6. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (द्वितीय भाग)		15/-
7. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (तृतीय भाग)		15/-
8. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (चतुर्थ भाग)		20/-
9. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (पंचम भाग)		20/-
10. सत्यार्थ दर्शन		25/-
11. नवलखा महल एक परिचय		25/-
12. महर्षि दयानन्द 'जीवन दर्शन' वीडियो केसिट		180/-
13. सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत (पूर्वार्द्ध)	सजिल्द	110/-
	पेपर बेक	90 /-
14. प्रस्तुत ग्रंथ	सजिल्द	140/-
	पेपर बेक	120/-

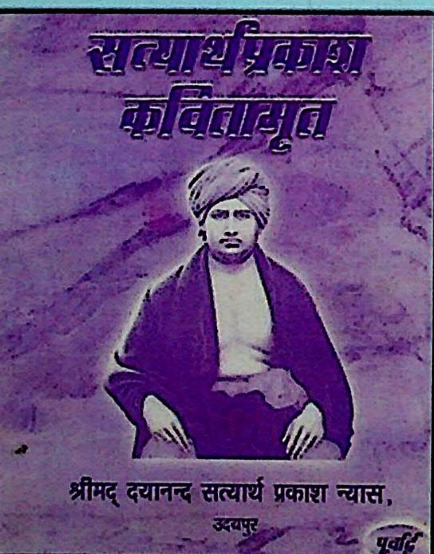
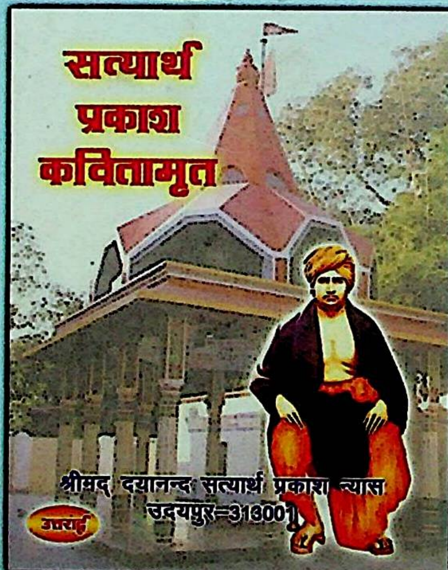
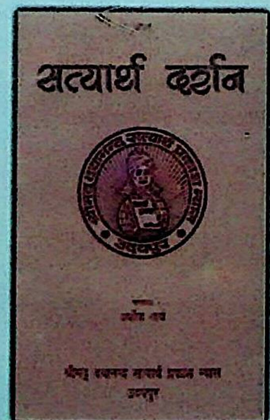
ओ३म्

इलेक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा महर्षि जी के जीवन दर्शन के प्रचार हेतु अभिनव प्रयोग। महर्षि जीवन-दर्शन पर एक घण्टे की वीडियो केसेट (मूल्य मात्र रु.180/-) एवं VCD (मूल्य रु. 400/-) उपलब्ध है। सम्पूर्ण आर्य जगत् की भूरि-भूरि प्रशंसा प्राप्त इस केसेट या वीसीडी को अवश्य मंगाकर स्वयं लाभ उठावें तथा अपने नगर के केबल चैनल पर दिखा नगर की जनता को भी लाभान्वित करें।



चौधरी ऑफसेट प्रा.लि.
0294 — 584071, 485784